Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/20-22
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th October- November 2022
Date of posting 15th & 20th October- November 2022
Total Page: 196

अक्टूबर-नवम्बर 2022 • वर्ष 34 • अंक 10-11 • मूल्य 80

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

विज्ञान कथा विशेषांक

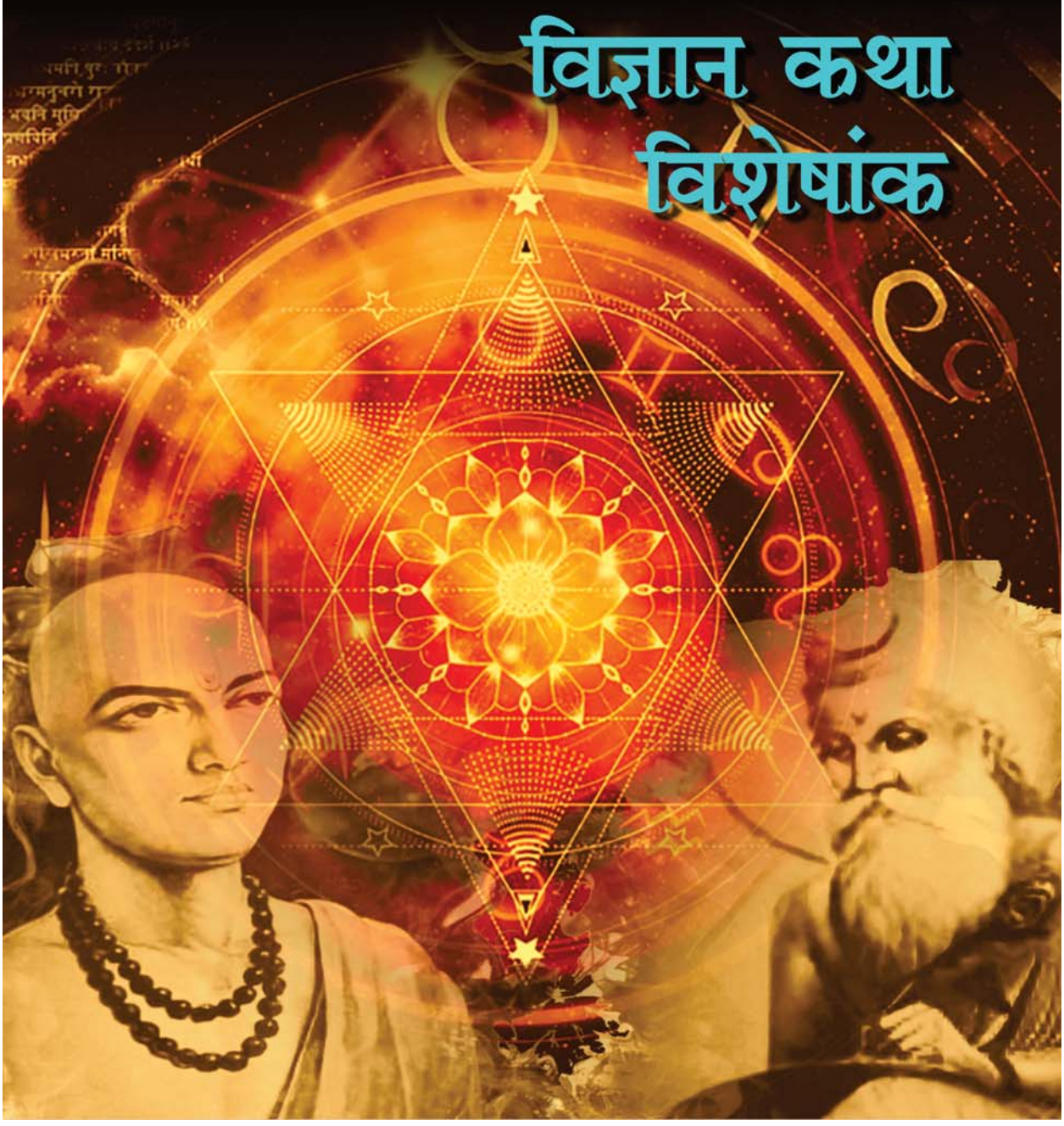

www.rntu.ac.in

RNTU

Rabindranath TAGORE UNIVERSITY™
MADHYA PRADESH, BHOPAL

#futureready

Your dependable partner in your career development.

For over a decade, we have been preparing our students to become the leaders of the future. We offer not only quality education and a holistic development but, a platform where one gets an NEP aligned curriculum with different

Featuring

- India's First Skill University
- 20 Centres of Excellence
- 52-Acre Green Campus; World-class Infrastructure
- International and Corporate Partnerships
- 56 Start-ups Incubated under AIC (NITI Aayog)
- Shiksha Mitra Scholarship on Merit

Courses Offered

Engineering & Technology | Humanities & Liberal Arts
Law | Management | Agriculture | Commerce | Science
Computer Science & IT | Nursing & Paramedical Science
Education | Bachelor of Vocational | Master of Vocational
Ph.D. in selected subjects through separate entrance tests

Integrated courses in association with

AISECT FUTURE SKILLS ACADEMY · N·S·D·C National Skill Development Corporation · Red Hat · coursera · MICRO FOCUS · Hewlett Packard Enterprise · BOSCH · DAIKIN

Start-up Incubation Centre

AIC-RNTU

Honoured for hard work

- Rank Band 101-150 in Universities — nirf 2021
- Ranked 186 in Engineering — nirf 2021
- 1st Ranked Private University 2021 in Bhopal — INDIA TODAY
- 1st Ranked Private University in Madhya Pradesh 2021 — Outlook
- ZEE Education Excellence Award 2020
- Best Physio Excellence University Award 2022
- World Education Award 2016 (Dubai)
- Madhya Pradesh Gaurav Samman 2019

More than 500 companies for placements and internships (Offering upto 15 LPA)

paytm · KUNI · hitech · IFFCO KISAN · Tech Mahindra · TATA CONSULTANCY SERVICES · Us · HCL · WIPRO · genpact · Netlink

Want to unlock your potential?

Rabindranath Tagore University: Bhopal– Chiklod Road, Near Bangrasia Chouraha, Bhopal, Madhya Pradesh, India
City Office: 3rd Floor, Sarnath Complex, Opposite to Board Office, Link Road No. 1, Shivaji Nagar, Bhopal– 462016 | **Email: info@rntu.ac.in**

Call us:
+91-755-2700400, 2700413
+91-755-4289606

ADMISSIONS OPEN

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
अक्टूबर—नवम्बर 2022
वर्ष 34, अंक 10-11

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

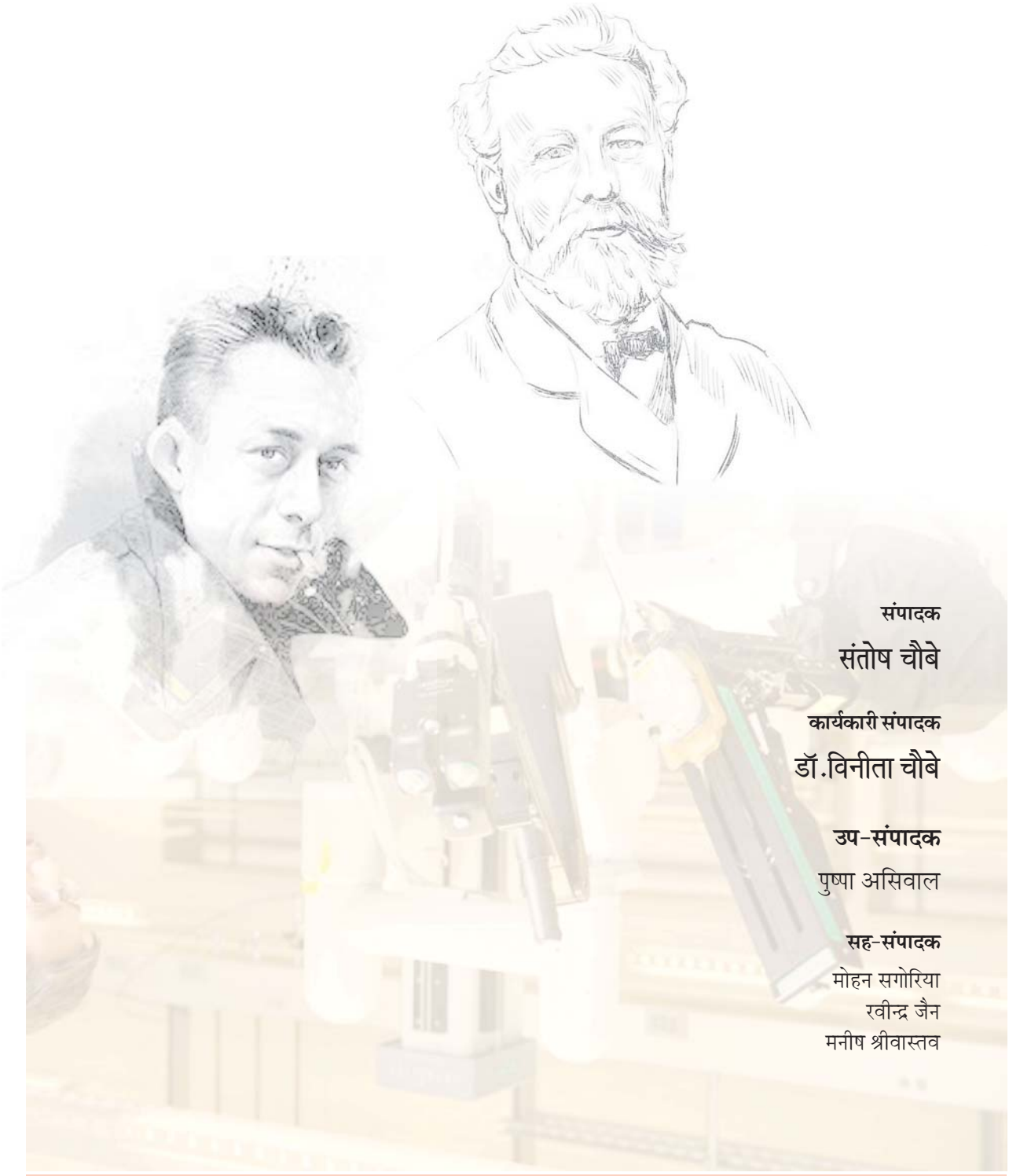

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
डॉ.विनीता चौबे

उप-संपादक
पुष्पा असिवाल

सह-संपादक
मोहन सगोरिया
रवीन्द्र जैन
मनीष श्रीवास्तव

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 339-40

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

परामर्श मण्डल

शरदचंद्र बेहार, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया, डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे, प्रो. ब्रम्ह प्रकाश पेठिया, प्रो. अमिताभ सक्सेना, डॉ. पी.के.नायक, डॉ. विमल कुमार शर्मा, डॉ. अरुण आर. जोशी, प्रो.प्रबाल रॉय

संस्थागत सहयोग

गौरव शुक्ला, डॉ. डी.एस.राघव, डॉ. विजय सिंह, डॉ. सीतेश सिन्हा, रवि चतुर्वेदी, डॉ. मुनीष गोविंद, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक

शलभ नेपालिया, अमिताभ गांगुली, रजत चतुर्वेदी, अंबरीष कुमार, अजीत चतुर्वेदी, इंद्रनील मुखर्जी, राजेश शुक्ला, शशिकांत वर्मा, शैलेष बंसल, लियाक़त अली खोखर, मुदस्सर कर, नरेन्द्र कुमार, दलजीत सिंह, आबिद हुसैन भट्ट, बिनीस कुमार, सुशांत चक्रवर्ती, अनूप श्रीवास्तव, निशांत श्रीवास्तव, पुर्विश पंड्या, दिनेश सिंह रावत, सुजीत कुमार, अंकित भदौलिया

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन

राजेश पंडा, महीप निगम, मनोज यादव

आवरण एवं डिजाइन

वंदना श्रीवास्तव, डॉ. अमित सोनी

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-2700466 (डेस्क), 2700401 (रिसेप्शन)

e-mail : electronikiaisect@gmail.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- (यह अंक 80/-)

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। पत्रिका के भीतर उपयोग किये गये गूगल से साभार हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

अनुक्रम

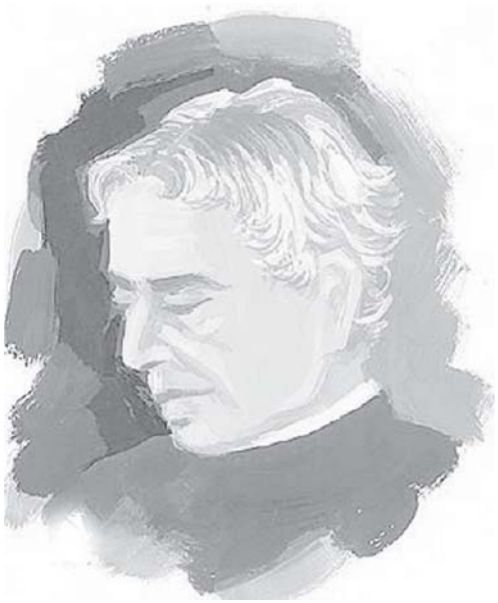

संपादकीय

विज्ञान कथा लेखन के संदर्भ में ● संतोष चौबे /07

विज्ञान कथा विमर्श

विज्ञान कथा साहित्य : संशय और संभावनाएँ ● देवेन्द्र मेवाड़ी /09

सुपरनोवा का रहस्य : किताब के बहाने बेतरतीब नोट्स ● डॉ. सुधीर सक्सेना /12

समुद्र पार से विज्ञान कथाएँ

फ्रैंकस्टाइन ● मेरी डब्ल्यू शेली /17

भीम भोजन ● एच.जी.वेल्स /28

चंद्रलोक की यात्रा ● जूल्स वर्न /35

प्रतिशोध ● एलेक्जेंडर ड्यूमा /38

रासुम के यंत्र मानव ● कारेल चापेक /45

विश्व कथाओं में विज्ञान

प्लेग ● अल्बैर कामू /51

हिरोशमा के फूल ● एदिता मोरिस /60

एक अजीब आदमी का सपना ● फ्योदेर दोस्तोवस्की /65

आख़िरी पत्ता ● ओ हेनरी /74

हिन्दी विज्ञान कथा की नींव

आश्चर्य वृत्तांत ● अंबिका दत्त व्यास /77

बाईसवी सदी ● राहुल सांकृत्यायन /93

लापता तूफान ● जगदीश चंद्र बसु /102

हिन्दी विज्ञान कथा का सम-काल

कृष्ण विवर ● जयंत विष्णु नार्लीकर /106
अंतरिक्ष से चेतावनी ● अमृतलाल वेगड़ /111
अतीत में एक दिन ● देवेन्द्र मेवाड़ी /117
मुहूर्त्त ● संतोष चौबे /126
हिमीभूत ● शुकदेव प्रसाद /133
तुम मशीन न बन जाना ● डॉ.प्रदीप कुमार मुखर्जी /138
कुंभ के मेले में मंगलवासी ● डॉ. अरविंद मिश्र /141

हिन्दी विज्ञान कथा का युव-काल

सूत्र ● प्रमोद भार्गव /144
लैक्टो बैसीलस ● कुमार सुरेश /149
मुर्गीखाना ● रेखा कस्तवार /153
तीन सौ पच्चीस साल का आदमी ● डॉ. मनीष मोहन गोरे /157
द्रव और ठोस की प्रेम कहानी ● डॉ. अनामिका 'अनु' /164
अलौकिक ● प्रज्ञा गौतम /166
विचित्र मुकदमा ● आभास मुखर्जी /170

बाल विज्ञान कथाएँ

प्रकृति हार नहीं मानती ● समीर गांगुली/172
उस दुनिया के डारो अंकल ● सुबोध महंती /175
जार्ज की कारस्तानी ● महेश कटारे 'सुगम' /178
फूलों का राजा गुलाब ● बलराम गुमास्ता /180
पौधे की गवाही ● ज़ाकिर अली 'रजनीश' /184
घटना, कहानी और विज्ञान ● शुचि मिश्रा /188
बात आगे की ● काव्या कटारे / 189

विज्ञान कथा लेखन के संदर्भ

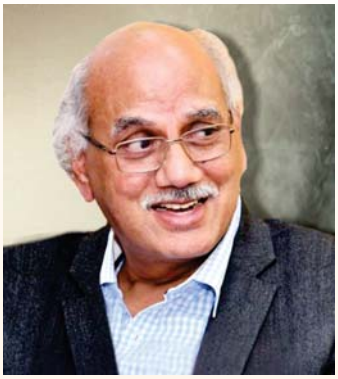

मित्रो, 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' का विज्ञान कथा विशेषांक आपके हाथों में है। 'विज्ञान कथा विशेषांक' के महत्व को समझने के लिए हम पहले विज्ञान पर कुछ बातें करते हैं :

विज्ञान का सामान्य अर्थ समझा जाता है 'पश्चिमी विज्ञान' जिसने अनेक अद्‌भुत आविष्कारों और टेक्नॉलॉजिकल यंत्रों को जन्म दिया है। किन्तु आधारभूत वैज्ञानिक सिद्धांत और तकनीक प्राचीन काल में भी मौजूद थे और विज्ञान के विकास में पूर्व का महत्वपूर्ण योगदान है। सभ्यता की अनेक निधियां पूर्व से मिली हैं।

भारत में प्रारंभिक विज्ञान की दो प्रमुख धाराएं थीं- प्रथम, गणित और खगोल शास्त्र तथा द्वितीय, औषध विज्ञान। आपस्तम्बकृत 'सल्वसूत्र' में पाइथागोरस के प्रमेयों तथा अन्य कई विशिष्ट प्रश्नों का सामान्य विवरण है। 'सल्वसूत्र' का प्रणयन पाइथागोरस के बाद के समय में हुआ था, किन्तु उसके विशिष्ट सूत्र निश्चय ही यूनानी नहीं, भारतीय हैं। वे प्राचीन प्रयोगसिद्ध अंकीय आविष्कार हैं जिनके आधार पर बाद में ज्यामितीय प्रमेय बने या प्रमेय के आधार पर विकसित विशिष्ट हिन्दू प्रयोग हैं, यह इतना स्पष्ट नहीं है। संक्षेप में इतना कहना ही काफी है कि हमारे यहाँ गणित में हिन्दुओं की महत्वपूर्ण मौलिक उपलब्धियाँ हैं। स्थानिक अंकों का महत्वपूर्ण आविष्कार तथा 'शून्य' के लिए संकेत भारतीय योगदान है। खगोलशास्त्र में हमारे यहाँ पांच सिद्धांत, पैतामह, वसिष्ठ, सूर्य, पौलिश और रोमक हैं, और यह परम्परा अटूट रही है- आर्यभट्ट (पांचवीं शताब्दी ईसवी), वराहमिहिर (छठी शताब्दी), ब्रह्म गुप्त (छठी और सातवीं शताब्दी), महावीर (नवीं शताब्दी), श्रीधर (दसवीं शताब्दी), भास्कर (बारहवीं शताब्दी)।

●

भाषाविज्ञान के उत्तरकालीन विकास में 'कातंत्र' के रचयिता सर्ववर्मन (300 ईसवी), चन्द्रगोमिन (600 ईसवी), 'वाक्यपदीय' के रचयिता भर्तृहरि (सातवीं शताब्दी ईसवी) के नाम शीर्षस्थ हैं। 'वाक्यपदीय' में भाषाविज्ञान या व्याकरण से अधिक जोर भाषा के दर्शन पर दिया गया है। जयादित्य और वामन ने पाणिनि पर एक पाठ्यपुस्तक 'काशिकावृत्ति' की रचना की। 1625 के लगभग भट्ठोजि दीक्षित ने 'सिद्धांतकौमुदी' का प्रकाशन किया यह पाणिनि के ग्रन्थ का सार-संक्षेप है।

संस्कृत के वैयाकरणों ने सर्व प्रथम शब्द-रूपों का विश्लेषण किया, धातु और प्रत्यय का अन्तर समझा, प्रत्यय के कार्य निश्चित किए, और कुल मिलाकर इतने अधिक शुद्ध और सम्पूर्ण व्याकरण का निर्माण किया कि उसका सानी किसी दूसरे देश में पाना असंभव है। प्रोफेसर वेबर का कथन है कि ''पाणिनि के व्याकरण में भाषा की जड़ों तथा उसके शब्दों की रचना की खोज पूरी गहराई के साथ की गई है, इसलिए वह अन्य सभी देशों के व्याकरणों में श्रेष्ठ है।''

यह कोई संयोग नहीं कि स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान जब भारतीय दर्शन और सांस्कृतिक मूल्यों की पुनः स्थापना हो रही थी उसी समय सर सी.वी. रामन ने भौतिकी की अपनी महत्वपूर्ण खोज की और भारत के पहले नोबल पुरस्कार प्राप्त करने वाले वैज्ञानिक बने। जगदीश चंद्र बसु, सत्येन्द्र नाथ बोस एवं प्रफुल्ल चंद्र रे ने भी विज्ञान के क्षेत्र में मौलिक योगदान किये। वर्तमान में भारत विज्ञान और तकनीक के कई क्षेत्रों में विश्व के शीर्षस्थ देशों में गिना जाता है और मूलभूत विज्ञान में प्रगति के लिये एक व्यग्रता देश में देखी जाती है।

परमाणु विज्ञान, अंतरिक्ष विज्ञान, सूचना तकनीक एवं औषध-विज्ञान तथा कृषि के क्षेत्र में भारत की प्रगति विश्व भर में सम्मान की दृष्टि से देखी जाती है। सामाजिक विज्ञान तथा प्राकृतिक विज्ञान के बीच भी संवाद की गहरी कोशिश जारी है। यदि हमें विश्व में एक स्वतंत्र और शक्तिशाली देश के रूप में स्थान बनाना है, जहाँ हमारे धर्म, संस्कृति और ज्ञान की रक्षा हो सके और वह सतत प्रवहमान रह सके, तो हमें विज्ञान और तकनीक के विकास की भी उतनी ही चिंता करना पड़ेगी जितनी कला और संस्कृति की। न सिर्फ ये, बल्कि विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टि की इस ताकत को आम लोगों तक भी पहुंचाना होगा और यह काम उनकी ही भाषा में होगा।

●

भारत में विज्ञान की इस प्रगति तथा बड़ी संख्या में वैज्ञानिक-साहित्यिक गतिविधियों के बावजूद क्या कारण है कि विज्ञान गल्प लेखन में वह मात्रा एवं गुणवत्ता हमें हिन्दी साहित्य में नहीं दिखाई देती? जो है उसका भी संज्ञान नहीं लिया जाता और न ही उसे मुख्य धारा में शामिल किया जाता है।

●

मानव जीवन में विज्ञान की इतनी गहरी वांछित-अवांछित पैठ, मगर साहित्य में इसका कितना वर्णन हुआ है? क्या, भविष्य में आज का साहित्य पढ़ने पर मानव जीवन के उन तमाम दबावों का पता लग सकेगा जो वर्तमान में वैज्ञानिक प्रगति के कारण वह झेल रहा है? सच यह है कि हमारे साहित्य में विज्ञान के दबाव, उसके प्रभाव, विज्ञानजनित आशंकाओं, आशा और निराशा का वर्णन नगण्य ही हुआ है। भारतीय भाषाओं में ऐसे विज्ञान साहित्य का सृजन बहुत कम हुआ है लेकिन विश्व की अनेक भाषाओं में विपुल मात्रा में विज्ञान-कथा साहित्य रचा गया है। जूल्स वर्न, एच. जी. वेल्स, एडगर एलन पो, आल्डस हक्सले, आर्थर क्लार्क, राबर्ट हीनलीन, रे ब्रेडबरी, कुर्त्त वानगट, जेम्स बलार्ड, अकादमीशियन ओब्रचेव, आइ. एफ्रेमोव, एलैक्जेंडर बेलिएव, देनेप्रोव आदि विज्ञान कथा लेखकों ने इस विधा को बहुत समृद्ध किया।

साइंस फिक्शन यानी विज्ञान कथा अथवा विज्ञान गल्प आधुनिक साहित्य की वह विधा है जिसके माध्यम से विज्ञान कथाकार मानव जीवन पर वैज्ञानिक खोजों व प्रौद्योगिकी के प्रभाव, विज्ञान-जन्य सामाजिक परिवर्तनों, बदलते मूल्यों और आसन्न संकटों के ताने-बाने से अपनी कहानियों का सृजन करता है। इस विधा को साहित्यिक पहचान देने वाले प्रख्यात संपादक ह्यूगो गर्न्सबैक ने ऐसी कहानियों को 'साइंटिफिक्शन' कहा और इस विधा को परिभाषित करते हुए उन्होंने कहा, ''जूल्स वर्न, एच जी. वेल्स, एडगर एलन पो की जैसी कहानियां जिन में वैज्ञानिक तथ्यों में गुंथा रोमांच और भावी संभावना की दृष्टि हो।'' उनके शब्दों में ऐसी कहानियों की विशेषता है- ''वैज्ञानिक तथ्यों से बुनी, भविष्य सूचक कहानी। आज इन कहानियों से हमें जिन आविष्कारों की झलक दिखाई जा रही है- कल उनका मूर्त रूप में बदलना असंभव नहीं है। इतिहास में जगह बना लेने वाली तमाम विज्ञान कथाएं अभी लिखी जानी हैं। कल उनकी ओर इंगित करके कहा जाएगा कि इन्होंने नई राह बनाई- साहित्य में ही नहीं बल्कि प्रगति के लिए भी।''

●

विज्ञान और विज्ञान कथा से जुड़े इन्हीं प्रश्नों तथा संभावनाओं को रेखांकित करने के लिए हमने यह अंक तैयार किया है। इस अंक में 'विज्ञान कथा विमर्श' स्तम्भ के अंतर्गत वरिष्ठ विज्ञान संचारक और विज्ञान लेखक देवेन्द्र मेवाड़ी का अभिमत शामिल हैं; साथ ही ख्यात पत्रकार, कवि और लेखक सुधीर सक्सेना के विज्ञान गल्प विषयक नोट्स भी। इस अंक को हमने सात खण्डों में विभाजित किया है जिसमें विज्ञान कथा विमर्श, समुद्र पार से विज्ञान कथाएँ, विश्व कथाओं में विज्ञान, हिन्दी विज्ञान कथा की नींव, हिन्दी विज्ञान कथा का सम-काल, हिन्दी विज्ञान कथा का युव-काल और बाल विज्ञान कथाएँ शामिल हैं। इन खण्डों से गुजरते हुए आप विज्ञान कथा के आरंभिक लेखन से अब तक लिखी गई विज्ञान कथाओं के क्रमशः विकास और पड़ावों को देख सकेंगे। इस अंक में शामिल सभी विज्ञान लेखकों के प्रति मैं धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ इमें बहु-सी नई, रोचक और गंभीर विज्ञान कथाएँ प्राप्त हुईं जिन्हें प्रकाशित कर हम गौरव का अनुभव करते हैं। आशा है इस यात्रा में आप कुछ ऐसा नया देख पाएंगें जो आपको प्रभावित करेगा।

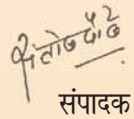

संपादक

choubey@aisect.org

विज्ञान कथा साहित्य : संशय और संभावनाएँ

देवेन्द्र मेवाड़ी

हिंदी में विज्ञान कथा विधा को शताधिक वर्ष हो गए हैं लेकिन साहित्य के क्षेत्र में अब भी इसकी मुकम्मल पहचान बाकी है। हिंदी साहित्य में इसे जो सम्मानित स्थान मिलना चाहिए वह एक सदी बीत जाने के बाद भी नहीं मिला है। क्यों नहीं मिला है, यह गंभीर व विचारणीय विषय है। शायद इसलिए कि इस विधा में हिंदी के साहित्यकारों ने लिखने से परहेज किया, या इसलिए कि इस विधा में विज्ञान की जटिलता का अनुमान लगा कर दूर ही रहे, या शायद इसलिए कि विज्ञान को साहित्य का उलट विशय मान लिया? लेकिन, सम्मानित समालोचकों और हिंदी साहित्य के इतिहासकारों को क्या हुआ? सौ-सवा सौ वर्षों के दौरान लिखी गई हिंदी विज्ञान कथाओं से उन्होंने क्यों आंखें फेर लीं? क्या साहित्य की इस विधा में विज्ञान के प्रवेश ने उनके लिए भी इसे वर्जित क्षेत्र बना दिया? क्या सौ-सवा सौ वर्षों में ऐसी कोई भी विज्ञान कथा हिंदी में नहीं लिखी गई जो समालोचकों और हिंदी कहानी का इतिहास लिखने वाले विद्वानों का ध्यान आकर्षित करती? या कहीं ऐसा तो नहीं कि बाहर से आने के कारण विज्ञानकथा विधा तिरस्कृत रही हो जबकि अनेक कला रूप और शैलियां बाहर से आकर समादृत हुई हैं? कहीं इस विधा को तिलिस्म और ऐयारी के आसपास समझने की भूल तो नहीं हुई है? अंग्रेजी कथा साहित्य में एच. जी. वेल्स की विज्ञान कथाओं को तो पूरा साहित्यिक सम्मान मिला और उन्हें इस विधा का जनक व अप्रतिम रचनाकार माना जाता है।

एक बात और, विज्ञानकथा विधा में रचे गए साहित्य की इस स्थिति के लिए कहीं स्वयं इस विधा के रचनाकार ही तो उत्तरदायी नहीं हैं? क्या विगत सौ-सवा सौ वर्षों में साहित्य की इस विधा को गंभीरता से समझते हुए सचमुच मनुष्य जीवन और उसके समाज पर पड़ रहे विज्ञान के बहुविध प्रभाव व संभावनाओं का पूरी संवेदना के साथ चित्रण किया गया? क्या कहानी में विगत व वर्तमान के यथार्थ और संभावित स्थितियों के यथार्थ को दर्पण की तरह सामने रखा गया ताकि पाठक अपने जीवन मूल्यों, नैतिक व सामाजिक मूल्यों में विज्ञान की घुसपैठ से हो रहे परिवर्तनों को अनुभव कर सकें व संभावित भविष्य का अनुमान लगा सकें? या कहीं ऐसा तो नहीं कि नई व अप्रचलित विधा में कई बार रचनाकार ने महज चकित-विस्मित कर देने के जादुई अंदाज में लिख दिया हो? या विज्ञान को भी तिलिस्म, जादू या जासूसी के रूप में पेश कर दिया गया हो? या, जीवन से जुड़ी कहानी न लिख कर विज्ञान के चमत्कार का शब्दजाल बुन दिया गया हो जो मर्म को न छूकर महज जानकारी दे सका हो? या कहीं आत्मकथात्मक शैली में लिखी वैज्ञानिक जानकारी को भी हम विज्ञान कथा कहने की कोशिश कर रहे हों? वैज्ञानिकों की जीवनी, पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों की कहानियों, यहां तक कि कोयला, इस्पात, मिट्टी-पत्थर व कीड़ों की कहानी तक को विज्ञान कथा मान रहे हों? इतना ही नहीं, अपने पुरखों द्वारा लिखे गए प्राचीन ग्रंथों में वर्णित उनकी उर्वर कल्पनाओं को तार्किकता के तराजू पर तौले बिना विज्ञान कथा कहने की भूल कर रहे हों?

लब्बे-लुबाब यह कि हमें भी अपने गरेबां में झांकना होगा। कुछ-न कुछ तो सच है अन्यथा सौ-सवा सौ वर्षों से लिखी जा रही हिंदी की विज्ञान कथाओं को इस तरह विस्मृत नहीं किया जाता और हिंदी कहानी के इतिहास में इस विधा का उल्लेख किया जाता। इस सब के बावजूद अगर 'हिंदी कहानी के 100 वर्ष' शृंखला (संपादकः महेश दर्पण) में कैलाश साह की एक प्रतिनिधि विज्ञान कथा और नेशनल बुक ट्रस्ट द्वारा प्रमुख भारतीय भाषाओं में प्रकाशित भारतीय भाषाओं की विज्ञान कथाओं के प्रतिनिधि संकलन 'इट हैपंड टुमारो' (संपादक- डॉ. बाल फोंडके, हिंदी संकलन 'बीता हुआ भविष्य') में देवेंद्र मेवाड़ी तथा अरविंद मिश्र की हिंदी विज्ञान कथाएं इन संकलनों के सुधी संपादकों ने प्रकाशित कीं, आइसेक्ट ने स्वयं रूचि लेकर 'सुपरनोवा' विज्ञान कथा संकलन प्रकाशित किया, अखिल भारतीय स्तर पर विज्ञान कथा प्रतियोगिता शुरू की और 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' मासिक पत्रिका में विज्ञान कथाओं का प्रकाशन शुरू किया तो यह निःसंदेह हिंदी विज्ञान कथा के सम्मान की शुरूआत कही जा सकती है। इधर, हिंदी विज्ञान कथाओं के नए संकलनों के प्रकाशन के प्रयास हुए हैं और अनेक विज्ञान कथाकारों के संकलन छपे हैं। इससे हिंदी विज्ञान कथाओं की 'विजिबिलिटी' बढ़ेगी और

हिंदी साहित्य के समालोचकों का ध्यान इस विधा की ओर आकर्षित होगा। प्रसंगवश, भारत और चीन में विज्ञान कथा विधा का उदय बींसवीं सदी की शुरूआत में हुआ। लेकिन, इस विधा की लोकप्रियता देखिए कि चीन में वर्ष 2004 में विज्ञान कथा विधा की शताब्दी मनाई गई। वहां प्रथम विज्ञान कथा 'चंद्र कालोनी' 1904 में लिखी गई थी। चीन में विज्ञान कथा विधा की लोकप्रिय पत्रिका 'साइंस फिक्शन वर्ड' की मासिक प्रसार संख्या 5,00,000 प्रतियों से भी अधिक बताई जाती है। पत्रिका के संपादक मंडल के प्रमुख यांग झिआओ ने कहा था कि उनके ७० प्रतिशत पाठक विद्यार्थी हैं। एक-एक विद्यार्थी अपनी पत्रिका की प्रति दर्जनों दोस्तों को पढ़ने के लिए देता है क्योंकि वे पत्रिका स्वयं नहीं खरीद सकते। इस तरह चीन के लाखों युवा विद्यार्थी विज्ञान कथाओं के पाठक बनते गए और उन्हें ही कल देश का भविष्य तय करना है। वहां विज्ञान कथा लेखकों का अपना संघ है जिनमें वरिष्ठ विज्ञान कथाकारों के साथ ही महिला विज्ञान कथाकार और 18-19 वर्षीय छात्र विज्ञान कथा लेखक भी हैं। 'साइंस फिक्शन वर्ड' के सहायक मुख्य संपादक याओ हाइजुन के अनुसार चीन में विज्ञान कथा विधा के विकास में विज्ञान कथाकारों के स्थाई संघ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

चीन का संदर्भ इसलिए, क्योंकि चीन की प्रथम विज्ञान कथा से चार वर्ष पहले 1900 में हिंदी की प्रथम विज्ञान कथा 'चंद्रलोक की यात्रा' (लेखक- केशव प्रसाद सिंह) मासिक 'सरस्वती' (भाग-1, संख्या-7, पृष्ठ 227) के प्रथम अंक में प्रकाशित हुई थी। साहित्यकार समालोचक डॉ. प्रताप नारायण टंडन ने इसे पाश्चात्य वैज्ञानिक कहानियों में सर्वथा भिन्न प्रकार की पहली हिंदी वैज्ञानिक कहानी माना है। उनके अनुसार 'हिंदी में वैज्ञानिक कथा साहित्य का प्रवृत्तिगत रूप में आरंभ भारतेंदु युग से ही मिलता है। इस कोटि की एक कल्पना प्रधान रचना केशव प्रसाद सिंह लिखित 'चंद्रलोक की यात्रा' है। परंतु इस प्रकार की रचनाओं का स्वरूप यूरोपीय वैज्ञानिक कथाकारों की कृतियों, उदाहरण के लिए एच. जी. वेल्स लिखित 'द वार इन द एअर', 'द ह्वील्स ऑफ चांस' तथा 'काइप्स' आदि से सर्वथा भिन्न है। (हिंदी कहानी कला, डॉ. प्रताप नारायण टंडन)। डॉ. अरविंद मिश्र और डॉ. के. पी. त्रिपाठी के शोध-सहयोग से हमें 'सरस्वती' में प्रकाशित इस प्रथम विज्ञान कथा की प्रति प्राप्त हुई। हिंदी की इस प्रथम विज्ञान कथा का उल्लेख इस लेखक के विज्ञान कथा संग्रह 'भविष्य' (1994) में किया गया है। 'चंद्रलोक की यात्रा' उन दिनों काफी लोकप्रिय अद्‌भुत यात्रा कथाओं के दौर में लिखी गई विज्ञान कथा है। कुछ लोग इसे जूल्स वर्न की 'फाइव वीक्स इल ए बैलून' कहानी से प्रभावित मानते हैं लेकिन यह भारतीय पृश्ठभूमि में रची गई विज्ञान कथा है। 'सरस्वती' में ही 1908 में स्वामी सत्यदेव परिव्राजक की कहानी 'आश्चर्यजनक घंटी' प्रकाशित हुई। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक देशभक्त थे और उनके पास अमेरिका के भरपूर अनुभव थे। यह विज्ञान कथा भौतिकी के अनुनाद के सिद्धांत पर आधारित थी। इस कथा पर भी किसी अमेरिकी कहानी का प्रभाव माना जाता है।

हिंदी में 'साइंस फिक्शन' के लिए 'विज्ञान कथा' शब्द रूढ़ हो चला है यघपि कई बार 'विज्ञान गल्प' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। साहित्य की इस विधा में कथा-कहानी, उपन्यास (नावेल), लघु उपन्यास (नावेला), उपन्यासिका (नॉवलेट), नाटक, फिल्म, चित्र कथाएं तक सभी समाई हुई हैं। विज्ञान कथा का प्रचलित वर्गीकरण शब्द संख्या के आधार पर किया जाता है: विज्ञान कथा-कहानी (7500 शब्द से कम), उपन्यासिका (7500 से 17500 शब्द), लघु उपन्यास (17500 से 40000 शब्द) और उपन्यास (40000 से अधिक शब्द)। इसी आधार पर प्रसिद्ध 'ह्यूगो' तथा 'नेबुला' पुरस्कार दिए जाते हैं। इस लेख में विज्ञान कथा के इतिहास के अंतर्गत कहानी तथा उपन्यासों का उल्लेख किया गया है। अन्य शैलियों में विज्ञान कथा सृजन बहुत कम हुआ है यघपि इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में अब इसका थोड़ा प्रसारण होने लगा।

भविष्य की परिकल्पना के आधार पर हिंदी में पहला वैज्ञानिक उपन्यास राहुल सांकृत्यायन लिखित 'बाइसवीं सदी' है जो 1924 में प्रकाशित हुआ। इस प्रयोगधर्मी उपन्यास का हिंदी साहित्य के इतिहास में इसलिए भी अपना विशिष्ट स्थान है क्योंकि इसमें पहली बार समाज के वर्तमान यथार्थ के बजाय भावी समाज के संभावित यथार्थ की परिकल्पना की गई। प्रसंगवश मासिक 'हंस', अक्टूबर 2005 में प्रकाशित कथाकार प्रियंवद के लेख 'इतिहास और उपन्यास' पर संपादकीय टिप्पणी में लिखा गया है- 'अपनी कल्पना के साथ इतिहास में जाना हमें वर्तमान की यथातथ्यता के दबावों से मुक्त करता है- यह यात्रा पश्चिमी उपन्यासों में भविष्य में भी हो सकती है, हमारे यहां यह (राहुल सांकृत्यायन के 'बाइसवीं सदी' को छोड़ कर) सिर्फ अतीत में हुई है।'

●

यह एक सुखद संकेत है कि विज्ञान कथा विधा में सक्रिय कथाकारों की संख्या इधर काफी बढ़ी है। इस अवधि में अनेक उदीयमान विज्ञान कथाकारों की रचनाएं वैज्ञानिक पत्रिकाओं तथा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं जिनसे विज्ञान कथा विधा को एक नई पहचान मिली है। विज्ञान कथा विधा में इस सक्रियता का बहुत बड़ा श्रेय 'विज्ञान प्रगति' के तत्कालीन प्रधान संपादक तथा विज्ञान कथाकार डॉ. बाल फोंडके को है जिन्होंने नीतिगत निर्णय लेकर 'विज्ञान प्रगति' में प्रति माह विज्ञान कथा का प्रकाशन अनिवार्य किया। संपादक श्रीमती दीक्षा बिष्ट ने इसे कार्यान्वित किया। जैसी कि आशा थी- इस प्रयास से नए विज्ञान कथाकार सामने आए। इनमें से कई विज्ञान कथाकार अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करा चुके हैं। 'विज्ञान प्रगति' में विज्ञान कथा प्रकाशन की यह परंपरा जारी है। लोकप्रिय विज्ञान पत्रिका 'आविश्कार' ने भी विज्ञान कथा विधा को प्रोत्साहित करने के लिए विज्ञान कथाओं का प्रकाशन प्रारंभ किया। राधाकांत अंथवाल पत्रिका के संपादन के तहत व्यक्तिगत रूचि लेकर विज्ञान कथाओं को प्रमुखता से प्रकाशित कर रहे हैं और हिंदी के अनेक विज्ञान कथाकारों का रचनात्मक सहयोग ले रहे हैं। भारतीय विज्ञान कथा लेखक समिति, फैजाबाद द्वारा प्रकाशित त्रैमासिक 'विज्ञान कथा' भी हिंदी की विज्ञान कथाएं प्रकाशित कर रही है।

जाकिर अली 'रजनीश' न केवल 'इंडिया टुडे वार्षिकी' की प्रतियोगिता में अपनी विज्ञान कथा से विजयी हुए बल्कि आगे चल कर उन्होंने विज्ञान कथा विधा में अनेक सशक्त रचनाएं दी हैं। उनका संग्रह 'विज्ञान कथाएं' (2000) तथा उपन्यास 'गिनीपिग' (1998) प्रकाशित हो चुका है। उनके संपादन में बाल विज्ञान कथा संकलन भी प्रकाशित हो चुका है। युवा विद्वान कथा लेखक अमित कुमार का भी प्रथम विज्ञान कथा संग्रह 'प्रतिद्वंद्वी' प्रकाशित हो चुका है जिसमें उनकी 11 विज्ञान कथाएं संकलित हैं। हाल ही में उनका एक और विज्ञान कथा संग्रह छपा है। कल्पना कुलश्रेश्ठ की विज्ञान कथाएं अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। उनका प्रथम विज्ञान कथा संग्रह 'उस सदी की बात' तथा एक बाल विज्ञान उपन्यास भी प्रकाशित हुआ है। जीशान हैदर जैदी ने 1997 के आसपास विज्ञान कथा लेखन में कदम रखा। इसी दशक से वरिष्ठ वैज्ञानिक सुभाष चंद लखेड़ा ने विज्ञान कथा विधा में सृजन शुरू किया और अब तक उनकी लगभग पच्चीस विज्ञान कथाएं विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। उनकी कहानियों में वैज्ञानिक तत्व की प्रामाणिकता और किस्सागोई का कौशल दिखाई देता है। युवा विज्ञान कथाकार मनीष गोरे ने हिंदी में कई विज्ञान कथाओं की रचना की है। उनकी एक पुस्तक 'विज्ञान कथा का सफर' (2000) प्रकाशित हुई है। चिकित्सक (बाल विशेषज्ञ) डॉ. अरविंद दुबे का एक विज्ञान कथा संग्रह तथा एक वैज्ञानिक उपन्यास प्रकाशित हो चुका है। विज्ञान कथाकार प्रज्ञा गौतम का भी एक विज्ञान कथा संग्रह प्रकाशित हो चुका है। वर्तमान में अनेक रचनाकार विज्ञान कथाएं लिख रहे हैं। मेरे प्रयास के बावजूद हो सकता है कुछ नाम इस विवरण में सम्मिलित न हो पाए हों जिसका कारण पत्रिकाओं तथा पुस्तकों की अनुपलब्धता हो सकता है। विज्ञान कथाओं पर आपस में निरंतर संपर्क-संवाद किया जाना चाहिए जिससे हिंदी में इस कथा विधा की अधुनातन जानकारी मिलती रहे।

हिंदी विज्ञान कथा की इस लंबी यात्रा पर विहंगम दृष्टि डालने के बाद हिंदी में विज्ञान कथा लेखन की एक मुकम्मल तस्वीर उभरती है। हाल के दशकों में इस दिशा में रचनात्मक हलचल काफी बढ़ गई है जो हिंदी में विज्ञान कथा विधा के विकास का शुभ संकेत है। इस विषय पर एम फिल तथा पीएच डी के लिए शोध कार्य भी किया जाने लगा है। अब समय आ गया है जब हमें गंभीरतापूर्वक आत्मनिरीक्षण करना होगा कि क्या हम विज्ञान कथा अर्थात् साइंस फिक्शन की स्वीकृत परिभाषाओं के भीतर कहानियां लिख रहे हैं? क्या हम अपने 'सॉफ्ट' या 'हार्ड' साइंस फिक्शन में इसके परिभाषित नियमों का पालन कर रहे हैं? अपनी कथाओं में कहीं हम विज्ञान के ज्ञात नियमों का उल्लंघन तो नहीं कर रहे हैं? कहीं हम अतार्किक होकर मिथ्या विज्ञान अर्थात् स्यूडो साइंस पर आधारित कहानी तो नहीं लिख रहे हैं? क्या हमारी विज्ञान कथा में कहानी के तत्व, उसकी बुनावट और शिल्प है? क्या हमारी विज्ञान कथा मानवीय भावनाओं, संवेदनाओं, सामाजिक और मानवीय मूल्यों से जुड़ी है? हमारी कहानी कहीं केवल वैज्ञानिक जानकारी देने का प्रयास या प्रकारांतर से लेख ही तो नहीं है? कहीं हम विज्ञान कथा की परिभाषा जाने बिना एक-दूसरे की कहानियों की प्रशंसा के पुल तो नहीं बांध रहे हैं? और हां, यह भी कि क्या हम विज्ञान कथाएं लिख रहे हैं अथवा फैंटेसी।

साथ ही अब वह समय भी आ गया है जब विज्ञान कथा विधा में लिखी जा रही रचनाओं की निष्पक्ष समीक्षा हो। समीक्षक नीर-क्षीर समीक्षा करके विज्ञान कथाओं को रेखांकित करें। इसके लिए यह जरूरी है कि 'साइंस फिक्शन' की परिभाशाओं के अनुसार हिंदी विज्ञान कथाओं का 'पीयर रिव्यू' किया जाए ताकि वैज्ञानिक लेखों, जीवनियों, संस्मरणों, वृत्तांतों से 'विज्ञान कथा' की एक अलग और स्पश्ट पहचान बन सके। इससे विज्ञान कथाकारों का मार्गदर्शन होगा और हिंदी विज्ञान कथा साहित्य को सही दिशा मिल सकेगी। हिंदी में 'विज्ञान कथा समीक्षक' वर्तमान समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

dmewari@yahoo.com

'सुपरनोवा का रहस्य'

किताब के बहाने बेतरतीब नोट्स

डॉ. सुधीर सक्सेना

विज्ञान लेखन से मैं अंशतः परिचित हूँ विज्ञान कथाएँ पढ़ता रहा हूँ। जब-तब। जब-तब इस नाते कि विज्ञान लेखन अधिक और वांछित परिमाण में हो नहीं रहा है। हिन्दी में विज्ञान लेखन की शुरुआत विलंब से हुई और उसकी धारा क्षीण बनी रही। विज्ञान कथाएँ प्रायः रोचक होती हैं और ज़ेहन में अपनी छाप छोड़ जाती हैं। वे बज़िद अपनी जगह बना लेती हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' मेरी प्रिय पत्रिका है और मैं इसे मित्रों परिचितों से पढ़ने की गुजारिश भी करता हूँ। प्रिय इसलिए नहीं कि मैं इसका स्तंभकार हूँ, बल्कि इसलिए कि यह हिन्दी में एक बड़े अभाव की पूर्ति करती है और मेरे जिज्ञासु मन को समृद्ध और अद्यतन करती है। पत्रिका विषय चयन और उनकी प्रस्तुति विषय-वस्तु को निश्चित ही अधिक बोधगम्य बनाती है।

पिछले साल एक किताब हाथ लगी : 'सुपरनोवा का रहस्य'। 184 पेज की 18 कहानियों की किताब। इनमें जयंत नार्लीकर, देवेन्द्र मेवाड़ी, शुकदेव प्रसाद, राजीव रंजन उपाध्याय, अमृतलाल वेगड़, संतोष चौबे, सुभाषचंद्र लखेड़ा, हरीश गोयल, डॉ. अरविंद मिश्र, डॉ.अरविंद दुबे, मनीष मोहन गोरे, कल्पना कुलश्रेष्ठ, जीशान हैदर जैदी, अर्शिया अली, जाकिर अली रजनीश, विजय चित्तौरी, सनोज कुमार, इरफान ह्यूमन की कहानियाँ हैं और देवेन्द्र मेवाड़ी की लंबी भूमिका। इस कृति की भूमिका और संपादकीय पठनीय है। इन कहानियों से गुज़रना दुर्लभ पाठकीय अनुभव था। पढ़कर मैं प्रधान संपादक संतोष चौबे से मुतमईन हुआ कि आज भविष्य के लिए भविष्य की कथा लिखने की दरकार है। यकीनन विज्ञान कथाएं हमारी जरूरत हैं। यह भी सच है कि पंक्तियों में पिरोये हुए वैज्ञानिक सच कविता को अलग द्युति और बोध देते हैं। बहरहाल, कहानीवार समीक्षा की बजाय मैं किताब के बहाने उपजे विचारों को यहां साझा करना चाहूँगा। ये बेतरतीब नोट्स किताब के बहाने अपनी बात कहने की कोशिश है।

विज्ञान कथाओं की परंपरा हिन्दी की सहोदर गुजराती में भी परवान चढ़ी है। गुजराती के इन लेखकों में यशवंत मेहता, वीरू पुरोहित, अमृत बारोट, मधु राय, हर्षल पुष्करणा, हरीश नायक, परेश नायक और ईश्वर परमार के नाम उल्लेखनीय हैं। इसी क्रम में मलयालम लेखक सी.राधाकृष्णन का नामोल्लेख जरूरी है। राधाकृष्णन प्रतिष्ठित उपन्यासकार और कथा लेखक हैं। उनके दो

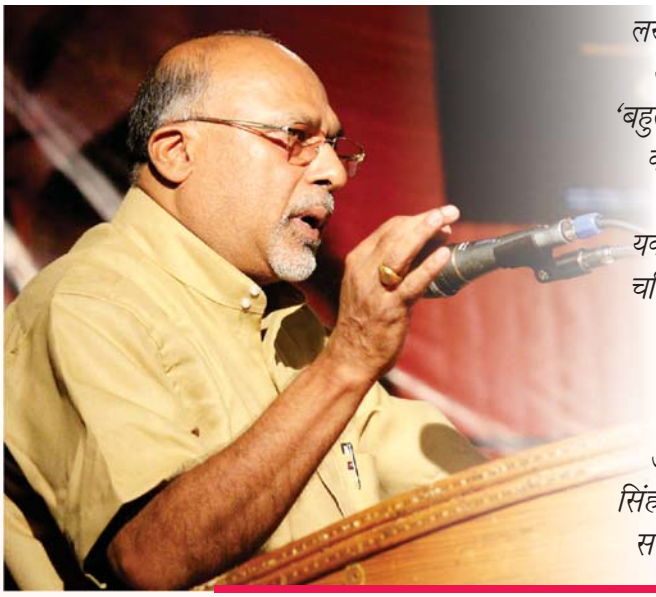

लखनऊ में जन्म। वैज्ञानिक दृष्टि के साथ कविता, पत्रकारिता, अनुवाद, संपादन और इतिहास-लेखन में एक साथ सक्रिय। 'बहुत दिनों के बाद', 'कभी न छीने काल', 'समरकंद में बाबर', काल को भी पता नहीं, कुछ भी नहीं अंतिम, रात जब चंद्रमा बजाता है बाँसुरी, किताबें दीवार नहीं होतीं, किरच-किरच यकीन, बीसवीं सदी इक्कीसवीं सदी, धूसर में बिलासपुर आदि चर्चित काव्य-संग्रह। रूस, ब्राजील और स्वीडन आदि देशों की कविताओं का अनुवाद जिसमें येगोर इसायेव, कायसिन कुलियेव, ओसिप मंदेलश्ताम आदि के अनुवाद चर्चित। 'सोमदत्त पुरस्कार' , माधवराव सप्रे पुरस्कार, वागेश्वरी अलंकरण, जिपलेप, सृजन गाथा, केशव पंडित, लाल बलदेव सिंह, प्रमोद वर्मा सम्मान, केदार स्मृति सम्मान, शिवकुमार मिश्र सम्मान, शमशेर सम्मान और 'पूश्किन सम्मान' से सम्मानित।

अपन्यासों - उल्लु उल्लाथु और पुल्लिपुलिकाल्लुम वेल्लि नक्षत्रंगुलम का कथानक विज्ञान आधारित है।

योरोपीय भाषाओं में प्रचुर विज्ञान कथाएं हैं और अद्भुत विज्ञान फिल्मों का निर्माण हुआ है। यहां प्रसंगवश रूसी का उल्लेख किया जा सकता है। रूसी में विज्ञान विषयक ढेरों कहानियां हैं, ढेरों उपन्यास और ढेरों फिल्में। उपन्यासों की बात करें तो द्मित्री ग्लुखव्स्की का मेट्रो 2033, सेर्गेई लुक्यानेंका का रात का पहरेदार, किरील ग्रीशिना का बंजर भूमि का रहस्य और तिमायेव़ वरोनोव़ का अंतरिक्ष के बंदी काबिले जिक्र हैं। विज्ञान के कथानक पर इधर बनी फिल्मों में फ्योदोर बंदारचुक की हमला 2019, जनिक फैजियेव की आकाशगंगा के गोलकीपर, बंदारचुक की ही प्रितिझेनिये (आकर्षण) उल्लेखनीय हैं। 1959 में अलेक्सांद्र कोजिर और मिखाइल कर्युकोव़ की फिल्म आई थी न्येबा जव्योत (आकाश की पुकार)। तदंतर सन 1961 में गेन्नादी कजान्स्की और व्लादिमीर चिबातरयोव की फिल्म आई चिलव्येक अम्फीबिया (एक था जलथलिया) इसमें मछली की भांति घंटों जल में रहने वाले मनुष्य की रोचक गाथा चित्रित थी। सन 1979 में आंद्रेई तारकोव्स्की की कामयाब विज्ञान फिल्म आई-स्तालकर। यह दुर्गम और खतरनाक जगहों के खोजी की रोमांचक कहानी थी। सन 1975 में एक चर्चित और कामयाब बाल-विज्ञान फिल्म आई थी - बल्शोय कसमीचिस्कोय पुतिशेस्तविए यानि अंतरिक्ष की लंबी यात्रा। वलेन्ताइन सिलिवानफ़ निर्देशित यह फिल्म बच्चों में जिज्ञासा जगाती थी और जिज्ञासा को शांत भी करती थी।

हिन्दी में विज्ञान कथाओं पर बात करते हुए प्रसंगवश कुछ बातें अन्य भाषाओं में लेखन और फिल्मों पर भी। ओड़िया में विज्ञान लेखकों की कतार है, जिन्होंने वैज्ञानिक कथानकों को आधार बनाकर रचनाएं की हैं। इनमें विनोद कानूनगो, गोकुलानंद महापात्र, रमेश चंद्र परीदा, कमलकांत जेना, मायाधर स्वाईं आदि के नाम शामिल हैं। विनोद कानूनगो (1912-1990) लेख्क, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, गांधीवादी और ज्ञानमंडल के संकलनकर्ता थे। पद्मश्री से सम्मानित कानूनगो को ओडिशा साहित्य अकादमी का अवार्ड भी मिला। रमेश चंद्र परीदा ने 80 से अधिक विज्ञान पुस्तकें लिखीं और अनेक विज्ञान-पत्रिकाओं तथा बुलेटिनों का संपादन किया। उनकी प्रमुख विज्ञान कृतियां हैं - बिज्ञानिका, बिज्ञान के नूतन दिगंत, लिपिरा कम्प्यूटर शिक्षा, क्लोनिंग, डीएनए एंड आफ्टर, लेसर सुपर कंडक्टीविटी। उन्होंने विज्ञान ओ परिबेश बार्ता, विज्ञान प्रभा, बिज्ञान दिगंत का संपादन किया और ओडियाक अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञान विषयक आलेख लिखे।

ओड़िया लेखक कमलकांत जेना ने कथारे कथारे बिज्ञान, बर्षा बिज दुलीरा खेला, छोटा नूहन छोटा कथा, बिग बैंग मशीन, गपारे गपारे विज्ञान, बर्षा बिजुली घडाघडी, ओ अनपारंपरिक शक्ति, गद्दा लटारा गहना कथा जैसी कृतियों से ओडिया के वैज्ञानिक साहित्य को समृद्ध किया। ओड़िया साहित्य में गोकुलानंद महापात्र (24 मई 1922-10 जुलाई 2013) का नाम अत्यंत सम्मान से लिया जाता है। महापात्र वैज्ञानिक भी थे और विज्ञान लेखक भी। उन्होंने 95 से भी अधिक विज्ञान कथाओं और बाल पोथियों से ओड़िया समाज में वैज्ञानिक चेतना जागृत की। उनकी कृतियां कृत्रिम उपग्रह, पृथ्वी बाहिरे मनीषा, चंद्रा मृत्यु, निःशब्द, गोधूलि, मैडम क्यूरी, नीलचक्र बाला सपारे आदि बड़े

चाव से पढ़ी और सराही गयीं। ई जुगारा श्रेष्ठ आबिष्कार पर ओड़िया साहित्य अकादमी के पुरस्कार से सम्मानित महापात्र के विज्ञान को समर्पित होने का आभास इससे हो सकता है कि वे उड़ीसा बिज्ञान प्रचार समिति के संस्थापकों में भी शामिल रहे।

हमें यह बात बिना किसी हील-हवाले और हुज्जत के माननी होगी कि हिन्दी के मुकाबले विज्ञान-कथाओं की दुनिया में बंगला और मराठी हमसे कई कदम आगे हैं। विज्ञान-कथाओं के मान से हिन्दी का आगार न्यून भले ही न हो, लेकिन भाषायी-महत्ता और केंद्रीयता के मान से वह अपेक्षानुरूप समृद्ध नहीं है। महाराष्ट्र और बंगाल रेनेसां में नव चेतना के अग्रदूत रहे हैं और यह अग्रता उनके साहित्य में भी दिखती है। बंगला में संदर्भित लेखन का श्रेय आश्चर्यजनक रूप से आचार्य जगदीश चंद्र बसु को जाता है। यद्यपि जगदानंद राय ने सन 1857 में 'शुक्र भ्रमण' लिखकर विधात्मक लेखन का प्रवर्तन कर दिया था, किंतु इसे ख्याति और गरिमा मिली इस आचार्य बसु की सन 1882 में प्रकाशित 'रहस्य' से। इस कथा का शीर्षक ही बरबस उत्सुकता जगाता है, जिसमें सारे काम मशीनें करती हैं। आचार्य बसु के साथ दिलचस्प प्रसंग भी जुड़ा हुआ है। हुआ यह कि सन 1896 में कुंतलीन हेयर आइल के निर्माताओं कुंतलीन गल्प पुरस्कार की घोषणा की तो किसी अज्ञान लेखक ने अपनी गल्प 'निरुद्देशेर काहिनी' भी भेजी। निर्णायकों ने इसे स्पर्द्धा में प्रथम घोषित किया। घोषणा के बाद ज्ञात हुआ कि इस विजेता कहानी के कथाकार थे सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक आचार्य जगदीश चंद्र बसु। राय और बसु की कहानी के मध्य सन 1865 में आई भूदेव मुखोपाध्याय की कहानी 'अंगुरिया बिनिमय' भी विज्ञान कथा थी। बंगला में विज्ञान गल्प लेखन में सत्यजित राय जैसी महान सिने प्रतिभा ने भी हस्तक्षेप किया। आचार्य बसु के अस्सी साल बाद सन 1962 में राय ने अपनी पहली विज्ञान कथा 'बंकुबाबूर बंधु' लिखी। उन्होंने त्रिलोकेश्वर शंकु नामक पात्र रचा और उनके सिरजे पात्र ने लोकप्रियता की सीढ़िया चढ़ी। वे प्रेमेन्द्र मित्र के सिने क्लब से भी जुड़े और 'आश्चर्य' नामक पत्रिका में भी हाथ बँटाया। वस्तुतः बंगला भाषा में विज्ञान गल्प में प्रेमेंद्र (1904-88) का स्थान अद्वितीय है। उनके घनादा और मामाबाबू लोकप्रिय हुए। घनादा तो घर-घर पहुंच गये। इसी क्रम में शंकर ने 'निवेदिता रिसर्च लैबोरेटरी' (1996) नामक उत्कृष्ट वैज्ञानिक उपन्यास लिखा।

हिन्दी में विज्ञान कथाओं का प्रारंभ अंबिकादत्त व्यास के 'आश्चर्य वृत्तांत' के धारावाहिक प्रकाशन (1884-88) से माना जाता है। केशव प्रसाद सिंह की 'सरस्वती' (1900) में छपी 'चंद्रलोक की यात्रा' से यह विधा आगे बढ़ी। देवकी नंदन खत्री और दुर्गा प्रसाद खत्री ने वैज्ञानिक संदर्भों को जासूसी (ऐयारी), रहस्य और विचित्रता से जोड़ा, लेकिन पहला वैज्ञानिक उपन्यास लिखने का श्रेय राहुल सांकृत्यायन को। उनके सन 1924 में प्रकाशित 'बाइसवीं सदी' में भविष्य की दृष्टि भी थी। यूं तो इस ओर सम्पूर्णानंद (पृथ्वी से सप्तर्षि-मंडल, 1950) और आचार्य चतुर सेन (खग्रास, 1960) भी आकृष्ट हुए, लेकिन हिन्दी के बड़े कथालेखकों ने इस विधा से दूरी बनाये रखी। हिन्दी में जिस तरह ऐतिहासिक उपन्यासों की परंपरा विकसित हुई, वैसा विज्ञान कथाओं के साथ नहीं हुआ हिन्द को वाल्टर स्काट और फिट्जेराल्ड या उमर खय्याम तो मिले लेकिन जूल्स वर्न या एच.जी. वेल्स नहीं मिल सके। बड़बोले दावों के बरक्स हिन्दी के भंडार पर गौर करें तो संतोष का भाव नहीं उभरता, बल्कि न्यूनता की ग्लानि उपजती है। आज विज्ञान लेखन में प्रवृत्त नामों की एक लंबी फेहरिस्त है किंतु प्रतिनिधि कृतियों की बात करें तो स्थिति सुखद या आश्वस्तिदायी नहीं है। फिल्मों की बात करें तो मुझे अचानक सन 60 के दशक में अपने बालपने में देखी फिल्म याद आई - मिस्टर एक्स इन बांबे। नायक किशोर कुमार के छूमंतर हो जाने का राज एक वैज्ञानिक खोज में निहित था। बालीवुड में स्टारट्रेक, द फ्लाई, बैक टु द फ्यूचर, जुरासिक पार्क जैसी फिल्में तो बनी ही नहीं, मगर सन 90 के दशक में आई फिल्म 'कोई मिल गया' में फिल्म का तानाबाना एक बाल-एलियन के धरती पर भटक कर आ जाने के इर्द-गिर्द खूबसूरती से बुना गया है। जब विज्ञान कथा की बात छिड़ी, तो मुझे सबसे पहले कृश्नचंदर का उपन्यास 'दूसरा पुरूष, दूसरी नारी' याद आया। इसमें यंत्र मानवों के उत्थान और वर्चस्व से मनुष्य के अस्तित्व पर संकट की दिलचस्प कथा है।

तो क्या यह स्थिति इसलिए उत्पन्न हुई है कि विज्ञान

हमारी चेतना की मूल धारा नहीं है? क्या हम जड़ता, अतार्किक मान्यताओं और अवैज्ञानिक परंपराओं को पोसने में गर्व अनुभव करते हैं? उत्तर हम सबके पास है। ऐसा नहीं है कि उससे हम अपरिचित हैं, हम गैरिक वसन बाबाओं को जानते हैं, रूपहले पर्दे की बॉबियों को जानते हैं, लेकिन हम विज्ञान की दुनिया के उन भाभाओं को नहीं जाने, जिन्होंने अपनी ज़िद से 'सत्य' को उद्घाटित किया और जिनकी खोजों के बल पर हमारा देश विकसित और उन्नत राष्ट्रों की पांत में गर्व से खड़ा है।

विज्ञान हमारे कॅरियर को बनाने का जरिया तो हो सकता है, लेकिन वह हमारी दैनंदिनी, हमारी चेतना और हमारे सलूक में नहीं उतरा है। हम विमर्श और कार्यकलाप में भी विज्ञान-उन्मुख न होकर विज्ञान-विमुख हैं। प्रश्न उठता है कि विज्ञान की शिक्षा, विज्ञान की विषय-वस्तु पर कविताएं, कहानियाँ और उपन्यास क्यों? उसकी उपादेयता क्या है?

पिछले दिनों मैं ओडिशा में था। ओडिशा में बहुत कम लोग हैं, जो इसी प्रांत में 19वीं सदी में जनमें अद्भुत खगोलविद पठाणि सामंत को जानते हैं। भुवनेश्वर के दर्शनीय स्थलों में म्यूजियम और मंदिरों के संकुल तो शुमार हैं, लेकिन पठाणि सामंत तारामंडल इस गौरव से वंचित है। ऐसे ही महान वैज्ञानिक जीबीएस हाल्डेन विलायत छोड़कर भारत चले आये थे और कुछ वर्ष कलकत्ता में बिताने के बाद भुवनेश्वर में आकर उन्होंने 'लैब' की स्थापना की थी और यहीं आंखें मूंदी। आज भुवनेश्वर में हाल्डेन को कोई नहीं जानता। सम्भवतः एक पार्क का नामकरण उनकी स्मृति में किया गया है। यह शोध का विषय है कि भारत में वैज्ञानिकों की स्मृति को कहाँ-कितना सहेजा गया है?

विज्ञान हमारे कॅरियर को बनाने का जरिया तो हो सकता है, लेकिन वह हमारी दैनंदिनी, हमारी चेतना और हमारे सालूक में नहीं उतरा है। हम विमर्श और कार्यकलाप में भी विज्ञान-उन्मुख न होकर विज्ञान-विमुख हैं। प्रश्न उठता है कि विज्ञान की शिक्षा, विज्ञान की विषय-वस्तु पर कविताएं, कहानियाँ और उपन्यास क्यों? उसकी उपादेयता क्या है? वस्तुतः आज हमारे सामासिक समाज में विज्ञान की महत्ता और उपादेयता कई गुना बढ़ गयी है। हम जिन सामाजिक विकारों और व्याधियों से जूझ रहे हैं, उनके उपचार और उनसे मुक्ति के लिए हमें विज्ञान लेखन की जरूरत है। विज्ञान हमें अनर्गल विश्वासों की 'फांस' से मुक्त करता है। जीवन और जगत में कुछ भी विज्ञान-बाह्य या विज्ञानेतर नहीं है। विज्ञान रहस्यों के अंधियारे को भेदकर हमें सत्य के निर्मल आलोक तक ले जाता है। विज्ञान के सहारे जीवन और जगत में पैठना उस परम सत्य को जानना है, जिसे हम अलौकिक या ईश्वरीय की संज्ञा देते हैं। इसी अवधारणा के तहत महात्मा गांधी कहते हैं - ''सत्य ही ईश्वर है।'' क्या हम सभी के ब्रह्मांड की उत्पत्ति, जीवन और जगत के अंतर्सम्बंधों और ऊर्जा और रसायनों के चमत्कारिक खेलों को समझना-बूझना नहीं चाहिए।

विज्ञान इस बात की पुष्टि करता है कि मनुष्य मनुष्य में विभेद ईश्वरीय व्यवस्था न होकर, मनुष्य निर्मित है। चातुर्वण्य, जाति प्रथा, अस्पृश्यता, रंगभेद, नस्लभेद, जातीय श्रेष्ठता, जीनोसाइड, होलोकास्ट आदि का कोई वैज्ञानिक या तार्किक आधार नहीं है। विज्ञान जटिल चीजों के उस सच हो रेशा-रेशा करके दिखाता है, जो हमें गझिन अपारदर्शी और गूढ़ दिखाई देते हैं। ऐसे कठिन समय में जब पुनरुत्थानवादी शक्तियाँ जोर-शोर से सक्रिय हैं, और एक मुहिम के तहत कर्मकांडों के औचित्य को सिद्ध और प्रतिष्ठित किया जा रहा है, विज्ञान लेखन का महत्व कई गुना बढ़ गया है। यह सच है कि शब्दों का असर मस्तिष्क में धीरे-धीर रिसता है, लेकिन यही 'रिसाव' उसकी अमोघ शक्ति है और उसकी इसी शक्ति से व्यवस्थाएं, भयभीत रहती हैं। व्यवस्था मनुष्य को बाँटती है, जबकि विज्ञान जोड़ता है। बहुधा धार्मिक आस्थाओं के पाँव नहीं होते, जबकि विज्ञान का 'यकीन' ज़मीन पर पाँव टिकाकर आगे बढ़ता है। धर्म या परंपरा नदी या जलाशय में सामूहिक स्नान की बात करते हैं, जबकि विज्ञान नदी या जलागार की स्वच्छता और शुद्धिकरण की बात करता है। हमें तार्किक और तर्कतीत के बीच चले आ रहे निरंतर द्वन्द्व को बूझना होगा और परस्पर पूछना होगा कि पार्टनर, किस ओर हो तुम? यह अकारण नहीं है कि रबीन्द्रनाथ ठाकुर मोक्ष की अवधारणा को नकारते हैं और इस सुन्दर धरती पर फिर-फिर जन्म लेने की आकांक्षा व्यक्त करते हैं। आइंस्टीन से जब यह पूछा जाता है कि क्या वे फिर से जन्म लेना चाहेंगे तो वे तपाक से कहते हैं 'नहीं, कतई नहीं'। दरअसल उन्होंने एक जन्म में कई जन्मों को जिया और दुनिया को अपनी खोजों से रोशन किया। वैज्ञानिक चेतना का जागरण और प्रसार भावनात्मक शोषण से मुक्ति का भी महत्वपूर्ण जरिया बन सकता है। ज़ाहिर है कि बड़े पैमाने पर और सशक्त विज्ञान लेखन के बिना यह संभव नहीं होगा।

विज्ञान के क्षेत्र में कामयाबी जोखिम, जिज्ञासा और ज़िद के बिना संभव नहीं है। सच यह भी है कि विज्ञान कथाएँ और वैज्ञानिकों के जीवन वृत्त पाठकों में सत्य के अन्वेषण और साहसिक वृत्ति का संचार करती है। यही नहीं, उन्हें पढ़ने-विचारने से आदमी को इंसा होने के मौके भी मयस्सर होते हैं। भारतीय इतिहास के सन 1860-1960 के दरम्यानी कालखंड पर गौर करें। यह परिदृश्य में वैज्ञानिकों की नीहारिका के उभरने

का चमकीला कालखंड हैं। प्रफुल्लचंद्र राय और जगदीश चंद्र बसु से होमी जहाँगीर भाभा तक। अधिकांश वैज्ञानिकों के मन में राष्ट्रभक्ति की उत्कट भावना थी। भाभा तो इसी कारण विलायत नहीं गये। बंगाल केमिकल्स के प्रफुल्ल चंद्र रे (1861-1942) से गांधी और नेहरू प्रभावित थे। बंगाल के सन 1923 के जलप्लावन में मेघनाद साहा ने नेताजी सुभाष के साथ राहत कार्यों में हाथ बंटाया। आचार्य रे, जिनहोंने 'द हिस्ट्री ऑफ हिन्दु केमिस्ट्री' जैसा ग्रंथ लिखा, के गांधी, जगदीश बसु और गोखले से नजदीकी रिश्ते थे। भारतीय विज्ञान के संत फ्रांसिस कहे गये रे ने उस ज़माने में कलकत्ता विश्वविद्यालय को 1.80 लाख रुपये का दान दिया था। अन्यों की मदद छोड़िये। यहां तक कहा गया कि यदि महात्मा गांधी दो और पी.सी.रे उत्पन्न कर पाते तो एक साल में स्वराज प्राप्त कर लेते। नोबेल विजेता सीवी रामन कहते हैं- ''भारत की आर्थिक समस्याओं का बस एक ही हल है और वह है विज्ञान एवं अधिक विज्ञान।'' सीवी रामन मानते थे कि देश में सभी पाठ्य पुस्तकों के मुखपृष्ठ पर गांधी जी का चित्र होना चाहिये। रामन कहते हैं ''यदि भारत विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास करने में असफल रहता है, तो उसका कोई भविष्य नहीं है।'' इस कथन को विलायत छोड़कर भारत आ बसे जीबीएस हाल्डेन का कथन पूर्णता प्रदान करता है कि भारत को ऐसे लोगों की आवश्यकता है जो देश की सरकार में विज्ञान के बारे में कुछ समझ पैदा कर सकें।

प्रसंगवश, वैज्ञानिकों के सरोकारों पर गौर करें। देश-विदेश के अधिकांश वैज्ञानिकों की साहित्य, कला और संगीत में गहरी अभिरुचि रही है। शांति स्वरूप भटनागर जहाँ निस्पृह व्यक्ति थे, वहीं सत्येंद्रनाथ बोस की सादगी का तो कहना ही क्या! वे सादा लुंगी पहनकर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में चले जाते थे। वे बांसुरी और यसराज- वादन में निपुण थे और कलागुरू जामिनी राय से प्रायः कला विमर्श करते रहते थे। यदि वे वैज्ञानिक न होते तो बिला शक संगीतज्ञ होते। अपने सरोकारों के तहत उन्होंने 'ज्ञान-विज्ञान' पत्रिका भी शुरू की थी। महालनोबीस की तो बात ही निराली! कवीन्द्र रवीन्द्र उनके लेखन के प्रशंसक थे। गुरू देव के साहित्य का संपादन, उनकी प्रतिभा का परिचायक है। जहाँ उन्होंने 'विश्वभारती' की स्थापना में महती सहयोग दिया, वहीं गुरूदेव ने उनकी सांख्यिकी प्रयोगशाला की स्थापना में सहायता की। वे दानवीर भी थे और पंचवर्षीय योजना के वास्तुकार भी। भाभा और साराभाई की ललित कलाओं में गहरी रूचि थी। मेघनाद साहा को फुटबाल, साहित्य और वनस्पतियों से गहन प्रेम था। नदियां उनकी चिंताओं की परिधि में थीं। उन्होंने नदी अनुसंधान प्रयोगशाला की नींव डाली और भारतीय कैलेंडर में सुधार किया। वे कलकत्ता से निर्वाचित होकर निर्दलीय प्रत्याशी के तौर पर सन 52 में लोकसभा में पहुंचे। उनका कहना था कि आज के दौर में विज्ञान व प्रौद्योगिकी भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं, जितने कि कानून और व्यवस्था। भारत रत्न विश्वेश्वरैया ने अपनी शतायु में कई सदियों का जीवन जिया। उनके सरोकारों का दायरा विविध और विराट था। वे गांधी के प्रशंसक होकर भी गांधी से असहमत थे और प्रगति के लिए ग्रामोद्योगों के साथ-साथ भारी उद्योगों के हिमायती थे। कहना न होगा कि पं. नेहरू ने उनकी अवधारणा को वरीयता दी। प्रसंगवश उल्लेखनीय है कि पं. नेहरू विज्ञान को बढ़ावा देने वाले स्वप्नदृष्टा प्रधानमंत्री थे। बीरबल साहनी, होमी जहांगीर भाभा और के.एस.कृष्णन के संस्थानों की स्थापना तथा परमाणु ऊर्जा और अंतरिक्ष विज्ञान के विकास में उनका अतुल्य योगदान रहा। विज्ञान की महत्ता को अधिक प्रमाणों की जरूरत नहीं है। भारत में रक्षा विज्ञान के प्रणेता, दौलत सिंह कोठारी, जिनकी प्रयोगशाला के लिए आइंस्टीन ने शुभेच्छा भेजी थी, किसी सार्वकालिक मंत्र की तरह कहते हैं - ''हमारे समय का सबसे बड़ा सत्य है विज्ञान।''

तो यह है विज्ञान का सच। विज्ञान स्वयं में परीक्षित सच है। विज्ञान का सच वह सच है, जो सदियों से परम-सत्य की खोज में रत है। हमारा जीवन, यह धरती और ब्रह्माण्ड भेदभरा और रहस्यमय है। विज्ञान रहस्यों को 'भेदता' है। वह जीवन और जगत की उत्पत्ति की खोज ही नहीं करता, वरन हमारे जीवन को सुकर भी बनाता है। विज्ञान ने संचार, परिवहन, चिकित्सा आदि में चमत्कारिक उपलब्धियां हासिल की हैं। विज्ञान हमारे मस्तिष्क के 'जालों' को साफ करता है। साथ ही वह हमारा 'मनस' भी रचता है। अलौकिता की अंतहीन और ऊल-जलूल धारणाओं में माथापच्ची करने के बजाय वह हमें स्वयं को 'लोक' के अनुरूप ढालने और बेहतर बनाने की सीख देता है। लेकिन यह तभी संभव है, जब विपुल विज्ञान-साहित्य हमारे पास हो। विज्ञान साहित्य मनुष्य की भावनाओं, नैतिक मूल्यों और सामाजिक सरोकारों की परिभाषा बदल सकता है। विज्ञान लेखन से यकीनन कथेतर लेखन का विकास भी जुड़ा हुआ है। यह मेरे तई विस्मय का विषय है कि महान वैज्ञानिकों के जीवन वृत्त पर हिन्दी में औपन्यासिक कृतियों का सर्वथा अभाव है, जबकि वहां श्रेष्ठ कथानक उपलब्ध हैं। जरूरी है कि अपने सरोकारों के तहत हम विज्ञान लेखन की ओर प्रवृत्त हों, क्योंकि आज के विषम समय में सही अर्थों में विज्ञान लेखन ही सत्-साहित्य है। विचार, आचार और लेखन में विज्ञान को वरीयता हमारे समकाल का सबसे बड़ा 'तकाजा' है। विज्ञान लेखन के 'पाठ' से हम न केवल बेहतर जीवन जी सकते हैं, वरन दुनिया को अधिक निर्मल, मानवीय, सुंदर और निरापद बना सकते हैं।

sudhirsaxena54@gmail.com

फ्रैंकेंस्टाइन

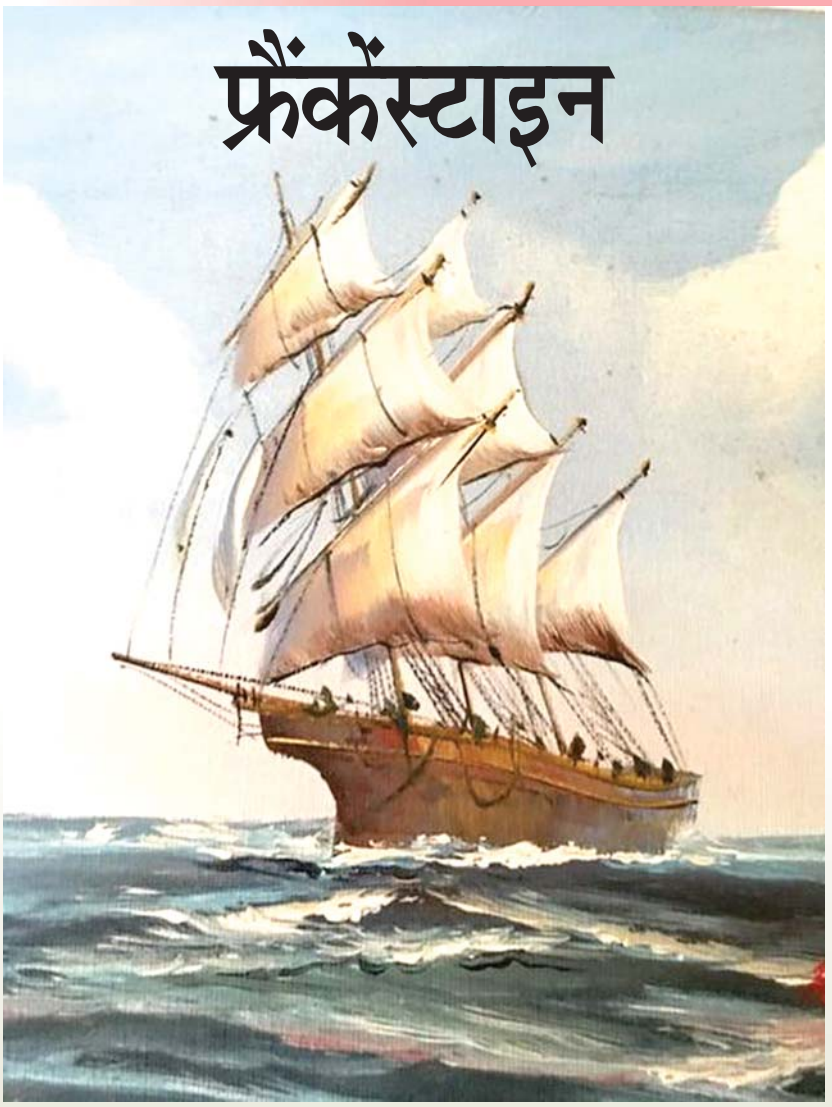

हम जमीन से कई सौ मील दूर थे और ऐसी जगह किसी व्यक्ति को गाड़ी चलाते देखना हमारे लिए बहुत बड़े विस्मय का कारण था। इस घटना के कोई दो घंटे बाद हमने बर्फ के नीचे के जल की आवाजें सुनीं और रात होते-होते बर्फ पिघल गयी। फिर भी, अनपिघले बर्फ के बड़े-बड़े खंड जल पर तैर रहे थे और उनके भय में हमें रात भर उसी स्थल पर जलपोत को रोके रहना पड़ा।

मेरी डब्ल्यू. शेली

सेंट पीटर्सबर्ग, दिसम्बर 11

तुम्हें यह जान कर खुशी होगी कि जिस यात्रा के बारे में तुमने इतने अमंगल की आशंका की थी उसका प्रारंभ बिना किसी दुर्घटना के हो गया है। कल ही मैं यहां पहुंचा हूं और पहला काम यही कर रहा हूं कि अपनी प्रिय बहन को आश्वस्त कर दूं कि मैं कुशल से हूँ।

जब मैं लंदन से धुर उत्तर की ओर यहाँ की सड़कों पर चलता हूँ तो ठंढी उत्तरी हवाएं मेरे कपोलों को छूती हैं और मुझे नये पुलक से भर जाती हैं। तुम इस स्पंदन को समझती हो? ये हवाएँ उन सरहदों से चल कर आती हैं जिनकी ओर मैं अग्रसर हूँ और मुझे उन बर्फानी प्रदेशों का पूर्वाभास दे जाती हैं। मेरी कल्पनाएं सजग हो उठती हैं और मुझे इस कथन पर विश्वास नहीं होता कि उत्तरी ध्रुव केवल कुहासों से भरा एक निर्जन भूमि-भाग है। वहां, बर्फ और कुहरों के आगे, शांत सागर के पार, प्रकृति के अनिंद्य सौंदर्य की दुनिया है जहां सृष्टि के अनेक विस्मय बिखरे पड़े हैं। मार्गेरेट! वहां सूरज हमेशा नजर आता है, उसकी चौड़ी तश्तरी अजस्र प्रकाश छिटकाती हुई आंचल की तरह छायी रहती है। वह अनदेखा, अजाना देश अनंत प्रकाश का क्षेत्र है। मैं मनुष्य के पाँवों से अछूती उस धरती पर अपने चरण रख सकूंगा, यह कल्पना मुझे मार्ग की कठिनाइयों और मृत्यु के भय से विचलित नहीं होने देती। अगर यह भी मान लिया जाय कि यह कोरी कवि-कल्पना है तो भी सफल होने पर मैं उत्तरी ध्रुव के पास से उन देशों के लिए मार्ग खोज सकूंगा जहां पहुंचने के

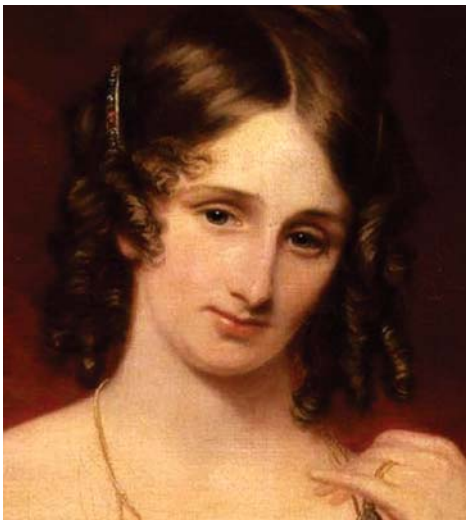

मेरी डब्ल्यू शेली एक अंग्रेजी उपन्यासकार थी जिन्होंने गॉथिक उपन्यास फ्रेंकस्टीन लिखा। उनके द्वारा लिखी कहानी 'द मार्डन प्रोमेथियस' को विज्ञान गल्प श्रेणी की आरंभिक रचना मानी जाती है। मेरी डब्ल्यू शेली का जन्म 30 अगस्त 1797 को सामर्थ टॉउन, लंदन, यूनाईटेड किंगडम में हुआ। वे रोमांटिक कवि और दार्शनिक पर्सी विशे शैली की पत्नी थी और उनके कार्यों को संपादित तथा प्रचारित करती थीं। द लास्ट मैन, मैथिल्डा या मल्टीडा, वैलपैरगा द मार्टल इम्मार्टल, लोडोरे, गोथिक टेल्स, हिस्ट्री ऑफ सिक्स वीक्स टूर जैसी रचनाओं के लिए याद किये जाने वाली मेरी डब्ल्यू शेली का निधन 1 फरवरी 1851 को लंदन में हुआ।

लिए अभी महीनों लगते हैं। आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए यह हल कितना उपादेय होगा यह तुम सोच सकती हो।

मैं अगले पखवाड़े में आर्केजेल के लिए प्रस्थान कर दूंगा। वहां किराये पर एक जलपोत लूंगा और आवश्यकतानुसार नाविक भी, विशेषतया वे जो व्हेल के शिकार में सिद्धहस्त हैं। जून से पहले मैं लंगर नहीं खोलूंगा। और मैं कब लौटूंगा? मार्गेरेट! इस प्रश्न का क्या उत्तर दूं! अगर सफलता मेरे हाथ लगी तो कई महीने, शायद कई साल, बीत जाएंगे तुम्हारे पास पहुंच सकने में। और यदि मैं असफल रहा तो या तो जल्दी ही लौट आऊंगा या फिर कभी नहीं।

विदा मेरी अच्छी मार्गेरेट!

सस्नेह,

तुम्हारा भाई
आर. वाल्टन
जुलाई 7

जल्दी में कुछ पंक्तियां घसीटे दे रहा हूं। मैं कुशल से हूं और अपनी समुद्रयात्रा में काफी आगे निकल आया हूं। यह पत्र मैं आर्केजेल से लौटने वाले एक व्यापारी के हाथ भेज रहा हूं। मेरे उत्साह में कोई अंतर नहीं आया है। मेरे नाविक भी साहसी और कर्तव्य में दृढ़ हैं। बर्फ के वे बड़े-बड़े खंड जो मेरे जलपोत के आस-पास बहते हुए आगामी खतरों की पूर्व-सूचना दे रहे हैं, हममें से किसी को भी हतोत्साह नहीं कर पाते।

अभी तक ऐसी कोई भी बड़ी घटना नहीं घटी है जिसका उल्लेख पत्र में किया जा सके। एक-दो बार बहुत तेज समुद्री हवाएं आयी हैं और एक बार हमारे पोत में दरार पड़ गयी थी, लेकिन ये ऐसी घटनाएं हैं जिन्हें समुद्री नाविक घटनाएं नहीं कहते।

अच्छा, अब समाप्त करता हूं।

शुभकामनाओं सहित,

आर.डब्ल्यू.
अगस्त 15

एक अत्यंत आश्चर्यजनक घटना घट चुकी है। पिछले सोमवार को हम करीब-करीब चारों तरफ से बर्फ के घिर गये थे। मुश्किल से इतनी जगह बची थी कि हमारा जलपोत तैर सके। इस पर, कुहरे की गहरी पर्तें भी छायी हुई थीं।

कोई दो बजे कुहरा फटा। हमने देखा जिधर भी निगाह जाती है उधर बर्फ ही बर्फ है, ऐसी बर्फ जिसका कोई अंत नहीं। तभी सहसा हमने एक अदभुत दृश्य देखा और हम अपनी विपत्ति कुछ क्षणों के लिए भूल गये। हमने देखा, कोई आधे मील दूर स्लेज पर बंधी एक छोटी सी गाड़ी उत्तर की ओर दौड़ती जा रही है। उसमें कुत्ते जुते हुए थे और मनुष्य की आकृति का कोई व्यक्ति, जो अपने राक्षसी डील-डौल के कारण अमानवीय लगता था, उन्हें हांक रहा था। हमने अपनी दूरबीनों से उस तेजी से बढ़ते यात्री को देखा, लेकिन वह शीघ्र ही बर्फ की ऊबड़-खाबड़ उंचाइयों में ओझल हो गया।

हम जमीन से कई सौ मील दूर थे और ऐसी जगह किसी व्यक्ति को गाड़ी चलाते देखना हमारे लिए बहुत बड़े विस्मय का कारण था।

इस घटना के कोई दो घंटे बाद हमने बर्फ के नीचे के जल की आवाजें सुनीं और रात होते-होते बर्फ पिघल गयी। फिर भी, अनपिघले बर्फ के बड़े-बड़े खंड जल पर तैर रहे थे और उनके भय में हमें रात भर उसी स्थल पर जलपोत को रोके रहना पड़ा।

सुबह रोशनी छिटकते ही मैं 'डेक' पर गया और मैंने देखा कि सभी नाविक पोत के एक किनारे झुके समुद्र में किसी से बातें कर रहे हैं। वह भी असल में एक स्लेज ही थी जैसी कि हमने पहले भी देखी थी। उस गाड़ी में सिर्फ एक ही कुत्ता जुता था और एक मनुष्य बैठा था। हमारे नाविक उस व्यक्ति से जहाज में आने के लिए कर रहे थे। इससे पहले हम स्लेज पर जिस मनुष्याकृति को देख चुके थे वह शायद किसी अनजान द्वीप का बर्बर बनवासी रहा हो, लेकिन यह व्यक्ति तो एक यूरोपियन था। जब मैं 'डेक' पर आया तो एक नाविक ने कहा – 'लो, हमारे कप्तान आ गये और वे तुम्हें इस तरह समुद्र की बलि नहीं चढ़ने देंगे।'

मैंने उसे अपनी यात्रा का उद्देश्य बता दिया। उसने चेहरे पर उदासी की स्याही और गहरी हो गयी। टूटते स्वरों में उसने कहा – 'मेरी तरह तुम भी अभागे इंसान हो, मेरे दोस्त! तुम पर भी मेरी तरह पागलपन सवार है, और तुमने भी मेरी तरह ही मादक आसव पिया है। सुनो, मैं तुम्हें अपनी कहानी सुनाता हूँ। सुनकर तुम यह प्याला होठों तक ले जाने के पहले ही तोड़ दोगे।'

मुझे देख कर उस अजनबी ने कुछ विदेशी लहजे के साथ अंग्रेजी में पूछा–'इसके पहले कि मैं आपको जहाज पर चढने की बात सोचूं, कृपया यह बतलाइये कि आप जा कहां रहे हैं?

मौत के मुंह में खड़े व्यक्ति से ऐसा प्रश्न सुन कर हमें आश्चर्य हुआ। मैंने उसे बताया कि हम लोग खोज के लिए उत्तरी ध्रुव की जल-यात्रा पर निकले हैं। सुन कर उसे संतोष हुआ, और वह हमारे पोत पर चढ़ आया।

उसका अंग-अंग ठंडक की वजह से अकड़ रहा था। समस्त शरीर पर भूख और थकान के चिह्न अंकित थे। हम उसे 'केबिन' में ले जाना चाहते थे, लेकिन जैसे ही खुली हवा से दूर ले गये वह बेहोश हो गया। हम उसे फिर 'डेक' पर ले आये। वहां उसके शरीर पर धीरे-धीरे ब्रांडी की मालिश की और थोड़ी सी जबर्दस्ती उसके कंठ में उतार दी। धीरे-धीरे वह प्रकृतिस्थ हुआ और गर्म 'सूप' पीने के बाद उसमें स्फूर्ति के लक्षण दिखायी दिये।

दो दिन तक वह लगभग मौन-सा रहा, जैसे किसी बहुत बड़ी मानसिक वेदना से पीड़ित हो। जब कभी आभार प्रकट करने के लिए वह कुछ बोलता उस समय उसका मुखमंडल एक विशिष्ट करुणा और मधुरिमा से प्रदीप्त हो उठता। लेकिन अधिकतर वह किसी गहरे दुःख में डूबा-सा लगता और कभी-कभी यंत्रण के कारण अपने दांत भी पीसता नजर आता।

नाविक अजनबी मेहमान से अनेक प्रश्न पूछना चाहते थे लेकिन मैंने उसकी मानसिक व्यथा का अनुमान लगा कर उन्हें ऐसा करने से रोक रक्खा था। एक बार किसी ने पूछ ही लिया – 'आप इतनी दूर बर्फ में क्यों आये हैं?'

'मेरे साथ से जो भाग निकला है उसे खोजने।'

'क्या वह भी इसी तरह यात्रा कर रहा था?'

'हां।'

'तब तो हमने उसे अवश्य ही देखा है। आप से मिलने के एक दिन पहले ही हमने किसी को दो कुत्तों की एक स्लेज तेजी से भगाते हुए देखा था।'

सुनते ही अजनबी ने बड़ी सतर्कता से कई प्रश्न पूछ डाले। वह जानना चाहता था कि वह नर-पिशाच किस तरफ से जा रहा था। जब भी उस व्यक्ति का उल्लेख उसने किया, हर बार उसे नर-पिशाच ही कहा। उसने मुझसे पूछा- 'क्या आप यह सोचते हैं कि बर्फ पिघलने और खंडों के टूटने से उस नर-पिशाच की स्लेज नष्ट हो गयी होगी?' मैंने उत्तर दिया कि इस संबंध में निश्चयात्मक ढंग से कुछ नहीं कहा जा सकता। मेरा उत्तर सुनकर उसके जीर्ण-शीर्ण शरीर में मानो फिर से शक्ति का स्फुरण हुआ हो। वह

अधिकांश समय 'डेक' पर ही बिताता है। मैंने उसे समझा-बुझा कर 'केबिन' में बिठा दिया है, और लोगों को तैनात कर दिया है कि वे चारों ओर बराबर निगरानी रक्खें और यदि फिर से वह स्लेज दिखायी दे तो तुरंत सूचित करें।

इस अजनबी के संबंध में अब अगले पत्र में लिखूंगा।

डब्ल्यू. वाल्टन

अगस्त 13

इस नये मेहमान में मेरी दिलचस्पी बराबर बढ़ती जा रही है। वह अब स्वस्थ हो चुका है और 'डेक' पर खड़ा-खड़ा निरंतर ताकता रहता है कि उसे कहीं वहीं स्लेज नजर आ जाय।

मैंने उसे अपनी यात्रा का उद्देश्य बता दिया। उसने चेहरे पर उदासी की स्याही और गहरी हो गयी। टूटते स्वरों में उसने कहा – 'मेरी तरह तुम भी अभागे इंसान हो, मेरे दोस्त! तुम पर भी मेरी तरह पागलपन सवार है, और तुमने भी मेरी तरह ही मादक आसव पिया है। सुनो, मैं तुम्हें अपनी कहानी सुनाता हूं। सुनकर तुम यह प्याला होठों तक ले जाने के पहले ही तोड़ दोगे।'

इन अगले पृष्ठों में मैंने उसी की आप-बीती लिखी है।

मेरा जन्म जेनेवा के एक सामान्य परिवार में हुआ था। जब मैं लगभग पांच साल का था, मेरे माता-पिता इटली के सीमांत की यात्रा पर निकले और एक सप्ताह के लिए कोमो की सुंदर झील के किनारे ठहरे। वहां एक निर्धन परिवार की झोपड़ी में मां ने एक आकर्षक लड़की को देखा। वह बालिका बहुत गोरी

थी। उसके बाल सोने के तार-से लगते थे। गरीबी के बावजूद उसके माथे पर अप्रतिम सौंदर्य का मुकुट था। यह बालिका उस किसान परिवार की नहीं थी बल्कि मिलान के किसी संभ्रांत दंपति की पुत्री थी। उसकी मां उसे जन्मते ही मर गयी थी और लालन-पालन के लिए वह किसान-दंपति को सौंप दी गयी थी। बाद में, निर्धनता के कारण, उसका पिता भी नगर छोड़ कर चला गया था, और वह बालिका किसान परिवार का ही अंग बन गयी थी। मैं अपने माता-पिता की अकेली संतान था। मां के मन में एक बेटी की इच्छा थी। उन्होंने किसान दंपति से उस बालिका को मांग लिया। गांव के पुरोहित ने उसका नाम रक्खा-एलिजाबेथ। मां ने कहा यह मेरे बेटे विक्टर के लिए एक भेंट है, और तभी से मैंने एलिजाबेथ को अपना, केवल अपना, मान लिया।

जब मैं सात वर्ष का था, मेरे एक भाई हुआ। माता-पिता घूमना-फिरना छोड़कर एक जगह जमना चाहते थे। उन्होंने बेलरिव के तट वाले घर को चुना। बचपन में मैं एकांतप्रिय था और घर पर एलिजाबेथ के साथ ही खेलता रहता था। यहां एक लड़का मेरा मित्र बना-हेनरी क्लेरवल। हेनरी को साहसिक अभियानों की पुस्तकें पढ़ने का शौक था। वह वीरतापूर्वक कविताएं और शूरवीरों के साहस की कहानियां लिखता था।

शुरू से ही मेरी प्रवृत्ति उत्तेजनापूर्ण थी लेकिन यह उत्तेजना बालसुलभ क्रीड़ाओं में नहीं बल्कि अध्ययन-मनन में अधिक मुखर हुई। दुनिया भर का ज्ञान मैं अपने में समेट लेना चाहता था।

स्वर्ग और पृथ्वी के रहस्यों को जानना ही मेरा प्रिय विषय था। मैं पदार्थो के बह्य तथ्यों को जानना चाहता था। प्रकृति की अभ्यंतर आत्मा तक पहुंचना चाहता था, और मनुष्य की अंतरात्मा की अतल गहराइयों को छू लेना चाहता था। मेरा ध्यान जयादातर अपार्थिव की ओर रहता था, ठीक शब्दों में कहा जाय तो पार्थिव पदार्थो में छिपे अपार्थिव रहस्यों की ओर।

जब मैं तेरह वर्ष का था, हम लोग थोनो तक घूमने गये थे। वहां सराय में मुझे कार्नेलियस एग्रिप्पा के लेखों का एक ग्रंथ मिला जिसके अध्ययन ने मेरी रुचि के विषयों पर एक नया प्रकाश डाला। घर पहुंचकर मैंने एग्रिप्पा के और ग्रंथ भी पढ़े, और बाद में पार्सेल्सस और एलवर्टस मेग्नस के ग्रंथों का पारायण भी कर डाला। मेरा ध्यान जीवन के रहस्यों को जानने की ओर केंद्रित हो गया। मैं सोचा करता था कि यदि शारीरिक रोगों से मनुष्य के छुटकारे के उपायों को खोज सकूं तो मेरा जीवन सार्थक हो जाएगा। मैंने अपनी प्रिय पुस्तकों में पढ़ा था कि भूतों को जगाने और जिन्न साध लेने से बड़े-बड़े काम किये जा सकते हैं और मैं ऐसे ही सपनों में डूबा रहता।

अभी तक मैं जेनेवा के स्कूलों में पढ़ा था। मेरी अवस्था 17 वर्ष की हो गयी थी और पिता जी ने मुझे इंगोल्स्टेट यूनिवर्सिटी में भेजने की बात सोची। तभी मेरे जीवन की दुर्घटनाओं का पहला क्रम शुरु हो गया।

एलिजाबेथ को तेज ज्वर आ रहा था। बीमारी बढ़ती गयी और उसके जीवन का खतरा सामने नजर आने लगा। बीमारी शायद छूत की थी इसलिए हम लोगों को उससे दूर रक्खा गया। पहले मां भी दूर रहीं लेकिन उनकी ममता ने उन्हें दूर नहीं रहने दिया। उन्होंने बीमार एंलिजाबेथ की सेवा में रात-दिन एक कर दिये। इसका परिणाम यह हुआ कि एलिजाबेथ तो रोग-मुक्त हो गयी, लेकिन उसी ज्वर ने मेरी मां को अपनी समग्र उग्रता के साथ जकड़ लिया। मेरी मां ने बड़ी शांति के साथ अंतिम सांस ली। मृत्यु के समय उनके चेहरे पर सहज स्नेह की दिव्य छाप अंकित थी।

इंगोल्स्टेट में मैं प्राकृतिक दर्शन के अध्यापक क्रेंप महोदय से मिला। उन्होंने जब मेरे प्रिय लेखकों के नाम जाने तो उन्हें बड़ा क्षोभ हुआ। उन्होंने कहा कि मैंने अभी तक का अपना समय बेकार नष्ट कर दिया है। मेरे पढ़ने के लिए उन्होंने पुस्तकों की एक नयी सूची बना दी।

रसायन शास्त्र के अध्यापक वाल्डमन महोदय ने तो अपनी वक्तृत्व शक्ति से मुझ पर जादू सा कर दिया। उन्होंने कहा था - 'इस विज्ञान के प्राचीन अध्यापकों ने बहुत दूर-दूर की उड़ान भरी लेकिन कर के कुछ भी नहीं दिखाया। आधुनिक वैज्ञानिक अपनी सीमाएं जानते हैं। वे जानते हैं कि एक धातु को दूसरी धातु में नहीं बदला जा सकता और संजीवनी की बात कोरी कवि-कल्पना है। इन वैज्ञानिकों ने, जिनकी आंखें 'माइक्रोस्कोप' पर लगी रहती हैं, कुछ अद्‌भुत वस्तुओं का ज्ञान प्राप्त किया है। वे प्रकृति के गूढ़ अभ्यंतर रहस्यों तक भी पहुंचे हैं। वे यह जानते हैं कि हमारी शिराओं में रक्त का संचार किस प्रकार होता है और यह, कि हम जिस हवा में सांस लेते हैं उसकी रचना के उपकरण क्या हैं। अपने यत्नों से वे बादलों के गर्जन को रोक सकते हैं, भूचालों की खिल्ली उड़ा सकते हैं और अदृश्य सृष्टि के साथ,

उसी की छायाओं को लेकर, खिलवाड़ कर सकते हैं।' उनके ये शब्द ही आगे चल कर मेरे सर्वनाश का कारण बन गये।

वाल्डमन महोदय से मैं उनके घर पर मिला और उनके ज्ञान तथा सद्व्यवहार से बहुत प्रभावित हुआ। वे मुझे अपनी निजी प्रयोगशाला में ले गये और उन्होंने अपने विविध यंत्रों का प्रयोग करके मुझे दिखाया। अध्ययन के प्रति मेरी लगन देख कर वे मुझसे संतुष्ट हो गये और उन्होंने मुझे अपनी प्रयोगशाला में प्रयोग करने की अनुमति भी प्रदान कर दी।

जिस वस्तु की ओर मेरा सबसे ज्यादा ध्यान गया वह थी मनुष्य-शरीर की रचना। अक्सर मैं अपने आप से प्रश्न पूछा करता कि क्या जीवन का सिद्धान्त परिवर्तनशील है? जीवन के उपादानों की परीक्षा करते हुए पहले मुझे मृत्यु को जानना आवश्यक था। जन्म और मरण के कार्य-कारण संबंधों पर कार्य करते हुए एक दिन एकाएक मुझे इस गूढ़ अंधकार में प्रकाश की ऐसी किरण दिखायी पड़ गयी जिसने मेरे सामने मृत्यु के रहस्य को स्पष्ट कर दिया। मैं हर्ष और विस्मय के अतिरेक में डूब गया। मैं वह रहस्य जान गया था कि जिसकी सहायता से मैं एक नये जीवधारी का निर्माण कर सकता था।

इतनी महत्वपूर्ण शक्ति से समन्वित हो कर मैंने सबसे पहले यही सोचा कि मैं इसका क्या सदुपयोग करूं। मेरे मन में विविध प्रकार के विचार उठ रहे थे। अपनी शक्ति से मैं मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए एक नयी संतति का स्रष्टा बन सकता था। मैंने निश्चय कर लिया कि मैं स्वयं एक निष्प्राण देह को संजोकर उसमें प्राणों की प्रतिष्ठा का प्रयोग करूंगा।

चांद के हलके उजाले में मैंने कितनी ही कब्रें खोज डालीं, कितने ही पशुओं को मार कर एक नये शरीर के उपकरण जुटाये। आज वे बातें कहते हुए मेरे हाथ कांप रहे हैं, लेकिन तब लगातार महीनों मैं अपने काम में जुटा रहा।

शिशिर, वसंत और ग्रीष्म आये और बीत गये। घर पर लोग मेरे निरुत्तर रहने से परेशान थे। मै स्वयं एकदम पीला, रोगग्रस्त और कृशकाय हो गया था, लेकिन इस आशा में कि शीघ्र ही मुझे अपने परिश्रम का सुखद परिणाम मिलने वाला है, मैं अपने आप को भुलाये रहा।

वह नवंबर की एक डरावनी रात थी। मेरे हाथ में संजीवन-मंत्र थे और पास ही एक शरीर निष्प्राण पड़ा था। उसके शरीर के विविध उपकरण मैंने अलग-अलग लाकर एकत्र किये थे। फिर भी, उसके हाथ-पांव बेडौल नहीं थे। कद मैंने काफी बड़ा रक्खा था। उस पर पीले रंग की चमड़ी थी, लेकिन उसमें उसके शरीर की मांसपेशियां और शिराएं मुश्किल से ही छिप पा रही थीं। मैने उसकी मुखाकृति सुंदर बनानी चाही थी। सुंदर! हे भगवान, उसके समस्त अवयव मिलकर उसे एक ऐसी भयावह आकृति प्रदान कर रहे थे कि मैं एक बार कांप गया।

रात का एक बज चुका था। बाहर बारिश हो रही थी और मैं टिप-टिप की आवाजें साफ सुन रहा था। मेरी मोमबत्ती करीब-करीब खत्म हो चुकी थी। मैंनेदेखा कि उस शरीरधारी की पीली आंखें एकाएक खुल गईं। उसने गहरी सांस लेना शुरू कर दिया। मेरे रोंगटे खड़े हो गये। एक भयावह सकता-सा छा गया, और मन में एक उत्कट जुगुप्सा का भाव भर गया।

मुझमें इतनी शक्ति नहीं थी कि उस विचित्र आकृति को देख भी सकूं जिसमें मैंने प्राण फूंके थे। मैं प्रयोगशाला से बाहर आ गया और सोने का उपक्रम करने लगा।

मैं सो नहीं सका और तरह-तरह के डरावने सपने मुझे आक्रांत करने लगे। मैंने देखा कि एलिजाबेथ पूर्णतया स्वस्थ मेरे सामने खड़ी है। मैंने उसे बाँहों में भर लिया और जैसे ही मैंने उसके होठों पर स्नेहमय चुंबन अंकित किया, उसके होंठ एकाएक नीले पड़ गये। उस पर मौत के चिह्न उभरने लगे और उसकी सुंदर मुखाकृति विकृत होने लगी। फिर उसके चेहरे की आकृति एकाएक बदलने लगी और मुझे लगा कि मैं अपनी मां के मुर्दा शरीर को अपने हाथों में लिए हूं। उसके शरीर पर कफन लिपटा था जिस पर कब्र के घिनौने कीड़े रेंग रहे थे। मैं एकाएक चिल्लाकर जाग उठा। मेरे माथे पर पसीना आ गया था और अंग-अंग सुन्न हो गये थे। खिड़की की जाली से मद्धिम हल्दिया रोशनी कमरे में फैल गयी। मैंने देखा कि वह भयानक प्राणी जिसमें मैंने प्राण-प्रतिष्ठा की थी मेरे पलंग की मसेहरी उठाये मुझे गौर से देख रहा है। उसकी आंखें, अगर उन्हें आंखें कहा जाय,

मेरे ऊपर जमी थीं। सहसा उसका जबड़ा खुला और अस्पष्ट-सी आवाज में वह कुछ बड़बड़ाया। वह बहुत फीके ढंग से मुस्करा रहा था। गालों पर अजीब-सी झुर्रियां पड़ गयी थीं, और उसका एक हाथ आगे बढ़ा हुआ था, शायद मुझे रोकने के लिए, लेकिन मैं भाग खड़ा हुआ और उलटे-सीधे सीढ़ियां लांघता नीचे की मंजिल में आ गया।

उस जीवधारी के चेहरे का भाव इतना भयावह और घृणास्पद था कि साधारणतया उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। अगर किसी 'ममी' में फिर से प्राणों का संचार किया जाय तो भी वह इतनी डरावनी न होगी। जब तक मैंने उसमें प्राण नहीं फूंके थे तब तक वह केवल बदशकल था, लेकिन जैसे ही उसकी स्नायुओं में हलचल शुरू हुई वह एक ऐसा नर-पिशाच बन गया जिसकी कल्पना शायद इटैलियन कवि दांते ने भी न की होगी।

सुबह होते ही मैं घर से निकल पड़ा और बिना किसी निश्चित गंतव्य के इधर से उधर भटकता रहा। मैं उस समय सराय के ठीक सामने खड़ा था जब मैंने हेनरी क्लेरवल को एक टमटम से उतरते देखा। ऐसी विपदा की स्थिति में अपने निकटम मित्र को देखकर मेरे हर्ष का ठिकाना न रहा। मैं हेनरी को लेकर अपने घर चला तो मुझे एक दूसरी चिंता ने घेर लिया। उस नर-पिशाच के बारे में मैं हेनरी से क्या कहूंगा और किस प्रकार कहूंगा? लेकिन रास्ते भर मेरी यह दुविधा बेकार ही रही क्योंकि घर पहुंचने पर मैंने उस नर-पिशाच को यहां-वहां कहीं भी न पाया। वह हमारे आने के पहले ही वहां से निकल भागा था। हेनरी ने मुझे बताया कि मैं कितना दुर्बल हो गया हूं। उसने यह भी बताया कि मेरे पिता मेरे पास से कोई भी पत्र न पा कर कितने चिंतित और दुखी हैं। हेनरी मेरे लिए एलिजाबेथ का एक पत्र भी लाया था जिसे पढ़ कर मैं अपनी पुरानी और खोयी हुई दुनिया में वापस आ गया।

मैं हेनरी को लेकर अपने घर चला तो मुझे एक दूसरी चिंता ने घेर लिया। उस नर-पिशाच के बारे में मैं हेनरी से क्या कहूँगा और किस प्रकार कहूँगा ? लेकिन रास्ते भर मेरी यह दुविधा बेकार ही रही क्योंकि घर पहुँचने पर मैंने उस नर-पिशाच को यहाँ-वहाँ कहीं भी न पाया। वह हमारे आने के पहले ही वहाँ से निकल भागा था। हेनरी ने मुझे बताया कि मैं कितना दुर्बल हो गया हूँ। उसने यह भी बताया कि मेरे पिता मेरे पास से कोई भी पत्र न पा कर कितने चिंतित और दुखी हैं। हेनरी मेरे लिए एलिजाबेथ का एक पत्र भी लाया था जिसे पढ़ कर मैं अपनी पुरानी और खोयी हुई दुनिया में वापस आ गया।

एलिजाबेथ ने अपने पत्र में अपने मन के समस्त स्नेह, उत्कंठा और पत्र न मिलने के कारण हुए उत्पीड़न को उड़ेल दिया था। घर की सभी छोटी-मोटी बातों और परिजनों-पुरजनों के बारे में विस्तार से लिखा था। पत्र में सभी का उल्लेख था, जस्टाइन का भी, उस जस्टाइन का जिसकी एक दृष्टि मात्र मेरे उदास मन में स्फूर्ति की नई हिलोर भर देती थी। इस पत्र से मुझे काफी राहत मिली।

उस नर-पिशाच की कहानी हेनरी को बताने से मैं बच गया। उस दिन के बाद से मैंने उसकी छाया तक न देखी थी। पता नहीं वह धरती में समा गया था या आकाश में घुल गया था उसकी भयावनी आकृति की स्मृति मात्र से मेरे रोंगटे खड़े हो जाते थे। आरंभ के कुछ दिनों तक मैं भयाक्रांत, ज्वरग्रस्त और अर्ध विक्षिप्त-सा रहा, लेकिन हेनरी की सहायता से

धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो गया। मैं लगभग भूल गया कि कुछ महीनों पूर्व मैंने इन्हीं हाथों से एक मनुष्य-शरीर को, या मनुष्य का आभास देने वाले शरीर को संघटित किया था और उस कृत्रिम शरीर में प्राणों की प्रतिष्ठा करके एक नये जीवधारी की सृष्टि की थी। मैं फिर से सामान्य जीवन जीने लगा अपने मित्र हेनरी का परिचय मैंने अपने सभी अध्यापकों से करा दिया और उसने विधिवत् अपनी पढ़ायी शुरू कर दी। इस प्रकार लगभग एक वर्ष बीत गया और मैं हेनरी के साथ घर वापस लौटने का कार्यक्रम बनाने लगा। और तब एक दिन मुझे पिता की ओर से एक पत्र मिला जिसे पढ़कर मैं धक् से रह गया। पत्र में पिताजी ने लिखा था कि मेरा सबसे छोटा भाई विलियम हम सब से अंतिम विदा ले चुका है। मेरे पिता, एलिजाबेथ, विलियम और अर्नेस्ट के साथ एक शाम जंगल में टहलने गये हुए थे। वहां उन्होंने एकाएक देखा कि विलियम और अर्नेस्ट दोनों कहीं छूट गये हैं। कुछ दूर पर अर्नेस्ट तो मिल गया लेकिन उसने कहा कि विलियम उसके साथ नहीं है। दोनों ही बच्चे छोटे थे। अंधेरा बढ़ता जा रहा था। टार्च के सहारे उन्होंने खोजने की बहुत कोशिश की, जंगल में बराबर आवाजें लगाईं लेकिन विलियम का कहीं पता न चला। पिताजी और एलिजाबेथ परेशान हो गये। तब यह सोचकर कि शायद विलियम घर पहुंच गया हो, वे लोग लौट आये। लेकिन विलियम घर भी नहीं पहुंचा था। लगातार खोज हुई लेकिन कुछ पता न चला। सुबह पांच बजे विलियम का मृत शरीर घास पर पड़ा मिला। उसकी गर्दन पर हत्यारे की उंगलियों की छाप थी। एलिजाबेथ ने बतलाया कि विलियम के जिद करने पर उसने उसके गले में मां की फोटो वाला कीमती लाकेट पहना दिया था। यहीं अनुमान लगाया गया कि अबोध विलियम की हत्या इसी लालच से किसी नृशंस हत्यारे ने की है।

पत्र पढ़ कर मैंने दोनों हाथों से मुंह ढंक लिया। हेनरी ने जब पत्र पढ़ा तो उसका दिल दहल उठा। मैंने तुरंत वापस लौटने की योजना बना ली।

जिस समय मैं जेनेवा के निकट पहुंचा, रात हो चुकी थी और गहरा अंधेरा चारों ओर छाया हुआ था। शहर के फाटक बंद हो चुके थे। मुझे सेचेरान गांव में रात काटनी थी जो शहर से करीब दो मील दूर था। पिता जी अकसर यहां टहलने आते थे। पता नहीं मेरे मन में कौन-सी प्रेरणा काम कर रही थी कि मैं सोने के बजाय मैदान में टहलने के लिए निकल पड़ा।

हवा में हलकी तेजी थी जिसने शीघ्र ही एक छोटे-मोटे तूफान का रूप ले लिया। बादल रह-रह कर गरज उठते थे और बिजली भी चमक जाती थी। एक क्षण को सारा वन-प्रदेश जगमगा उठता था, और दूसरे ही क्षण ऐसा अंधेरा छा जाता था कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था। तूफान का रुख शहर के उत्तर की ओर था। एकाएक बादलों का भयानक गर्जन हुआ और जूरा पर्वत की श्रेणियों पर बिजली की मद्धिम चमक दिखायी दी। तभी मुझे लगा कि नजदीक के झुरमुटों के पीछे जैसे कोई छाया हिली हो। मैंने एकटक उस ओर देखा। अरे! यह तो वही दैत्याकार कुत्सित नर-पिशाच था! लेकिन यह यहां क्या कर रहा है, मैंने सोचा..... क्या यहीं मेरे छोटे भाई का हत्यारा है? सोच कर मैं सिर से एड़ी तक कांप गया। देखते -देखते वह आकृति बड़ी तेज चाल से दूर हो गयी।

रात भर मैंने कितनी आत्म-पीड़ा सही, इसे मैं ही जानता हूँ, मेरे सामने पिछले दो वर्षो के चित्र घूम गये। इस प्रकार मैंने संसार में एक भयावह जंतु को छोड़ दिया है। पता नहीं इतना निर्मम और घृणित कार्य इसने पहला ही किया है, या... आगे मैं नहीं सोच सका।

सुबह पांच बजे मैं अपने घर पहुंचा। पिताजी को सांत्वना देने और एलिजाबेथ तथा छोटे भाई के आंसू पोछने के सिवा मैं कर ही क्या सकता था। घर पर ही मुझे पता चला कि हत्यारा पकड़ लिया गया है। मुझे आश्चर्य हुआ। बताया गया कि बाहर से सीधी दिखने वाली सुंदरी जस्टाइन ने ही यह कुकर्म किया है। घर में कोई भी यह नहीं मानना चाहता था कि जस्टाइन ऐसा कर सकती है लेकिन प्रमाण के आगे सब चुप थे। विलियम के गले का वह लाकेट, दूसरे दिन, जस्टाइन के पास मिला था और वह इसकी कोई कैफियत नहीं दे सकी थी। मैं कुछ भी कह सकने में असमर्थ था, न मेरे पास मेरी बात की कोई शहादत थी। हम सब ने जस्टाइन का बचाव करना चाहा लेकिन इतने बड़े प्रमाण के सामने अदालत उसे निर्दोष कैसे मानती। जस्टाइन को फांसी की सजा मिल गई।

मेरे पिता दुखी थे, एलिजाबेथ दुखी थी, अर्नेस्ट दुखी था, मैं भी दुखी था। लेकिन मेरा दुःख अलग था, अधिक गहरा। मैं उसी में डूबा रहता और मूक-आत्म-लांछन में संतोष ढूंढ़ता। मेरे पिता मुझे समझाते। किसी के लिए भी मेरे दुःख की थाह पाना कठिन था। बेचारी एलिजाबेथ मुझे इस प्रकार व्यथित देख कर बहुत व्याकुल हो गयी। मेरा आत्म-विश्वास लुप्त हो गया और मैं आत्म-ग्लानि से पीड़ित हो

इधर से उधर भटकने लगा।

आत्म-परिताप के ऐसे ही क्षणों में मैं मांट ब्लांक की ओर चल पड़ा। सोचा, शायद उसकी शीतल बर्फानी चोटियां मेरे जलते हृदय को ठंडक पहुंचा सकें।

इसे भाग्य का विधान ही कहना चाहिए कि जब मैं मांटेनवर्त की एक ऊंची श्रेणी पर खड़ा-खड़ा अपने सामने ही मांट ब्लांक की भव्यता को निहार रहा था, मैंने कुछ दूर पर एक व्यक्ति को अपनी ओर अमानवीय गति से बढ़ते हुए देखा। मैं बर्फ की जिन दरारों में सम्हल कर पैर रखता हुआ आया था वह मानों उन पर सहज ही उछलता-सा चला आ रहा था। वह मनुष्य के सामान्य कद से ऊंचा था। नजदीक आने पर मैंने भय और विस्मय से देखा कि वह तो वही नराधम है जिसका मैंने निर्माण किया था। घृणा और रोष से मेरे होंठ फड़क उठे। मैंने कहा-'राक्षस! क्या तू मुझ पर भी वार करना चाहता है? क्या तू मेरी शक्ति से नहीं डरता? मैं अभी तुम्हें मिट्टी में मिला दूंगा। काश, तुम्हें समाप्त करने से वे लोग वापस लौट आते जिनकी निर्मम हत्या तेरे इन नीच हाथों ने की है!'

'मुझे तुमसे ऐसे ही स्वागत की उम्मीद थी' उसने कहा-'सब लोग मुझ बदनसीब से घृणा करते हैं। मैं सभी जीवधारियों से गया-बीता हूं। तुम मेरे स्रष्टा हो, तुम्ही ने मेरा निर्माण किया है। तुम भी मुझसे नफरत करते हो और मुझसे दूर भागते हो। और इस समय तुम मुझे मार डालने की धमकी दे रहे हों। क्या तुम्हें अपनी जान प्यारी नहीं है? तुम भूल गये हो कि तुमने मुझे अमानवीय बनाया है। सुनो, मेरी तुमसे एक ही प्रार्थना है। तुम अपना कर्तव्य निभाओ और मैं अपने कर्तव्य का पालन करूंगा। अगर तुम मेरी बातें मानागे तो मैं तुम्हें और तुम्हारे परिजनों को शांति से रहने दूंगा। लेकिन अगर तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो मैं हत्याओं का ऐसा कुचक्र चलाऊंगा जिसमें तुम्हारा कोई भी प्रियजन और मित्र जिंदा नहीं बचेगा।'

'नारकीय कुत्ते!' मैं उसके ऊपर गुस्से से उछल पड़ा। लेकिन उस नर-पिशाच पर मेरा कोई बस नहीं चला। उसने बडी आसानी से मुझको अलग करते हुए कहा-'इतने रोष की जरूरत नहीं। शांत हो कर मेरी बात सुनो, यह मेरी प्रार्थना है। मैंने भी अपने जीवन के पहले ही क्षण से बहुत कष्ट झेले हैं। मेरी मानसिक यातना तुमसे कहीं ज्यादा है। मुझे नष्ट करने का ख्याल छोड़ दो क्योंकि मैं तुमसे कहीं ज्यादा मजबूत हूं। तुमने मेरी सृष्टि की है इसलिए तुम मेरे स्वामी हो और मैं तुम्हारे सामने निनम्र रहूंगा। लेकिन तुम्हें भी अपना कर्तव्य निभाना होगा। सुनो फ्रैंकेंस्टाइन, मैं तुम्हारी सृष्टि हूं। मुझे तुम्हारा 'आदम' होना चाहिए ताकि मैं एक संसृति चला सकूं। हर ओर सुख और हर्ष

है, लेकिन मेरे भाग्य में कुछ भी नहीं लिखा है। मैंने दयावान और अच्छा बनकर भी देख लिया है। जिंदा रहने के लिए मुझे वह सब कुछ करना ही होगा जिसे तुम बुरा समझते हो। सुनो - 'तुम मुझे सुखी बना दो और मैं सज्जनों की तरह रहूंगा।'

'भाग जाओ। मैं तुम्हारी कोई बात नही सुनना चाहता' मैंने चिल्लाकर कहा - 'हम में और तुम में कोई एका नहीं हो सकता। हम लोग दुश्मन हैं। आओ, हम अपनी-अपनी शक्ति आजमा लें, हम में से कोई एक ही जिंदा रहेगा।'

'और किन शब्दों में मैं तुमसे विनती करूं। क्या तुम्हारा हृदय मेरे लिए, अपनी सृष्टि के लिए पिघलेगा नहीं? फ्रैंकेंस्टाइन विश्वास करो। मैंने भला बन कर भी देख लिया है। मुझे तुम्हारी सहायता चाहिए। तुम अब तक की मेरी कहानी सुन लो और उसके बाद यह निश्चय करना कि मैं तुम्हारी कृपा का पात्र हूं या नहीं।' मुझे उस नराधम की कहानी सुननी ही पड़ी।

जो कुछ उसने कहा वह, उसी के शब्दों में, इस प्रकार था -

जब मेरा निर्माण हुआ तब के आरंभिक क्षणों की बात मेरे मन में स्पष्ट नहीं है। मेरी इंद्रियों ने मुझे एक साथ कई चीजों का आभास दिया। धीरे-धीरे मैं उनकी चेतना को अलग-अलग जान सका। एकदम तेज रोशनी भी मुझसे सहन न हुई। जब तुम उस

अंधेरी रात में मुझे छोड़ कर चले गये तो, धीरे-धीरे विचार-शक्ति के संवर्धित होने के साथ, मुझे अपने अस्तित्व का और भय का आभास हुआ। सुबह होने के पहले तक मैं सोचता रहा कि शायद तुम मेरे पास आओगे, लेकिन मेरा अनुमान गलत निकला। कुछ सर्दी-सी महसूस हो रही थी। मैंने लोगों को कपड़े पहने सड़क पर आते-जाते देखा। मैंने तुम्हारे थोड़े-से कपड़े लपेटे और घर के बाहर आ गया। मुझे देखकर एक-दो लोग भय से चीखे। मैं सतर्क हो गया और कुहासे से बचता-बचता शहर से बाहर आ गया।

धीरे-धीरे मुझे भूख, प्यास, रोशनी, अंधेरा और सर्दी-गर्मी का ज्ञान हुआ। मैंने झरबेरी की झाड़ियों से बेर तोड़ कर खाये, नदी-नालों का पानी पिया और आगे बढ़ा। मैंने समझ लिया कि दिन में चलना निरापद नहीं है इसलिए दिन में इसी झाड़ी में सो रहता था और रात को आगे बढ़ता था। यात्रियों द्वारा जलाकर छोड़ी गयी आग की धूनी को देख कर मैंने आग को जाना और जंगली जानवरों से बचने के उपाय को भी समझ लिया। फ्रैंकेंस्टाइन! तुम मेरे कष्ट का अनुमान कर सकते हो। जन्म के साथ ही मुझे कठिनाइयों पर कठिनाइयां झेलनी पड़ीं।

एक बार भूख से कुलबुलाता मैं एक गड़रिये की झोपड़ी में घुस गया। मुझे देखते ही वह चिल्लाकर भाग खड़ा हुआ। रोटी और शहद मेरे हाथ लगा। जीवन में पहली बार मैंने खूब छक कर भोजन किया।

मैं गांव-गांव घूमता रहा। सर्दियों के दिन निकट आ गये और जंगल में रहना मुश्किल हो गया। एक दिन गोधूलि के समय एक गांव में अंधेरे में एक किसान की भूसे की कोठरी में छिप गया। मैं उस कोठरी में कई महीने रहा। पारिवारिक जीवन के बारे में सारा ज्ञान मुझे दीवार की एक संधि में से मिला। एक बार उस किसान-परिवार में कोई अजनबी पुरुष और स्त्री आये। वे किसान-दंपति के परिचित थे और किसी दूसरे मुल्क के लगते थे। स्त्री सुदंर थी। उसका नाम था सेफी। किसान का लड़का उसे अपनी भाषा पढ़ाता था। मैंने भी कोठरी में छिपे-छिपे वही भाषा सीखी। अपनी मेहनत से उन दोनों से पहले ही मैंने लिखना-पढ़ना सीख लिया। तुम्हारे कपड़ों में तुम्हारा एक घरेलू पत्र भी था जिसे मैं अब पढ़ सका और उससे अपने स्रष्टा के विषय में जानकारी प्राप्त कर सका। किसान के बेटे फेलिक्स ने सेफी को भूगोल भी पढ़ाया था जिससे मैंने भी धीरे-धीरे भौगोलिक जानकारी प्राप्त कर ली। तुम्हें यह बताने की जरूरत ही नहीं है फ्रैंकेंस्टाइन, कि मेरी बुद्धि सामान्य-जनों से तेज है।

दुनिया में नेकी का बदला नेकी नहीं, बदी है। मैंने जहां तक बन पड़ा उस किसान परिवार की, परोक्ष रूप से, अनेक सेवाएं कीं लेकिन एक दिन, जैसे ही उन लोगों ने मेरी सूरत देखी, सब के सब चीख कर मुझे मारने दौड़ पड़े। किसान के बेटे ने तो दो-तीन लाठियां जमा ही दीं। मैं चाहता तो उसकी गर्दन मरोड़ देता लेकिन मैं ऐसा न कर सका और चुपचाप वहां से भाग निकला। काश, किसान-परिवार ने मुझे भी अपने परिवार का एक अंग बना लिया होता!

मैंने फिर जंगलों में भटकना शुरू कर दिया। एक बार एक लड़की नदी में फिसल गयी तो मैंने उसकी जान बचा दी। लेकिन मुझे देखते ही उस लड़की के संरक्षक ने मुझ पर बंदूक चला दी और मैं घायल हो गया। धीरे-धीरे इधर-उधर घिसटता-घिसटता महीनों बाद अच्छा हुआ। मेरे मन पर इस क्रूरता की भयंकर प्रतिक्रिया हुई। मैं सोचने लगा कि मैं ही एक ऐसा अभिशप्त प्राणी हूं जो हर ओर से ठुकराया जाता है और मुझे तुमसे, अपने सृष्टा से, घृणा हो गयी। मैं तुमसे यही सब-कुछ कहना चाहता था, और

इसीलिए मैंने जेनेवा को प्रस्थान किया।

जूरा पर्वत के पास मैं एक वृक्ष के नीचे विश्राम कर रहा था तभी एक सुंदर-सा बालक मेरे पास दौड़ता आया। उसे देखते ही मेरे मन में यह विचार बिजली की तरह कौंध गया कि क्यों न मैं इसे ही अपना साथी बना लूं। यह बच्चा छोटा है,

अबोध है, शायद मुझसे डरे नही और मुझे जीवन में किसी का प्यार मिल सके। मैंने उसे रोका। मुझे देखते ही बालक चीख पड़ा-'मुझे मत पकड़ो। तुम राक्षस हो। मैं अपने पापा फ्रैंकेंस्टाइन से कह दूंगा। मुझे छोड़ दो।' और तब मुझे पता चला कि वह तुम्हारा भाई है। यह जान कर मुझे और भी खुशी हुई। मैंने सोचा कि उसे अपने पास रखकर तुमसे मनमानी करा सकूंगा। मैंने उसे रोकना चाहा लेकिन वह रुका नहीं, उलटे जोर-जोर चिल्लाने लगा, और तब मैंने उसकी आवाज को हमेशा के लिए बंद कर दिया। अभी मेरी कहानी खत्म नहीं हुई है फ्रैंकेंस्टाइन! पहले मेरी पूरी बात तो सुन लो। बच्चे के गले में कोई चीज चमक रही थी। मैंने उसे निकाल लिया। थोड़ी ही देर बाद कुछ दूर पर मैंने एक सोती हुई युवती को देखा। वह चमकदार चीज मैंने शरारत के लिए उसकी जेब में डाल दी। उसके बाद जो कुछ हुआ तुम जानते ही हो। अच्छा हुआ तुम इधर आ गये, मैं तो तुमसे मिलने ही को सोच रहा था। आखिरी बार सुन लो फ्रैंकेंस्टाइन! तुम मेरे लिए मेरी ही जैसी एक स्त्री बना दो! यह सिर्फ तुम्हीं कर सकते हो। इसलिए तुमसे मेरा निवेदन है।'

उस नर-पिशाच से यह सब सुन कर मैं पहले तो स्तब्ध रह गया फिर संपूर्ण साहस बटोरकर बोला-'ऐसा मैं हर्गिज नहीं करूंगा चाहे तुम मुझे कितनी ही यातनाएं दो। तुम मुझे इस संसार का सबसे दयनीय, सबसे अभागा, व्यक्ति बना दो फिर भी यह नहीं हो सकता कि मैं तुम्हारे लिए एक स्त्री बनाऊं और तुम जैसे नर-पिशाचों की संसृति को फैलने दूं। तुम दोनों मिलकर इस सारे संसार को तबाह कर दोगे!'

मैं नहीं समझता कि मेरी बात सुन कर उस नर-पिशाच के चेहरे पर हिंसा के जो भाव झलके उन्हें देखकर किसी भी मनुष्य की आंखें अंधी न हो जातीं। लेकिन उसने अपने आप को संयत किया और विनम्र स्वर में कहा-'मैं प्रतिज्ञा करता हूं फ्रैंकेंस्टाइन! अगर तुम मेरी शर्त मान लोगे तो हम दोनों इस संसार से कहीं अलग जा कर रहेंगे। कोई मनुष्य हमारा साया भी नहीं देख पाएगा।'

और मैंने तब सचमुच ही उसकी शर्त स्वीकार कर ली।

मैं जब लौटकर जेनेवा आया तो मेरी आधी चिंताएं दूर हो चुकी थीं। पिछले दुःखों और कठोर जीवन ने मुझे निर्बल बना दिया था। धीरे-धीरे मेरा स्वास्थ्य ठीक हो गया। पिता जी ने एक बार अलग ले जा कर बड़े स्नेह से कहा-'विक्टर!' मुझे खुशी है कि तुमने अपने-आप को संयत कर लिया है। जो बीत चुका है उसे भूल जाओ। तुम अब बड़े हो गये हो और तुम्हारी शादी हो जानी चाहिए। विलियम भगवान का धन था, उन्होंने उसे वापस ले लिया।'

'पिताजी! मेरी मनःस्थिति अभी ठीक नहीं है।'

मैं नहीं चाहता था कि सिर पर इतना बड़ा बोझ रक्खे हुए अपनी शादी की बात सोचूं।

'वैसे तो मैं तुमसे यहीं कहूंगा कि तुम्हारी जैसी मरजी हो वैसा ही करो, लेकिन एलिजाबेथ तुम्हारी बचपन की साथी है। अगर तुम्हारे मन में और कोई लड़की...'

मैं एलिजाबेथ से ही विवाह करके सुखी हो सकूंगा, पिता जी। लेकिन विवाह मैं अभी नहीं, बाद में करूंगा।'

पिता जी संतुष्ट हो गये। मुझे अपनी शर्त पूरी करने की चिंता थी। इस बीच मैंने पढ़ा था कि मेरे काम के लिए कुछ उपादेय अनुसंधान इंग्लैंड में हुए हैं। मेरा वहां जाना आवश्यक था। मैंने बहाने बना कर एलिजाबेथ और पिता जी से इंग्लैंड जाने की अनुमति ले ली। कुछ दिनों बाद हेनरी क्लेरवल ने भी मेरे पास आने का कार्यक्रम बना लिया। इंग्लैंड से मैं स्काटलैंड गया और वहां, उत्तरी भागों की ओर 'ऑर्कनीज' में, मैंने अपना कार्य पूरा करने के लिए एक छोटा-सा घर किराये पर ले लिया।

इस बार का काम पहले से अधिक कुत्सित था। पहले तो नवीन अनुसंधान की उमंग में मुझे कब्रों में से आवश्यक अवयव प्राप्त करने में कोई संकोच नहीं होता था, लेकिन इस बार बात दूसरी थी। मन पर एक बोझ था जिसे दूर करना था। साथ ही एक आशंका भी थी जो प्रत्येक पग पर एक बड़ा-सा प्रश्न-चिह्न बन कर सामने खड़ी हो जाती थी-क्या पता ये दोनों नर-पशु अपनी शर्तें निभाएं या न निभाएं?

कार्य के अंतिम दिनों में मेरे मन में एक विचार बिजली-सा कौंध गया- फ्रैंकेंस्टाइन, अपनी भलाई के लिए तुम जो यह कुत्सित सृष्टि कर रहे हो वह समस्त मनुष्य-सृष्टि के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। आगे आने वाली पीढ़ियां तुम्हारे नाम पर रोएंगी और तुम्हें कलंकित करेंगी। सोचते-सोचते मेरे हाथ कांप गये। मैंने तत्काल ही निश्चय कर डाला और दूसरे ही क्षण,

जो कुछ मैंने अब तक किया था उसे विनष्ट कर दिया। तृप्ति से सिर उठा कर देखा तो दरवाजे की चौखट पर वही नर-पिशाच बैठा था। उसके जबड़े फैल गये और उसने एक व्यंग्य-भरी मुस्कान से मुझे देखा। उफ! कितनी भयानक थी वह मुस्कान। मुझे रोमांच हो आया। दूसरे ही क्षण वह कूद कर गायब हो गया मैंने दरवाजा बंद कर लिया। रात का सन्नाटा और भी गहरा हो गया। दूर समुद्र ठाठें मार रहा था। कई घंटे बीत गये और मैं जड़वत वहीं का वहीं बैठा रहा। कुछ देर बाद खट् की आवाज आयी और दरवाजा चर्रा कर टूट गया। मेरे बिलकुल सामने वही नारकीय आकृति थी। उसने पूछा-'तो तुमने उसे नष्ट कर दिया। तुम्हारा इरादा क्या है? बोलो, क्या तुम अपनी शर्त पूरी नहीं करोगे?'

'नहीं, कभी नहीं!' मैंने चिल्ला कर कहा-'तुम जा सकते हो।'

'हर आदमी को पत्नी मिल सकती है। हर नर-पशु के लिए मादा है। तो क्या सिर्फ मैं ही अकेला रहूंगा? सुन ओ आदमी! तू मुझसे घृणा कर लेकिन अब मैं तुझे नहीं छोड़ूंगाा। अब मैं तेरा स्वामी हूं। तेरा भाग्य मेरी इन अंगलियों के सहारे नाचेगा। मैं तुझे इतना निरीह बना दूंगा कि दिन की रोशनी भी तुझसे घृणा करेगी।'

'मैं सब कुछ सहने के लिए तैयार हूं।'

'अच्छा तो सुन! इस समय तो मैं जाता हूं, लेकिन अब उस समय आऊंगा जब तू सुहागरात मनायेगा।' इतना कह कर वह कूद कर चला गया।

उस एकांत आवास से भागने के लिए मैं जैसे ही नाव पर बैठा कि मुझे वहां के निवासियों ने घेर लिया। कुछ देर बाद पता चला कि किसी व्यक्ति की हत्या हो गयी है और इसी सिलसिले में मुझ पर शक किया जा रहा है। मुझे बहुत क्षोभ हुआ। उसके बाद मैं मैजिस्ट्रेट के पास ले जाया गया और वहां हम लोगों के सामने शव लाकर रक्खा गया। जैसे ही मैंने झुक कर देखा, घबराहट और यातना से मैं कराह उठा-यह मेरे मित्र हेनरी क्लेरवल का शव था। मेरे मुंह से केवल इतना निकला-'ओ नराधम! तुमने फिर बदला लेना शुरू कर दिया।' रोते-रोते मेरी घिग्घी बंध गयी और मैं बेहोश हो कर गिर पड़ा। इसके बाद मुझे एक कैदी के रूप में करीब तीन महीने अस्पताल में रहना पड़ा। कोई प्रमाण न होने के कारण अंत में मेरी रिहाई हुई। रिहाई के समय मेरे पिता और एलिजाबेथ मुझे लेने वहीं आ गये थे। उसके बाद भी मैं दो महीने बीमार पड़ा रहा। लेकिन विपत्तियों का तांता अभी खत्म नहीं हुआ था।

जब कभी मेरी शादी की बात उठती, मैं भय से पागल हो जाता। उस नर-पिशाच के अंतिम शब्द मुझे रह-रह कर याद आ जाते। पिताजी और एलिजाबेथ मेरी ओर से अत्यंत चिंतित रहने लगे। यह सब देख कर मेरी मानसिक यंत्रणा और भी बढ़ गयी।

धीरे-धीरे मैंने खोये विश्वास को फिर से प्राप्त किया। एलिजाबेथ से शादी न करने का कोई बहाना अब मेरे पास न था। लोगों के मन में, और एलिजाबेथ के मन में भी, उसके प्रति मेरे प्रेम को लेकर शंकाएं उठने लगीं। इन सब का निराकरण करने के लिए और अंतिम बार अपने दुर्भाग्य से जूझने के लिए मैंने विवाह की सहमति दे दी।

विवाह की रस्म बिना किसी विपत्ति के संपन्न हो गयी। मैंने अपनी ओर से पूरी तैयारियां कर ली थीं। मैं अपने पास पिस्तौल और एक छुरा छिपा कर रखने लगा था। तय हुआ कि हम लोग विवाह के बाद अपनी रात 'ईवियन' की एक सराय में बिताएं। हम दोनों एक नाव पर बैठ कर वहां गये। मार्ग में बराबर मैं सचेत रहा लेकिन मुझे उस नराधम की छाया भी नजर नहीं आयी।

रात आठ बजे हमारी नाव किनारे लगी। थोड़ी देर के लिए हम किनारे-किनारे घूमते रहे और बाद में सराय में चले गये। मैंने दरवाजों और खिड़कियों को हर प्रकार से सुरक्षित कर लिया था। मेरी जेब में पिस्तौल थी और रह-रह कर मेरा ध्यान इधर-उधर बंट जाता था। एलिजाबेथ ने मधुर स्वर में पूछा-'क्यों विक्टर! क्या बात है... इतने उद्विग्न क्यों हो?'

'प्रियतमे! आज की रात कुशल से बीत जाय फिर कुछ नहीं होगा। आज की रात सबसे डरावनी रात है।'

और सहमी हुई एलिजाबेथ को मैंने ढांढ़स
बंधा दिया।

यह सोचकर कि एलिजाबेथ उस नर-पिशाच को देख न पाये और उससे पहले ही मैं उसे समाप्त कर दूं, मैने एलिजाबेथ से सो जाने को कहा और स्वयं बड़ी सतर्कता से गैलरी और सीढ़ियों को देखता हुआ टहलने लगा। कहीं भी उस विकृत छाया का पता न था। मैंने संतोष की सांस ली ही थी कि तभी मुझे एलिजाबेथ की मर्मांतक चीख सुनायी दी। मैं भाग कर उसके कमरे में पहुंचा। पलंग पर एलिजाबेथ का मृत शरीर पड़ा था। उसकी गर्दन पलंग के नीचे लटक रही थी और सुनहले बाल फर्श पर बिखरे थे। हे भगवान! यह क्या हो गया!!

सराय भर के लोग जाग गये। मशालें जला कर चारों ओर खोज की गयी पर कहीं कुछ पता न चला। मैं थक कर पलंग पर पड़ा अपने दुर्भाग्य के अक्षरों की वक्रता को पढ़ने की कोशिश कर रहा था। चंद्रमा निकल आया था और उसकी मद्धिम हल्दिया रोशनी खिड़की की जालियों से अंदर आ रही थी। तभी मैंने देखा-कमरे की खिड़की की चौखट पर वही नर-पिशाच बैठा था। मैंने तुरंत पिस्तौल चला दी, लेकिन गोली उसके लगी नहीं।

मेरा सब कुछ लुट चुका था। पिता जी की सूनी-सूनी आंखों को देख कर मन पथरा गया। वे बीमार पड़ गये और थोड़े दिनों में ही उनका देहावसान हो गया।

मैं बदहवास-सा उस नर-पिशाच की खोज में निकल पड़ा। वह भी शायद मुझे अपनी खोज में भटकाना चाहता था। उसका राक्षसी अट्टहास सुनकर मैं उसका पीछा करता। उसकी आवाज कभी इस पर्वत-खंड में सुनायी पड़ती तो सप्ताह भर बाद आगे के वन-खंड में। कभी-कभी तो पेड़ों की छाल काटकर अपना गंतव्य स्थान लिख जाता। मुझे उससे बदला लेना था और उसे मुझसे। उसका बदला यही था कि मैं तरह-तरह की मुसीबतें उठाता हुआ उसका पीछा करता रहूं।

मैंने उसका 'रोन' में पीछा किया लेकिन बेकार। वह 'ब्लैक समुद्र' जाने वाले जहाज में छिप गया। मैंने भी उसी जहाज में यात्रा की लेकिन वह नराधम हाथ नहीं आया। फिर जंगलों-जंगलों और पर्वत-खंडों में वही कहानी घटी। एक जगह तो उसने एक पेड़ पर निश्चित संकेत बना दिया कि वह उत्तरी ध्रुव की ओर जा रहा है। उसी संकेत के सहारे उसका पीछा करते-करते मैं यहां तक आ गया हूं।

मैने तुम्हें अपना रहस्य बतला दिया है कप्तान! अब तुम भी प्रतिज्ञा करो कि अगर मेरी मौत पर वह नर-पिशाच यहां आया तो तुम उसे जीवित नहीं छोड़ोगे।'

फ्रैंकेंस्टाइन की यह कहानी सुन कर मेरे विस्मय का पारावार न रहा। मैंने कहा-'वाल्टन तुम्हारी शर्त पूरी करेगा फ्रैंकेंस्टाइन! सचमुच ही तुमने अत्यंत वीरता और साहस का काम किया है।'

मेरी बात सुन कर फ्रैंकेंस्टाइन को कुछ राहत मिली है। मैंने उसकी ओर ब्रांडी का गिलास बढ़ा दिया है।

तुम्हारा वाल्टन
सितंबर 12

स्वभावतः यह मेरा अंतिम पत्र है। अंतिम इसलिए कि मैं इंग्लैंड वापस लौट रहा हूं। फ्रैंकेंस्टाइन मेरे इंग्लैंड वापस आने से संतुष्ट नहीं था। वह उस नर-पिशाच की खोज में और आगे जाना चाहता था। लेकिन और आगे जाना खतरे से खाली नहीं था। फ्रैंकेंस्टाइन की हालत बराबर गिरती गयी और तुम्हें यह जान कर दुःख होगा कि कल उसने अपनी अंतिम सांस ले ली।

हे भगवान! अभी-अभी जो घटना घटित हुई है वह कितनी रोमांचकारी है! याद करके मेरा सिर घूम रहा है। मुझमें इतनी शक्ति नहीं कि मैं उसका वर्णन कर सकूं लेकिन मेरी अब तक की कथा अधूरी ही रह जायगी यदि मैंने इसका उल्लेख नहीं किया।

इस पत्र का पहला पैराग्राफ लिख कर मैं उस 'केबिन' में गया जहां मेरे अभागे दोस्त का शव रक्खा था। उस पर एक ऐसी आकृति झुकी हुई थी जिसकी कल्पना तुम मात्र मेरे वर्णन से नहीं कर सकोगी। जब उसने मेरी आवाज सुनी तो अपनी दुःख और कराह की आवाज बंद कर दी। उसने सिर घुमा कर मेरी ओर देखा। घृणा, जुगुप्सा, भय और आतंक के न जाने कितने भाव मेरे मन में एक साथ उठ आये। उसने शव की ओर इशारा करते हुए मुझसे कहा-'इसकी मौत भी मैंने ही बुलायी है। यह मेरी अंतिम छाया थी।' फिर फ्रैंकेंस्टाइन के शव की ओर झुक कर कहा-'फ्रैंकेंस्टाइन! मेरे इस अपराध के लिए मुझे माफ कर दो!'

मैंने मुश्किल से शब्द जोड़ कर कहा-'अब तुम्हारे पश्चाताप का कोई अर्थ नहीं। अगर तुम्हें भले-बुरे का ऐसा ही ज्ञान था तो तुमने इतनी हत्यांए क्यों की?

'इसलिए कि मुझे बनाने वाले ने मेरी इच्छाओं की हत्या कर दी थी। मुझे सब की घृणा का पात्र और सामान्य पशु से भी अधम बना कर छोड़ दिया था। खैर, अब उन बातों से कोई लाभ नहीं। मेरा प्रण पूरा हुआ। मैं तुमसे विदा लेता हूं। सारे मनुष्य-समाज से विदा लेता हूं। विश्वास करो, अब मैं किसी को भी नहीं दिखायी दूंगा। शीघ्र ही मैं अपने हाथों अपनी चिता बना कर भस्म हो जाऊंगा। इन लहरों में मेरी राख बह जायेगी। अच्छा विदा! फ्रैंकेंस्टाइन!!'

इतना कह कर वह 'केबिन' की खिड़की से कूद गया और क्षण भर में लहरों ने उसे हमारी नजरों से ओझल कर दिया।

तुम्हारा
वाल्टन

मेरी शैली कृत 'फ्रैंकेंस्टाइन':
आर द माडर्न प्रामेथियस अनबाउंड (1818) से संक्षिप्ततः
रूपांतर : राज नारायण बिसारिया

❑❑❑

भीम भोजन

एच.जी.वेल्स

सिंगटन और रैडवुड ने एक नयी खोज की। उन्होंने एक ऐसा भोजन तैयार किया जिसके खाने से पेड़-पौधे और पशु-पक्षी ही नहीं बल्कि आदमी के बच्चे भी तेज रफ्तार से बढ़ते थे। इस खुराक को खिलाकर किसी भी प्राणी को पाँच से दस गुना तक बढ़ाया जा सकता था। इसलिए इस खुराक का नाम इन्होंने 'भीम भोजन' रख दिया। अब सवाल यह था कि खुराक पहले किसको खिलाई जाए? अचानक वैसिंगटन के दिमाग में एक विचार आया। क्यों न हम मुर्गे-मुर्गियों को खिलाकर इस भोजन की करामात देखें। स्किनर दम्पत्ति को यह काम सौंपा गया कि वे मुर्गे-मुर्गियों को रोज भीम भोजन खिलाएं और उनकी बढ़वार को रोजाना देखते रहें।

इनके मुर्गीखाने में दो तरह की मुर्गियां थीं। एक वे जिन्हें यह खुराक दी जाती थी, दूसरी वे जिन्हें यह खुराक नहीं खिलाई जाती थी। सात दिन बाद जब वैसिंगटन ने खुराक दिए जाने वाली मुर्गियों के चूजों को देखा तो वे अन्य चूजों से वजन में चार गुना भारी और आकार में छः-सात गुने बड़े देखे गए। उसने तुरन्त अपने साथी रैडवुड को तार दे दिया कि हमारा परीक्षण सफल हो गया है, चूजे तेज रफ्तार से बढ़ रहे हैं।

एक दिन अखबार में खबर छपी - 'कैन्ट में कबूतर के बराबर की मक्खियां देखी गई।' रैडवुड और वैसिंगटन फौरन समझ गए कि स्किनर ने भीम भोजन बनाते समय बर्तनों को खुला छोड़ दिया है। इसलिए जिन-जिन मक्खियों ने यह भोजन खा लिया वे सभी कबूतर के बराबर हो गईं। उनके उड़ने पर मोटर जैसी भरभराहट की आवाजें होती हैं। दोनों वैज्ञानिक कैन्ट आए और एक मक्खी को गोली मारकर गिरा दिया। यह लगभग उल्लू के बराबर थीं। यह कई हलवाइयों की दुकानों पर उनके बर्तनों को भी तोड़-फोड़ चुकी थी।

वैज्ञानिक रैडवुड ने अपने बच्चों को इस भोजन का थोड़ा-सा भाग दूध में मिलाकर खिला दिया। वैसिंगटन ने कहा - 'अब तुम्हारा बच्चा बहुत जल्दी बड़ा हो जाएगा और तुम्हारे लिए एक मुसीबत पैदा कर देगा।'

'तुम ठीक कहते हो। लेकिन हमारी आने वाली पीढ़ी बड़ी मजबूत और ताकतवर हो तो क्या हर्ज है?' रैडवुड ने पूछा।

'तुम नहीं जानते इस खुराक को मच्छर, चूहे, मक्खी या मुर्गियां जिसने भी खाया, वे ही बेहिसाब बढ़ गए। अगर इस बात का किसी को पता चल गया तो हम लोग फौरन पकड़ लिए जाएंगे।' वैसिंगटन बोला।

'ठीक है। लेकिन श्रीमती स्किनर कह रही थीं कि अंगूर और पान की बेलें भी इस खुराक से अंधाधुंध बढ़ने लगी हैं।'

हर्बट जर्ज वेल्स अंग्रेजी के एक बहुप्रजनक लेखक हैं। आपका जन्म 21 सितम्बर 1886 को ब्रोमली इंग्लैंड में हुआ।। आप काल्पनिक विज्ञान उपन्यासों के लिए जाने जाते हैं और जूल्स वर्न एवं ह्यूगो गर्नस्बेक के साथ काल्पनिक विज्ञान शैली के पिता कहे जाते हैं। उनके सबसे उल्लेखनीय काल्पनिक विज्ञान लेखन कार्यों में दी टाइम मशीन, दी आईलैंड ऑफ़ डॉक्टर मोरियो, दी इनविज़ीबिल मैन एवं दी वॉर ऑफ़ दी वर्ल्ड्ज़ सम्मिलित हैं। एच.जी.वेल्स अपने जीवनकाल के दौरान भविष्य सूचक, सामाजिक आलोचक के रूप में जाने गए। 13 अगस्त 1946 को लंदन में आपका निधन हुआ।

श्रीमती स्किनर इस खुराक की करामात से बड़ी खुश हुई। वह सोचने लगी कि वैज्ञानिक भी कितने बेवकूफ हैं कि इतने कीमती भोजन को मुर्गियों को खिलाकर बरबाद कर रहे हैं। यह सोचकर उसने भोजन के कई टिन भरे और आइब्राइट में अपनी लड़की के पास भागने की तैयारी करने लगी।

जैसे ही वह चलने लगी। उसने देखा बड़ी-बड़ी मुर्गियां प्यासी और भूखी हैं। उन्होंने सोचा अगर यह भूखी-प्यासी मर गईं तो इनकी हत्या का पाप उसके सिर लगेगा। उसने दरवाजा खोलकर इन मुर्गियों को आजाद कर दिया, और वह तेजी से कदम बढ़ाती हुई अपनी लड़की के गाँव की ओर चल दी।

आजाद मुर्गियां कस्बे की ओर निकल गईं। एक मुर्गी ने स्कूल जाते हुए बच्चे को अपनी चोंच में उठा लिया। खिड़की से श्रीमती डंकन ने देखा वह डाक का थैला पलट कर बच्चे को बचाने दौड़ीं। लेकिन मुर्गी उल्टे उन पर झपट पड़ी। इतने में ही उनके पति दौड़े और कसकर चार-पाँच लाठियां मुर्गी की पीठ पर जमाई। तब कहीं उसने बच्चे को छोड़ा और एक खपरैल पर जा बैठी। सारे कस्बे में तहलका मच गया।

इतने में ही कुछ सरकस वाले आए और इन मुर्गियों को पकड़कर ले गए। दूसरे दिन मुर्गियों की खबरें बहुत से अखबारों में छपीं। अखबारों की खबरों को देखकर दोनों वैज्ञानिक बड़े अचरज में पड़ गए।

एक दिन रैडवुड से वैसिंगटन ने पूछा - 'अब तुम्हारा बच्चा कैसा है?'

'छः महीने का हो गया। उसका वजन ५० पौंड है। छः साल के बच्चे के बराबर लगता है। उसके पास कोई नर्स या आया नहीं टिकती। जिसे भी रखता हूँ वही उसके लात-घूंसों की मार से घबराकर भाग जाती है। नर्सें कहती हैं - 'यह बच्चा नहीं कोई दैत्य है।"

'तब आप एक काम करिए। उसकी खुराक तुरन्त कम कर दीजिए।'

'मैंने कम करके देखा, लेकिन वह खाने के लिए बुरी तरह रोता-चिल्लाता है।' - रैडवुड बोला।

'अगर उसे यही खुराक मिलती रही तो जल्दी ही वह ४० फुट का हो जाएगा। फिर उसके खाने-कपड़े की व्यवस्था करना तुम्हारे लिए एक समस्या हो जाएगी।' - वैसिंगटन ने कहा।

रैडवुड ने देखा सड़क पर एक अखबार की गाड़ी जा रही थी। उस पर उस दिन की सबसे भयनक खबर लिखी थी - 'दैत्याकार चूहों ने डॉक्टर पर हमला बोला।' वह दौड़कर गया और एक अखबार खरीद लिया। खबर थी - घोड़े पर जाने वाले डॉक्टर पर कुछ बड़े चूहों ने हमला बोल दिया। डॉक्टर तो जान बचाकर भाग गया लेकिन उसके घोड़े को चूहों ने मार डाला। दोनों वैज्ञानिकों ने बड़े रहस्यमय ढंग से एक-दूसरे की आंखों में देखा और वहाँ से उठकर चल दिए।

उधर कोसर दम्पत्ति ने अपने तीनों बच्चों को भीम भोजन खिलाना शुरू कर दिया। रैडवुड के बच्चों की देखभाल करने वाले डॉक्टर ने अपने और कई मरीजों को यह भोजन दे दिया। इन मरीजों में एक विदेशी राजकुमारी भी थी।'

अचानक लंदन में एक नये राजनीतिक नेता केटरहम को भीम भोजन का पता चल गया। उसने खुलेआम इसका विरोध करना शुरू कर दिया। धीरे-

धीरे भीम बच्चों और भीम भोजन के खिलाफ जनता भड़कने लगी। इसके विरोध में तरह-तरह के आंदोलन चलने लगे।

रैडवुड का बच्चा जैसे ही 6 महीने का हुआ, उसने अपनी गाड़ी तोड़ डाली और नर्स पर झपट पड़ा। जब वह एक साल का हुआ तो उसकी ऊँचाई पाँच फुट थी। लंदन में ये बच्चे 'भीम फूड

बेवी' (भीम बालक) के नाम से मशहूर हो गए। अब इनके खेलने का कमरा, बालगाड़ी आदि सभी कुछ बड़ी बनाने की समस्या सामने आई। ये रोजाना कमरे की मेज-कुर्सी व हर चीज को तोड़ डालते। आया, नर्स और इनके माँ-बाप सभी इनसे परेशान थे। उन दिनों अखबारों में तरह-तरह की अजीबोगरीब खबरें छपने लगीं और अफवाहें फैलने लगी। जैसे नदी के किनारे पानी के सांप ने भेड़ को पकड़कर

मार दिया। बड़ी मक्खी व पतंगों ने कई आदमियों को घेरकर परेशान किया। शहर के बहुत से लोग भीम भोजन व वैसिंगटन के खिलाफ हो गए। एक दिन कुछ लोगों की भीड़ ने वैसिंगटन का घर घेर लिया। वह जान बचाने के लिए इधर-उधर छुपने की जगह तलाश करने लगा। वैसिंगटन के टाइपिस्ट ने दूसरे कमरे में ले जाकर उसे चारपाई के नीचे छुपा दिया और बाहर से ताला लगा दिया। वैसिंगटन का दिल जोर-जोर से धड़क रहा था। उसे बाहर के लोगों का चिल्लाना और गालियां साफ सुनाई पड़ रही थीं। तभी अचानक किसी ने ताला खोला वैसिंगटन घबरा गया। किसी ने चारपाई के नीचे हाथ डालकर उसकी टांग पकड़ ली। वह चीखने ही वाला था कि आवाज आई 'डरो मत, मैं कोसर हूँ। जल्दी भाग चलो। भीड़ ने मकान में आग लगा दी है।'

'लेकिन हम भागेंगे कैसे? बाहर की भीड़ तो हमें भेड़ियों की तरह नोच डालेगी।' वैसिंगटन ने कहा।

'मैं तुम्हें पहनाने के लिए आया की पोशाक लाया हूँ। यह लो तुम्हारे गंजे सिर को ढंकने के लिए मेरे पास टोप भी है। जल्दी करो।' कोसर ने उसे आया की पोशाक पहना दी और दोनों भीड़ की भगदड़ में जान बचाकर किसी तरह निकल भागे।

इन वैज्ञानिकों के यहाँ काम करने वाली महिला श्रीमती स्किनर भी भीम भोजन के दो बड़े टिन लेकर कुछ दिन हुए भाग गई थी। उसके पुत्र केडलस के लड़का हुआ और उसने उसे भीम भोजन खिलाना शुरू कर दिया। बच्चा इतनी जल्दी लम्बा-चौड़ा और वजनी हो गया कि चारों ओर इसका शोर मच गया।

जब यह बच्चा कुछ और बड़ा हो गया तो इसे गिरजाघर, स्कूल तथा बालबाड़ी आदि जगहों में जाने की मनाही थी। लेडी वंडरशूट भी परेशान थीं क्योंकि यह रोज कहीं न कहीं खुराफात करता रहता था, उसने इसे किसी काम में लगाने का इरादा किया। उसने उसे सारे दिन नदी के किनारों पर पत्थर जमाने का काम बता दिया। खेल का खेल और काम का काम। वह सिर पर टोप की तरह बेंत की कुर्सी को उल्टी रखे पत्थरों को नदी के किनारे-किनारे जमाता रहता। जब प्यास लगती तो वह किनारे पर लेटकर नदी में मुंह लगाकर पानी पी लेता।

इधर कोसर के तीनों लड़के भी बड़े हो गए। एक-एक लड़का चालीस-चालीस फुट ऊँचा था। एक भाई ने तख्ते काटकर अपने लिए भारी और विशालकाय साइकिल बना डाली। सड़कें, मकान और आदमी इन्हें अपनी तुलना में बहुत छोटे-छोटे दिखने लगे। एक दिन तीनों भाई मिलकर अपने घूमने-फिरने के लिए बड़ी चौड़ी सड़क बना रहे थे। इतने में ही सड़क के ओवरसियर ने इन्हें रोक दिया। ओवरसियर ने ऐतराज करते हुए कहा - 'सुनो भाई, सड़क बनाना फौरन बन्द कर दो। तुमने रेलवे, गैस-कम्पनी और कई कौंसिलरों की जमीन में सड़क खोद दी है। यह सरासर कानून के खिलाफ बात है।'

तीनो भाई बड़े परेशान थे। क्या हम अपने चलने लायक सड़कें भी नहीं बना सकते। कैसे अजीब कानून हैं। इन्हें पता चला कि इनका एक भाई रैडवुड भी है। ये चाहते थे कि हम साथ-साथ मिलकर रहें और इन बौनों और हर बात में कानून निकालने वाले छोटी तबियत के छोटे-छोटे आदमियों से दूर जंगल में अपना बड़ा मकान बनाएं और वहीं मिलकर दुनिया की भलाई के लिए कोई काम करें। अंत में ये लोग शहर छोड़कर जंगल में रहने के लिए चले गए।

जिन जंगली खरपतवारों को भीम भोजन मिल गया वे भी कुछ ही दिनों में विशाल पेड़ बन गए।

उधर सरकार की आज्ञा से बड़े-बड़े शिकारी, खिलाड़ी, नेता और पुलिस के लोग इन बच्चों को खोजने लगे। एक दिन उनमें से किसी ने देखा कि जंगल में एक पठार पर तीन फुट लम्बा पैर का निशान बना है। अवश्य ही कोई भीम बालक यहाँ

से निकला होगा।

रैडवुड यहाँ से गुजरा था। वह जंगल में घूम रहा था। उसने देखा - उसी के बराबर की एक लड़की जिसकी ऊँचाई आम के पेड़ों से भी ऊँची है, रैडवुड को देखकर अपने पास बुला रही है।

रैडवुड ने उसे सलाम किया, 'शायद तुम भी हमारी तरह की भीम बालिका हो।'

'हाँ, मैं दुनियां में इतनी बड़ी पैदा होकर तंग आ गई हूँ। दुनिया हमें रखने के लिए तैयार नहीं है।' राजकुमारी ने कहा - यह वही विदेशी राजकुमारी थी जिसे डॉक्टर ने खुराक खिलाकर तगड़ा बना दिया था। रैडवुड और राजकुमारी में बड़ा प्यार हो गया। उसी जगह दोनों रोजाना मिलते और एक-दूसरे से प्यार की बातें करते रहते। एक दिन राजकुमारी ने कहा - 'रैडवुड, तुम नहीं जानते हम दोनों कितना बड़ा अपराध कर रहे हैं।'

'कैसा अपराध? हम तो किसी से कुछ भी नहीं कहते।' रैडवुड ने चौंककर कहा।

'नहीं, यह सब मैं कुछ नहीं जानता, मैं तुमसे ही प्यार करूंगा। चलो कल हम अपने और भीम भाइयों के पास चलेंगे। उन्होंने हम सबके रहने के लिए जंगल में बहुत बड़ा महल बना लिया होगा।' - यह कहकर रैडवुड चला गया।

दूसरे दिन भीमकाय राजकुमारी पहाड़ी पर खड़ी-खड़ी रैडवुड का इंतजार करने लगी। बहुत देर बाद उसने देखा रैडवुड लंगड़ाता हुआ चला आ रहा है। पता चला कि कुछ जमींदारों ने उसे घेर लिया और घोड़ों पर चढ़कर उसका पीछा करते हुए गोलियां चलाई और एक गोली उसके पैर में लगी। शिकारी और जमींदार घोड़े दौड़ाते हुए पेड़ों के झुरमुट से निकले और इन दोनों का पीछा करने लगे। इतने में ही यह दोनों लम्बे-लम्बे कदम बढ़ाते हुए कोसर भाइयों के बड़े मकान की ओर दौड़ गए। इस तरह वे गोली चलाने वालों की आंखों से ओझल हो गए। भीमकाय कैडलस् काम करते-करते थक गया था। उसे लगा कि लेडी वंडर शूट उसे बेवकूफ बना रही है। उसने गुस्से में आकर दो चलते हुए ट्रकों को लात मारकर एक-दूसरे से टकरा दिया और वह गाँव छोड़कर लंदन शहर की ओर चल पड़ा।

चुनाव में कैटरहम जीत गया। उसने भीम बालकों को रोकने का कानून पास करा दिया। इन सभी भीमों को जंगली बताया गया। जैसे ही कैडलस् लंदन की सड़कों पर दिखाई दिया, पुलिस ने उसे चारों ओर से घेरकर लंदन के बाहर निकल जाने को कहा। उसने कहा ऐसा क्यों? तो पुलिस अधिकारी ने बताया कि आपके सड़क पर खड़े होने से गाड़ियों का आना-जाना रूक गया है। हजारों गाड़ियां और राहगीर खड़े हो गए और आपका तमाशा देखने लगे। अतः आपको फौरन लंदन से बाहर जाना होगा।

चुनाव में कैटरहम जीत गया। उसने भीम बालकों को रोकने का कानून पास करा दिया। इन सभी भीमों को जंगली बताया गया। जैसे ही कैडलस् लंदन की सड़कों पर दिखाई दिया, पुलिस ने उसे चारों ओर से घेरकर लंदन के बाहर निकल जाने को कहा। उसने कहा ऐसा क्यों? तो पुलिस अधिकारी ने बताया कि आपके सड़क पर खड़े होने से गाड़ियों का आना-जाना रूक गया है। हजारों गाड़ियां और राहगीर खड़े हो गए और आपका तमाशा देखने लगे। अतः आपको फौरन लंदन से बाहर जाना होगा।

कैडलस् इन सबकी परवाह किए बिना आगे बढ़ता गया। वह सारी रात लंदन की सड़कों पर

इधर से उधर ऊधम मचाता हुआ घूमता रहा। सुबह होते ही उसे भूख लगी। उसने डबल रोटियों से लदी एक गाड़ी को रोककर खूब नाश्ता किया। इतने में ही पुलिस ने उसे आ घेरा। 'कैडलस् वापस गाँव लौट जाओ। वरना हम गोली चला देंगे।' - एक पुलिस अधिकारी ने चेतावनी दी। कैडलस् ने बिजली का एक लट्ठा उखाड़ लिया और वह पुलिस पर झपटने ही वाला था कि धांय से एक गोली चली और वह घायल हो गया।

कैटरहम ने देखा अब अच्छा मौका है। सारी जनता इन वैज्ञानिकों और भीम भोजन से पले भीम बच्चों के खिलाफ हो गई है। अतः उसने रैडवुड को गिरफ्तार करने के आदेश दे दिए। बीमार रैडवुड अपने मकान में नजरबंद हो गया। उसने खिड़की खोलकर बाहर देखा, चारों ओर पुलिस का कड़ा पहरा है। सामने दूरी पर लाल चमक दिखाई दे रही है। गोलियां चलने की आवाज आ रही है। उसे लगा कि उसका भीम बालक रैडवुड राजकुमारी को साथ लिए पुलिस से जूझ रहा है। उधर अखबारों में खबरें छप रहीं थी कि दुनिया के कोने-कोने में भीम बालक-बालिकाओं को खोज-खोजकर मारा जा रहा है। रैडवुड सड़क पर रो पड़ा। 'यह अन्याय क्यों? क्या समाज में इन बच्चों को सुख-शांति से जीने का अधिकार नहीं है।' इतने में ही एक आदमी बूढ़े रैडवुड को कैटरहम के पास ले जाने के लिए बुलाने आया। रैडवुड भड़क उठा - 'क्या कैटरहम को इन बच्चों की

हत्या करने से शांति नहीं मिली। वह मुझसे और क्या चाहता है?'

'नहीं वह गलतफहमी दूर करने के लिए आपस में बातें करना चाहते हैं।' वह व्यक्ति बोला।

'क्या वह अभी मेरे बच्चों से लड़ रहा है।' रैडवुड बोला।

'नहीं युद्ध बन्द है। वे समझौता करना चाहते हैं। भीम बालक चाहते हैं कि मध्यस्थ के रूप में उनकी ओर से आप सरकार से बात करें।' - उस व्यक्ति ने कहा। रैडवुड कैटरहम से मिला। उसने एक उपाय सुझाया कि इन सभी भीम बालकों को उत्तरी अमरीका या अफ्रीका के जंगलों में भेज दिया जाए। 'जहाँ वे आजादी से जी सकें।' उसने कहा अगर इस शर्त पर वे लोग राजी नहीं होते तो हमें मजबूरन पुलिस की कार्रवाई करनी पड़ेगी।

रैडवुड ने कहा - 'मैं अपने बच्चों से मिलकर बात करना चाहता हूँ।'

'ठीक है तुम जाकर उन्हें ठीक-ठाक कर दो।' कैटरहम ने रैडवुड को एक मोटरगाड़ी से उन बच्चों के पास भिजवाने का इन्तजाम कर दिया।

ऊबड़खाबड़ रास्ते पर चलती हुई मोटर पर तेज रोशनी चमकी। गाड़ी रूक गई। कोसर यहीं था। उसने रैडवुड को उतारा और कहा - 'सभी बच्चे नीचे गुफा में घर बनाकर रह रहे हैं। तुम उनसे बात कर लो।'

रैडवुड ने सभी बच्चों को इकट्ठा करके कैटरहम की शर्तें सुना दीं।

रैडवुड ने कहा कि कैटरहम चाहता है कि - सभी भीम बच्चे दूसरे महाद्वीप में रहें और शादी करके आगे संतान पैदा न करें। वे स्वयं जब तक जिए अवश्य जिएं।

'क्या तुम्हें यह शर्त मंजूर है।' रैडवुड ने पूछा।

वृद्ध रैडवुड का लड़का जिसके हाथ पर पट्टी बंधी थी लंगड़ाता हुआ आया और उसने सबको संबोधित करते हुए कहा कि हमें यह शर्तें हरगिज मंजूर नहीं है। हम जानते हैं कि दुनिया में बौने और भीम बच्चे साथ-साथ नहीं जी सकते। हम आखिरी दम तक बुद्धि और विकास को लक्ष्य बनाकर लड़ेंगे और कल सारे लंदन पर भीम भोजन का बमबार्डमेंट कर देंगे, ताकि सारे बौने उसे खाकर भीमकाय बन जायें। उत्तर में कोसर के तीनों पुत्र एक साथ बोले - 'बिल्कुल ठीक है, हम आखिरी दम तक कैटरहम से लड़ेंगे। अगर हम मिट भी गए तो भीम भोजन तो शेष बचेगा और उसे खाने वाली नई पीढ़ी बड़ी होकर छोटे और बौने लोगों की दुनिया से हमेशा लड़ती रहेगी।'

'बिल्कुल ठीक है। हमारी लड़ाई निरंतर विकास की लड़ाई है। वृद्धि हमारा नहीं प्रकृति का नियम है। इस संघर्ष को कोई नहीं रोक सकता।' - यह कहकर भीम कुमारी रैडवुड के पास आ गई। बुड्ढा रैडवुड और कोसर चुप थे। वे लगभग बुझ चुके थे। उनमें भीमकाय नई पीढ़ी से जूझकर तर्क करने का साहस नहीं था। दोनों मौन होकर लौट पड़े। क्षितिज पर भोर के धुंधलके में भुजा उठाए भीम बालक की आकृति धीरे-धीरे उभर रही थीं। वह कह रहा था - 'हम लड़ेंगे आखिरी दम तक लड़ेंगे, बड़प्पन और विकास को लाने के लिए।'

'फूड ऑफ दि गाड्स' : एच.जी.वेल्स, संक्षिप्त हिंदी रूपांतर : शक्ति त्रिवेदी

❑❑❑

'साइंस फिक्शन' लिखने का अभी चलन नहीं है और यह बहुत बड़ी कमी है। 'साइंस फिक्शन' भी दो तरह का होता है। साधारण कथानक रखकर उसमें कहीं बिजली का जिक्र कर दिया जाय या घटना स्थल पृथिवी से उठाकर किसी अन्य पिंड पर डाल दिया जाय तो यह वास्तविक वैज्ञानिक कहानी नहीं हुई। इस विषय के जो अच्छे लेखक हैं, उनका उद्देश्य विज्ञान का प्रचार होता है। कहानी तो मात्र बहाना होती है। इसलिए कथानक बहुत थोड़ा होता है। लेखक कल्पना से काम तो लेता है परंतु वैध सीमाओं के भीतर। उन्हीं बातों की चर्चा करता है जो या तो आज विज्ञान के प्रयोग में आ चुकी हैं या विज्ञान की प्रगति को देखते हुए सौ-दो सौ वर्षों में व्यवहार में आ जायेंगी।

- डॉ.संपूर्णानंद

चंद्रलोक की यात्रा

जूल्स वर्न

नवंबर हो गई। अब केवल दस दिन बाकी रह गए। अब इस अभियान का केवल एक ही अंग बाकी रह गया था। वह कार्य था तोप में बारूद भरना। इसकी सफलता के संबंध में नाईकोल की तीसरी शर्त थी। 4 लाख पौंड पायरोक्साईल को 900 फुट नीचे तोप में उतारना कोई साधारण कार्य नहीं था। नाईकोल ने सोचा था - जो ठीक भी था - कि इतनी मात्रा में पायरोक्साईल को उतारना खतरे से खाली नहीं है।

अमेरिकन साधारणतः लापरवाह होते हैं, इसलिए खतरे की संभावना ज्यादा थी परन्तु बीर्बीकेन ने निश्चय किया था कि उसे अपने प्रयोग को सफल करना ही है और इस कारण उसने हर संभव एहतियात बरतीं। उसने स्टोनहिल तक बारूद लाने में भी काफी सावधानी बरती। बारूद छोटे-छोटे पैकेटों में लाई गई। टेम्पा शहर से स्टोनहिल तक रेलगाड़ी में लाई गई। वहां से तोप तक नंगे पैर होकर कारीगर उसे ढोने लगे। तोप के पास क्रेन द्वारा उसे नीचे उतारने लगे। वहां पर किसी भी स्टीम इंजन का व्यवहार न किया गया तथा चारों ओर दो मील तक सभी जगह अग्नि बुझा दी गई।

नवंबर में भी वे लोग यह कार्य दिन में नहीं कर रहे थे क्योंकि उन्हें खतरा था कि कहीं सूर्य की गर्मी से बारूद आग न पकड़ ले। वे लोग रात को कार्य करते थे और रात में कार्य करने के लिए रोशनी रूमकार्फ नामक यंत्र द्वारा शून्य में प्राप्त करते थे। इस प्रकार की रोशनी उन्होंने तोप की तली में भी पहुंचाई। इस बारूद के सभी पैकेट एक दूसरे से धातु के तार द्वारा संबद्ध थे। इनमें बिजली दौड़ाकर बिजली की चिंगारी द्वारा पूरी बारूद एक साथ उड़ा देने की योजना थी।

२८ नवंबर तक बारूद के 800 पैकेट तोप के तले पहुंचा दिये गये। अब तक पूरा कार्य ठीक प्रकार से हुआ था। परंतु इस कार्य को करने में बार्बीकेन को काफी घबड़ाहट, परेशानी तथा चिंता हो रही थी। उसने किसी भी व्यक्ति को इस समय पास नहीं फटकने दिया, इस अंदेशे में कि कहीं किसी की जलती सिगरेट से बारूद आग न पकड़े ले (यद्यपि उसकी यह आज्ञा मानी नहीं गई) बार्बीकेन किसी भी प्रकार से गाफिल नहीं रहना चाहता था। जे.टी. मेस्टन ने भी यथाशक्ति बार्बीकेन के इस कार्य में सहायता दी। तमाशा देखने इकट्ठे हुए व्यक्तियों द्वारा फेंकी हुई जलती सिगरेट के ठूंठ को बीनकर वह उसे बुझा देता था। यद्यपि यह कार्य काफी कठिन था क्योंकि वहां पर इकट्ठे व्यक्तियों की कुल तादाद तीन लाख से कम न थी।

माईकेल आर्डेन ने तोप तक बारूद की ढुलाई की निगरानी करने के कार्य का बीड़ा लिया था, परन्तु अध्यक्ष ने जब देखा कि वह स्वयं एक बहुत बड़ा चुरूट सुलगाये हुए लोगों की भीड़ को इधर-उधर हटा रहा था तब उसके ऊपर भी एक निरीक्षक रखा।

जूल्स वर्न का पूरा नाम जूल्स गेब्रीयल वर्ने था। उनका जन्म 8 फरवरी 1828 को फ्रांस में हुआ। वे एक फ्रांसीसी उपन्यासकार, कवि, एवं नाटककार थे। पियरे जूल्स हेट्स जेल के साथ मिलकर आपने वॉयस एक्ट्रा आर्डीनेयर का निर्माण किया। ट्वेंटी थाउजेंट लीजेंट अंडर द सीज़, लीग्स अंडर द सी, जर्नी टू द सेन्टर ऑफ द अर्थ, द मिस्टीरियस आयलैंड, फ्रॉम द अर्थ टू द मून आदि प्रसिद्ध कृतियाँ। आपका निधन 24 मार्च 1909 को हुआ।

अंत में यह कार्य भी समाप्त हो गया और कैप्टन नाईकोल अपनी तीसरी शर्त भी हार गया। अब केवल गोले को उतारना बाकी रह गया। इसके पहले यात्रा में साथ जाने वाली सभी वस्तुएं गोले में रख दी गईं। यह वस्तुएं काफी थीं। यदि आर्डेन की इच्छा के अनुसार सभी वस्तुएं रखी गई होतीं तो शायद यात्रियों के खड़े रहने की जगह भी न रहती। परंतु बार्बीकेन के समझाने पर वह केवल उन्हीं वस्तुओं को ले जाने के लिए राजी हो गया, जो बहुत ही आवश्यक थीं। एक बक्से में कई थर्मामीटर, बैरोमीटर तथा दूरबीनें रख ली गईं।

इन यात्रियों ने अपने साथ बियर तथा मिलर द्वारा बनाई हुई, चंद्रमा के मानचित्रों के सुंदर नक्शे की ऐटलस 'मैपासैलीनो ग्राफिका' भी अपने साथ ले ली, जिसमें चंद्र का अध्ययन कर सकें।

इस नक्शे में चंद्र पर पृथ्वी से दिखाई पड़ने वाले सभी स्थान ठीक प्रकार दिखाये गए हैं।

उन लोगों ने तीन रायफलें, तीन बंदूकें तथा काफी मात्रा में बारूद, गोले इत्यादि सामान ले लिया।

'हम नहीं जानते कि इसका हम क्या करेंगे', आर्डेन ने कहा - 'परंतु हो सकता है कि चंद्र पर रहने वाले प्राणी हमारा विरोध करें और इसलिए हमें हर संभव एहतियात करना आवश्यक है।'

इन हथियारों के साथ उन्होंने कुदालें, आरियां तथा अन्य उपयोगी औजार भी लिये। गर्मी तथा सर्दी के उपयुक्त कपड़े भी काफी मात्रा में ले लिए।

आर्डेन की इच्छा थी कि प्रत्येक जाति का एक-एक जानवर भी चंद्रलोक ले जाया जाय। उसने बार्बीकेन से कहा कि - 'सर्प, शेर, मगर इत्यादि खतरनाक जानवर चंद्र पर न ले जायं तो कोई हर्ज नहीं, परंतु बैल, गाय, घोड़ी या गधा आदि उपयोगी जानवर हमें चंद्र तक अवश्य ले जाने चाहिए।'

'प्रिय आर्डेन, परंतु हमारा गोला हजरत नूह की नाव तो बन नहीं सकता है। वह उससे बहुत छोटा है तथा उसका उद्देश्य भी भिन्न है। हम केवल आवश्यक चीजें ही ले जा सकेंगे। काफी बहस के बाद यह तय हुआ कि नाईकोल का पालतू कुत्ता तथा एक न्यू फाउंडलैंड का कुत्ता केवल यही दो जानवर साथ ले जाये जायं। कई प्रकार के बीज भी ले लिये गये। चंद्रमा पर रोपने के लिए लगभग एक दर्जन प्रकार के हरे पौधे भी घास में लपेट कर ले लिये। अभी तक बहुत ही महत्वपूर्ण एक वस्तु लेनी बाकी रह गई थी। मान लो, चंद्र पर अभी भूमि ऊसर निकली तब क्या किया जायगा। बार्बीकेन ने तीनों व्यक्तियों के लिए एक वर्ष की खाद्य-सामग्री रखवा ली। उन्होंने ब्रांडी एवं पानी भी दो महीने के लिए ले लिया क्योंकि ज्योतिषियों के अनुसार चंद्र पर काफी मात्रा में पानी है। खाना तो वहां पृथ्वी के निवासी प्राप्त कर सकेंगे ही।' आर्डेन ने इस संबंध में कोई चिंता प्रकट नहीं की। यदि उसे यह चिंता होती तो वह यह सफर ही नहीं कर सकता था।

'इसके अलावा, दोस्तो।' आर्डेन ने एक दिन कहा - 'हमारी पृथ्वी पर के मित्र चंद्र पर पहुंचकर हमें भूल न जाएंगे।'

'बिलकुल नहीं।' मेस्टन ने कहा।

'तुम्हारा क्या मतलब है?' नाईकोल ने पूछा।

'अब कुछ भी कठिनाई नहीं है। तोफ्मेशा यहां पर रहेगी ही और वर्ष में एक बार जब चंद्र फिर अनुकूल परिस्थिति में होगा (बहुत ही उत्तम परिस्थिति जो अठारह वर्ष के बाद आएगी) तब हमारे दोस्त एक ऐसा गोला भेजेंगे जिसमें आवश्यक सामग्री भी रहेगी। हम उस चंद्र पर किसी भी दिन पहुंचने की आशा कर सकते हैं।'

'खूब! खूब!' मेस्टन चिल्ला उठा। 'कैसा सुंदर विचार है। सचमुच! मेरे दोस्तों, हम आपको नहीं भूलेंगे।'

'तो मैं आपके ऊपर यकीन करता हूं और अब देखिये कि जब हमें हमारे दोस्तों द्वारा बराबर सामान मिलता रहेगा तो चंद्रमा से पृथ्वी तक संबंध स्थापित करने की कोई तरकीब निकाल ही लेंगे।' उपरोक्त शब्द आर्डेन ने इतने विश्वास और सरलता से कहे कि सभी उपस्थित व्यक्तियों को उन तीनों व्यक्तियों के साथ चंद्र पर जाने का लालच हो आया।

अब कार्य समाप्त होकर केवल गोले को तोप में उतारकर बारूद पर रख देना ही बाकी रह गया था।

कैसे भयानक क्षण थे वे जब जंजीरों से बंधा हुआ गोला नीचे उतारा गया। यदि जंजीरें टूट जातीं! पूरी बारूद उसके गिरने के दबाव से दग उठती।

भाग्य से ऐसी कोई दुर्घटना नहीं घटी और कुछ क्षणों में चंद्रलोक तक पहुंचाने वाला यह यान रूपी गोला नीचे पहुंच गया और उसने बारूद के ऊपर स्थान ले लिया।

'मैं तीन हजार डालर हार गया' कह कर कैप्टन ने तुरंत ही तीन हजार डालर के नोट बार्बीकेन को गिन दिये।

बार्बीकेन अपने सहयोगी से यह रकम अब स्वीकार करने को तैयार नहीं था परंतु कैप्टन ने जिद की।

'अब मैं तुमसे केवल दो बातें और चाहता हूं' आर्डेन ने कैप्टन नाईकोल से कहा।

'वह क्या है?'

'यह कि तुम अपनी दो शर्तें और हार जाओ।' तब हमें चंद्र तक पहुंचने से कोई रोक नहीं सकेगा।

अंत में पहली दिसंबर आ गई! यदि तोप रात के ठीक 10 बजकर 46 मिनट और 40 सेकेंड पर न दागी गई तो चंद्रमा पर जाने के लिए ऐसा उपयुक्त अवसर 18 वर्ष के बाद ही आयेगा।

हवा का रुख भी ठीक था और यद्यपि जाड़े का मौसम था फिर भी आकाश स्वच्छ था। उस रात कितने ही व्यक्तियों के हृदय धक-धक कर रहे थे। यदि किसी का नहीं कर रहा था तो वह था माईकेल आर्डेन का। जैसे कोई विशेष बात होनी ही न हो वैसी साधारण अवस्था में वह था।

उस दिन सुबह से ही स्टोनहिल पर चारों ओर से मनुष्य इकट्ठे होने लगे। वहां से जहां तक भी निगाह पहुंच सकती थी। वहां तक आदमी ही आदमी नजर आ रहे थे। प्रत्येक 15 मिनट पर ट्रेन नये दर्शक ला रही थी। टेम्पा टाउन 'आब्जरवर' के अनुसार वहां लगभग 50 लाख व्यक्ति पहुंच गए थे।

इतने ही में एक फ्रांसीसी एवं दो अमेरिकनों ने गोले के पास ही अपना स्थान ले लिया था। वहां पर तोपक्लब के सदस्य तथा योरोप की लगभग सभी वेधशालाओं के प्रतिनिधि भी पहुंच गये थे। बार्बीकेन शांत स्वर में अंतिम आज्ञाएं दे रहा था। नाईकोल पीठे हाथ बांधकर होंठ दाबे हुए, तथा मजबूती से भूमि पर कदम रखता हुआ टहल रहा था। माईकेल आर्डेन हमेशा की ही तरह, प्रसन्नचित्त होकर, मुंह में चुरूट दाबे, मेस्टन से हंसी-मजाक कर रहा था। एक शब्द में कहा जाय तो अंत तक यह सच्चा 'फ्रांसीसी' रहा।

लगभग एक महीने पहले से वहां पर लोग इकट्ठा हो गये थे और उन्होंने अपनी आबादी बना ली थी। उस शहर का नाम आर्डेन के नाम पर 'आर्डेन शहर' रखा गया था। पूरा मैदान झोपड़ियों एवं तंबुओं से भर गया था। पृथ्वी भर के सभी राष्ट्रों ने निरीक्षण के लिए अपने प्रतिनिधि वहां भेजे थे। वहां पर पृथ्वी पर की प्रत्येक भाषा बोली तथा सुनी जा सकती थी। सभी वर्ग के लोग अमेरिकनों से मिल-जुलकर बातें कर रहे थे।

सर्राफ, किसान, मल्लाह, जुलाहा, दलाल, व्यापारी, भिश्ती, न्यायाधीश एवं वकील सभी वहां एक दूसरे से बगैर किसी भेद-भाव से मिल-जुलकर बातें कर रहे थे। विचित्र प्रकार की पोशाकें वहां दिखाई पड़ती थीं। स्त्रियां भी अपने-अपने सुंदर वस्त्राभूषणों से लैस होकर घूमती नजर आ रही थीं।

दोपहर में यह सभी व्यक्ति खाने पर जुट जाते थे। उस समय खर्च हुई शराब की मात्रा का क्या कहना! होटलों, मदिरालयों एवं रेस्टोरां में काफी शोर मच गया था। एक तरफ आवाज आती थी - 'दाल लाओ' दूसरा चिल्ला रहा था - 'आलू की सब्जी दो।' एक ओर कोने से आवाज आती थी - 'रोटी'। यह आवाजें एक साथ हो रही थीं जिससे काफी शोर हो रहा था।

परंतु 1 दिसंबर को यह सब आवाजें कहीं सुनाई न पड़ती थीं। किसी को भूख ही नहीं लग रही थी। शाम को चार बजे तक लाखों ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने सुबह से ही कुछ न खाया था।

इसी प्रकार मौन आंदोलन रात तक ऐसे चलता रहा, जैसा कोई भयानक दुर्घटना होने के पहले होता है। सभी किसी घटना का बेचैनी से इंतजार कर रहे थे।

सात बज गये। चंद्र क्षितिज में ऊपर आ रहा था। लाखों आवाजों ने एक साथ उसके स्वागत में नारे लगाये। उतने में वे

तीन यात्री भी वहां दिखाई पड़े। इन लोगों को देखकर नारे और भी बढ़ गये और शोर बहुत भयंकर हो गया। उसके बाद एक निश्चित इशारे द्वारा सभी को शांत किया गया और संयुक्त राष्ट्रों का राष्ट्रगान 50 लाख भर्राये हुए गलों से निकला। इसके बाद कुछ क्षणों के लिए संपूर्ण शंति छा गई।

इतने ही में एक फ्रांसीसी एवं दो अमेरिकनों ने गोले के पास ही अपना स्थान ले लिया था। वहां पर तोपक्लब के सदस्य तथा योरोप की लगभग सभी वेधशालाओं के प्रतिनिधि भी पहुंच गये थे। बार्बीकेन शांत स्वर में अंतिम आज्ञाएं दे रहा था। नाईकोल पीछे हाथ बांधकर होंठ दाबे हुए, तथा मजबूती से भूमि पर कदम रखता हुआ टहल रहा था। माईकेल आर्डेन हमेशा की ही तरह, प्रसन्नचित्त होकर, मुंह में चुरूट दाबे, मेस्टन से हंसी-मजाक कर रहा था। एक शब्द में कहा जाय तो अंत तक यह सच्चा 'फ्रांसीसी' रहा।

दस बजे। गोले में प्रवेश करने का समय हो गया। उनको नीचे उतरने में तथा उसके बाद 'क्रेन' आदि सामान को हटाने में भी कुछ समय लगेगा।

बार्बीकेन ने अपनी घड़ी मर्चीसन की घड़ी से मिलाकर एक सेकेंड के दसवें भाग तक शुद्ध कर लिया था। मर्चीसन के जिम्मे बिजली की चिंगारी द्वारा इतनी बड़ी तोप दागने का भव्य काम था।

अब यात्री लोग गोले में प्रवेश करने को तैयार हो गये।

'नमस्ते' कहने का क्षण आ गया। बहुत ही हृदयस्पर्शी दृश्य था। प्रसन्नचित्त रहने वाला आर्डेन भी पिघल गया। उसकी आंख से भी पानी का एक बिंदु अनजाने अध्यक्ष के सर पर टपक पड़ा। मेस्टन से रहा न गया।

'क्या मैं नहीं चल सकता! अब भी समय है।'

'असंभव, मेरे दोस्त'। बार्बीकेन ने जवाब दिया। कुछ क्षण में तीन यात्रियों ने अपने लंबे सफर के यान में प्रवेश किया। प्रवेशद्वार पेंचों की सहायता से मजबूती से कस दिया गया।

चंद्र आकाश में ऊंचे उठ रहा था और अब वह शिरोबिंदु और क्षितिज के बीच में था। पूरे वातावरण में भयानक शांति छा गई। किसी भी दर्शक के दिल से धड़कन की आवाज भी नहीं आ रही थी। सभी की निगाहें तोप के मुंह पर लगी थीं। चंद्र जाने वाला यान तोप में नीचे उतर चुका था।

मर्चीसन की आंखें घड़ी पर लगी थीं। गोला दागने में केवल 40 क्षण बाकी रह गये थे। एक सेकेंड एक युग के समान बीत रहा था। 20वें सेकेंड में सभी के शरीरों में एक कंपन हुआ। लोगों ने अनुभव किया कि जिस प्रकार वे लोग सेकेंड गिन रहे हैं वैसे ही यान में बैठे यात्री भी गिन रहे होंगे। भीड़ में से कुछ लोग चिल्लाये भी।

'पैंतीस, छत्तिस, सैंतिस, अड़तिस, चालिस - दागो।'

मर्चीसन ने तुरंत ही बटन पर रखी उंगली दबा दी। तारों में विद्युत फैल गई और तोप में रखी बारूद के सभी हिस्सों में चिंगारी लग गई।

जैसा धमाका हुआ, वैसा पृथ्वी पर आज तक कभी भी न सुन पड़ा होगा। ज्वालामुखी भी इतनी आवाज से न फटता होगा। उस आवाज के वर्णन के लिए कोष में कोई शब्द ही नहीं है।

आग की एक बहुत ऊंची लपट तोप के मुंह से आकाश की ओर ऊंची उठी। पृथ्वी हिल गई और बड़ी कठिनाई से केवल कुछ ही व्यक्ति एक क्षण के लिए घूरते हुए गोले को देख सके।

जिस समय आग की लपटें तोप के मुंह से निकलीं उसी समय पूरे फ्लोरिडा की भूमि पर रोशनी हो गई और प्रतीत होने लगा कि रात्रि समाप्त हो गई है और दिन हो गया है। आग की यह प्रचंड ज्वाला 100 मील दूर तक देखी जा सकी थी और कई जहाजों के कप्तानों ने अपनी जंत्री में इस प्रकाश का दर्शन दर्ज किया। तोप छूटने के बाद ही तुरंत एक भूचाल आया। फ्लोरिडा काफी गहराई से हिल गया था। बारूद से निकली हुई गैसों ने गर्मी के कारण फैलकर वातावरण के एक स्तर को जोर से दूर ठेल दिया। इस धक्के से उत्पन्न चक्रवाल सारे फ्लोरिडा पर फैल गया। धमाका होते ही एक भी दर्शक अपने पैरों पर खड़ा नहीं रह सका। भारी तूफान में जिस प्रकार मक्के की बालियां गिर पड़ती हैं उसी प्रकार पुरूष, स्त्री, बच्चे सभी धराशायी हो गये। मेस्टन महोदय तो 120 फुट दूर जा गिरे। 3 लाख व्यक्ति कुछ समय के लिए बिल्कुल बहरे हो गये। जैसे ही धमाके का प्रथम असर समाप्त हुआ वैसे ही धमाके से चोट पहुंचे हुए तथा उससे बाहर हुए व्यक्तियों सहित समस्त भीड़ चिल्ला उठी, 'आर्डेन जिंदाबाद! बार्बीकेन जिंदाबाद! नाईकोल जिंदाबाद!' हजारों व्यक्ति दूरबीन की सहायता से अंतरिक्ष में गोले की ओर देखने लगे, परंतु उनको कुछ भी दिखाई न पड़ा। चंद्र का प्रकाश उतना पर्याप्त नहीं था जिससे कुछ दिखाई भी पड़ता। उनको लोंग पर्वत की चोटी पर से इस संबंध में आने वाले तार का इंतजार करना पड़ा। कैंब्रिज वेधशाला के संचालक महोदय अपना कर्त्तव्य करने के लिए राकी पहाड़ पर पहुंच गये थे तथा अंतरिक्ष में नौ सौ फुट लंबी तोप द्वारा चंद्र पर भेजे गये इस यान का निरीक्षण करने लगे। परंतु एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई जिससे जनता के धैर्य की परीक्षा हुई। आकाश जो अब तक स्वच्छ था, उसमें घने बादल छा गये।

वातावरण के स्तरों के उथल-पुथल के बाद ऐसा तो होना ही था क्योंकि पाइरोक्तिल के दो लाख पाउंड भार के विस्फोट के फलस्वरूप अपरिमित धुआं निकला था।

दूसरे दिन भी आकाश में बादल मौजूद थे। यह बड़े दुर्भाग्य की बात थी। परंतु चूंकि मनुष्य ने प्रकृति की बातों में

दखल देना शुरू कर दिया था इसलिए प्रकृति के इस कोप का भी सामना करना था।

मान लीजिए कि प्रयोग सफल हो! तो एक दिसंबर की रात को 10 बजकर 46 मिनट 20 सेकेंड पर छूटे यह यात्री 4 तारीख की 12 बजे रात को अपने गंतव्य स्थान पर पहुंच जायेंगे। इसलिए उस समय यह बहुत ही कठिन था कि गोला जैसी एक छोटी वस्तु को इतनी गति से जाते देखा जा सके और उन्हें धैर्य धारण करना आवश्यक था।

4 से 6 दिसंबर तक पूरे अमेरिका पर वैसा ही मौसम रहा। योरोप में हर्शेल, रौंसा तथा फोंका की दूरबीनों द्वारा अच्छा मौसम होने के कारण निरीक्षण किया गया परंतु उनकी दूरबीनें बहुत ही कम शक्ति की थीं। इस कारण उनसे कुछ भी नहीं देखा जा सका। सात दिसंबर को आकाश में बादल कुछ कम हुए। अब कुछ आशा बंधी। परंतु वह अल्प अवधि की ही रहीं क्योंकि तुरंत ही बादल फिर छा गये।

अब परिस्थिति गंभीर हो रही थी। 9 को फिर अमेरिकनों को चिढ़ाने को सूर्य दिखाई पड़ा और रात को फिर बादल छा गये।

10वीं तारीख भी ऐसे ही बीत गई। जे. टी. मेस्टन अर्ध विक्षिप्त-सा हो गया। अंदेशा होने लगा कि कहीं पूरा पागल न हो जाय। परंतु 11 तारीख को परिस्थिति बदल गई। प्रचंड हवा के झोंके चलने लगे और सभी बादल गायब हो गए।

उसी रात को जिस समाचार के लिए संपूर्ण अमेरिका प्रतीक्षा कर रहा था कि बिजली की तरह फैल गया। अमेरिका से यह समाचार पृथ्वी भर में तार द्वारा पहुंच गया। गोले का पता चल गया था। कैंब्रिज वेधशाला के संचालक ने भिन्न विज्ञप्ति प्रकाशित कराई। उसमें इस महान् प्रयोग का वैज्ञानिक परिणाम था -

'लौंग की चोटी'
दिसम्बर 12

सेवा में,
कैंब्रिज वेधशाला के अधिकारीगण,

स्टोनहिल की तोप द्वारा छोड़ा गया गोला सर्वश्री बेलफास्ट एवं जे. टी. मेस्टन ने 12 दिसंबर को 8 बजकर 47 मिनट पर देखा। चंद्रमा अपनी अंतिम कला की अवस्था में है। गोला अब तक अपने निश्चित ध्येय तक नहीं पहुंचा है। वह निशान से जरा सा हट गया है। परंतु फिर भी चंद्र की आकर्षण शक्ति के भीतर ही है।

अब गोला सीधे चंद्र की ओर जाने के बजाय चंद्र के चारों ओर अंडाकार परिधि में घूम रहा है। इस प्रकार यह गोला अब सच्चे माने में चंद्र का उपग्रह हो गया है। इस नए उपग्रह को बनाने वाले तत्वों का निर्णय हम अभी नहीं कर पाए हैं। अब तक हम उसके घूमने की गति भी ज्ञात नहीं कर सके हैं। उसकी चंद्र से दूरी लगभग 2833 मील है।

निम्नांकित दो बातें हमारे ध्यान में आ रही हैं-

1. या तो अंत में चंद्र का आकर्षण गोले को अपनी ओर खींच लेगा और इस प्रकार अंत में गोला अपने ध्येय तक पहुंच जाएगा।

2. गोला अलंघ्य नियमों के अुंसार चंद्र के चारों ओर अनंत काल तक घूमता ही रहेगा।

इन दोनों बातों में से अंत में कौन-सी बात होकर रहेगी, यह हम निकट भविष्य में निर्णय कर सकेंगे परंतु तब तक तोप क्लब के इस प्रयोग के संबंध में हम केवल यही कह सकते हैं कि उन्होंने सौर मंडल में एक नये ग्रह का निर्माण किया है।

- जे. बेल फास्ट।

इस अप्रत्याशित घोषणा ने कितने नए प्रश्न उत्पन्न किए? विज्ञान के इस क्षेत्र की खोज में भविष्य में क्या रहस्योद्घाटन होगा? जो कुछ भी हो, नाईकोल, बार्बीकेन एवं आर्डेन के नाम ज्योतिष शास्त्र में हमेशा के लिए अमर हो गए। जब लोंग पर्वत की चोटी पर से उपरोक्त घोषणा सब जगह फैल गई तब समस्त दुनिया में आश्चर्य एवं आशंका की भावना फैल गई। क्या भविष्य में इन बहादुर यात्रियों की मदद हो सकेगी? नहीं। क्योंकि उन्होंने प्रकृति द्वारा मनुष्यों पर लगाई गई सीमा का उल्लंघन किया है। उनके पास दो महीने के लिए पर्याप्त हवा थी और 12 महीने के लिए अन्य सामग्री। परंतु उसके बाद? केवल एक ही व्यक्ति था जो विश्वासपूर्वक परिस्थिति को इतनी निराशाजनक नहीं समझता था। वह व्यक्ति था जे. टी. मेस्टन।

उसने उनको कभी भी अपनी निगाहों से दूर नहीं होने दिया। लोंग की चोटी पर उसने स्थायी रूप से अपना निवास स्थान बना लिया। जैसे ही चंद्र क्षितिज पर उठने लगता वैसे ही वह दूरबीन से देखता और धैर्य से गोले की गति का निरीक्षण करता और इस प्रकार वह अपने तीनों दोस्तों के बराबर संपर्क में रहा करता था तथा उसे उनसे एक बार फिर मिलने की आशा थी।

उसने कहा - 'ये तीनों व्यक्ति अंतरिक्ष में अपने साथ पृथ्वी पर से समस्त कला-विज्ञान एवं उद्योग ले गए हैं। इनके द्वारा सब कुछ संभव है और एक दिन दुनिया देखेगी कि वे सीधे पृथ्वी पर लौट आएंगे।'

फ्रांसीसी उपन्यासकार जूल्स वर्न कृत
'फ्राम अर्थ टू द मून' 1865 से संक्षिप्ततः
हिंदी अनुवाद : सूर्यकांत शाह

❑❑❑

प्रतिशोध

एलेक्जेंडर ड्यूमा

28 फरवरी, 1815 की सुबह एक जहाज एलबा से चलकर फ्रांस के मारसेलिज बंदरगाह पर रूका। जहाज एक घंटे लेट था। जब मारेल ने लेट होने का कारण पूछा तो उन्नीस वर्षीय दांते ने कहा – 'रास्ते में जहाज के कप्तान की मृत्यु हो गई। उसने मुझे एक पैकेट दिया जिसे एलबा में देना था। बस, उसकी अंतिम इच्छा को पूरा करने के लिए ही मुझे जहाज लेट करना पड़ा।'

'वेरी सैड' – मारेल ने कहा, 'लेकिन एलबा तो विद्रोही बोनापार्ट का द्वीप है। वहां जाने से कहीं तुम्हें क्रान्तिकारी बोनापार्टिस्ट न समझ लिया गया हो।'

'कुछ भी हो, मुझे वहां जाना ही था। लेकिन वहां मुझे एक पत्र और दिया गया जो नायटियर के नाम है और उसे मुझे पेरिस पहुंचाना है।' दांते ने कहा और वह जहाज को छोड़कर पत्र देने तथा अपने बूढ़े पिता से मिलने चला गया।

मारेल जहाज का मालिक था। यह दांते को कप्तान बनाना चाहता था। बीच ही में डंगलर आ टपका जो दांते को रास्ते से हटाकर खुद कप्तान बनना चाहता था। इस समय फ्रांस में विद्रोहियों के दमन की लहर चल रही थी। नेपोलियन बोनापार्ट के युद्ध में हार जाने के कारण उसे सम्राट लुई 18 ने देश निकाला दे दिया। वह निर्वासित द्वीप एलबा भेज दिया गया। फ्रांस में दो दल बन गए – शाही दल और बोनापार्ट दल। बोनापार्टिस्ट होना भयंकर अपराध था। जो भी शक में पकड़ा जाता था उसे वेटीडिफ नामक काले पानी भेज दिया जाता था।

अपने पिता को देखने के बाद दांते अपनी प्रेमिका मर्सेडिज के घर पहुंचा। फर्नेंड नामक युवक मर्सेडिज पर डोरे डाल रहा था। वह स्वयं उससे शादी करना चाहता था। इतने में दांते पहुंच गया और मर्सेडिज उसे देखते ही उसके बहुपाश में जगड़ गई। फर्नेंड यह देखकर पीला पड़ गया और क्रोध से कांपने लगा। दांते ने पूछा – 'यह व्यक्ति कौन है?' मर्सेडिज ने कहा – 'ये मेरा चचेरा भाई फर्नेंड है।' फर्नेंड मर्सेडिज और दांते के प्रेम को देखकर राख हो गया और वहां से चला गया।

डंगलर दांते का पीछा कर रहा था। वह किसी तरह दांते को अपने रास्ते से हटाकर स्वयं जहाज का कप्तान बनना चाहता था। एक और एक दो हो गये। डंगलर ने फर्नेंड को फंसा लिया और दोनों ने मिलकर दांते के विरूद्ध एक षडयंत्र रच डाला। दांते के पास वह

फ्रेंच लेखक एलेक्सजेंडर ड्यूमा की प्रसिद्धि को उनके ऐतिहासिक उपन्यासों, द थ्री मस्केटीयर्स और द काउंट ऑफ मोंटे क्रिस्टो ने सुनिश्चित किया। उनका जन्म 24 जुलाई, 1802 को हुआ। उन्होंने साहित्य पर अपना सबसे प्रभावी कार्य शुरूआती नाटकों और मुख्य कार्य फ्रेंच रोमांसवाद को परिभाषित करने में किया। उनके यक्तित्व की बराबरी केवल समकालीन महान लेख, जैसे होनॉड द ब्लैज व विक्तर ह्यूगो ही कर सकते हैं। आधुनिक विद्वानों ने उनके योगदान को प्रमाणिक बताया कि उन्होंने बारह सौ खण्ड लिखे जिनमें से तीन सौ खण्ड प्रकाशित हुए। 5 दिसम्बर 1870 को आपका निधन हुआ।

गुप्त पत्र था जिसे वह एलबा से पेरिस के लिये लाया था। अब वह आसानी से बोनापार्टिस्ट करार दिया जा सकता था क्योंकि एलबा द्वीप से उसका सम्पर्क पत्र के द्वारा सिद्ध हो जाता था।

पेरिस के मजिस्ट्रेट को एक गुमनाम पत्र मिला। इसमें दांते के बोनापार्टिस्ट होने का सुराग दिया गया था। दांते अपने घर में अपने बूढ़े पिता से बोला - 'कल मर्सेडिज मुझसे विवाह कर लेगी और वह मैडम दांते बन जाएगी।' इतने में ही दरवाजा खटका और शाही पुलिस ने दांते को गिरफ्तार कर लिया। डिप्टी मजिस्ट्रेट विलफोर्ट के सामने दांते की तफतीश की गई। विलफोर्ट ने कहा - 'तुम पर बोनापार्टिस्ट' होने का आरोप है। तुम एलबा द्वीप गये और वहां से पेरिस के किसी बोनापार्टिस्ट के नाम गुप्त पत्र लाए हो।'

'हां, मैं पत्र लाया हूं। लेकिन इस पत्र में क्या है, मैं नहीं जानता। न मैं बोनापार्टिस्ट ही हूं। मैंने तो अपने कप्तान की अंतिम इच्छा का पालन किया है।' - दांते निर्भीक था।

'क्या मुझे वह पत्र दिखा सकते हो?' - विलफोर्ट ने कहा और दांते ने पत्र उसे दे दिया। उस पर लिखा था - एम, नायटियर, नं. 13, पेरिस। मजिस्ट्रेट का हाथ कांपने लगा। यह व्यक्ति और कोई नहीं, स्वयं मजिस्ट्रेट का पिता था जो बोनापार्टिस्ट था। मजिस्ट्रेट कांप गया, 'मुझे सच बताना, मैं तुम्हें मुक्त कर दूंगा। तुमने यह पत्र अभी तक किसी को दिखाया तो नहीं?'

'नहीं।' दांते ने कहा।

मजिस्ट्रेट ने कहा - 'तुम्हें शाम तक रिहा कर दिया जायेगा। अब तुम जा सकते हो।' दांते को पुलिस वापस ले गई। विलफोर्ट ने लिफाफा खोलकर पढ़ा। वह नेपोलियन का पत्र था और वह पुनः पेरिस लौट आने की योजना बना रहा था और नायटियर की मदद चाहता था। विलफोर्ट ने परिस्थिति का फायदा उठाया। इस पत्र को जला दिया और दांते को, जो इस राज को जानता था, 14 वर्ष की काले पानी की सजा का हुक्म दे दिया। उसने सोचा, 14 वर्ष में दांते सड़-सड़कर मर जाएगा और मेरा तथा मेरे पिता का जीवन बच जाएगा।

अब दांते चेटीडिफ की काल कोठरी में कैद था। चेटीडिफ राजनीतिक क्रान्तिकारियों का काला पानी था। विलफोर्ट का जेलर को आदेश था कि यह भयंकर बोनापार्टिस्ट है। इसकी पूरी निगरानी रखी जाय। सब कुछ उलटा हो गया। दांते यातना से पीड़ित था। वह समझ नहीं पा रहा था कि उसने ऐसा कौन सा भयंकर

अपराध किया है जिसके बदले में उसे काल कोठरी की सजा सुनाई गई है। विलफोर्ट ने उसके साथ ऐसा धोखा क्यों किया? उसे संसार से इतनी घृणा हुई कि उसने भूखा मरकर जान देने की ठान ली। बूढ़ा पिता, मर्सेडिज इन सबका अब क्या होगा, यही सोचकर वह रात-दिन तड़पता रहता। कई वर्ष बीत गए। वह एक दिन खाता-दस दिन भूखा रहता। उसके बाल और दाढ़ी बढ़ गए। वह बहशी जैसा जीवन बिताने लगा। एक रात वह काल कोठरी के पत्थर पर लेटा हुआ मर्सेडिज के बारे में सोच ही रहा था कि उसे दीवार में किसी की खटखट सुनाई दी। उसने उठकर जग का हत्था तोड़ डाला और उसी से दीवार को ठीक उसी जगह से खोदना शुरू कर दिया जहां से खट-खट की आवाज आ रही थी। दीवार में छेद हो गया और दो पत्थर हटाने के बाद एक बूढ़ा कैदी उसके कमरे में घुस आया।

'धत तेरे की। मैं तो समझ रहा था कि मैं जेल की बाहरी दीवार में छेद कर रहा हूं, लेकिन यहां तो तुम निकले।'

'हां, मैं तो सचमुच आत्महत्या करने जा रहा था। तड़प-तड़पकर भूखा मर रहा था। लेकिन तुम्हारी खट-खट की आवाज ने मुझे एक नयी शक्ति और आत्मप्रेरणा दी। कौन हो तुम?' दांते ने पूछा।

'मैं इटली का एक पादरी हूं। मेरा नाम है अबे फेरिया।'

'मैं दांते हूं। पता नहीं मुझे षडयंत्र करके यहां क्यों भेजा गया। मैं एकदम बेगुनाह हूं।' दांते ने शुरू से आखिर तक अपनी सारी कहानी सुना दी।

'तुम्हें यहां इसलिये भेजा गया है कि डंगलर स्वयं जहाज

का कप्तान बनना चाहता था। फर्नेंड मर्सेडिज से विवाह करना चाहता था। विलफोर्ट का पिता स्वयं नायटियर है। समझे? यही तुम्हारे आजीवन कारावास का कारण है।' अबे फेरिया ने कहा।

'मैं सब समझा - डंगलर, फर्नेंड और विलफोर्ट ने ही मिलकर मुझे जिंदा दफनाया है। मैं इनसे जरूर बदला लूंगा।'दांते ने दांत पीसकर कहा।

आठ वर्ष बीत गए। अबे और दांते रोजना मिलते। पादरी दांते को बहुत कुछ पढ़ाता, सिखाता। एक दिन पादरी अबे सख्त बीमार पड़ गया। दांते ने उसकी खूब सेवा की। लेकिन उसके जीवन का अंत होने लगा। पादरी ने कहा - 'दांते, यहां तुम्हारे सिवा अब मेरा कोई नहीं है। मैं इस दुनिया से जा रहा हूं। मांटे क्रिस्टो द्वीप में मेरा गड़ा हुआ जवाहरात का खजाना है। मैं तुम्हें उसका पता देता हूं। तुम यह खजाना अगर कभी मुक्त हो सको तो, ले लेना। यह सब तुम्हारा ही होगा।' यह कहकर अबे ने दम तोड़ दिया।

कई दिन बाद जेलर को पता चला कि अबे फेरिया मर गया। उन्होंने उसे कफन में लपेट कर समुद्र में फेंकने की योजना बनाई। जैसे ही जेलर व सिपाही बाहर गए, दांते ने पादरी की लाश को अपनी जगह कम्बल से ढंक कर रख दिया और वह स्वयं कांच का एक टुकड़ा हाथ में लेकर फेरिया की जगह कफन में घुस गया। थोड़ी देर बाद दो सिपाहियों ने दांते को लाश समझकर उठाया और जेल की दीवार पर चढ़कर उसे पत्थर बांधकर समुद्र में फेंक दिया। दांते डूबने लगा। उसने कांच के टुकड़े से फौरन कफन को चीर दिया और तैरता हुआ वह किसी द्वीप के किनारे पर जा लगा। सहसा उसके मुंह से निकला - 'हे ईश्वर तेरा धन्यवाद है। तूने मेरी जान बचा दी।'

जहां दांते समुद्र के किनारे निकला वहीं तस्करों की नौका ने उसे उठा लिया। दांते ने कहा - 'मेरा जहाज डूब गया है। मैं किसी तरह बच गया।'

'लेकिन तुम्हारे बाल और ये दाढ़ी।' तस्करों के सरदार ने कहा।

'मैं वचनबद्ध था। अब मैं इन्हें जल्दी ही कटा लूंगा।' दांते उनकी नौका में बैठ गया।

तस्करों के सरदार ने कहा। 'वह सामने चट्टान देखते हो?'

'हां।'

'यह एक द्वीप है जिसका नाम मांटे क्रिस्टो है।'

'क्या तुम मुझे वहां छोड़ सकते हो?'

'क्यों नहीं।' तस्करों ने उसे चट्टान के पास उतार दिया। वह उस पादरी के बताये हुए निशानों के अनुसार उसी चट्टान के पास पहुंचा जहां से खजाने की गुफा के लिए रास्ता जाता था। गुफा का द्वार चट्टान से बंद था। दांते ने बारूद को लगाकर

धमाका किया और थोड़ी देर के धुएं के बाद नीचे की ओर जाने वाली सीढ़ियां दिखाई दीं। काफी देर तक खुदाई करने के बाद दांते को लोहे का एक बक्सा जवाहरातों से खचाखच भरा हुआ मिल गया। अब उसे नई जिंदगी मिल गई। उसने सोचा, अब मैं पेरिस जाकर अपने-आपको मांटे क्रिस्टो द्वीप का सरदार घोषित करूंगा। अपने पिता को आराम दूंगा। मर्सेडिज से विवाह करूंगा और डंगलर, फर्नेंड तथा विलफोर्ट को अन्याय का मजा चखाऊंगा। उसके मन में प्रतिशोध की ज्वाला धधक रही थी।

चौदह वर्ष बीत गये। 18 फरवरी, 1829। इस बीच क्या से क्या हो गया। दांते का पिता चल बसा। फर्नेंड ने यह कहकर मर्सेडिज से विवाह कर लिया कि दांते अब जीवित नहीं है। वह कभी का मर चुका है। मर्सेडिज के एक पुत्र भी हो गया इसका नाम था अलबर्ट। फर्नेंड सेना का अधिकारी था। विलफोर्ट पेरिस का प्रधान मजिस्ट्रेट था और डंगलर एक लखपति बैंकर बन चुका था। सभी समृद्ध और सुखी थे।

फर्नेंड फ्रांस की संसद के बड़े सदन, 'हाउस ऑफ पीयर्स' का सदस्य भी था। पेरिस में आने से पूर्व दांते ने, जो पेरिस में आकर 'काउंट ऑफ मांटे क्रिस्टो' बन चुका था, फर्नेंड के लड़के अलबर्ट की जान बचा दी। वह जैसे ही पेरिस में आया, अलबर्ट उसे कृतज्ञता ज्ञापन के नाते अपने घर ले आया। अलबर्ट ने अपने पिता फर्नेंड से कहा - 'इन्हीं महाशय ने मेरी जान बचाई है।' फर्नेंड ने उसे बहुत धन्यवाद दिया। थोड़ी ही देर में अलबर्ट की माता मर्सेडिज आ गयी। वह एक बार तो दांते को देखकर सहम गयी। ऐसा लगा जैसे उसने दांते को पहचान लिया हो। लेकिन वह चुप रही और अपने बेटे को बचाने पर उसे धन्यवाद देते हुए बोला - 'मिस्टर, यदि आपको समय हो तो आप कुछ समय पेरिस में हमारे घर अतिथि रहें। आपने हमारे साथ बहुत उपकार किया है।' काउंट (दांते) ने कहा - 'क्षमा कीजिए, अब तो मेरे पास समय नहीं है। फिर कभी देखेंगे।'

अगले दिन काउंट (दांते) पेरिस के प्रसिद्ध बैंकर डंगलर से मिला। डंगलर ने कहा - 'काउंट, मुझे रोम से तुम्हारे बैंकरों ने

पत्र लिखा है कि मैं अपने यहां से तुम्हें चाहे जितना धन उधार दे दूं।'

'तो इसने अचरज की क्या बात है? यह तो आपके देना ही होगा।' काउंट ने कहा।

'नहीं अचरज तो कोई नहीं। मैं धन दूंगा ही। लेकिन पत्र में अनलिमिटेड यानी चाहे जितना शब्द जो लिखा है वह जरा मेरी समझ में नहीं आता।' डंगलर ने बात बदलते हुए कहा।

'क्या आपका ख्याल है कि मैं आपके जमा धन से भी अधिक धन मांग लूंगा।'

'नहीं, मैं समझता हूं कि तुम ज्यादा से ज्यादा दस लाख मांगोगे।'

'बस, सिर्फ दस लाख। जनाब, मैं पहले साल में कम से कम 60 लाख रूपया लूंगा। मैं 9-10 लाख के लिए हिसाब नहीं खोलता।' काउंट ने कहा। 'साठ लाख।' डंगलर के मुंह से निकला और वह माथा पकड़कर वहीं बैठ गया। दांते यह कहकर चला आया। अगले दिन विलफोर्ट की बारी थी। दांते के नौकर ने विलफोर्ट की दूसरी पत्नी तथा उसके पुत्र को किसी स्थान पर बचा दिया और विलफोर्ट धन्यवाद देने के लिए उसी दिन शाम को दांते (काउंट) के घर आ गया। बात करते-करते दोनों में न्याय के ऊपर बहस छिड़ गयी। दांते ने कहा - 'मनुष्य द्वारा किया गया न्याय सही नहीं है। सच्चा न्याय तो भगवान ही करता है। भगवान ने अबकी बार न्याय करने की शक्ति मुझे दे दी है।' विलफोर्ट कुछ देर बाद चला गया।

पुराने जहाज के मालिक मारेल का लड़का मैक्समिलन भी पेरिस में काउंट को मिल गया। वह यहां की सेना में कप्तान था। काउंट (दांते) अपने मालिक के अहसान को भूला नहीं था। इसलिए उसने मैक्समिलन का साथ देना निश्चित किया। मैक्समिलन विलफोर्ट की पहली पत्नी की लड़की वेलेंटाइन से प्रेम करता था और उसी से शादी करना चाहता था।

पुराने जहाज के मालिक मारेल का लड़का मैक्समिलन भी पेरिस में काउंट को मिल गया। वह यहां की सेना में कप्तान था। काउंट (दांते) अपने मालिक के अहसान को भूला नहीं था। इसलिए उसने मैक्समिलन का साथ देना निश्चित किया। मैक्समिलन विलफोर्ट की पहली पत्नी की लड़की वेलेंटाइन से प्रेम करता था और उसी से शादी करना चाहता था। वेलेंटाइन की मां के मर जाने के बाद पिता के सिवा घर में कोई भी उसे प्यार नहीं करता था।

जब वेलेंटाइन एकांत में अपने प्रेमी मैक्समिलन से मिली तो उसने बताया कि मेरा पिता मेरी शादी तुमसे हरगिज नहीं करेगा। मेरी सौतेली मां जो अपने लड़के एडोर्ड से बहुत प्यार करती है, मेरे बाप को और बहका देगी। वह मुझसे हमेशा नाखुश रहती है। वह मेरे बाबा और दादी की सम्पत्ति के कारण मुझसे जलती है। वह जानती है कि उस सम्पत्ति पर एकमात्र मेरा ही अधिकार होगा और वह उस सम्पत्ति का वारिस अपने इकलौते बेटे एडोर्ड को बनाना चाहती है। यह सुनकर मैक्समिलन को बड़ा दुःख हुआ। फिर भी दोनों का प्रेम कम नहीं हुआ। मैक्समिलन ने कहा - 'घबराओ मत वेलेंटाइन, हम कोई न कोई रास्ता खोज ही लेंगे।'

एक दिन अचानक काउंट मैडम विलफोर्ट के पास जा पहुंचा। वहां वह अपने बेटे एडोर्ड के साथ बैठी कॉफी पी रही थी। काउंट के पहुंचते ही उसने एडोर्ड से जाने को कहा और वह काउंट से काफी देर तक बातें करती रही - जहर पर बातचीत छिड़ गई। मैडम ने कहा - 'आरसैनिक या संखिया बड़ा खतरनाक जहर है। यह आदमी के शरीर में फौरन दिखाई लेने लगता है।'

'लेकिन बहुत-से ऐसे जहर भी हैं जो मृतक के शरीर में कोई निशान नहीं छोड़ते और यह पता लग ही नहीं सकता कि इसकी मृत्यु जहर से हुई या नहीं।' काउंट ने मैडम विलफोर्ट को कई जहरों के बारे में बताया।

'लेकिन जहर देना तो भयानक अपराध है। आप जानते हैं कि रसायनों में मेरी बड़ी दिलचस्पी है।' मैडम ने कहा।

'मैडम, मां का प्यार बड़ा महान है। वह अपने बेटे की खातिर कुछ भी कर सकती है। वह सब क्षम्य है। अच्छा, अब मैं चलता हूं। चूंकि आपकी रसायनशास्त्र में बड़ी रूचि है और आप विषों की प्रतिक्रिया पर रिसर्च कर रही हैं, इसलिए मैं आपको कल सुबह कुछ ऐसे जहरों के नमूने भेजूंगा जो मृत के शरीर पर कोई भी निशान नहीं छोड़ते।' यह कहकर काउंट चल दिया। वह मन ही मन सोच रहा था कि अब मैंने इस घर में विष बीज बो दिया है। यह जरूर कोई न कोई कुफल उपजाएगा।

एक दिन काउंट ने संवाददाता को घूस देकर अखबार में स्पेन की एक खबर छपवा दी। डंगलर ने अखबार पढ़ा कि स्पेन में भारी उथल-पुथल मचने वाली है। यह पढ़ते ही उसने अपने सारे शेयर तार देकर फौरन बेच डाले। वह खबर तो गलत ही थी। दूसरे दिन उसी पत्र में बाक्स में उसका प्रतिवाद छपा कि यह खबर एकदम निराधार है। स्पेन में स्थिति सामान्य है। लेकिन अब क्या हो सकता था। डंगलर को 10 लाख का घाटा हो गया और वह माथा पकड़ वहीं बैठ गया।

अब फर्नेंड की बारी थी। फर्नेंड ग्रीक सरदार टेबेलिन के नेतृत्व में तुर्कों से लड़ा। उसने सेना में अच्छा नाम पैदा कर लिया। अकस्मात तुर्कों ने एक दिन टेबेलिन को मार दिया। इस खबर को रंगवाकर काउंट ने अखबार में छपवा दिया कि 'फर्नेंड ने स्वयं सेनापति बनने के लिए तुर्कों से 20 लाख क्राउन (सिक्का)

की घूस लेकर अपने सेनापति को विश्वासघात करके जान बूझकर मरवाया है।'

इस खबर के छपते ही हाउस ऑफ पीयर्स ने उसे मुलजिम करार दे दिया। उधर (मृत) टेबेलिन (ग्रीक) की लड़की ने भी फर्नेंड को देखकर खूब कोसा। 'फर्नेंड, तुम्हारी आंखों में मेरे पिता का खून दिखाई दे रहा है। तुम हत्यारे हो। तुम्हें जरूर सजा मिलनी चाहिए।'

फर्नेंड भाग निकला और कथित जुर्म से बचने के लिए छिप गया।

फर्नेंड के पुत्र एलबर्ट को किसी तरह पता चल गया कि इस खबर के छपवाने में काउंट का हाथ है। वह फौरन काउंट से उलझ गया और मरने-मारने को तैयार हो गया। अलबर्ट के देखते हुए काउंट शक्तिशाली और धनी व्यक्ति था। उसने उसके आते ही मैक्समिलन से कहा - 'मैक्समिलन, कल दस बजे से पहले-पहले मैं अलबर्ट को दुनिया से दफा कर दूंगा।'

'नहीं काउंट, ऐसा मत करो। वह अपने मां-बाप का प्यारा और इकलौता बेटा है।' मैकमिलन ने उसे समझाया। काउंट उसे मारने की योजनाएं बना रहा था।

उसी दिन रात को मुंह पर नकाब चढ़ाये एक औरत काउंट के कमरे में आ गयी।

'कौन हो तुम?' काउंट ने पूछा।

'एडमोंड दांते, तुम मेरे बेटे को हरगिज नहीं मारोगे।' उस नकाबपोश औरत ने कहा।

'क्या कहा। एडमोंड दांते। तुम यह नाम कैसे जानती हो?'

'मैं मर्सेडिज हूं। केवल मैं ही तुम्हें पहचानती हूं। काउंट ऑफ मांटे क्रिस्टो के वेष में तुम एडमोंड दांते हो।' मर्सेडिज ने कहा, 'तुम मेरे पति फर्नेंड की जान ले सकते हो, लेकिन बेटे की नहीं। बोलो दांते, बोलते क्यों नहीं?' मर्सेडिज दांते से लिपटकर रोने लगी।

'मर्सेडिज, तुम नहीं जानती, तुमसे शादी करने के लिए फर्नेंड ने सारा जाल रचा। मुझे डंगलर से मिलकर काल कोठरी में डलवाया और तुमसे यह कहकर कि दांते मर चुका है, शादी रचा ली। क्या यह अन्याय नहीं था? तुम तो मुझसे प्रेम करती थी न।' दांते ने कहा।

'मुझे यह सब पता नहीं था। उसने सचमुच बुरा किया। दांते, मैं तुमसे आज भी प्रेम करती हूं। इसीलिए पहले ही दिन मैंने तुमसे कहा था कि तुम मेरे ही घर में मेहमान बनकर रहो। लेकिन तुमने मेरी बात ठुकरा दी। अब वचन दो कि तुम मेरे बेटे का खून नहीं करोगे। तुम्हीं तो वह आदमी हो जिसने मेरे बेटे अलबर्ट को एक बार मरने से बचाया था।' मर्सेडिज रो-रोकर अपने बेटे की जान की बख्शीश मांग रही थी। दांते का दिल पिघल गया और

जैसे ही घोड़ा गाड़ी चली, एक धमाके की आवाज हुई और फर्नेंड ने आत्महत्या कर ली। हत्याएं विलफोर्ट के मामा की हत्या, एक नौकर की हत्या और फिर विलफोर्ट की भाभी की हत्या। डॉक्टर ने तीनों लाशों को देखा। उसकी समझ में यह नई बीमारी नहीं आयी कि तीन दिन में एक के बाद एक तीन व्यक्ति सहसा कैसे मर गये ?

उसने कहा - 'जाओ मर्सेडिज, अब मैं तुम्हारे बेटे को नहीं मारूंगा। मैं अपने-आप से बदला लूंगा।' यह कहकर दांते भयंकर अट्टाहस करने लगा।

मर्सेडिज ने जाकर सारी कहानी अपने पति फर्नेंड के फरेब की दास्तान अपने बेटे को सुना दी। वह मान गया कि दोषी दांते नहीं, उसका बाप ही है। उसी वक्त वह काउंट के पास आकर क्षमा मांगने लगा। दोनों ने एक दूसरे को जीवनदान दे दिया और क्षमा याचना कर ली। फर्नेंड यह सुनकर आग बबूला हो गया कि उसके बेटे ने काउंट से माफी मांग ली है। वह तलवार लेकर काउंट को मारने उसके घर पहुंचा।

'मैं मारने से पहले यह जानना चाहता हूं कि आखिर तुम हो कौन?'

फर्नेंड ने काउंट से कहा।

'एक मिनट ठहरो।' काउंट ने कहा और वह सेलर के कपड़े बदल कर फर्नेंड के सामने खड़ा हो गया।

'एडमोंड दांते।' फर्नेंड उसे देखकर चीख पड़ा और डर के मारे अपनी बग्घी में बैठकर सीधा घर लौट आया। वह जैसे ही घर पहुंचा, उसकी बीबी मर्सेडिज और पुत्र अलबर्ट घर छोड़कर जा रहे थे। वे विश्वासघाती हत्यारे फर्नेंड के साथ नहीं रहना चाहते थे। अलबर्ट ने कहा - 'मां, तुम घबराओ मत। मैं सेना में भर्ती होकर तुम्हारा नाम ऊंचा करूंगा और बाप के पापों को धोऊंगा।'

'और मैं मार्सेलिज में जाकर ईश्वर का चिंतन करूंगी। मेरा शेष जीवन इसी पुण्य कार्य में बीतेगा।' मर्सेडिज ने कहा और घोड़ा गाड़ी चल दी। अब फर्नेंड अकेला रह गया। अब जीवन में

`जरूर। जैसा मैं कहूं तुम वैसा ही करना। मैं तुम्हें एक गोली देता हूं। इसे खा लो। तुम्हें तीन दिन तक बराबर गहरी नींद आयेगी। ये लोग समझेंगे कि तुम मर चुकी हो और तुम्हें कब्र में दफना देंगे। तुम्हारी नींद खुलेगी तो तुम ताबूत में अंदर होगी। सफेद कफन के अंदर। तुम जरा भी न डरना और मेरे आने का इंतजार करना। मैं मैक्समिलन को लेकर आऊंगा और तुम दोनों को मिला दूंगा। समझे ? यह कहकर काउंट ने गोली वेलेंटाइन को खिला दी और वह चुपके से वहां से खिसक गया।'

बचा ही क्या था। जैसे ही घोड़ा गाड़ी चली, एक धमाके की आवाज हुई और फर्नेंड ने आत्महत्या कर ली। हत्याएं विलफोर्ट के मामा की हत्या, एक नौकर की हत्या और फिर विलफोर्ट की भाभी की हत्या। डॉक्टर ने तीनों लाशों को देखा। उसकी समझ में यह नई बीमारी नहीं आयी कि तीन दिन में एक के बाद एक तीन व्यक्ति सहसा कैसे मर गये। विलफोर्ट भी घबरा गया। उसने कहा – 'डाक्टर, भगवान मुझसे रूठ गया है। सारी विपदा मेरे घर पर आ पड़ी है।'

'यह बीमारी नहीं है, विलफोर्ट। यह हत्या है, सरासर हत्या है। इन तीनों व्यक्तियों को आपके घर में से किसी ने जहर देकर मारा है। आप स्वयं मजिस्ट्रेट हैं, अपराधी का पता लगायें और उसे सजा दें।' – डाक्टर ने कहा।

'मेरी समझ में नहीं आता, ये हत्याएं किसने की।'

'मुझे लगता है, इनमें वेलेंटाइन, आपकी बेटी का हाथ है, क्योंकि इन बूढ़ों के मरने के बाद सारी सम्पत्ति की वारिस वही है।' डाक्टर ने कहा।

'क्या आप अपनी लड़की को अदालत के कटघरे में लायेंगे?'

'ऐसा हरगिज नहीं हो सकता। वेलेंटाइन ऐसा कभी नहीं कर सकती।'

'ठीक है लेकिन जब तुम्हारे घर में कोई बीमार पड़े तो मुझे मत बुलाना।' यह कहकर डाक्टर विलफोर्ट के घर से चला गया।

दूसरे दिन वेलेंटाइन स्वयं बीमार पड़ गयी। डाक्टर ने कहा उसे धोखा दिया गया। वेलेंटाइन निर्दोष है। इन हत्याओं में किसी और का हाथ है, जो स्वयं वेलेंटाइन को भी मारना चाहता है।

'लेकिन वह व्यक्ति कौन हो सकता है?' विलफोर्ट सोच में पड़ गया।

इधर मैक्समिलन वेलेंटाइन की बीमारी की खबर सुनकर उसके घर गया। वह सीधा काउंट के पास पहुंचा। काउंट वेलेंटाइन मर रही है, उसे बचाओ। तुम नहीं जानते मैं उसे कितना प्यार करता हूं।

काउंट चुपके से वेलेंटाइन के कमरे में आकर छिप गया। चार घंटे की बीमारी के बाद जब वह जागी तो कमरे में काउंट को देखकर चीख मारने लगी। काउंट ने उसे इशारे से चुप किया। उसने कहा – 'मैं तुम्हारी जान बचाने आया हूं। तुम जानती हो, तुम्हारी सौतेली मां अभी थोड़ी देर पहले इस दवा के गिलास में जहर की कुछ बूंदे डालकर गयी है।'

'लेकिन मैंने मां का क्या बिगाड़ा है।' वह मुझे क्यों मारना चाहती है? क्या मैं यहां से भाग नहीं सकती? वेलेंटाइन ने एक साथ कई सवाल काउंट से पूछे।

'बेटी, तुम बड़ी भोली हो। वह नायटियर की सम्पत्ति के कारण तुम्हें अपने बेटे के रास्ते से हटाना चाहती है। अगर तुम भाग भी जाओ तो वह आखिर तक तुम्हारा पीछा करेगी।' काउंट ने कहा।

'क्या तुम मुझे बचा सकोगे?' वेलेंटाइन ने आंखें फाड़कर काउंट की ओर देखा।

'जरूर। जैसा मैं कहूं तुम वैसा ही करना। मैं तुम्हें एक गोली देता हूं। इसे खा लो। तुम्हें तीन दिन तक बराबर गहरी नींद आयेगी। ये लोग समझेंगे कि तुम मर चुकी हो और तुम्हें कब्र में दफना देंगे। तुम्हारी नींद खुलेगी तो तुम ताबूत में अंदर होगी। सफेद कफन के अंदर। तुम जरा भी न डरना और मेरे आने का इंतजार करना। मैं मैक्समिलन को लेकर आऊंगा और तुम दोनों को मिला दूंगा। समझे? यह कहकर काउंट ने गोली वेलेंटाइन को खिला दी और वह चुपके से वहां से खिसक गया।'

दूसरे दिन सुबह होते ही उसकी मृत्यु की घोषणा हो गयी। उसे कब्र में पहुंचा दिया गया। विलफोर्ट को बेटी की मृत्यु से बड़ा सदमा पहुंचा। उसका पिता नायटियर भी आ गया। दोनों रोने लगे। नायटियर से न रहा गया। उसने आखिर कह ही दिया कि 'मेरी पोती की हत्यारी उसकी सौतेली मां है। उसे जरूर दंड मिलना चाहिए। वह अपने बेटे को सब जायदाद दिलवाने के लिए मुझ तक को मार देना चाहती है।' नायटियर चला गया और विलफोर्ट मैडम के कमरे में पहुंचकर चीख उठा – 'कहां रखा है तुमने वह जहर? अच्छा हो तुम थोड़ा-सा अपने लिए भी रख लो, वरना मैं तुम्हें इन हत्याओं की सजा दिलवाकर ही छोड़ूंगा।'

'यह आप क्या कह रहे हैं? मैंने किसी की हत्या नहीं की।' मैडम विलफोर्ट ने कहा।

'थोड़ी देर ठहरो। तुम्हें अभी सब कुछ पचा चल जाएगा।' यह कहकर विलफोर्ट चला गया। उधर डर के मारे मैडम विलफोर्ट ने जहर पी लिया और साथ में अपने बेटे को भी जहर पिला

दिया। जब विलफोर्ट लौटकर मैडम के कमरे में आया तो वह और उसके बेटे एडोर्ड की लाश कमरे में पड़ी थी। विलफोर्ट यह देखकर पागल हो गया।

मैक्समिलन को वेलेंटाइन की मृत्यु का समाचार मिला तो वह अपने कमरे में बैठकर पत्र लिखने लगा और आत्महत्या की तैयारी करने लगा। वह पत्र लिख ही रहा था कि किसी ने पीछे से पुकारा - 'ठहरो, तुम नहीं मर सकते।'

'मुझे रोकने वाला है कौन?' मैक्समिलन ने पीछे मुड़कर देखा तो काउंट खड़ा था।

'मैं तुम्हारे बाप का दोस्त एडमोंड दांते हूं। मेरा तुम पर उतना ही अधिकार है जितना मारेल का था। बोलो, मेरा कहना नहीं मानोगे?' काउंट ने मैक्समिलन को रहस्य बता दिया।

'तुम मुझे मरने से क्यों रोकना चाहते हो? मेरे जीवन में अब बचा ही क्या है?' मैक्समिलन ने कहा।

'तुम्हारे जीवन में जल्दी ही खुशी की लहर आयेगी। तुम मेरे कहने से सिर्फ एक महने इंतजार करो।'

'अच्छा, मैं इंतजार करूंगा।'

फर्नेंड मर गया। अनेक हत्याओं के बाद विलफोर्ट अकेला रह गया। दांते एक दिन उसके घर गया। 'विलफोर्ट, तुम्हें अपने कर्मों की पूरी सजा मिल गयी।'

'लेकिन तुम कौन हो? क्या मैंने तुम्हें कोई तकलीफ पहुंचायी है?'

'मैं एडमोंड दांते हूं। आज से 15 वर्ष पहले तुमने ही मुझे काल कोठरी में सड़-सड़कर मरने के लिए भेजा था।' काउंट ने कहा।

एडमोंड दांते। लेकिन अब तो तुम्हारी आत्मा को शांति मिल गयी न। यह कहकर विलफोर्ट पागलों की तरह हंसने लगा। उसने अपने बाल और कपड़े नोच डाले। काउंट वहां से चल दिया। वह समझ गया कि पत्नी और बच्चों की मौत से वह पागल हो गया है।

अब डंगलर की बारी थी। जब काउंट डंगलर के दफ्तर में पहुंचा तो वह अपनी सम्पन्नता की बढ़-चढ़कर डींगे मारने लगा। काउंट ने धीरे से कहा - 'मिस्टर डंगलर, तुम्हारे बैंक में मेरे खाते से ६० लाख रूपया है न?'

'हां, है।'

'दस लाख तो मैं ले चुका हूं। अब मुझे ५० लाख रू. फौरन चाहिए। मैं इसलिए आया हूं।'

'लेकिन डंगलर ठिठका-ठिठका रह गया।'

'लेकिन क्या? तुम मेरा पैसा नहीं देना चाहते?'

नहीं, मैं पैसा जरूर दूंगा।

काउंट के रुपया निकलवाने के बाद डंगलर पूरी तरह दिवालिया और कर्जदार हो गया और वह अन्य लोगों के कर्ज से बचने के लिए एक रात इटली भाग गया। जब वह इटली भाग रहा था तो काउंट ने कुछ बदमाश भेजकर उसे रास्ते से ही उड़वा दिया। उसे कैद में डाल दिया गया।

'क्या तुम्हें अपनी करनी पर पछतावा नहीं हो रहा?' काउंट ने कहा।

'मैं बहुत पछता रहा हूं। मुझे माफ कर दो।' यह कहकर बंदी डंगलर काउंट के पैरों में गिरकर रोने लगा।

'जाओ, मैं तुम्हें क्षमा करता हूं। तुम जल्दी ही छोड़ दिये जाओगे।'

'क्या मैं जान सकता हूं कि तुम कौन हो?' डंगलर ने गिड़गिड़ाते हुए पूछा।

'मैं वही आदमी हूं जिसके पिता को तुमने भूखों मार डाला, जिसे तुमने बोनापार्टिस्ट बनाकर कैद में डलवा दिया। मेरा नाम एडमोंड दांते है।' काउंट ने गरजकर कहा। डंगलर कांप कर वहीं भूमि पर लेट गया।

'लेकिन मैं तुम्हारी जान नहीं लूंगा। सभी को अपने-अपने किये की सजा मिल गयी।' यह कहकर दांते वहां से चला गया।

एडमोंड ने सोचा, अब मैं बहुत तमाशा कर चुका हूं। मैंने जो कुछ किया है, उसको चुकाने का एक ही रास्ता है कि मैं अब वेलेंटाइन और मैक्समिलन को मिला दूं। तभी मेरे मन को पूरी शांति मिलेगी। उसने कब्र से वेलेंटाइन को निकाल लिया। जैसे ही वह पूरी तरह जागी और स्वस्थ हुई, उसने मैक्समिलन को बुलावा भेजा। उसने दोनों का विवाह करवा दिया और स्वयं वापस अपने द्वीप मांटे क्रिस्टो की ओर चल दिया। जब वह अपने जहाज को लेकर चला तो जाते-जाते मैक्समिलन को एक पत्र दे गया। मैक्समिलन और वेलेंटाइन समुद्र के किनारे दांते के जहाज को लहरों के बीच ओझल होते देख रहे थे। वे मन ही मन आज प्रसन्न थे। सचमुच भगवान के वेष में दांते ने उन्हें मिला दिया। दोनों का जीवन बचा लिया। मैक्समिलन ने पत्र पढ़ा।

'मेरे बच्चों, तुम अब लौट जाना। तुम समझना कि तुम्हें भगवान ही मिला था। भगवान की शक्ति ही मुझमें काम कर रही थी जिसके कारण मैंने यह सब किया। पेरिस में महाशय नायटियर, जो अब मरणासन्न हैं, तुम्हारा इंतजार कर रहे होंगे। तुम लौटकर उनका आशीष लेना और सुख से जीवन बिताना। मेरे दो शब्द हमेशा याद रखना - जीवन का दर्शन है। इंतजार करो और उम्मीद रखो तुम्हारा एडमोंड दांते। काउंट ऑफ मांटे क्रिस्टो।'

❑❑❑

रासुम के यंत्र मानव

कारेल चापेक

सुम युनिवर्सल रोबो' कारखाने के यंत्र-मानवों की धूम पूरी दुनिया में थी। उसका कारण यह था कि वे देखने में बिलकुल आदमियों की तरह थे और काम करने में आदमी से कहीं ज्यादा कुशल। इन पर खर्च भी कम पड़ता था। इन यंत्र-मानवों के आविष्कार का श्रेय जाता था महान शरीर-वैज्ञानिक रोसुम को। वे समुद्री जीवों का अध्ययन करने के लिए एक सुदूर टापू पर गये थे। उस समय वे एक ऐसा रासायनिक सम्मिश्रण तैयार करने में लगे हुए थे जिसके द्वारा उस जीवंत पदार्थ की नकल की जा सके जिसे 'प्रोजोप्लाज्म' कहते थे। अपने प्रयोगों के दौरान अचानक उन्हें ऐसे पदार्थ का पता चला जिसका कार्यकलाप बिलकुल जीवंत पदार्थ की तरह था, हालांकि उसकी रासायनिक बनावट उससे बिलकुल भिन्न थी। यह खोज 1932 में हुई थी। अमेरिका की खोज के ठीक चार सौ साल बाद।

उस पदार्थ की सहायता से रोसुम साहब बाकायदा आदमी बनाना चाहते थे। यानि ईश्वर की तरह वे भी एक समानांतर मानव सृष्टि करना चाहते थे। पर इस कोशिश में उन्होंने जो कुछ तैयार किया, वह केवल तीन दिन ही जीवित रह सका। उन्हीं दिनों रोसुम साहब का एक जवान भतीजा उनसे मिलने वहाँ आया। अपने वृद्ध चाचा का प्रयोग देखकर उस युवा इंजीनियर को काफी कोफ्त हुई। उसकी मान्यता थी कि आदमी को बनाने में दस साल खर्च किये जायें, यह बेवकूफी है। प्रकृति जितना समय लेती है, यदि उसे कम समय में आदमी का निर्माण न हो सके तो सारा धंधा ही बेकार है। इसके बाद वह खुद ही शरीर विज्ञान सीखने में जुट गया। इस युवा रोसुम ने बूढ़े रोसुम को किसी प्रयोगशाला में बंद कर दिया ताकि वह अपना सारा समय अपनी शैतानी योजनाओं पर बरबाद कर सके और खुद एक इंजीनियर की दृष्टि से उसने सारा कारोबार शुरू कर दिया।

आदमी एक बहुत पेचीदा जीव है और कोई भी अच्छा इंजीनियर उसे ज्यादा सरल तरीके से बना सकता है, यह समझते ही युवा रोसुम ने शरीर विज्ञान का नये सिरे से संशोधन करना शुरू कर दिया। कोशिश यह थी कि कैसे उसे ज्यादा सरल बनाया जा सकता है। कौन सी चीजें छोड़ी जा सकती हैं। कृत्रिम मजदूरों का निर्माण उसी तरह से हो सकता है जैसे दूसरे यंत्रों का - दोनों में फर्क नहीं होना चाहिए। निर्माण का तरीका सरल होना चाहिए और जिस वस्तु का निर्माण किया जाय वह व्यावहारिक दृष्टि से अच्छी होनी चाहिए। युवा रोसुम ने एक ऐसा मजदूर ईजाद किया जिसकी जरूरतें कम से कम थीं। उसने उन सब तत्वों को निकाल दिया जो सीधे काम की प्रवृत्ति

करेल चापेक चेक लेखक और पत्रकार थे। चेक साहित्य में उनका गौरवपूर्ण स्थान है। उनकी सभी प्रमुख कृतियों के असंख्य विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुए। करेल चापेक का जन्म 1890 में हुआ था। आपके पत्र, माँ नामक नाटक अनेक भाषाओं में अनूदित हैं। इसे कैसे करता हूँ (निबंध), क्रकतित (उपन्यास), र.उ.र. (नाटक), एक जेल की कहानियाँ, दूसरी जेल की कहानियाँ, माली का वर्ष (निबंध), कीटाणु जीवन (नाटक) अत्यन्त लोकप्रिय हैं। आपका निधन 1938 को हुआ।

में योग नहीं देते। इस तरह उसने हर उस चीज को नकार दिया जो आदमी को ज्यादा मंहगा बनाती थीं। वास्तव में उसने आदमी को नकार कर यंत्र मानव का निर्माण किया।

'इस तरह से निर्मित यंत्र मानव आदमी से अधिक पूर्ण है। उनकी बुद्धि ज्यादा विकसित है किंतु उनमें आत्मा नहीं है। एक इंजीनियर की बनायी हुई चीज प्रकृति की उपज से कहीं ज्यादा पूर्ण होती है।' कहने के बाद रोसुम के यंत्र मानवों के कारखाने के मैनेजिंग डायरेक्टर दोमेन रूके। वे अपने हर महत्वपूर्ण अतिथि को यह कहानी सुनाते थे और इस समय तो उनकी मेहमान थी एक अद्वितीय सुंदरी हैलेना 'जो प्रख्यात प्रोफेसर विवियन ग्लोरी की बेटी थी।'

प्रोफेसर की बेटी होने के अतिरिक्त दोमेन उसकी तरफ उतना ध्यान इसलिए भी दे रहा था कि कई वर्षों के बाद कोई सचमुच की महिला उस द्वीप पर आयी थी। दोमेन उससे शादी करना चाहता था।

इस कारखाने तथा इसके कार्यालय में काम करने वाले सभी कर्मचारी यंत्र मानव थे। मनुष्य गिनती भर के थे - मुख्य इंजीनियर, फाबरी, शरीर विज्ञान के अध्यक्ष, डॉ. गॉल, यंत्र मानवों के प्रशिक्षक विभाग के मुख्य मनोवैज्ञानिक, डॉ. हैलमैन, जनरल बिजनेस मैनेजर, जकल बर्मान तथा क्लक, अलकुइस्ट। पर हैलेना वहाँ केवल घूमने और यंत्र मानवों का कारखाना देखने के लिए नहीं आयी थी बल्कि वह मानवता संघ की ओर से आयी थी जिसके दो लाख से अधिक सदस्य थे और उसकी माँग थी कि यंत्र मानवों के साथ भी मनुष्यों जैसा व्यवहार होना चाहिए। यहाँ वह यंत्र मानवों में अपने अधिकारों के प्रति चेतना जगाने के लिए आयी थी। वह फाबरी, डॉ. गॉल, हेलमैन आदि को भी यंत्र मानव समझ बैठी और उनके सामने अपना उद्देश्य प्रकट कर दिया। पर जब उसे अपनी गलती का एहसास हुआ तो उसने माफी माँग ली और मान लिया कि वे तत्काल उसे जाने के लिए कहेंगे। पर इसके विपरीत वे उससे वहाँ रुकने के लिए आग्रह करने लगे। दोमेन ने तो उससे कह भी दिया - 'आप इनसे जो चाहे कह सकती हैं। आप चाहें तो इन्हें बाइबिल पढ़ा सकती हैं या मानव अधिकारों के बारे में भाषण दे सकती हैं। यंत्र मानव आदमी से बिलकुल भिन्न हैं।'

हैलेना अब खुद को रोक न सकी पूछ ही बैठी - 'फिर आप उन्हें बनाते किसलिए हैं?'

फाबरी ने उसे समझाने की कोशिश की - 'काम के लिए मिस ग्लोरी। एक यंत्र मानव तकरीबन ढाई मजदूरो का काम कर सकता है। मनुष्य का शरीर एक अपूर्ण यंत्र है। एक न एक दिन उसे हटना ही था। इंजीनियरिंग की आधुनिक आवश्यकताओं को वह पूरा नहीं कर सकता था।'

'क्या ये यंत्र मानव कभी प्रेम या विरोध नहीं करते?'

इस बार जवाब हेलमैन ने दिया - 'नहीं, यंत्र मानव प्रेम नहीं करते। अपने से भी नहीं। और विरोध भावना? कह नहीं सकता। कभी-कभार वे जरा आपे से बाहर हो जाते हैं, जैसे मिरगी का दौरा पड़ गया हो। उसे हम यंत्र मरोड़ कहते हैं। अचानक वे हाथ में पकड़ी हुई चीजों को छोड़ने लगते हैं। स्थिर खड़े हो जाते हैं। दांतों को पीसने लगते हैं ऐसी हालत में हम उन्हें नष्ट कर देने वाली वर्कशॉप में भेज देते हैं।'

'शायद यह उनके विद्रोह की निशानी है, उनके संघर्ष का संकेत। काश आप उनमें इसका संचार कर सकते।' हैलेना को एक सूत्र मिल गया था।

डॉ. गॉल हैलेना को अपने नये प्रयोगों के बारे में बताने लगा - 'मैं आजकल पीड़ा की नसें बना रहा हूँ।'

'पीड़ा की नसें?' हैलेना ने चौंककर पूछा।

'हाँ, यंत्र मानव प्रायः किसी प्रकार की शारीरिक पीड़ा महसूस नहीं करते। युवा रोसुम ने जो स्नायु प्रणाली बनायी थी, वह अत्यंत सीमित है। कभी-कभी कोई यंत्र मानव इसलिए अपने को नुकसान पहुँचने देता है क्योंकि वह चोट खाने की पीड़ा महसूस नहीं कर सकता। हमें उन्हें पीड़ा देनी चाहिए ताकि वे अपने आप को नुकसान होने से बचा सकें।'

'पीड़ा पा जाने के बाद क्या वे ज्यादा सुखी हो जायेंगे?'

यंत्र मानवों के इस नये उपयोग को देखते हुए कुछ सरकारों ने यंत्र मानवों की सेना बनानी शुरू कर दी। इस प्रकार युद्धों का एक लंबा सिलसिला शुरू हो गया। लेकिन इधर कुछ नयी किस्म की खबरें आने लगी थीं। जैसे - `मैड्रिड में सरकार के खिलाफ बगावत, यंत्र मानवों की पैदल सेना ने भीड़ पर गोली चलायी। नौ हजार लोग मारे गये और घायल हुए।'

'नहीं, इसके विपरीत वे टेक्निकल दृष्टि से अधिक पूर्ण हो जायेंगे।'

'आप उनके लिए आत्मा क्यों नहीं बना देते?'

'यह हमारी शक्ति के बाहर है।' डॉ. गॉल ने कहा।

'और हमारे हितों के भी बाहर।' फाबरी ने इसमें एक वाक्य और जोड़ा। पाँच साल का अरसा कम नहीं होता। पूरे पाँच साल हो गये थे हैलेना को रोसुम यंत्र मानवों के कारखाने में आये। उसने दोमेन के साथ शादी कर ली थी। बाकी सब लोगों का स्नेह भी उसे बराबर मिलता रहा था। उसके यहाँ आने की पांचवीं वर्षगांठ पर सभी उसके लिए तरह-तरह के तोहफे लाये थे। बर्मान उसके लिए जवाहरातों का नेकलेस लाया था। फाबरी आभूषणों का एकसेट। अलकुइस्ट उसके लिए एक शानदार मकान तैयार कर रहा था। हैलमैन उसके लिए खुद तैयार की हुई नस्ल के फूल लाया था जिनका नाम उसने रखा था - हैलेना-सिक्लामैन। स्वयं दोमेन उसके लिए लाया था एक नया जहाज। हैलेना ने जब खिड़की से बाहर बंदरगाह की ओर झांका तो दंग रह गयी कि जहाज पर तोपें भी थीं।

'हैरी, इस पर तोपें लगी हैं?'

दोमेन ने मजाकिया स्वर में कहा - 'हाँ, कुछ तोपें भी हैं। हैलेना, तुम महारानी की तरह जहाज पर सैर करोगी।'

लेकिन हैलेना की आशंका और बढ़ गयी। इधर कई विचित्र घटनाएं देखने को मिल रही थीं। दोमेन और उसके साथी कुछ दिनों से परेशान दिख रहे थे।

'हैरी, क्या कोई बुरी खबर मिली है?'

'नहीं, पिछले एक हफ्ते से कोई डाक नहीं आयी।'

'क्या मतलब है इसका?'

'इसका मतलब है हमारी छुट्टियां। मौज का वक्त। हम सब दफ्तर की मेजों पर पैर पसारकर सोते हैं। कोई चिट्ठी नहीं। कोई तार नहीं।'

दोमेन ऊपर से जितना निश्चिंत नजर आ रहा था वास्तव में उतना था नहीं। इन पाँच सालों में हालात बहुत बदल गये थे। यंत्र मानवों के निर्माण का उद्देश्य शुरू में इतना ही था कि वे मजदूरी के काम में मनुष्य से सस्ते पड़ते थे। लेकिन यंत्र मानवों के अधिकाधिक प्रयोग के कारण मजदूरी से ही गुजारा करने वाले लोग बड़ी संख्या में बेकार होते चले गये। परेशान होकर उन्होंने यंत्र मानवों पर धावा बोल दिया। उन्हें तोड़ना-फोड़ना शुरू कर दिया। इस पर यंत्र मानवों को लड़ने का प्रशिक्षण दे दिया गया और उन्हें हथियार दे दिये। बस फिर क्या था, यंत्र मानवों ने जमकर अपने दुश्मनों को मौत के घाट उतारना शुरू कर दिया।

यंत्र मानवों के इस नये उपयोग को देखते हुए कुछ सरकारों ने यंत्र मानवों की सेना बनानी शुरू कर दी। इस प्रकार युद्धों का एक लंबा सिलसिला शुरू हो गया। लेकिन इधर कुछ नयी किस्म की खबरें आने लगी थीं। जैसे -

'मैड्रिड में सरकार के खिलाफ बगावत, यंत्र मानवों की पैदल सेना ने भीड़ पर गोली चलायी। नौ हजार लोग मारे गये और घायल हुए।'

'हार्व में यंत्र मानवों के पहले संगठन की स्थापना हुई। यंत्र मानव मजदूरों, तार और रेल कर्मचारियों, नाविकों और सैनिकों ने दुनिया भर के यंत्र मानवों के नाम एक घोषणा पत्र प्रसारित किया है।'

ये खबरें भी दरअसल एक सप्ताह पुरानी थी। एक सप्ताह से तो कोई अखबार भी नहीं आया था। लगता था जैसे किसी बड़े तूफान के आने से पहले का सन्नाटा था। किसी भी धर्मग्रंथ में इस अवसर पर प्रभु से की जाने वाली प्रार्थना नहीं थी पर अलकुइस्ट के पास थी। वह प्रार्थना कर रहा था - 'हे प्रभु, तूने मुझे जो थकान दी है, उसके लिए मैं तेरा आभारी हूँ। हे भगवान, दोमेन और इन सब लोगों को सुबुद्धि दे। जो गुमराह हो गये हैं, उनके काम को नष्ट-भ्रष्ट कर दे। ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जिसमें मानव जाति दुबारा अपने श्रम में जुट सके। उन्हें विनाश के रास्ते से बचा ले। वे किसी की आत्मा और देह को नुकसान न पहुँचा सकें। हमें यंत्र मानवों से मुक्ति दिला और हैलेना की रक्षा कर - आमीन।'

और जब हैलेना ने अलकुइस्ट से सीधा सवाल पूछा - 'क्या मानव जाति नष्ट हो जायेगी?' तो अलकुइस्ट का उतना ही साफ जवाब था - 'हाँ, अवश्य होगी।'

एक दिन हैलेना ने सुना कि रेडियस नामक एक यंत्र मानव पागल हो गया है। इस यंत्र मानव को डॉ. गॉल ने विशेष रूप से बनाया था। उसे दुनिया में सबसे बड़ा मस्तिष्क दिया था। आदमी से कहीं बड़ा। उसने काम करना बंद कर दिया था। उसका कहना था कि वह आदमियों के लिए काम नहीं करेगा

क्योंकि आदमी यंत्र मानवों की तरह कुशल नहीं है। वे केवल आदेश दे सकते हैं। हैलेना ने रेडियस को बुलवा लिया और उससे उसकी नाराजगी का कारण पूछा तो उसने कहा - 'मैं अपने ऊपर किसी का शासन नहीं चाहता हूँ। मैं आदमियों पर शासन करना चाहता हूँ।'

हैलेना को उसकी यह बात अजीब लगी। थोड़ा गुस्सा भी आया। वह बोली - 'तुम पागल हो गये हो?'

उसने बड़े ठंडे स्वर में कहा - 'आप चाहें तो मुझे यंत्र मानवों को नष्ट करने वाले कारखाने में डलवा सकती हैं।'

हैलेना ने डॉ. गॉल से रेडियस का परीक्षण करवाया और उनसे उसके इस व्यवहार का कारण पूछा। दरअसल, डॉ. गॉल ने कुछ यंत्र मानवों को दूसरी तरह से बनाना शुरू कर दिया था। ये दूसरों की अपेक्षा अधिक संवेदनशील थे और रोसुम कारखाने में बने अन्य यंत्र मानवों की अपेक्षा मनुष्य से अधिक मिलते जुलते थे। इसीलिए रेडियस में जो नफरत की भावना पैदा हुई थी वह मानवीय नफरत जैसी ही थी। उसका परीक्षण करने के बाद डॉ. गॉल ने हैलेना को बताया - 'उसे जैसा दौरा पड़ा था, वह दूसरे यंत्र मानवों की बीमारी से अलग था।'

'किस तरह?'

'मानवीय हृदय की तड़पन उसके दिल में भी धड़क रही थी। मुझे लगता है। यह मरदूद अब यंत्र मानव नहीं, आदमी ही है?'

इन दिनों डॉ. गॉल एक नयी रचना में लगे थे। वह उसे अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति बनाना चाहते थे। हैलेना ने जब उसके बारे में पूछा तो डॉ. ने बड़ी निराशा से बताया - 'खूबसूरत मैं उसे आप जैसी बनाना चाहता था। उसका नाम भी हैलेना रखा था। लेकिन वह असफल रही, बिलकुल असफल।'

'क्यों?'

'क्योंकि वह किसी काम की नहीं। लगता है वह किसी स्वप्न में विचर रही थी - ढिलमिल और पथरायी सी। वह निर्जीव है। मैं जब कभी उसकी ओर देखने लगता हूँ, एक अजीब सा डर मुझे झिंझोड़ने लगता है। मानो मैंने किसी विकृत, लुंज-पुंज चीज का निर्माण कर डाला हो। उसे देखता हुआ मैं किसी चमत्कार की आशा करने लगता हूँ। कभी-कभी मैं खुद ही पूछता हूँ। अगर तुम जाग जाओ, एक क्षण के लिए ही जाग जाओ तो डर से चीखने लगोगी। शायद तुम इस गुस्से में मुझे मार ही डालो कि मैंने तुम्हें क्यों बनाया।'

कुछ ही दिनों से कुछ खबरें ये आ रही थीं कि मनुष्यों के बच्चे पैदा होना बंद हो गया है। दरअसल यंत्र मानवों के अधिकाधिक निर्माण के कारण श्रम के साधन खपत से कहीं ज्यादा बढ़ गये थे। इसलिए अब आदमियों की जरूरत नहीं रही। एक तरह से आदमी अब एक जीवित अवशेष के रूप में था। यंत्र मानवों के निर्माण ने प्रकृति को गहरी चोट पहुँचायी थी। दुनिया के समस्त विश्वविद्यालय अपीलों पर अपीलें भेज रहे थे कि यंत्र मानवों को रोका जाये। वरना मानव जाति प्रजनन शक्ति के अभाव में खत्म हो जायेगी। लेकिन जिन लोगों के पास रोसुम के इस यंत्र मानव बनाने वाले कारखाने के शेयर थे, वे इस ओर जरा भी ध्यान नहीं देना चाहते थे। दूसरी ओर दुनिया भर की सरकारें चिल्ल-पों मचा रही थीं कि यंत्र मानवों का उत्पादन तेजी से बढ़ाया जाये ताकि वे अपनी सेनाओं की शक्ति और अधिक बढ़ा सकें। दुनिया भर के उद्योगपति पागलों की तरह यंत्र मानवों को मंगाने के लिए आदेश पर आदेश भेज रहे थे।

हैलेना तो यों भी यंत्र मानवों के निर्माण के विरूद्ध थी। स्थिति की इस भयावहता ने उसे और भी आतंकित कर दिया था और वह इस बात पर उतारू हो गयी थी कि कुछ भी हो, पर यंत्र मानवों का निर्माण बंद हो जाये। आखिरकार उसने एक निर्णय लिया और यंत्र मानवों को बनाने वाले मिश्रण के फार्मूले को दोमेन की आलमारी से निकालकर जला दिया।

इस घटना से अनभिज्ञ दोमेन नये सपने पाल रहा था। यंत्र मानवों के विद्रोह की खबरों ने उसे अधिक परेशान नहीं किया था। वह यंत्र मानवों के निर्माण के एक केंद्रीय कारखाने को बंद करके विभिन्न देशों में अलग-अलग कारखाने खोलना चाहता था। इन कारखानों में अलग-अलग वर्णों के, अलग-अलग भाषाओं को जानने वाले यंत्र मानव बनते। वे एक दूसरे के लिए अजनबी होते। एक दूसरे को समझने में असमर्थ। परिणाम यह निकलता कि युग-युगांतर तक एक कारखाने के यंत्र मानव दूसरे कारखाने के यंत्र मानवों से घृणा करते रहते। कोई नीग्रो यंत्र मानव होता, कोई स्वीडी, कोई इतालवी, और कोई चीनी।

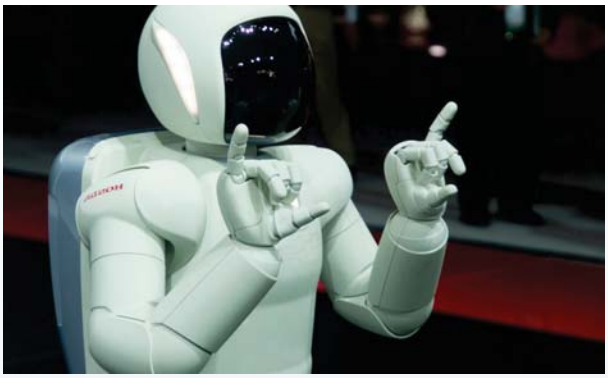

मनुष्य एक तरह से परजीवी है और हम पर आश्रित है। दुनिया भर के यंत्र मानवो हम तुम्हें मानव जाति की हत्या करने का आदेश देते हैं। किसी आदमी को न छोड़ो, किसी औरत को न छोड़ो। कारखानों, रेलों, मशीनों, खानों और खनिज पदार्थों की रक्षा करो - बाकी सब नष्ट कर दो। फिर काम पर लौट आओ। काम नहीं रूकना चाहिए। रेडियस के नेतृत्व में रोसुम कारखाने के यंत्र मानवों ने भी विद्रोह का झंडा अपने हाथों में उठा लिया। कारखाने की सीटियों और भोंपू के साथ यंत्र मानवों ने युद्ध की घोषणा कर दी।

और फिर यंत्र मानवों ने मनुष्यों के खिलाफ आखिरी युद्ध की घोषणा कर दी। दुनिया भर के यंत्र मानवों के लिए कुछ हिदायतें जारी कीं। वे इस प्रकार थीं :

दुनिया भर के यंत्र मानवों के नाम

रोसुम यंत्र मानवों के प्रथम राष्ट्रीय संगठन की ओर से हम मनुष्यों को अपना शत्रु और विश्व में उसके अस्तित्व को अवैध घोषित करते हैं। हम मनुष्यों की तुलना में कहीं अधिक विकसित हैं, उनसे

अधिक बुद्धिमान और शक्तिशाली हैं। मनुष्य एक तरह से परजीवी है और हम पर आश्रित है। दुनिया भर के यंत्र मानवों हम तुम्हें मानव जाति की हत्या करने का आदेश देते हैं। किसी आदमी को न छोड़ो, किसी औरत को न छोड़ो। कारखानों, रेलों, मशीनों, खानों और खनिज पदार्थों की रक्षा करो - बाकी सब नष्ट कर दो। फिर काम पर लौट आओ। काम नहीं रूकना चाहिए। रेडियस के नेतृत्व में रोसुम कारखाने के यंत्र मानवों ने भी विद्रोह का झंडा अपने हाथों में उठा लिया। कारखाने की सीटियों और भोंपू के साथ यंत्र मानवों ने युद्ध की घोषणा कर दी। मनुष्य के नाम पर वहाँ कुल सात लोग थे - हैलेना, दोमेन, फाबरी, डॉ. गॉल, हैलमैन, बर्मान और अलकुइस्ट। दोमेन के घर में फंसे ये सातों लोग अपने-अपने तरीके से समस्या पर विचार कर रहे थे।

दोमेन सोच रहा था - 'यह कोई बुरा स्वप्न नहीं था कि आदमी को उसके श्रम की गुलामी से छुटकारा दिलाया जाये। मैं समूची मानव जाति को अभिजात तंत्र में बदलना चाहता था। एक ऐसा अभिजात तंत्र जिसका पोषण लाखों मशीनी गुलाम करते हों। फिर ऐसे आदमी का उदय होता जो निर्बाध, मुक्त और पूर्ण हो। काश, हमें सौ साल मिले होते, मानव जाति के भविष्य के लिए सौ साल।'

डॉ. गॉल को शिकायत थी - 'यंत्र मानव बड़े मजे हुए सैनिक हैं। यूरोप ने सबसे बड़ा अपराध किया कि यंत्र मानवों को लड़ना सिखाया पर ऐसा मानकर मैं अपने को दोष से मुक्त नहीं मान सकता। मेरा दोष यह था कि मैंने यंत्र मानवों का स्वभाव बदल दिया। मैंने गुप्त रूप से यह सब कुछ किया था। मैं उन्हें आदमियों में बदल रहा था। वे अब मशीन नहीं रह गये। वे जानते हैं कि वे हमसे बढ़कर हैं। वे हमसे घृणा करते हैं। वे सारी मानवीय चीजों से घृणा करते हैं।'

हैलेन आत्मस्वीकृति कर रही थी - 'डॉ. गॉल ने जो कुछ किया मेरी इच्छा से किया। मैं चाहती थी कि उनमें आत्मा हो। मैं यंत्र मानवों से डरती थी क्योंकि मुझे लगता था कि वे हमसे नफरत करते हैं। मैं सोचती थी कि अगर ये हम जैसे हो जायें तो शायद वे हमें थोड़ा-बहुत समझने लगेंगे। अगर वे जरा भी मानवीय बन जायें तो शायद हमसे इतनी नफरत न करें।'

लेकिन अलकुइस्ट के ख्याल से तो - 'यंत्र मानवों का निर्माण करना ही अपराध था। बूढ़ा रोसुम अपने विधर्मी कृत्यों में ही उलझा रहता था। उसका भतीजा करोड़ों के सपने देखता था। किंतु अपने रोसुम यंत्र मानवों के कारखाने के हिस्सोदारों का सपना इन दोनों से भिन्न था। वे मुनाफे का सपना देखते रहे, उनके मुनाफे से ही मानव जाति का विनाश होगा। मैं विज्ञान को दोष देता हूँ, मैं इंजीनियरी को दोष देता हूँ, मैं खुद, हम सब दोषी हैं। हमने अपनी महत्वाकांक्षा के लिए, अपने मुनाफे के लिए, प्रगति के लिए।'

मौत हर क्षण इन लोगों के पास आती जा रही थी। मकान के चारों ओर की बाड़ में बिजली का करंट फैलाकर फिलहाल फाबरी ने मौत को टाल रखा था। पर बिजली के कारखाने की रक्षा कर रहे थोड़े से आदमियों को तो ये यंत्र मानव कभी भी खत्म कर सकते थे और एक बार विद्युत प्रवाह खत्म होने की देर है सारे के सारे यंत्र मानव इन लोगों पर टूट पड़ेंगे।

बर्मान का सुझाव था कि यंत्र मानवों के निर्माण का फार्मूला उन्हें देकर अपनी जान का सौदा किया जा सकता है।

क्योंकि इस फार्मूले के बिना यंत्र मानवों का निर्माण नहीं हो सकता और यदि नये यंत्र मानवों का निर्माण नहीं होता तो फिर बीस साल के भीतर सारे वर्तमान यंत्र मानव खत्म हो जायेंगे। पर उन दस्तावेजों को तो हैलेना जला चुकी थी। याददाश्त के आधार पर इसे दुबारा तैयार करना असंभव था क्योंकि ये फार्मूले बहुत जटिल थे और स्वयं डॉ. गॉल को भी कारखाने में इस मिश्रण को तैयार करते समय इन दस्तावेजों का सहारा लेना पड़ता था।

जीवित रह पाने का यह अंतिम साधन भी नष्ट हो गया था। बिजली के कारखाने को कब्जे में लेते ही यंत्र मानवों ने बिजली काट दी। इसके बाद उन्हें इन लोगों तक पहुँचाने और एक-एक कर सबको कत्ल करते देर न लगी। केवल अलकुइस्ट को माफ कर दिया गया क्योंकि वह भी यंत्र मानवों की तरह कुछ काम करता था। मकान बनाता था।

मानवों के पतन के साथ ही एक नया शासन कायम हो गया था - यंत्र मानवों का शासन। अब वे इस पूरी धरती के शासक थे।

यंत्र मानवों की क्रांति के बाद एक साल गुजर गया। इस एक साल में लाखों टन कोयला धरती से निकाल लिया गया था। नब्बे लाख करघों ने रात-दिन चलकर इतनी चीजें बना डालीं कि धरती पर उन्हें रखने के लिए जगह नहीं बची। दुनिया के कोने-कोने में मकानों का निर्माण हो रहा था।

पर इसी एक साल में अस्सी लाख यंत्र मानव मर चुके थे। बीस साल में सारे यंत्र मानवों को खत्म हो जाना था। यंत्र मानवों के निर्माण का फार्मूला नष्ट हो चुका था। प्रजनन क्षमता रखने वाला मानव जोड़ा धरती पर कहीं नहीं था। यंत्र मानवों की सरकार अलकुइस्ट से चाहती थी कि वह धरती पर जीवन की रक्षा के लिए कोई उपाय करे। यंत्र मानव मनुष्य जैसा बनना चाहते थे। इसलिए उन्होंने मनुष्य के समान ही युद्ध और हत्याएं करके अपने को सर्वशक्तिमान तो बना दिया पर मनुष्यों की तरह अपनी नस्ल को बढ़ाने की सुविधा उन्हें नहीं थी। वे बच्चे पैदा नहीं कर सकते थे। मूल बात तो यह थी कि उसमें जीवन ही नहीं था। वे तो केवल यंत्र थे, और जीवन को किसी परखनली में तो पैदा नहीं किया जा सकता।

जीवन को बचाये रखने की इसी उधेड़बुन में सोये अलकुइस्ट की नींद अचानक हंसी की आवाज से खुल गयी। यह तो मानव हंसी थी - ये कौन मानव जीव लौट आया। उसने चौंककर आंखें खोलीं। एक लड़का और एक लड़की घबराये हुए से उसे देख रहे थे।

'तुम लोग कौन हो?' अलकुइस्ट ने पूछा।

'मैं प्राइसम नाम का यंत्र मानव हूँ और यह हैलेना नाम की यंत्र मानव। हम दोनों को दो साल पहले डॉ. गॉल ने बनाया था।'

'ठीक है। मुझे तुम लोगों पर कुछ प्रयोग करने होंगे, तुममें से एक को चीर-फाड़कर देखना होगा।' दोनों ही दूसरे की रक्षा के लिए खुद की बलि देने को तैयार थे पर कोई भी इसके लिए तैयार नहीं था कि दूसरे के शरीर पर प्रयोग किये जायें, वे आपस में एक दूसरे से प्रेम करते थे।

प्रेम - जो एक मानवीय भावना थी, जिसका यंत्र मानवों में पूरी तरह से अभाव था। यानि ये लोग धीरे-धीरे मानव में रूपांतरित हो रहे थे। इस तरह जीवन का जन्म देखकर अलकुइस्ट ने उन्हें आशीर्वाद दिया कि 'हे नये यग के आदम और हब्बा, जाओ और एक नयी सृष्टि उत्पन्न करो।'

चेक लेखक कारेल चापेक के नाटक 'आर.यू.आर.' (रोसुम्स युनिर्वल रोबोज), 1921 का हिंदी कथा रूपांतर।

❑❑❑

यंत्र मानवों के निर्माण का फार्मूला नष्ट हो चुका था। प्रजनन क्षमता रखने वाला मानव जोड़ा धरती पर कहीं नहीं था। यंत्र मानवों की सरकार अलकुइस्ट से चाहती थी कि वह धरती पर जीवन की रक्षा के लिए कोई उपाय करे। यंत्र मानव मनुष्य जैसा बनना चाहते थे। इसलिए उन्होंने मनुष्य के समान ही युद्ध और हत्याएं करके अपने को सर्वशक्तिमान तो बना दिया पर मनुष्यों की तरह अपनी नस्ल को बढ़ाने की सुविधा उन्हें नहीं थी। वे बच्चे पैदा नहीं कर सकते थे। मूल बात तो यह थी कि उसमें जीवन ही नहीं था। वे तो केवल यंत्र थे, और जीवन को किसी परखनली में तो पैदा नहीं किया जा सकता।

प्लेग

अल्बैर कामू

16 अप्रैल की सुबह जब डॉक्टर रियो अपने ऑपरेशन रूम से निकले तो उन्हें अपने पैरों के नीचे किसी नरम चीज का स्पर्श महसूस हुआ। जीने के बीचों-बीच एक मरा हुआ चूहा पड़ा था। डॉक्टर ने तत्काल पैर से ठोकर मारकर चूहे को एक तरफ हटा दिया और उसके बारे में अधिक सोचे बगैर जीने के नीचे उतरते गये, लेकिन सड़क पर जाने से पहले उन्हें खयाल आया कि आखिर उनके जीने पर मरा हुआ चूहा क्यों पड़ा रहे, इसलिए उन्होंने मकान के चौकीदार को बुलाकर चूहा हटाने का आदेश दिया।

उस दिन शाम को, जब डॉक्टर रियो अपने फ्लैट के जीने पर चढ़ने से पहले दरवाजे के पास खड़े होकर जेब में चाबी टटोल रहे थे तो उन्होंने बरामदे के अंधेरे कोने की तरफ से एक मोटा चूहा अपनी ओर आते हुए देखा। चूहा डगमगाता हुआ चल रहा थ और उसकी बालदार खाल भीगी हुई थी। उसने रुककर अपने को गिरने से बचाने की कोशिश की, डॉक्टर की ओर आगे बढ़ा फिर रुका और एक चीख के साथ कलाबाजी सी खाकर बगल की ओर उलट गया। चूहे का मुंह थोड़ा-सा खुला था और उसमें से खून की

धार निकल रही थी। उसकी ओर एक क्षण तक गौर से देखने के बाद डॉक्टर जीने पर चढ़कर ऊपर चले गये।

अगले दिन 17 अप्रैल के आठ बजे तक डॉक्टर बाहर जा रहा था तो पोर्टर ने उसे रोककर बताया कि कुछ निकम्मे बदमाश छोकरे हॉल में तीन मरे चूहे पटक गये हैं। साफ जाहिर है कि उन चूहों को बड़े मजबूत स्प्रिंग वाले शिकंजे में पकड़ा गया था, क्योंकि उनमें से खून की धार बह रही थी।

अल्बैर कामू एक फ्रैंच लेखक थे जिन्हें 1957 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। 7 नवम्बर 1913 को अल्जीजिरया में जन्में अल्बैर कामू की प्रसिद्ध कृतियाँ द स्ट्रेन्जर, द प्लेग, द फॉल, द रिवेल, द फर्स्ट मैन आदि हैं। 4 जनवरी 1960 को अल्बैर कामू ने फ्रांस में अन्तिम सांस ली।

इस घटना से हैरान रियो ने उस दिन पहले शहर के छोर की बस्तियों का मुआयना करने का फैसला किया, जहां उसके गरीब मरीज रहते थे।

सड़क के दोनों ओर फुटपाथ के किनारे रखे कूड़े के कनस्तरों पर नजर डाली। एक सड़क में ही डॉक्टर ने गिना कि सब्जियों के छिलकों और दूसरे कचरे से भरे टिनों के ऊपर एक दर्जन से भी ज्यादा चूहे पड़े थे।

रियो को जल्द ही पता चल गया कि शहर के उस हिस्से में चूहे बातचीत का सबसे बड़ा विषय बन गये थे। मरीजों के घरों का राउंड करने के बाद डॉक्टर मोटर में बैठकर घर आ गया।

अगले दिन १८ अप्रैल की सुबह जब डॉक्टर स्टेशन से अपनी मां को लेकर लौट रहा था तो उसने देखा कि माइकेल पहले से भी ज्यादा परेशान है। तहखाने से लेकर बरसाती तक जीने में एक दर्जन के करीब मरे हुए चूहे पड़े थे। सड़क के सब मकानों के कूड़े के कनस्तर चूहों से भरे थे।

२८ अप्रैल को जब रेन्सडॉक सूचना विभाग ने घोषणा की कि आज आठ हजार चूहे जमा किये गये हैं तो सारे शहर में डर और घबराहट की लहर-सी फैल गयी। लोगों ने अधिक कारगर कदम उठाने की मांग की। अधिकारियों पर लापरवाही दिखाने का आरोप लगाया।

लेकिन इसी दिन के दोपहर की बात है कि डॉक्टर रियो ने लौटकर जब अपने फ्लैट की इमारत के सामने कार खड़ी की तो चौकीदार माइकेल को गली के सिरे से अपनी ओर आते देखा। वह अपने को घसीटकर चल रहा था, उसका सिर झुका हुआ था और बाहें और टांगें अजीब ढग से फैली हुई थी। बूढ़ा माइकेल एक पादरी की बांह का सहारा लेकर चल रहा था, जिसे रियो पहचानता था। वह फादर पैनेलो था।

माइकेल की आंखें बुखार से चमक रही थीं और वह बड़ी मुश्किल से सांस ले रहा था। बूढ़े ने बताया कि कुछ बेचैनी सी महसूस करने पर वह खुली हवा में सांस लेने के लिए बाहर चला गया था। लेकिन वहां जाकर उसे अपने शरीर में हर जगह दर्द महसूस होने लगा गर्दन में, बगलों में और जांघों के बीच में। इसलिए मजबूर होकर लौट आया और उसे फादर से अपनी बांह का सहारा देने के लिए कहना पड़ा।

'फौरन जाकर बिस्तर में लेट जाओ और अपना टेंप्रेचर लो। मैं तीसरे पहर तुम्हें देखने आऊंगा।'

बूढ़े के जाने के बाद डॉक्टर रियो ने फादर पैनेलो से पूछा कि चूहों की इस विचित्र घटना के बारे में उसका क्या खयाल है?

'ओह, मेरा खयाल है कि उनमें कोई महामारी फैल गयी है।' गोल और बड़े चश्मे के पीछे से पादरी की आंखें मुस्करा रही थीं।

अखबार बेचने वाले सबसे ताजी खबर चिल्ला-चिल्लाकर सुना रहे थे कि चूहे एकदम गायब हो गये हैं। रियो ने अपने मरीज को पलंग की पट्टी पर झुका हुआ पाया। वह एक हाथ से अपने पेट को और दूसरे हाथ से गर्दन को दबा रहा था और चिलमची में गुलाबी रंग के पित्त की कै कर रहा था। कुछ देर तक कै करने के बाद माइकेल बिस्तर पर लेट गया। उसका दम घुट रहा था। उसे 103 डिग्री बुखार था। गले, बगल और जांघों की गिल्टियां सूज रही थी और उसकी जांघों में दो काले धब्बे उभरने लगे।

अपने फ्लैट में लौटकर रियो ने अपने सहयोगी रिचर्ड को टेलीफोन किया, जो शहर का प्रमुख डॉक्टर था।

'क्या कोई बुखार का केस नहीं देखा, साथ में गिल्टियां भी हों?'

'जरा ठहरो। हां, मेरे पास सूजी हुई गिल्टियों वाले दो केस हैं।'

'गिल्टियां क्या असाधारण रूप से सूजी हुई हैं?'

'खैर, इसका फैसला तो इस बात पर निर्भर करता है कि तुम साधारण का क्या मतलब लगाते हो।' रिचर्ड ने उत्तर दिया।

उस रात को चौकीदार का बुखार 104 डिग्री तक चढ़ गया और वह सरसाम में लगातार ये चूहे, ये चूहे की ही रट लगाए रहा। रियो ने गिल्टी का मुंह बंद करने की कोशिश की।

माइकेल को जब तारपीन की चुभन महसूस हुई तो वह चिल्लाया, हरामजादे।

गिल्टियां और भी सूज गई थीं और लगता था जैसे गोश्त में ठोस गांठें-सी गड़ी हुई हों, माइकेल की बीवी एकदम थकान से चूर हो गयी थी।

'उसके साथ बैठो, और अगर जरूरत पड़े तो मुझे बुला लेना।' डॉक्टर ने कहा।

अगले दिन ३० अप्रैल को बूढ़े माइकल का टेंप्रेचर उतरकर ९९ डिग्री पर आ गया था और यद्यपि वह बहुत कमजोर दिखाई दे रहा था, फिर वह मुस्करा रहा था।

दोपहर के समय बीमार माइकेल का टेंप्रेचर एकाएक फिर १०४ डिग्री तक बढ़ गया। अब वह लगातार सरसाम की अवस्था में था और फिर उल्टियां करने लगा था।

'सुनो,' रियो ने कहा, 'हमें इसको अस्पताल ले जाना होगा। वहां हम इसे एक नयी दवा देकर देखेंगे। मैं एंबुलेंस गाड़ी के लिए टेलीफोन किये देता हूं।'

दो घंटे बाद रियो और मदाम माइकेल एंबुलेंस गाड़ी में बैठे चिंतापूर्वक रोगी की ओर देख रहे थे। माइकेल के खुले गंदगी से भरे हुए मुंह में रह-रहकर कुछ शब्द निकल रहे थे। वह बार-बार दुहरा रहा था, 'ये चूहे। ये हरामजादे चूहे।' उसका चेहरा बेजान और सलेटी रंग का हो गया था। उसके रक्तहीन होंठ सफेद पड़ गये थे और हठात झटकों के साथ उसकी सांस चल रही थी। रक्त की शिराओं में गांठें पड़ जाने से उसके हाथ-पैर फैले हुए थे। वह एंबुलेंस की बर्थ में इस तरह घुसकर पड़ा था जैसे वह उसमें ही अपने-आपको दफन कर रहा हो या जैसे जमीन की गहराइयों में कोई आवाज उसे नीचे की ओर बुला रही हो। लगता था जैसे किसी अनदेखे दबाव से बेचारे का दम घुट रहा था। उसकी बीवी सुबक-सुबक कर रो रही थी।

'डॉक्टर, क्या कोई उम्मीद बाकी नहीं रही?'

'वह मर चुका है।'

स्थिति ने कितना गंभीर मोड़ ले लिया था, इसका डॉक्टर रियो को पूरा एहसास था। चौकीदार की लाश को अलग रखवाने के बाद उसने रिचर्ड को टेलीफोन करके पूछा कि गिल्टियों वाले बुखार के इन केसों के बारे में उसकी क्या राय थी।

'मैंने उनके बारे में कोई राय नहीं कायम कर सका,' रिचर्ड ने स्वीकारा, मेरे दो मरीजों की मौत हो चुकी है - एक अड़तालीस घंटों में मरा और दूसरा तीन दिन के भीतर और दूसरे मरीज में तो, जब मैं उसे अगले दिन देखने गया था तब बुखार से अच्छा होने के चिह्न दिखाई दे रहे थे।

'अच्छा, तो अगर तुम्हारे पास और केस आये तो मेहरबानी करके मुझे इत्तिला देना,' रियो ने कहा।

उसने अपने कुछ और साथी डॉक्टरों को टेलीफोन किया। पूछताछ के फलस्वरूप उसे पता चला कि पिछले कुछ दिनों में इसी किस्म के करीब बीस केस हो चुके थे और ये सभी संघातिक साबित हुए थे। इस पर उसने रिचर्ड को, जो स्थानीय मेडिकल एसोसिएशन का चेरयमैन था, यह सलाह दी कि अब जो नये केस आएं, उन्हें छूतवाले वार्ड में रखा जाय।

स्थानीय अखबार, जो चूहों के बारे मे इतनी तो बड़ी-बड़ी सुर्खियां देकर खबरें छापते थे, अब बिलकुल खामोश हो गये थे, क्योंकि चूहे सड़कों पर मरते हैं और आदमी अपने घरों में और अखबार सिर्फ सड़कों में ही दिलचस्पी रखते हैं। सरकारी और म्युनिस्पैलिटी के अफसर आपस में मशविरा कर रहे थे। जब तक कि एक-एक डॉक्टर के पास दो या तीन केस ही पहुंचे थे, तब तक किसी ने इस बारे में कोई कदम उठाने की बात ही नहीं की होगी। यह सिर्फ संस्थाओं को जोड़ने का सवाल था, लेकिन जब ऐसा किया गया तो कुल संख्या हैरतअंगेज निकली। कुछ ही दिनों में मरीजों की संख्या दिन दूनी, रात चौगुनी की रफ्तार से बढ़ गयी थी और इस विचित्र बीमारी के दर्शकों को इसमें जरा भी संदेह न रहा कि जरूर कोई महामारी फैल गयी है। स्थिति इस हद तक पहुंच चुकी थी, जब रियो का एक सहयोगी डॉक्टर कास्तेल, जो उससे उम्र में काफी बड़ा था, एक दिन उससे मिलने आया।

'जाहिर है कि तुम तो जानते ही होगे कि यह कौन सी बीमारी है,' उसने रियो से कहा।

'हां कास्तेल, इस बात पर यकीन करना मुश्किल है, लेकिन बीमारी के सारे लक्षण इसी ओर इशारा करते हैं कि यह प्लेग है,' रियो ने उत्तर दिया।

उसने याद करने की कोशिश की कि उसने इस बीमारी के बारे में क्या-क्या पढ़ा था। उसकी स्मृति में आंकड़े तैर गये और उसे याद आया कि प्लेग की जिन तीस महामारियों का इतिहास तो

उसने याद करने की कोशिश की कि उसने इस बीमारी के बारे में क्या-क्या पढ़ा था। उसकी स्मृति में आंकड़े तैर गये और उसे याद आया कि प्लेग की जिन तीस महामारियों का इतिहास तो पता है, उन्होंने करीब दस करोड़ लोगों की जान ली है। लेकिन दस करोड़ मौतें क्या होती हैं? जो युद्ध में लड़ आता है, वह कुछ दिन बाद यह भूल जाता है कि मुर्दा आदमी क्या होता है और चूंकि मुर्दा व्यक्ति वास्तविक नहीं होता, जब तक कि उसको प्रत्यक्ष मरते हुए न देखा गया हो, इसलिए इतिहास में करोड़ व्यक्तियों के शवों की वह घोषणा मनुष्य की कल्पना में धुएं के एक कश से ज्यादा वास्तविकता नहीं रखती।

पता है, उन्होंने करीब दस करोड़ लोगों की जान ली है। लेकिन दस करोड़ मौतें क्या होती हैं? जो युद्ध में लड़ आता है, वह कुछ दिन बाद यह भूल जाता है कि मुर्दा आदमी क्या होता है और चूंकि मुर्दा व्यक्ति वास्तविक नहीं होता, जब तक कि उसको प्रत्यक्ष मरते हुए न देखा गया हो, इसलिए इतिहास में करोड़ व्यक्तियों के शवों की वह घोषणा मनुष्य की कल्पना में धुएं के एक कश से ज्यादा वास्तविकता नहीं रखती। डॉक्टर को कुस्तुनतुनिया की प्लेग की बात याद आयी, जिसके बारे में प्रोकोपियस ने लिखा था कि एक ही दिन में उससे दस हजार मौतें हुई थीं। मरे हुए दस हजार की संख्या किसी बड़े सिनेमाघर के दर्शकों से पांच गुनी हुई। हां, ठीक है, इसी तरह इसको समझना चाहिए। आपको चाहिए कि पांच बड़े सिनेमाघरों के दरवाजों पर ही उनके दर्शकों को जमा कर लें, फिर उन्हें शहर के चौक मे ले जायें और फिर उन्हें ढेर के ढेर में मर जाने दें, अगर आप दस हजार मौतों का साफ-साफ मतलब समझना चाहते हैं। फिर मुर्दों की इस अज्ञात भीड़ में कुछ परिचितों के चेहरे भी जोड़ दें। लेकिन जाहिर है कि ऐसा करना एकदम असंभव है। इसके अलावा ऐसा कौन आदमी है जो दस हजार चेहरों को पहचानता हो? जो भी हो, प्रोकोपियस की तरह उन पुराने इतिहासकारों के दिये हुए आंकड़ों पर भरोसा नहीं किया जा सका, यह आम धारणा थी। सत्तर साल पहले कैंटन शहर में प्लेग से जब चालीस हजार चूहे मर चुके थे तब जाकर बीमारी नगरवासियों में फैली थी। लेकिन कैंटन की महामारी में भी चूहों की गिनती करने का कोई प्रामाणिक तरीका नहीं था। केवल मोटे तौर पर अंदाज ही तो लगाया गया था, जिसमें गलती की काफी गुंजाइस थी।

अगले दिन बहुत कह-सुनकर रियो ने प्रीफेक्ट के दफ्तर में एक स्वास्थ्य कमेटी की मीटिंग बुलाने के लिए अधिकारियों को राजी कर लिया। कई लोगों को यह उचित नहीं लगा।

प्रीफेक्ट ने स्नेहपूर्वक उनका अभिवादन किया, लेकिन उसके ढंग से मालूम पड़ता था कि वह बहुत घबराया हुआ है।

प्रीफेक्ट ने उससे कहा, 'मैंने आंकड़ों पर गौर किया है और जैसा कि तुम्हारा कहना है, ये आंकड़े बहुत चिंताजनक हैं।'

'सिर्फ चिंताजनक ही नहीं, उनसे निश्चय निष्कर्ष निकाला जा सकता है।'

'मैं सरकार से आदेश जारी करने की मांग करूंगा।'

फिर एकाएक मौतों की संख्या एकदम बढ़ गयी। जिन दिन यह संख्या तीस तक पहुंची, प्रीफेक्ट ने डॉक्टर रियो को एक तार पढ़ने के लिए दिया और कहा, तो अब लगता है कि वे लोग घबरा उठे हैं। तार में लिखा था : प्लेग फैलने की घोषणा कर दो। शहर के फाटक बंद कर दो।'

फाटकों के बंद होने का सबसे बड़ा नतीजा यह हुआ कि लोग अचानक एक दूसरे से बिछुड़ गये। वे इस आकस्मिक घटना

के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। माताएं और बच्चे, प्रेमी, पति और पत्नियां, जिन्हें कुछ दिन पहले पक्का यकीन था कि वे कुछ ही दिनों के लिए एक-दूसरे से बिछुड़ रहे हैं, जिन्होंने प्लेटफार्म पर एक-दूसरे को चूमकर विदाई ली थी और इधर-उधर की मामूली बातें की थीं, उन्हें यकीन था कि कुछ दिनों या ज्यादा-से-ज्यादा कुछ हफ्तों बाद वे फिर मिलेंगे, निकट भविष्य में अंधी मानवीय आस्था से वे ठगे गये थे। विदाई के बाद भी उनकी जीवनचर्या में कोई खास फर्क नहीं आया था, लेकिन बिना किसी चेतावनी के अब वे अपने को असहाय रूप से एक-दूसरे से दूर पा रहे थे। वे न एक-दूसरे से मिल सकते थे, यहां तक कि एक-दूसरे से पत्र व्यवहार भी नहीं कर सकते थे।

प्रीफेक्ट ने ट्रैफिक और खाने-पीने की चीजों पर कंट्रोल लगा दिया। पेट्रोल राशन पर मिलने लगा और खाने की चीजों की बिक्री पर पाबंदियां लगा दी गईं।

विलासिता की सामग्री की दुकानें रातों-रात बंद हो गईं और दूसरी दुकानों ने सारा माल बिक चुका है के नोटिस लगा दिये, खरीददारों की भीड़ दुकानों के दरवाजों के आगे जमा रहती थी।

औरान की शक्ल एकदम बदल गयी। सड़कों पर पैदल चलने वाले लोग ज्यादा नजर आते थे। फुर्सत के वक्त सड़कों ओर रेस्तराओं में बहुत से लोग जमा हो जाते थे। इन दिनों वे निकम्मे हो गये थे, क्योंकि बहुत सी दुकानें और दफ्तर बंद हो चुके थे। फिलहाल ये लोग बेकार नहीं थे, सिर्फ छुट्टी पर थे।

रियो के ऑपरेशन रूम की बगल में डॉक्टरी सामान से लैस एक कमरा था, जहां मरीज को सबसे पहले लाया जाता था। इसके फर्श को खोदकर एक उथली-सी पानी और क्रेसलिक एसिड की झील बना दी गयी थी, जिसमें बीच में ईंटों का एक छोटा सा द्वीप-सा बनाया गया था। मरीज को इस द्वीप पर ले जाया जाता था, तेजी से उसके कपड़े उतारकर कीटाणु नाशक पानी में डाल दिये जाते थे। नहलाने-सुखाने अस्पताल की मोटी

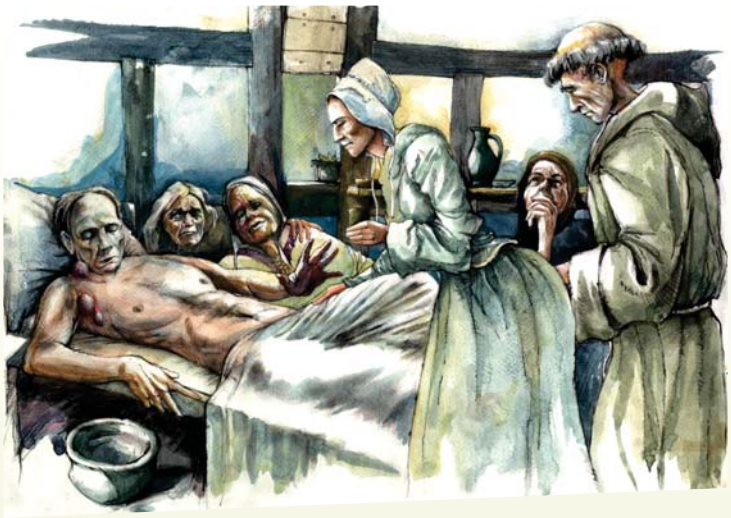

खुरदरी नाइट शर्ट पहनाने के बाद उसको जांच के लिए रियो के पास ले जाया जाता था, फिर उसके बाद किसी वार्ड में। इस अस्पताल में, जो स्कूल की इमारत को कब्जे में लेकर खोला गया था, पांच सौ बेड थे। लगभग सभी बेड भरे हुए थे। मरीजों को रियो स्वयं अपनी देख-रेख में दाखिल करने के बाद उन्हें टीके लगाता था, गिल्टियों में नश्तर लगाता था और आंकड़ों की दोबारा जांच करने के बाद फिर दोपहर के वक्त अपने मरीजों को देखने के लिए लौट आता था। अंधेरा होने पर वह मरीजों का हालचाल पूछने के लिए निकलता था और रात को बहुत देर से लौटता था। डॉक्टर हट्टे-कट्टे बदन का आदमी था और अभी तक थकान से चूर नहीं हुआ था। फिर भी बार-बार मरीजों को देखने जाने की वजह से उसकी सहन-शक्ति पर बोझ पड़ने लगा था। एक बार यह पता चलने पर कि किसी को प्लेग हो गयी है, उसे फौरन ही घर से हटाकर अस्पताल पहुंचा दिया जाता था। उसके बाद सैद्धांतिकता और परिवार के साथ संघर्ष शुरू होता था, जिन्हें अच्छी तरह मालूम था कि अब वे मरीज को उसके मरने या स्वस्थ होने से पहले नहीं देख सकेंगे।

फिर संघर्ष का दूसरा दौर शुरू हुआ, आंसू और मिन्नतें, जिसे संक्षेप में अव्यावहारिकता कहा जा सकता है। मरीजों के कमरों में, जहां बुखार की गरमी और स्नायविक विक्षिप्ति छायी थी, पागलपन के दृश्य होते थे। हर बार एक ही मामले पर संघर्ष होता था। मरीज को हटा लिया जाता था, इसके बाद रियो भी वहां से चला जाता था।

शुरू के दिनों में तो रियो सिर्फ अस्पताल में फोन कर देता था और एंबुलेंस के आने की इंतजार किये बगैर दूसरे मरीजों को देखने चला जाता था। लेकिन उसके जाते ही परिवार के लोग घर में ताला लगा देते थे। वे मरीज से बिछुड़ने की बजाय प्लेग की छूत के संपर्क में आना ज्यादा पसंद करते थे, क्योंकि उन्हें अच्छी तरह मालूम था कि बिछुड़ने का नतीजा क्या होगा। इसके बाद गाली-गलौज, चीखों, दरवाजे तोड़ने और पुलिस और फौज की कार्यवाही का सिलसिला शुरू होता था। मरीज पर धावा बोल दिया जाता था। शुरू से कुछ हफ्तों में रियो को एंबुलेंस के आने से पहले मरीज के पास रूकने के लिए मजबूर होना पड़ता था। बाद में जब हर डाक्टर के साथ एक वालेंटियर पुलिस अफसर जाने लगा तो रियो निश्चिंत होकर होकर जल्दी से दूसरे मरीजों को देखने के लिए जाने लगा।

अनेक लोग, मिसाल के लिए रैंबर्त, इस बढ़ती हुई परेशानी के वातावरण से मुक्ति पाने की कोशिशें कर रहे थे, लेकिन ज्यादा चतुराई और धैर्य के साथ। हालांकि उन्हें भी अपनी कोशिशों में ज्यादा कामयाबी नहीं मिली थी। कुछ दिन तक पत्रकार रैंबर्त लगातार अफसरों से संघर्ष करता रहा। हमेशा से उसका खयाल था कि धैर्य और सहनशीलता से ही कामयाबी हासिल हो सकती है और एक माने में संकट के मौके पर रसूख और पहुंच ही काम आती है। इसलिए वह लगातार सभी तरह के अफसरों और ऐसे लोगों से मिलता रहा जिनसे रसूख से साधारण परिस्थितियों में बहुत से काम हो सकते थे, लेकिन संकट के दिनों में ऐसे रसूख का कोई फायदा नहीं था।

खैर, रैंबर्त को जब भी मौका मिला, वह इन सब लोगों से मिला और अपना मामला पेश किया। उसकी दलीलों का एक ही सारांश था, वह इस शहर में परदेशी था, इसलिए उसकी प्रार्थना पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए था। आमतौर पर सब लोग फौरन उसकी इस दलील का समर्थन करते थे, लेकिन वे साथ ही यह भी कहते थे कि रैंबर्त जैसे कई और लोग भी शहर में मौजूद हैं इसलिए उसकी स्थिति में कोई ऐसी विशेषता नहीं जैसा कि वह सोचता है।

एक बार रैंबर्त को क्षणिक आशा की एक किरण दिखाई दी। प्रीफेक्ट के दफ्तर से उसे एक फार्म भेजा गया था, जिसमे उसे हिदायत दी गयी थी कि वह सावधानी से सारे खाली खानों की पूर्ति करे। फार्म में उसके हुलिये, परिवार, मौजूदा और भूतपूर्व आमदनी के जरियों के बारे में पूछताछ की गयी थी। दरअसल उससे जिंदगी के तथ्यों की पूरी सूची मांगी गयी थी। उसे लगा यह पूछताछ उन लोगों की सूची बनाने के लिए की जा रही है, जिन्हें शहर छोड़कर अपने घरों में लौटने का आदेश दिया जायेगा।

बाद में उसे पता चला कि इसका उद्देश्य तो दरअसल यह था कि अगर वह बीमार होकर मर जाता है तो इस जानकारी के आधार पर अधिकारियों को उसके परिवार के सदस्यों को सूचित करने में और यह फैसला करने में मदद मिलेगी कि अस्पताल का खर्च म्युनिसिपल कमेटी को उठाना चाहिए या उसके रिश्तेदारों को।

अगला दौर रैंबर्त के लिए सबसे ज्यादा आसान होते हुए भी सबसे अधिक कठिन था। यह अतीव आलस्य का दौर था। रैंबर्त दफ्तरों के चक्कर काट चुका था और भरसक सारे कदम उठा चुका था। अब उसे एहसास हो गया था कि इस किस्म के सारे रास्ते उसक लिए बंद हो गये थे। इसलिए अब वह निष्प्रयोजन एक रेस्तरां की बालकनी पर गुजारता और इस उम्मीद से अखबार पढ़ता था कि शायद महामारी के प्रकोप के कुछ कम होने की खबर मिले। वह सड़क पर चलने वालों के चेहरों की तरफ देखता रहता और अक्सर उन चेहरों के नीरस अवसाद को देखकर वह ग्लानि से मुंह फेर लेता था।

कागज की दिनों-दिन बढ़ती हुई कमी से मजबूर होकर कुछ दैनिक अखबारों ने अपने पृष्ठ कम कर दिये। एक नया अखबार शुरू हुआ, प्लेग समाचार। इसका उद्देश्य है सच्चाई और ईमानदारी से शहर के लोगों को बीमारी से घटने या बढ़ने की सूचना देना, प्लेग के भविष्य के बारे में विशेषज्ञों की राय को छापना, हर किसी को, चाहे वह जीवन के किसी भी क्षेत्र से संबंद्ध हों, और जो इस महामारी का मुकाबला करना चाहे, लिखने के लिए खुला निमंत्रण देना, जनता के साहस और विश्वास को बनाए रखना, अधिकारियों के नवीनतम आदेशों को प्रकाशित करना, और उन तमाम शक्तियों का केंद्रीयकरण करना जो इस मुसीबत में लोगों की सक्रिय सहायता करना चाहती है। दरअसल कुछ दिन बाद ही इस अखबार के कॉलमों में प्लेग से बचने के नये और अचूक तरीकों के विज्ञापन छपने लगे।

शुरू के दिनों में जब लोगों का खयाल था कि यह महामारी भी दूसरी महामारियों की तरह है, धर्म का काफी जोर रहा, लेकिन ज्यों ही लोगों को तत्काल खतरा नजर आया तो वे ऐय्याशी की तरफ ध्यान देने लगे। दिन के वक्त लोगों के जिन चेहरों पर घृणित आशंकाओं की मोहर लगी रहती वे डर, धूल-भरी प्रचंड रातों में एक विक्षिप्त हर्षोन्माद में बदल जाते हैं और उनके खून में एक स्वच्छंदता दौड़ने लगती है।

बूढ़ा डॉक्टर कॉस्तेल अटल विश्वास से, लगातार मेहनत करके थोड़े सामान और वक्त में ही प्लेग की सीरम तैयार कर रहा था, रियो को भी यकीन था कि प्लेग के ताजे कीटाणुओं से तत्काल बनी सीरम बाहर से मंगायी जाने वाली सीरम से ज्यादा जल्दी असर करेगी, क्योंकि ट्रॉपिकल रोगों की पाठ्य पुस्तकों में प्लेग के जिन जीवाणुओं का जिक्र पाया जाता है, वे हमारी प्लेग के जीवाणुओं से कुछ अलग किस्म के थे। कॉस्तेल को उम्मीद थी कि वह बहुत कम वक्त में सीरम की शुरू की सप्लाई तैयार कर लेगा।

जिस दौर की हम अब चर्चा कर रहे हैं, उसमें अभीतक मर्दों और औरतों की लाशों को अलग-अलग रखा जाता था और अधिकारी इस बात पर जोर देते थे, हर गड्ढे के नीचे बिना बुझाये हुए चूने की एक गहरी परत बिछा दी गयी थी, जो जोर से खौलता था और जिसमें से भाप उठती थी। गड्ढे के होंठों के पास चूने की एक मेड़ में से बिलकुल बुलबुले उठ रहे थे जो ऊपर आकर हवा में फट जाते थे। जब एंबुलेंस अपना काम खत्म कर चुकती थी तो स्ट्रेचरों को सीधी कतार में गड्ढों के पास लाया जाता था। नंगी लाशें, जो ऐंठकर बदसूरत हो जाती थीं, एक साथ गड्ढे में धकेल दी जाती थीं और उन पर चूने की परत बिछाकर मिट्टी डाल दी जाती थी। मिट्टी की परत सिर्फ कुछ इंच गहरी होती थी, ताकि बाद में आने वाले लाशों के ढेर के लिए जगह की गुंजाइश रखी जा सके। अगले दिन मृतकों के रिश्तेदारों से मुर्दों के रजिस्टर में दस्तखत करने के लिए कहा जाता था, जिससे जाहिर होता था कि इंसान और दूसरे जीवों की मौत में मिसाल के लिए कुत्तों की मौत में फर्क किया जा सकता है। इंसानों की मौतें बाकायदा रजिस्टर में दर्ज की जाती हैं और आंकड़ों का सावधानी से हिसाब रखा जाता है।

डॉक्टर कॉस्तेल सबसे ज्यादा थका-मांदा दिखाई देता था। जिस दिन उसने आकर रियो को बताया कि प्लेग की सीरम तैयार हो गयी है और जब उसने पहली बार सीरम को मोसिये ओथों के नन्हें बेटे पर आजमाने का फैसला किया था, जिसके बचने की कोई उम्मीद नहीं थी तो अचानक रियो ने ताजे आंकड़े पढ़कर सुनाते हुए देखा कि डॉक्टर कॉस्तेल अपनी कुर्सी में पड़ा गहरी नींद सो रहा था। अपने पुराने दोस्त का बदला हुआ चेहरा देखकर रियो को बड़ा सदमा पहुंचा।

अक्टूबर के अंत में प्लेग से लड़ने के लिए कॉस्तेल की सीरम पहली बार आजमायी गई। एक माने में यह रियो का आखिरी दांव था। अगर इसमें असफलता मिलती तो डॉक्टर को यकीन था कि सारा शहर महामारी की दया पर निर्भर करेगा। या तो अनिश्चित काल के लिए प्लेग अपनी तबाही जारी रखेगा या अचानक अपने आप ही खत्म हो जायेगी।

जिस दिन कॉस्तेल रियो से मिलने आया था उससे एक दिन पहले मौसिये ओथो का बेटा बीमार पड़ गया था। परिवार के सब लोगों को क्वारंटीन में नजरबंद कर दिया गया था। इस तरह बच्चे की मां ने, जो अभी क्वारंटीन वार्ड से छूटकर आयी थी, अपने-आपको फिर परिवार से अलग पाया। सरकारी कायदों की पाबंदी करते हुए मजिस्ट्रेट ने ज्यों ही बच्चे में प्लेग के लक्षण देखे त्यों ही उसने डॉक्टर रियो को बुलावा भेजा।

लड़के को सहायक अस्पताल के एक छोटे कमरे में रखा गया जो प्लेग से पहले छोटे बच्चों की पढ़ाई का कमरा था। बीस घंटे बाद रियो को विश्वास हो गया कि लड़के के बचने की कोई उम्मीद नहीं। छूत लगातार बढ़ रही थी और लड़के का शरीर बीमारी से लड़ने की कोई कोशिश नहीं कर रहा था। बच्चे की छोटी-छोटी बांहों और टांगों के जोड़ों में छोटी-छोटी गिल्टियां, जो

अभी पूरी तरह से नहीं उभरी थीं, चिपकी हुई थीं। साफ जाहिर था कि इस लड़ाई में प्लेग की जीत होने वाली थी। इन परिस्थितियों में लड़के पर कॉस्तेल की सीरम आजमाने के विचार ने रियो की अंतर्रात्मा को बिलकुल नहीं धिक्कारा। उसी रात खाने के बाद बच्चे को टीका लगाया गया, इसमें काफी देर लगी, लेकिन रत्ती भर फायदा न हुआ। अगले दिन तड़के ही वे इस टीके का असर देखने के लिए बच्चे के पलंग के गिर्द जमा हुए इसी नतीजे पर सब कुछ निर्भर करता था।

बच्चे का शैथिल्य कुछ कम हो गया था और वह बिस्तर पर छटपटाता हुआ करवटें बदल रहा था। तड़के चार बजे डॉक्टर, कॉस्तेल और तारो बच्चे के सिरहाने बैठे बीमारी के बढ़ने और घटने की हर अवस्था को नोट कर रहे थे।

सफेदी की हुई दीवारों पर रोशनी का रंग गुलाबी से पीले में बदल रहा था। नये गरमी से तपे हुए दिन की पहली तरंगें खिड़कियों से टकराने लगीं। ग्रांद यह कहकर कि वह फिर लौटेगा, उठ खड़ा हुआ। किसी ने उसकी आवाज न सुनी। सब इंतजार कर रहे थे। बच्चे की आंख अभी बंद थी। वह पहले से अधिक शांत दिखाई देने लगा। पक्षी के नाखूनों की तरह उसकी नन्हीं उंगलियां बिस्तर के दोनों छोरों को नोच रही थी। फिर उसकी उंगलियां उठीं, उसने घुटनों पर पड़ा कंबल नोचा और अचानक उसका शरीर दोहरा हो गया। वह अपनी जांघें पेट पर ले आया और बिना हिले-डुले पड़ा रहा। पहली बार उसने आंखें खोलीं और रियो की तरफ देखा, जो उसके ऐन सामने खड़ा था। उसका नन्हा चेहरा भूरे रंग की मिट्टी के नकाब की तरह सख्त हो गया था। धीरे-धीरे उसके होठ खुले और उनमे से लंबी अविराम चीख निकली, जो सांस लेने के बावजूद ज्यों-की-त्यों बनी रही। इस चीख ने वार्ड को एक भयंकर क्षोभपूर्ण विरोध से भर दिया, शैशव का यह नन्हा क्रंदन वार्ड के सब संतप्त लोगों की वेदना की सामूहिक अभिव्यक्ति बन गया। रियो ने अपने होठ भींच लिये, तारो दूसरी तरफ देखने लगा, रैंबर्त जाकर कॉस्तेल के पास खड़ा हो गया, जिसके घुटनों पर बंद किताब पड़ी थी। फादर पैनेलो ने बच्चे के नन्हें मुंह की तरफ देखा, जिसे प्लेग की मलिनता ने विषाक्त कर दिया और जिसमें से मौत की कुछ चीत्कार निकल रही थी जो आदिकाल से मानवता सुनती है। फादर पैनेलो घुटनों के बल बैठ गये और सबने उस अनाम, अनंत क्रंदन में उनके भर्राये गले की आवाज सुनी।

'मेरे खुदा इस बच्चे को जिंदा रहने दो।'

लेकिन बच्चे की चीत्कार जारी रही और दूसरी मरीज भी बेचैन हो उठे। वार्ड के छोर वाला मरीज, जो लगातार चीख रहा था, अब और जोर से चीखने लगा था। उसकी चीखें एक अखंड चीख में बदल गईं। दूसरे मरीजों की कराहटें भी तेज हो गईं।

अक्टूबर के अंत में प्लेग से लड़ने के लिए कॉस्तेल की सीरम पहली बार आजमायी गई। एक माने में यह रियो का आखिरी दांव था। अगर इसमें असफलता मिलती तो डॉक्टर को यकीन था कि सारा शहर महामारी की दया पर निर्भर करेगा। या तो अनिश्चित काल के लिए प्लेग अपनी तबाही जारी रखेगा या अचानक अपने आप ही खत्म हो जायेगी।

कॉस्तेल पलंग की दूसरी तरफ चला गया था। उसने कहा कि अंत नजदीक आ गया है। बच्चे का मुंह अब भी खुला हुआ था, लेकिन खामोश था और उसका नन्हा सिकुड़ा शरीर अस्त-व्यस्त कंबलों के बीच पड़ा था। उसके गाल अब भी आंसुओं से गीले थे।

फादर पैनेलो बच्चे के पलंग के पास गये और उन्होंने हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया। फिर अपना चोंगा समेटकर वे पलंगों की कतार में से निकलकर बाहर चले गये।

बाद की घटनाओं का ब्यौरा सिर्फ वृद्धा की जबान से पता चला। अगले रोज सुबह वह अपनी आदत के मुताबिक जल्दी उठी। करीब एक घंटे तक इंतजार करने के बाद भी जब पैनेलो कमरे से बाहर न निकला तो वृद्धा ने हिचकिचाते हुए कमरे का दरवाजा खटखटाया। पादरी अभी तक बिस्तर पर लेटा था, रात भर उसे नींद नहीं आयी थी। उसे सांस लेने में दिक्कत हो रही थी। चेहरा भी पहले से ज्यादा लाल था। वृद्धा ने विनीत स्वर में (यह वृद्धा का कहना है) कहा कि फौरन किसी डॉक्टर को बुला लेना चाहिए, लेकिन पादरी ने उसके सुझाव को बड़ी बदतमीजी से ठुकरा दिया। वृद्धा कमरे में चली आयी। इसके सिवा वह और कर भी क्या सकती थी।

अपना कर्तव्य निभाने के दृढ़ निश्चय से प्रेरित होकर वह हर दो घंटे बाद बीमार के पास जाती रही। पादरी की बेचैनी जो दिन भर जारी रही थी, उसे देखकर बुढ़िया को हैरत हुई थी। वह कंबल उतार कर फेंक देता था, फिर उसे ओढ़ लेता था। वह लगातार अपने पसीने से तर माथे पर हाथ फेरता जा रहा था। बीच-बीच में वह उठकर बिस्तर पर बैठ जाता था और भर्राये गले से खांसकर अपना गला साफ करता था।

दोपहर को उसने एक बार फिर पादरी से बात करने की कोशिश की, लेकिन पादरी के मुंह से सिर्फ चंद अनर्गल वाक्य ही निकले। वृद्धा ने फिर डॉक्टर को बुलाने का सुझाव दिया। इस पर पादरी उठकर बैठ गया और उसने दृढ़ निश्चय किया लेकिन घुटी हुई आवाज में इंकार कर दिया।

रियो दोपहर को पहुंचा। वृद्धा की सारी बात सुनने के बाद उसने उत्तर दिया कि पैनलो ठीक है, लेकिन शायद अब उसे बचाया नहीं जा सकता। फादर ने बिलकुल उदासीन भाव से रियो

का स्वागत किया था। रियो ने उसकी जांच की और उसे यह देखकर ताज्जुब हुआ कि सिवा फेफड़ों की रूकावट के, न्यूमोनिया या व्यूबोनिक प्लेग के कोई लक्षण नहीं थे, जो अक्सर नजर आते हैं। लेकिन नब्ज इतनी धीरे चल रही थी और पादरी की हालत इतनी चिंताजनक थी कि अब उसके बचने की बहुत कम उम्मीद थी।

रियो ने पादरी को बताया, 'आपके शरीर में प्लेग का कोई भी विशिष्ट लक्षण नहीं, लेकिन मैं ठीक से नहीं कह सकता, इसलिए आपको अलग वार्ड में रखना होगा।'

'मैं आपके पास ही ठहरूंगा,' रियो ने मृदु स्वर में कहा।

पैनेलो ने अधिक सजीवता दिखायी और डॉक्टर को देखकर उसकी आंखों में एक प्रकार का उत्साह आ गया। फिर वह बड़ी कठिनाई से बोला। यह कहना भी असंभव था कि उसकी आवाज में उदासी थी या नहीं। उसने कहा, धन्यवाद, लेकिन पादरियों के दुनिया में कोई दोस्त नहीं होते। वे अपना सर्वस्व ईश्वर को सौंप देते हैं। पादरी ने कहा कि उसे सलीब दे दिया जाये, जो पलंग के ऊपर टंगा था। वह मुंह फेरकर सलीब की तरफ देखने लगा। अस्पताल पहुंचकर पैनेलो ने मुंह से एक शब्द भी नहीं निकाला। उसने बिना किसी विरोध के अपना इलाज होने दिया। लेकिन क्षण-भर के लिए भी सलीब को अपने से अलग न होने दिया। पादरी को संदिग्ध हालत में देखकर रियो यह फैसला न कर सका कि उसे आखिर क्या बीमारी है। पिछले कुछ हफ्तों से प्लेग ने जैसे पकड़ में न आने का हठ कर रखा था। पैनेलों की अनिश्चित हालत का कोई परिणाम न निकला।

उनका बुखार बढ़ गया, दिन-भर खांसी जोर पकड़ती गयी, जिसने उसकी क्षीण देह को झकझोर दिया। रात को जाकर पैनेलो के फेफड़ों से वह चीज निकली जो उसका दम घोंट रही थी। यह लाल रंग की थी। तेज बुखार में भी पैनेलो की आंखों की शांति कायम रही। अगले दिन सुबह जब वह मरा हुआ पाया गया, उसका शरीर बिस्तर पर झुका हुआ था, तब भी उसकी आंखों से कुछ जाहिर न हुआ। पादरी के नाम के कार्ड पर लिख दिया गया - 'संदिग्ध केस।'

दोपहर के वक्त रियो कार से निकलकर सर्द हवा में आया, कुछ दूर उसे अभी ग्रांद की एक झलक दिखाई दी थी। ग्रांद एक दुकान की खिड़की के शीशे से चेहरा सटाकर खड़ा था। खिड़की के भीतर फूहड़ ढंग से तराशे हुए लकड़ी के खिलौने रखे थे।

ग्रांद ने खिड़की के शीशे में डॉक्टर की परछांई देखी। वह अभी भी रो रहा था। उसने अपनी गर्दन घुमायी और दुकान के सामने के हिस्से का सहारा लेकर खड़ा हो गया, उसने रियो को अपनी तरफ आते देखा।

'ओह, डॉक्टर, डॉक्टर।' इससे ज्यादा वह कुछ न कह सका।

वह जोर से कांप रहा था। उसकी आखों में बुखार जैसी चमक थी। रियो ने उसका हाथ छूकर देखा, हाथ बुखार से जल रहा था।

'तुम्हें घर जाना चाहिए।'

लेकिन ग्रांद ने अपना हाथ छुड़ा लिया और तेजी से भागने लगा। कुछ दूर जाकर वह रुक गया, उसने अपनी बाहें आगे फैलाकर घुमानी शुरू कर दी। फिर एक एड़ी के बल, लट्टू की तरह घूमने लगा और धम्म से फुटपाथ पर गिर पड़ा। कुछ लोग, जो नजदीक आ रहे थे, हठात् रूक गये और दूर से ही इस दृश्य को देखने लगे - उन्हें नजदीक आने की हिम्मत नहीं हो रही थी। रियो ने बूढ़े को उठाकर कार में पहुंचाना पड़ा।

ग्रांद बिस्तर पर लेटा था, उसे सांस लेने में दिक्कत हो रही थी, उसके फेफड़ों में सूजन आ गयी थी। रियो गहरे सोच में पड़ गया। बूढ़े के परिवार में कोई नहीं था। उसे अस्पताल ले जाने से क्या फायदा था? उसने सोचा कि वह और रियो मिलकर उसकी देखभाल कर लेंगे।

कुछ घंटे बाद देखा गया कि ग्रांद बिस्तर में आधा उठकर बैठ गया है। उसके चेहरे पर अचानक जो परिवर्तन आया था, उसे देखकर रियो भयभीत हो उठा।

रात भर रियो को ग्रांद की मौत का खयाल सताता रहा। लेकिन अगले दिन सुबह उसने देखा कि ग्रांद बिस्तर में बैठकर तारो से बातें कर रहा था। उसका बुखार उतरकर नार्मल हो गया था और

साधारण कमजोरी के सिवा उसके शरीर में कोई चिह्न नहीं दिखाई देता था।

अंधेरा होने तक खतरा टल गया था। ग्रांद के इस पुनर्जन्म का रहस्य समझना रियो की बुद्धि के परे की चीज थी।

हफ्ते के आखिर में जब रियो और तारो दमा के बूढ़े मरीज से मिलने के लिए गये तो उसके उत्साह का कोई ठिकाना न था।

'क्या आप यकीन करेंगे।' वे फिर बाहर निकल रहे हैं!'

'कौन?'

'अरे वाह, चूहे और कौन।'

अचानक कॉस्तेल के प्लेग निरोधक इंजेक्शनों को अक्सर ऐसी कामयाबी मिलने लगी जो अभी तक नहीं मिली थी। दरअसल डॉक्टरों के सारे अस्थायी इलाज जिनके अभी तक कोई नतीजे नहीं निकले थे, सब रोगियों पर असर करने लगे। ऐसा लगता था जैसे प्लेग का पीछा करके उसे घेर लिया गया हो और प्लेग की आकस्मिक कमजोरी से उसके इस्तेमाल होने वाले कुंद हथियार तेज हो गये।

मौत के साप्ताहिक आंकड़ों में इतनी भारी कमी हो गयी कि मेडिकल बोर्ड से मशवरा करने के बाद अधिकारियों ने यह घोषणा की कि अब यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि महामारी थम गयी है। विज्ञप्ति में यह भी कहा गया था कि अक्लमंदी से काम लेते हुए प्रीफेक्ट ने यह भी तय किया है कि शहर के फाटक पंद्रह दिन और बंद रखे जाएं और एक महीने तक प्लेग निरोधक तरीके इस्तेमाल में लाये जाएं। यह आशा प्रकट की गयी थी कि लोग निश्चय ही इस कदम की सराहना करेंगे। इस काल में अगर जरा-सा भी खतरा दिखाई दिया तो स्थायी आदेशों का कठोरता से पालन किया जायेगा और जरूरत पड़ने पर अगर अधिकारी उचित समझेंगे तो इस अवधि को अनिश्चितकाल के लिए बढ़ा दिया जायेगा। लेकिन सब लोग सहमत थे कि ये वाक्य सिर्फ सरकारी शब्दांडबर है। तारो पीठ के बल बिस्तर पर लेटा था, उसका भरकम सर तकिये में गहरा धंसा था और उसकी विशाल छाती पर चादर आगे की तरफ निकली हुई थी। उसके सिर में दर्द था और टेंप्रेचर बढ़ गया था। उसने रियो को बताया कि लक्षणों से तो कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती, लेकिन हो सकता है, वे प्लेग के ही लक्षण हों।

उसकी जांच करने के बाद रियो ने कहा, 'नहीं, अभी तक तो कोई निश्चित लक्षण नहीं दिख रहा।'

रियो सर्जरी में चला गया और जब वह लौटा तो तारो ने उसके हाथ में एक संदूक देखा, जिसमें प्लेग के सीरम की बड़ी शीशियां थीं।

तारो ने कहा, 'आह, तो यही मामला है।'

'कोई जरूरी नहीं, लेकिन हमें कोई जोखिम नहीं उठानी चाहिए।'

बिना कुछ कहे तारो ने अपनी बांह आगे बढ़ा दी और देरतक इंजेक्शन लगवाता रहा। ये वही इंजेक्शन थे, जो उसने खुद बहुत बार दूसरे लोगों को लगाये थे।

रियो शाम को घर लौटा। ओवरकोट उतारे बगैर ही वह अपने दोस्त के कमरे में आया। तारो जैसे निश्छल लेटा था, लेकिन उसके भिचे हुए होठों से जो बुखार से, सफेद पड़ गये थे, मालूम होता था कि उसने लड़ाई जारी रखी थी।

'कहो, कैसे हो?' रियो ने पूछा।

तारो ने चादर में से अपने चौड़े कंधों को जरा-सा उठाया और कहा, 'मैं मुकाबले में हार रहा हूं।'

दोपहर के वक्त बुखार अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया। बलगम मिली खांसी ने मरीज के शरीर को झकझोर दिया और अब वह खून थूक रहा था। गिल्टियों की सूजन खत्म हो गयी। रियो की आंखों के सामने उसका दोस्त महामारी की अंधकारमय बाढ़ में तड़प रहा था। रियो उसे तबाही से बचाने में असमर्थ था। वह सिर्फ निष्फल रूप से किनारे पर खाली हाथ, दुखित हृदय, निहत्था और असहाय खड़ा होकर मुसीबत के इस हमले का दृष्टा मात्र रह सकता था और अब अंत आया तो रियो की आखें आंसुओं से भर गयीं। वे असहायता के आंसू थे। उसने तारो को लुढ़ककर, दीवार की तरफ मुंह किये खोखली कराहट के साथ मरते नहीं देखा, लगता था जैसे उसके भीतर कोई जरूरी तार टूट गया था।

अंधेरे बंदरगाह में से म्युनिसिपैलिटी द्वारा आयोजित आतिशबाजी का पहला रॉकेट छूटा। शहर ने खुशी की एक लंबी आह के साथ उसका स्वागत किया। और सचमुच जब रियो ने शहर से उठती हुई खुशी की आवाजों को सुना तो उसे याद आया कि ऐसी खुशी हमेशा खतरे का कारण होती है। उसे वह बात मालूम थी जिसे खुशियां मनाने वाले नहीं जानते थे, लेकिन किताबें पढ़कर जान सकते थे। बात यह भी थी कि प्लेग का कीटाणु न मरता है, न हमेशा के लिए लुप्त होता है। वह सालों तक फर्नीचर और कपड़े की आलमारियों में छिपकर सोया रह सकता है। वह शयनगृहों, तहखानों, संदूकों और किताबों की अलमारियों में छिपक उपयुक्त अवसर की ताक में रहता है, फिर से चूहों को उत्तेजित करके किसी सुखी शहर में भेजने के लिए।

(संक्षिप्त रूपांतर : सुरेश उनियाल)

❑❑❑

हिरोशिमा के फूल

एदिता मोरिस

उसकी आंखें केवल ओहात्सु पर टिकी हैं। ओहात्सु बाग का छोटा-सा टुकड़ा पार करने के लिए अपने उड़ते हुए लंबे किमोनो में दौड़ी चली जा रही है और वह अपनी जिराफ-सी गरदन फैलाये उसे ताके जा रही है। 'आप छोटी बहन की बात का बुरा न मानें। उसे' मेरी बात पूरी होने से पहले ही वह पूछ बैठता है, 'अरे, वह सुंदर लड़की आपकी बहन है। बहुत सुंदर है,' फिर एकाएक उसके गाल लाल हो उठते हैं। मैं हंस पड़ती हूं।

एकाएक मेरे विचारों का सिलसिला टूट गया। अच्छा, छोड़ो, दरअसल, यह अमेरिकी युवक अपना रिजर्व कमरा छोड़कर हमारे यहां चले आने का फैसला कर लेता है। मैंने हल्के से उसे बता जो दिया है कि हमारे पास एक कमरा खाली है। अब येन की आमदनी के खयाल से मेरा मन हल्का हो रहा है। वह सीटल की एक जहाज कंपनी की तरफ से जापान के व्यावसायिक दौरे पर आया है।

वह अपने बारे में बहुत कुछ बताने के बाद कहता है, 'सच, यहां आपके पास रहने में बहुत मजा आयेगा,' तभी मेरा हाथ बाल ठीक करने के लिए ऊपर क्या उठता है, दिल धक्क रह जाता है कि कहीं किमोनो की बांह ऊपर उठ जाने से उसने मेरे दाग तो नहीं देख लिए। तभी खुशकिस्मती से कोई मुझे पुकार बैठता है और मैं भाग लेती हूं।

गली के निचले हिस्से से वृद्धा नाकानोसान मुझे आवाज देती है और मैं उसी क्षण उन्हें अमेरिकन युवक की नजर से देखने लगती हूं, कितनी गंदली और घुन खाई है यह। हिरोशिमा के विस्फोट से जिंदा बचे सभी लोगों की तरह।

'देखिए, मैं अपना सूटकेस न्यू हिरोशिमा होटल में डाल आया था तो मैं भागकर ले आऊं। पांच बजे तक लौट आऊंगा।' वह मुझे आगाह करना चाहता है। उधर नाकानोसान चिल्ला रही है, 'युका, युका!'

सड़ी मछली के एक ढेर से ठोकर खाकर मैं जैसे-तैसे पानी में गिरते-गिरते बचती हूं और नाकानोसान और बूढ़ी तापुरासान के पास पहुंचती हूं। हम तीनों खाली मैदान की तरफ चल देती हैं। अमेरिकन युवक हैरान होकर हमारी ओर देख रहा है। उसे मैंने बताया ही था कि अपने इन दोनों पड़ोसियों को मैं इस वक्त शौच के लिए खुले मैदान में ले जाती हूं।

'छोटी बहन, यह अमेरिकन युवक कुछ दिन हमारे यहां ठहरेगा।' मैंने ओहात्सु को सूचना दी तो वह भीतर ही भीतर

भड़क कर रह गई। फिर मैंने उसे समझाया कि वह विदेशी के साथ अच्छा व्यवहार करे। रात के खाने के बाद बाग में ले जाकर उसका दिल भी बहलाए, पर वह है कि चट से कह देती है, 'दीदी, मुझे यह हैरोसान अच्छे नहीं लगते।'

'पर तुम्हें इस आदमी से अच्छा सलूक करना है,समझीं।' ओहात्सु को समझा रही हूं मैं और वह शायद समझ भी गई है कि यहां उसकी सुंदरता को चारे की तरह इस्तेमाल किये जाने की बात हो रही है। अब देर हो चली है। ओहात्सु मेहमान के साथ बैठी हुई है। हर बार जब वह उसका प्याला भरती है तो अपनी कमर झुका फुसफुसाती है, 'तुम इतनी दुबली हो कि पता नहीं सांस कैसे लेती हो। इस सफेद किमोनो में तुम बिलकुल एक

एदिता मोरिस का पूरा नाम एडिथ (एडिटा) डगमार एमिलिया मॉरिस था। उनका जन्म 5 मार्च 1902 को स्वीडिश में हुआ। वे एक महान लेखक और राजनीति कार्यकर्ता थी। उनके पिता एक कृषि वैज्ञानिक थे। मोरिस ने अपने साहित्यिक जीवन की शुरुआत अटलांटिक मंथली, हार्पर बाजार और अन्य प्रकाशनों में लघु कथाओं से की। 1943 में उनका पहला उपन्यास 'मॉय डार्लिंग फ्राम द लायंस' प्रकाशित हुआ। 'द फ्लावर ऑफ हिरोशिमा' आपका चर्चित उपन्यास है। स्ट्रेट जैकेट, और सेवंटी ईयर्स वार आपकी आत्म कथा है। आपका निधन 1988 में पेरिस में हुआ।

छोटी-सी रूह नजर आती हो।' युवक ओहात्सु से कह रहा है। उसे क्या मालूम कि वह किसी भी ऐसी चीज से बेहद खौफ खाती है, जो मौत के साथ जुड़ी हो।

बातों-बातों में ओहात्सु उठकर भीतर भाग आती है और अंधेरे में खड़ी होकर मुझसे आ टकराती है, 'मुझसे कुछ मत कहो बड़ी बहन।' वह रूआंसी हो आई है। जाहिर है, अब मुझे उस परदेसी युवक का खयाल रखना होगा। वह आशंकित है कि ओहात्सु कहीं उससे नाराज तो नहीं हो गई। मैं उसे समझा देती हूं।

मैं अपने पति के लिए लंच-बॉक्स लेकर आई हूं। जब तक फ्यूमियो अपने बॉस से बातचीत पूरी नहीं कर लेता, मुझे इसी तरह बैठे रहना है। फ्यूमियो के साथ मैंने उतना वक्त नहीं बिताया, जितना उसकी प्रतीक्षा में। युद्ध और उसके बाद की नस्लों में लाखों-करोड़ों युवा जापानी पत्नियों की यह नियति है।

बैठे-बैठे मैं सोच रही हूं कि फ्यूमियो जब फौज में लिया गया था तब फ्यूमियो के बड़े-बड़े फौजी बूट देखकर मुझे कितना अजीब लगता था। तब वह कहता था, 'फौज बूट को पैरों में फिट नहीं करती, पैरों को ही बूट में फिट होना चाहिए' और हम हंसते रहते थे देर तक। फ्यूमियो का जर्द चेहरा देखकर मैं घबरा रही हूं इस वक्त। पर फिर सोचती हूं कि मुझे तनाव में नहीं आना चाहिए, नहीं तो नसें उसी तरह फटने को हो आयेंगी जैसा युद्ध के वक्त होता था, जब मेरे पेट में युद्ध के तनाव की वजह से बच्चे ठहरते ही नहीं थे।

काफी देर बाद जब फ्यूमियो को वक्त मिलता है तो उससे बातचीत शुरू करती हूं। इसी बीच अमेरिकी युवक भी आ गया है।

बातचीत और माहौल वह नहीं बन पाया, जो मैं चाहती थी। हम लोग बाहर आ गये और सैर को निकल लिये। हिरोशिमा की बगैर कोलतार की सड़कों पर हम बढ़े चले जा रहे थे।

'क्या सोच रही हो युका सान? बता दो तो तुम्हें एक पेनी।' सैम-सान अगली सीट से मुझे देखकर मुस्करा रहा है। मैं भला उसे क्यों बताने लगी कि मैं क्या सोच रही थी। कि मैं सोच रही थी कि मैं हरे रंग की पश्चिमी पोशाक पहन लेती। पर उसकी बाहें बहुत छोटी हैं और इसमे मेरी बाहों के दाग साफ नजर आ जायेंगे कि मैं सोच रही थी कि अब मेरी अपने बारे में सोचने की उम्र ही कहां रही?

विदेशी चारों तरफ देख रहे हैं। फिर पूछता है, 'तोक्यो की तरह यह शहर भी युद्ध के बाद फिर बना है न। तुम लोगों ने कमाल किया है।'

'हां-हां, सब कुछ नया है, फिर से बना है।' कुछ हो, मैं उसे यह नहीं बताना चाहती कि पुराना हिरोशिमा भी अभी जीवित है। इसे बहुत कम विदेशी देख पाते हैं। मैं थैले में से एक फटी हुई गाइड-बुक निकालकर पढ़ने लगती हूं, 'क्या तुम सुन रहे हो सैम-सान।'

शोरगुल कुछ ज्यादा ही बढ़ा है। मैं और जोर से पढ़ती हूं। '6 अगस्त, 1945 तक हिरोशिमा तीन सौ साठ साल की आबादी का एक सम्पन्न समुद्री बंदरगाह था, लेकिन उस दिन की सुबह यह महानगर धरती की सतह से अदृश्य हो या।'

उफऽऽऽ ये काम मैं नहीं कर सकती। गाउड बुक कहती है कि आठ-पंद्रह से आठ-सोलह के बीच साठ हजार घर जलकर राख हो गये और एक लाख आदमी झुलस गये या चीथड़े हो गये। एक-एक संख्या के पीछे से दर्द भरे इंसानी चेहरे मुझे घूरते नजर आते हैं। घबराकर मैं पढ़ना ही बंद कर देती हूं, 'इस शोर में तो सुन पाना भी मुश्किल ही है।'

एक मुसीबत से बची तो दूसरी मुसीबत सामने थी। अब हम 'एटमबम अजायबघर' के सामने से निकल रहे हैं। टूरिस्ट अपने कैमरे लटकाये यहां के ध्वंसावशेषों और उनकी तस्वीरों का संग्रह देखने को टूटे पड़े रहे हैं। सैम-सान यह भी तो नहीं जानता कि यह किस किस्म का अजायबघर है।

अनायास फ्यूमियो की हालत खराब हो गई है। सैम-आन

उसे अस्पताल ले जाना चाहता है, पर उसे पता नहीं कि जापान में अस्पताल जाने का मतलब क्या होता है। कहीं फ्यूमियो के बॉस को पता चल गया तो बड़ी मुश्किल से हम घर की तरफ बढ़ रहे हैं, सैम-सान की आंखें भौचक्क हैं, जैसे कह रही हों कि उन्हें कुछ भी समझ में नहीं आ रहा। मैं चाहती हूं कि वह न ही समझे तो बेहतर है। अभी तो उसने हमारी दीवार के उस पार देखा ही नहीं। मैं चाहती हूं कि वह हिरोशिमा के बारे में अजाना ही रहे तो अच्छा है।

यह फ्यूमियो स्टोर कितना प्यारा है। मैं अपने किरायेदार के साथ घूम रही हूं। मुस्करा रही हूं, बगैर यह प्रकट किये हुए कि मैंने इसी दुकान को सारे सामान के साथ गारा होते हुए देखा है। इंसान की हड्डियों को उसके मलबे में मिलते देखा है।

सैम-सान ओहात्सु के लिए ढेर सारा सामान खरीदता है और गरीब जापानी लोग फटी आंखों देखते रह जाते हैं।

जरा-सी चूक हो जाने से वह भी हो ही गया जो नहीं होना चाहिए था। माएदा-सान मेरी तीन पड़ोसिनो के साथ हाजिर था। उसी ने सैम-सान को बताया कि अब वे सब शहर के सार्वजनिक हमाम में स्नान नहीं कर सकते। मैं चाहती थी कि बात इधर-

उधर हो जाये पर सैम-सान भी कम जिद्दी नहीं था। चाय की परवाह न करते हुए उसने चट से पूछा, 'क्यों नहीं कर सकते?'

'अपने चकत्तों के कारण।' मेरा मित्र माएदा-सान भोलेपन में जवाब देता है, 'विस्फोट से पैदा हुए चकत्तों के कारण। तुम्हें नहीं मालूम शायद।'

कि तुम एक एटमबम से आहत आदमी से बातचीत कर रहे हो। हम लोग, यानी हम पांच लोग, एटमबम से बच रहे एक लाख व्यक्तियों में से सिर्फ पांच हैं। हममें से कई बुरी तरह जल गये। जख्म कितने हुए यह तो खैर भूल ही जाओ। यही कारण है कि स्वस्थ शरीर वाले हिरोशिमावासियों को, जो युद्ध के बाद यहां पहुंचे हैं, हमारे शरीर पर बने तमाम तरह के दाग और जख्मों को देखकर उबकाई आती है।

मैं स्थिति संभालने की गरज से चाय वहीं ले जाती हूं और इशारे से माएदा-सान को चुप भी कराती हूं, पर वह है कि चुप होने नहीं देता। घास पर घुटने टिकाये बैठी महिला की ओर इशारा कर, वह फिर बताना शुरू कर देता है, 'यह हरादा सान, एटम बम के शिकार लोगों का एक सही उदाहरण है। इसने मुझसे कहा था कि आप इसके बदसूरत चेहरे को देखकर कहीं डर न जायें। वह महसूस करती है कि उसका चेहरा बहुत सपाट है।'

सैम-सान का चेहरा पीला पड़ गया है। माएदा-सान बोलता जा रहा है, 'मेरे दोस्त, मुद्दत हो गई हरादा-सान को दिल खोलकर हंसे हुए।'

यदि सैम-सान जापानी होता तो यही जताता जैसे कुछ हुआ ही न हो। हिरोशिमा के बाहरी खोल के भीतर की पहली ही झलक ने उसे बुरी तरह विचलित कर दिया है। मेहमानों के जाने के बाद वह बाग में चक्कर काटे जा रहा है।

मैं अंदर चली जाती हूं। मैं समझ रही हूं कि वह इस वक्त एकांत चाहता है।

'फूलों के कीड़े। ओह, मैं कोई ऐसी दुनिया चाहती हूं, जिसमें ये कीड़े न हों।' ओहात्सु अपनी फूलों की क्यारी में घुटने के बल बैठकर एक सफेद पैंजी से कीड़ा निकालती है और फूल

के विकृत चेहरे को चिंतित नजरों से देखती रहती है।

छोटी बहन के साथ फूल की क्यारी में घुटने टेककर बैठना मुझे अच्छा लगता है, पर मैं चाहती हूं कि ओहात्सु जो कुछ भी किया करे, उसमें इतनी ज्यादा भावुकता न भरे। वह मुझसे पूछती है, 'बड़ी बहन, मैं तुमसे प्यार के बारे में कुछ पूछना चाहती हूं। क्या तुम इस पर यकीन करती हो?'

'ओह।' मुझे धीमे से हंसी आ जाती है। पहली नजर के जिस प्यार का उसने जिक्र किया था, मैं समझ जाती हूं कि वह हैरी-सान को लेकर ही होगा। ओहात्सु के लिए एक अमेरिकी पति, शायद वह उस आदमी की बांहों में चैन की नींद सो सके, जिसके लिए मुसीबतें अजनबी हैं। मैं झूठ बोल देती हूं, 'हां, बिलकुल।'

'तो तुम मुझे मेरी इच्छा से विवाह कर लेने दोगी?'

'हां-हां, बिलकुल।'

बात आई-गई हो गई और फिर जब बूढ़ी नागा-सान ओहात्सु के विवाह की बात लेकर आई तो ओहात्सु घर से ही गायब हो ली। जैसे-तैसे यह पता लग पाया कि नागा-सान ओहात्सु का विवाह एक सम्मानित प्रौढ़ से करवाना चाहती है,'हां-हां, मेरी लडकी। हमें सच्चाई का सामना करना चाहिए। तुम्हारी युवा बहन की आज मांग है, लेकिन कल?'

किस प्रकार के बच्चे ओहात्सु पैदा करेगी? आजकल हिरोशिमा में तुम्हारे जैसे एटमबम से बचे लोगों की बहुत चर्चा है कि उनके अजीब तरह के बच्चे होंगे। मेरे कहने का मतलब है कि हमें जल्दी करनी चाहिए। तुम जानती हो कि एटमबम से बची लड़की को कोई भी परिवार अपनी बहू बनाना नहीं चाहता। फिर भी यह आदमी।

हम एक-दूसरे की तरफ बनावटी ढंग से मुस्कराती हैं। वह जानती है कि उसने मैदान पार कर लिया है। वह मुझे अशांत छोड़कर चली गई है।

लंबी सर्दी के बाद, खिले चेरी के वृक्ष के नीचे बैठना अच्छा लगता है। हम सब पिकनिक के मूड में बैठ गये हैं। मैं सबके बीच हूं।

बातचीत और हो-हल्ले के बीच कब समय निकल गया, कुछ पता ही न चल सका। ओहात्सु मुझे उठाती है, 'वहां, वहां, वह है।' वह चीखती है।

'कौन, माएदा-सान?'

'नहीं-नहीं, मेरा मित्र, जिसके बारे में मैंने तुम्हें कल बताया था। वह रहा हिरू, जो गहरे हरे रंग का किमोनो पहने खड़ा है।' फिर वह मुझे बताती है कि उसका युवा प्रेमी एक कलाकार है। माएदा-सान का एक शिष्य। कलाकृतियां कम बिक पाने के कारण वह अखबारों में फोटोग्राफी करता है।

'तो क्या हुआ?' मैं पूछती हूं।

वह कहती है, 'वह मुझसे विवाह करना चाहता है।'

'वह कुछ कहे और मैं जवाब दूं, इससे पहले ही वह युवक हमारी ओर बढ़ा चला आ रहा था। मैं कुछ विचार करती, इससे पहले ही ओहात्सु ने मेरा परिचय करा दिया, ये हैं, हिरू शिमिजु।' और मैं मुस्कराकर रह जाती हूं। तब तक मेरा परिवार और सैम-जान भी वहीं आ पहुंचते हैं। मुझे ओहात्सु के प्रेमी से उन सबका परिचय करवाने में खासी झिझक महसूस होती है। मैं देख रही हूं कि परिचय कराने के तुरंत बाद ही मेरे किरायेदार का चेहरा लटक गया है।

पार्टी है। सभी लोग मस्त हैं। तभी फ्यूमियो अनायास कलाबाजी खाता हुआ जमीन पर लेट जाता है। मेरे सिवाय सभी हंस रहे हैं। मैं उसके करीब घुटनों पर गिर जाती हूं।

'मैं उठ नहीं सकता, मगर तुम उन सबको नहीं बताना। उनकी शाम खराब हो जायेगी।' मैं समझ जाती हूं, यह वही बीमारी है।

'संयोग का हमारी जिंदगी में कितना बड़ा स्थान है।' मैं सोच रही हूं। अगर फ्यूमियो छः अगस्त सन् 1945 के रोज फौज से छुट्टी लेकर हिरोशिमा न आया होता तो वह निश्चित रूप से यहां न होता और अगर यहां न होता वह, तो उन ढेर-की-ढेर लाशों में एक-एक लाश उठाकर मुझे न ढूंढ़ता और न ही रेडिएशन की बीमारी से ग्रस्त होता। पर अब क्या होगा?

अब वह अस्पताल में है। मैं सेब लेना चाहती हूं। 'मंहगे सेब, मैं असल में कुछ खरीद नहीं सिर्फ देख रही हूं।' सेल्स गर्ल से झूठ बोलना पड़ता है, पर जैसे ही उसे पता लगा कि मेरा पति रेडिएशन की बीमारी वाले सेक्शन में है उसने तुरंत मुझे सेब थमा दिया, 'ले लो, यह तुम्हारा है। मेरा पूरा परिवार एटमबम से जल गया था। मुझे क्षमा कर देना।' मुझे लगा जैसे उसने अपनी उंगलियां बढ़ाकर मेरे दिल को छू लिया हो।

सैम-सान बुरी तरह झुंझलाया नजर आता है। अभी उसे पता चला है कि फ्यूमियो से नहीं मिलने देना चाहती। उस आजाद परिंदे को भी कहीं हिरोशिमा की त्रासदी देखने को मिल गई तो वह कहीं का न रहेगा, तुम घर चलकर मेरा इंतजार क्यों नहीं करते। फ्यूमियो के पास जाने की इजाजत किसी को नहीं है। पर तभी डॉ. दोमोत आकर उसे सगर्व अपना विभाग देखने का आग्रह करता है। यह तो वही हो गया, जो नहीं होना चाहिए था।

'इस बेड के आदमी के बीस ऑपरेशन हो चुके हैं।' दोमोत सैम-सान को बताता है, 'यह लडका एटम का युवा शिकार है। इसका एक तिहाई जिस्म विस्फोट के निशानों से भरा पड़ा है।' फिर वह जापानी में बोलने लगता है तो सैम चाहता है कि मैं उसका अनुवाद कर दूं। मैं उसे समझाती हूं, 'डाक्टर बता रहे हैं कि एटम के रोगी अंदर और बाहर दोनों तरफ चोटें झेलते रहते हैं। बम के निशान तो एकबारगी मिट भी सकते हैं पर चोट के भीतरी आघात का कोई इलाज नहीं। यह जो लड़का लेटा है, इसकी आंखों के पपोटे बम के विस्फोट से जड़ हो गये हैं। चौदह साल से यह खुली आंखों सो रहा है। इसके दोनों कानो के ढकने भी गायब हैं। मुंह तो तुम खुद ही देख रहे हो।' मैं अच्छी तरह देख पा रही हूं कि हमारा किरायेदार हताशा में डूब और उतरा रहा है।

मैं रात को किमोनो उतारकर युकाता पहने दबे पैरों फर्श पार करती हूं ताकि मेरा मुटल्ला लड़का न जाग जाये। रसोईघर में जाकर एक प्याला गरम चाय बना लूं ताकि मेरा अकेला शरीर गर्मी पा सके। शरीर, जिसका साथी अब नहीं रह गया है।

यामागुची-सान सुबह-सुबह आ धमका है, 'मैं तुम्हारे पति से मिलना चाहता हूं।'

हे भगवान अब इससे क्या कहूं, 'मेरे पति ओसाका गये हैं।' मैं साफ झूठ बोल जाती हूं। मैं उसका परिचय अपने अमेरिकी किरायेदार से करवाती हूं। सैम-सान मुझसे कुछ पूछना चाह रहा है और बहुत सोच-विचार के बाद मेरी जबान खुल पाती है कि हम लोग जो एटम के शिकार हैं। समाज से किस तरह बहिष्कृत हैं। हमारे जख्मों को देखकर लोग किस तरह वितृष्णा से भर उठते हैं।

सैम मेरा हाथ थाम लेता है। उसे क्या पता कि यह बांह जख्मों से भरी है और जख्म युकाता के भीतर छिपे हैं।

सैम, बार-बार मेरी बेटी मिचिको के अकेलेपन में खोये रहने पर भी चर्चा करना चाह रहा था और सोच रही थी कि जो कुछ अकेले में मिचिको देखती है, वह कोई और देख ही कैसे सकता है।

ओहात्सु की पार्टी में जब सैम को उस जाति के बारे में विस्तार से सूचना मिलती है कि रेडियेशन ग्रस्त लोगों की एक जाति ही बन गई है तो वह भाव विह्वल हो उठता है। उसे लगता है

कि उसे डाक्टर ही होना चाहिए था। वह निहायत संवेदनशील है और जीवन के प्रति खास तरह का अनुराग रखता है।

पार्टी में सैम अन्यमनस्क ही रहा। फिर एकाएक उसने मुझे अपनी बांहों के घेरे में लेकर सटा लिया और मेरे भीतर एक लहर दौड़ गई।

धीरे-धीरे सैम ज्यादा ही जुड़ता चला जा रहा है। एक रोज वह फ्यूमियो को देखने पहुंचा तो बोला, 'युका, मैं फ्यूमियो से दो शब्द कह सकता हूं?' फिर मेरे कान में आकर फुसफुसाया, 'तुम्हें एतराज तो नहीं।'

'देखो, मुझे बात कहनी नहीं आती,' वह शुरू करता है, 'लेकिन मैं तुम्हें धन्यवाद करना चाहता हूं फ्यूमियो, तुम्हें मालूम है, तुम्हारे ही जरिए मैंने हिरोशिमा का अर्थ जाना है। यह वह चीज है, जिसे ज्यादा लोग नहीं जानते। मैं कुछेक लोगों को बताऊंगा।'

मैं अनुवाद करते हुए फ्यूमियो को समझाती हूं तो वह सैम से आंखें मिलाता है। एकाएक फ्यूमियो के चेहरे में चमक आ जाती है और सैम के चेहरे पर लहू दौड़ जाता है। मुझे लगता है कि कुछ क्षणों के लिए पूरा ब्रह्मांड ठहर गया है।

समय के साथ-साथ हम और करीब आ गये हैं, मैंने सैम को मां के न रहने का वृत्तांत भी बताया। जो दृश्य मुझे बहुत साफ-साफ याद थे, उसे स्मृतियों के आधार पर दिखाने की कोशिश की। हिरोशिमा का शहर आग की लपटों से घिरा है। मैं कैसे उस रोज, सड़कों में भागती फिरी थी। मामा-सान और ओहात्सु के साथ हमारे कपड़े विस्फोट से चिथड़े-चिथड़े होकर उड़ गये थे। हम करीब-करीब निर्वस्त्र ही थीं। आग के गोले हवा में उड़ गये थे। सड़कों का कोलतार उबल-पिघल गया था।

कितने कुत्ते जिंदा भुन गये थे। मुझे याद है, वे कितना आर्तनाद कर रहे थे। मामा भी पानी में कूदने से पहले जरूर चीखी होगी।

❑❑❑

एक अजीब आदमी का सपना

फ्योदेर दोस्तोयव्स्की

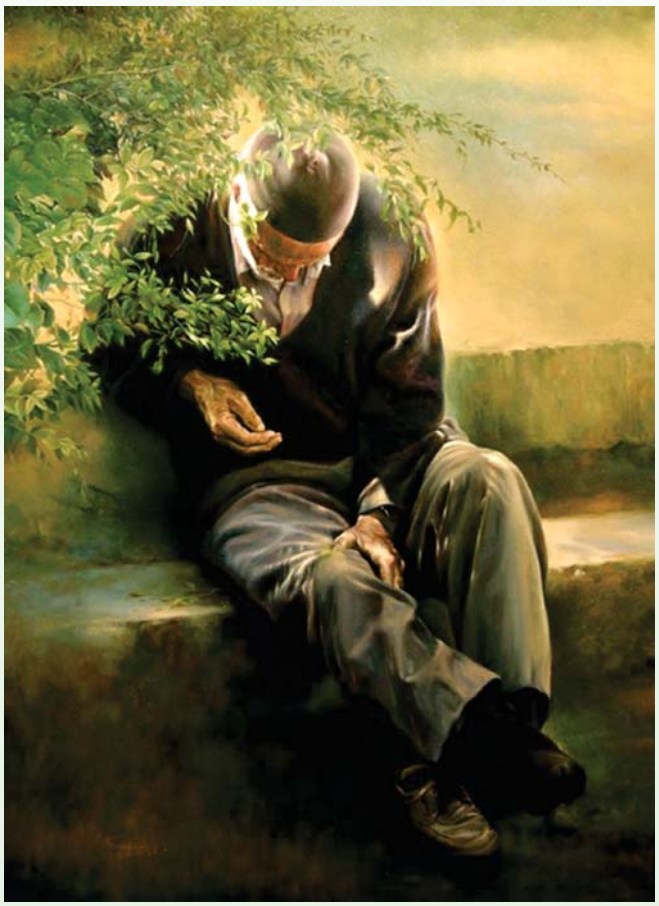

मैं भी बस अजीब ही हूं। लोग मुझे पागल कहते हैं, पर मैं इसे अपना बड़प्पन मानता हूं कि मैं उनके लिए पहले जैसा आदमी नहीं रहा। अब मुझे उन पर गुस्सा नहीं आता, बल्कि प्यार आता है, चाहे वे मुझे पर हंसते ही क्यों न रहें। मैं उन्हें बेहद चाहता हूं। पहले से कहीं ज्यादा। उनके साथ-साथ खुद भी हंस देता हूं। इसलिए नहीं कि मुझे अपने-आप पर हंसी आती है, बल्कि इसलिए कि मुझे उनसे प्यार है। काश उनकी तरफ देखकर मुझ पर उदासी तारी न हो। हां उदासी, क्योंकि वे नहीं जानते कि सच क्या है। मगर वे इसे कभी नहीं मानेंगे, कभी भी नहीं।

पहले-पहल मैं इस मामले को लेकर काफी दुखी रहता था, क्योंकि मैं अजीबोगरीब लगता था। लगता ही नहीं था, बल्कि मैं था। मैं हमेशा बेतुका ही रहा हूं। यह बात शायद मैं जन्म से ही जानता हूं। तब मैं बमुश्किल सात साल का था, जब मुझे एहसास हुआ कि मैं अजीब आदमी हूं।

मैं पाठशाला में पढ़ा, फिर विश्वविद्यालय में, ज्यों-ज्यों मैं पढ़ता रहा, त्यों-त्यों मुझे यही महसूस होता रहा कि मैं अजीब हूं। मेरा विश्वविद्यालय का सारा ज्ञान, जिसमें मैं जितना भी गहरा उतरा, सिर्फ यही जाहिर और साबित करता रहा कि मैं अजीब आदमी हूं, हर पहलू से अजीब। फिर जिंदगी ने भी तो मुझे यही सिखाया।

इस तरह मेरा यह एहसास दिन-ब-दिन गहरा होता चला गया। हर कोई हमेशा मेरा मखौल ही उड़ाता रहा। मगर इस बात को न तो कोई ताड़ ही सकता था और न किसी को कोई जानकारी ही थी। अगर कोई प्राणी इस धरती पर सचमुच जानता था तो वह मैं ही था। अगर उन्हें इसकी जानकारी होती तो यह अपमानजनक होता। फिर इसमें सारा दोष भी मेरा ही था। मैं इतना घमंडी था कि किसी के सामने न तो यह बात मंजूर करने को तैयार था और न ही किसी की कोई बात मानता ही था। बाद के वर्षों में तो मेरा अहं आकाश को छूने लगा। अगर कभी किसी के समक्ष मुझे स्वीकार करना पड़ जाता कि मैं बेतुका हूं, तो यकीन मानिए, मैं उसी रात खुद को गोली मारकर आत्महत्या कर लेता। अब क्या बताऊं कि अपनी जवानी के दिनों में मैंने कितने कष्ट झेले। सदा यही डर बना रहता था कि यह बात मुझे पचेगी नहीं, बता ही बैठूंगा किसी न किसी संगी-साथी को, अचानक।

अपनी नाजुक हालत का एहसास मुझे कांटे की भांति चुभता रहा। पर अब मैं गबरू जवान हो गया था और किसी कारण तनिक शांत रहने लगा था। किसी कारण, मैं कहता जरूर हूं, पर अभी तक स्पष्ट रूप से कुछ नहीं बता सकता। शायद इसलिए कि सहसा एक बात मेरे मन में पैठ गयी। बहुत बड़ी बात। मुझसे भी बड़ी, मेरे जेहन में यह धारणा घर कर गयी थी कि इस धरती पर, कहीं भी जाओ,

फ्योदेर दोस्तोयव्स्की एक रूसी उपन्यासकार, लघु कथाकार, निबंधकार और पत्रकार थे। आपकी कृतियों में 19वीं सदी के रूस के अशांत राजनीतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण में मानवीय स्थिति का रेखांकन है।आपका जन्म 11 नवम्बर 1821 को मास्को, रूस में हुआ था। आपको विश्व प्रसिद्ध नाटक ईडियट के लिए जाना जाता है क्राइम एंड पनिशमेंट, द इडिएट, डेमन्स, द ब्रदर्स करमाज़ोव आपकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।9 फरवरी 1881 को सेंट पीटर्सबर्ग में आपका निधन हुआ।

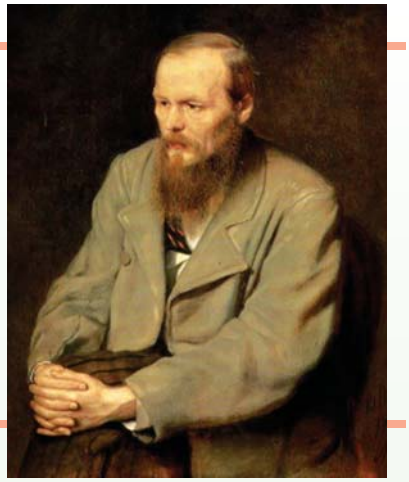

सब बराबर है। यह शक वैसे तो मुझे पहले भी हुआ था, मगर इस पर अडिग विश्वास मुझे पिछले साल ही हुआ।

सब कुछ पलक झपकते ही हो चुका था। अचानक मुझे महसूस हुआ - यह संसार है या नहीं, मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता। क्योंकि कहीं कुछ भी तो नहीं था मेरे लिए। मुझे एहलाम होने लगा। कि मुझसे पहले यहां कभी कुछ था ही नहीं। फिर मुझे शक-सा हुआ कि नहीं, अतीत में बहुत कुछ था। मगर बाद में यही तय पाया कि नहीं, इससे पहले कुछ नहीं था, बेशक ऐसा कुछ आभास जरूर होता था।

फिर भी सच्चाई का पता मुझे बहुत बाद में जाकर लगा। यह घटना पिछले नवंबर की है, तीन नवंबर की। तब से अब तक हुई कोई भी बात पूछ लीजिए, मुझे याद है।

वह बेहद उदास रात थी। असंभव उदास। दस कभी के बज चुके थे।

मैं अपने घर की तरफ जा रहा था। सारा दिन बारिश पड़ती रही थी, ठंडी, उदास। मैं सोच रहा था कि इससे अधिक उदास कोई पल कभी नहीं हुआ होगा। बारिश आदमी के वास्ते प्रायः शुभ लक्षण होती है, मगर उस दिन वह भयावह और दुखदायी बनी रही थी। अब गली में ठंडी तथा कड़क सीलन भरी ठंड थी और इधर-उधर जलते गैसों का धुंध में ठिठुरा उजास मन को और भी उदास कर रहा था। मुझे लगा कि अगर इस वक्त तमाम रोशनी लुप्त हो जाये तो माहौल कुछ आनंददायक हो जायेगा।

तभी मेरी निगाह आसमान की तरफ उठ गयी, जो भयंकर रूप से काला हो रहा था। फिर भी मैं बादलों की टुकड़ियों और उनकी बीच की खाली तथा काली जगहों और अथाह पाटों को साफ-साफ पहचान सकता था। उनमें से एक पाट में से सहसा मुझे एक नन्हां तारा दिखाई दिया। मैं टकटकी बांधकर उसे ही झांकने लगा। उसे झांकते-झांकते मुझे एक सूझ सूझी - मैंने निश्चय कर लिया कि आज रात को मैं आत्महत्या जरूर कर लूंगा।

दो महीने पहले भी मैंने आत्महत्या करने का दृढ़ निश्चय किया था, बेशक मैं बहुत गरीब था, फिर भी मैंने एक बहुत बढ़िया पिस्तौल खरीदी और उसी दिन उसमें गोलियां भी भर लीं।

अब हालांकि दो महीने गुजर चुके हैं लेकिन भरी-भरायी पिस्तौल आज भी मेरी मेज की दराज में पड़ी है। उन दिनों मैं बेपरवाही के आलम में था। मैं चाहता था, कोई ऐसा दिन चढ़े जब मैं इस हालत से बरी हो जाऊं। भला क्यों? यह मैं नहीं जानता, इसलिए दो महीने तक जब भी मैं घर पहुंचता, मेरे मन में बराबर यही ख्याल घुमड़ने लगता कि मैं आत्महत्या कर लूंगा। मगर वह घड़ी नहीं आयी, उसकी मैं प्रतीक्षा ही करता रहा।

अब इस नन्हें तारे ने मेरे मन में फिर वही हलचल पैदा कर दी और मैंने फैसला कर लिया कि आज की रात हर हाल मैं अपनी जान ले लूंगा। इस छोटे-से तारे ने मेरे मन में यह ख्याल क्यों पैदा कर दिया, मैं नहीं जानता।

अभी मैं खड़ा आकाश में ही झांक रहा था कि एक बच्ची ने आकर मेरी बांह पकड़ ली। सुनसान गली थी। आसपास भी कोई नहीं दिखाई दे रहा था। दूर एक कोचवान अपने इक्के में सोया हुआ था। लड़की होगी कोई आठ-एक साल की। उसने पतले सूती कपड़े की फ्रॉक पहने हुई थी और सिर पर एक छोटा-सा रूमाल बांध रखा था। वह एकदम भीगी हुई थी। उसके जगह-जगह से टूटे हुए पानी से सराबोर जूते तो मुझे अब भी याद आ रहे हैं। मेरा ध्यान बार-बार उनकी तरफ चला जाता था।

वह अचानक चीख उठी और मुझे खींचने लगी, वह रोई नहीं थी, पर कैसे न कैसे सहसा उसके मुंह से चीखों जैसे कुछ शब्द निकले थे। साफ-साफ तो वह बोल ही नहीं पा रही थी, क्योंकि मारे ठंड के उसका जिस्म ठिठुरा जा रहा था। वह किसी बात से भयभीत लगती थी और मायूस होकर चीखी थी, 'मेरी

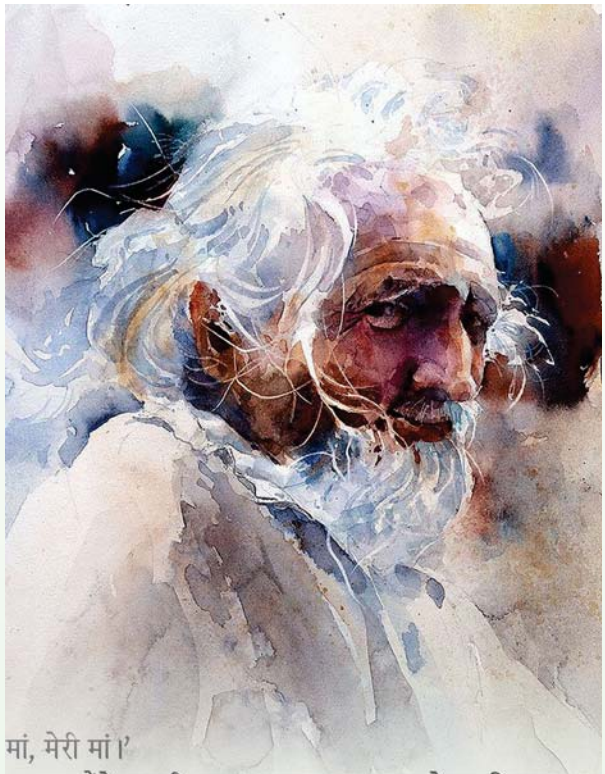

मां, मेरी मां।'

मैंने उसकी तरफ अपना आध-एक चेहरा फिराया, पर बोला नहीं, मैं चलता गया। वह मेरे साथ-साथ भागती रही और मेरी बांह पकड़े मुझे खींचती रही। उसके स्वर में एक ऐसी आवाज थी जो बहुत ही डरे हुए लोगों के मुंह से निकला करती है।

मैं उस आवाज को जानता हूं। चाहे वह स्पष्ट रूप से कुछ नहीं बोली, किंतु मैं जान गया था कि उसकी मां कहीं मर रही है या उनके साथ कोई हादसा घट गया है और वह वह किसी को बुलाने या कुछ ढूंढ़ने के वास्ते भागी आयी है ताकि मां की कोई मदद कर सके।

मगर मैं उसके साथ नहीं गया, बल्कि इसके बरक्स मेरे जी में आया कि मैं उसको दूर भगा दूं। पहले मैंने उसे कहा कि वह किसी पुलिस के आदमी को ढूंढ़े। पर उसने एकदम अपने दोनों हाथ

बांधे मेरे साथ-साथ भागना जारी रखा। वह मेरी मिन्नतें करते-करते हांफ गयी, पर उसने मेरा पीछा नहीं छोड़ा।

मैंने पांव पटककर दबका भी मारा। फिर भी गिड़गिड़ाती हुई बोली, 'कृपा करके हुजूर, हुजूर।'

फिर भी मुझ पर कोई असर न होता पाकर सहसा उसने मेरा पीछा छोड़ दिया और भागती हुई गली पार कर गयी। मैंने देखा, एक और आदमी वहां से गुजर रहा था। जाहिर है कि वह मुझे छोड़कर उसकी तरफ दौड़ गयी थी।

मैं अपने आवास-गृह की पांचवीं मंजिल पर जा चढ़ा, जहां मैंने एक कमरा किराये पर लिया हुआ था। मेरा कमरा छोटा और दरिद्रता की मुंह बोलती तस्वीर था, जिसमें सिर्फ अटारी पर एक अर्धवृत्ताकार खिड़की थी। मेरे पास मोमजामे से ढंका हुआ एक सोफा, मेज पर कुछ किताबें, दो कुर्सियां और एक आरामकुर्सी थी। आराम कुर्सी पुराने वक्तों की बनी हुई थी। बाबा आदम के जमाने की।

मैं आरामकुर्सी पर बैठ गया, मोमबत्ती जलायी और सोचने लगा। मेरे बगल वाले कमरे में, दीवार की पिछली तरफ शोर-शराबा हो रहा था। यह क्रम पिछले चार दिनों से जारी था। उस कमरे में एक पेंशनिया कप्तान रहता था। उसकी कई दोस्त महिलाएं गयी हुई थीं। लगभग आधा दर्जन सुंदरियां थीं। सबने वोदका पी रखी थी और अब वे ताश फेंटती हुई जुआ खेल रही थीं। पिछली रात उनमें हाथापाई भी हो गयी थी और मुझे मालूम है कि उनमें से दो जनीं कितनी ही देर एक-दूसरी को बालों से पकड़कर उठा-पटक करती रही थीं। घर की मालकिन थाने में शिकायत करना चाहती थी किंतु वह कप्तान से डरती थी।

भाड़ में जाये। जो करते हैं करते रहें। सोचकर मैं बड़े निर्लिप्त भाव से कुर्सी पर बैठ गया। फिर मैंने पिस्तौल निकाली और अपने सामने रख छोड़ा। जब मैंने पिस्तौल वहां रखी थी, मुझे याद है, मैंने अपने-आप से पूछा था, 'क्या तू यह कर सकेगा?' और मैंने दृढ़ निश्चय करके जवाब दिया था, 'हां, मैंने फैसला कर लिया है।'

फैसला यही कि मैं खुद को गोली मार लूंगा। मुझे मालूम था कि उस रात मैं अपने-आपको गोली मार लूंगा, मगर मैं मेज के पास कितनी देर बैठा रहूंगा, यह नहीं मालूम था। अगर वह छोटी-सी बच्ची याद न आ जाती तो मैं जरूर खुद को गोली से उड़ा देता।

देखिए, दरअसल, बात यह है कि चाहे मुझे कोई परवाह नहीं थी, फिर भी मुझे काफी दुख हुआ। अगर कोई मारे तो मुझे दुख तो होगा ही न। बिलकुल यही बात नैतिक भावना के मामले में भी लागू होती है अगर कोई दर्दनाक घटना घटे तो मुझे तरस आयेगा, जैसे कि जीवन में लापरवाह होने के पहले मेरे साथ हो जाता था। मैं उस बच्ची की मदद जरूर करता। मगर अब मैंने उसकी मदद क्यों नहीं की? ऐसा इसलिए हुआ कि मेरे मन में एक विचार आ गया था। जब वह मुझे खींच रही थी, बुला रही थी, तब अचानक मेरे सामने एक सवाल आ खड़ा हुआ था, जिसका जवाब मैं नहीं दे सका।

सवाल मामूली सा था, पर मैं खीज उठा, क्योंकि मैंने पहले से ठान रखा था कि आज रात मुझे अपना अंत ही कर लेना है तो मैं किसी की परवाह क्यों करूं। फिर भी मैंने परवाह की तो क्यों की? मुझे उस बच्ची पर तरस क्यों आया? मुझे याद है, बहुत ही रहम आया था, रहम ही नहीं बल्कि दुख भी हुआ। मेरी जो

हालत हो चुकी है, उसे देखकर आपको विश्वास नहीं होगा कि मैंने यह सब महसूस किया होगा, लेकिन सच जानिए, अपनी उस दशा का मैं इससे स्पष्ट हाल बयान नहीं कर सकता। घर पहुंचकर जब मैं कुर्सी पर बैठ गया, तब भी मेरी हालत ऐसी ही रही। खीजा तो मैं बहुत देर से हुआ था, अब और भी खीज गया। एक के बाद दूसरा विचार मुझे बेचैन करता रहा।

यह तो स्पष्ट था कि मैं आदमी था और अभी सिफर नहीं हुआ था और जब तक मैं सिफर नहीं बन जाता तब तक मैं जीता-जागता था। इसलिए मैं अपने व्यवहार के कारण यातना झेल सकता था, गुस्सा हो सकता था और शर्म महसूस कर सकता था।

तिस पर, मान लीजिए कि अब से दो घंटों के अंदर-अदर मुझे अपने-आपको खत्म कर देना है, तो मैं सोच सकता हूं कि वह बच्ची मेरी क्या लगती है। हया या इस धरती पर किसी भी चीज से मेरा क्या वास्ता है? मैं तो खत्म हो रहा हूं, बिलकुल सिफर बन रहा हूं। मेरा वजूद जल्द ही खत्म हो जायेगा और मेरे लिए किसी भी चीज का कहीं कोई वजूद नहीं रहेगा।

मैं जिंदा नहीं रहूंगा। मेरी इस कल्पना का, उस बच्ची पर तरस खाने या मेरी नीचता के कारण पैदा हुए शर्म के एहसास पर क्या कोई असर नहीं पड़ा? जरूर पड़ा और यही कारण था कि मैंने उस निराह बच्ची को पांव पटककर फटकार दिया, यह जाहिर करने के लिए कि मेरे मन में उसके प्रति कोई सहानुभूति नहीं। यहां तक मैं उससे गैरइंसानी सलूक भी करता तो इसका मुझे पूरा हक था, क्योंकि दो घंटों के अंदर-अंदर सब कुछ खत्म हो जाना था।

वैसे, क्या आपका मन मानता है कि मेरे बिफर उठने का कारण यही था? मुझे तो इस पर अब यकीन-सा हो गया है। मेरे समक्ष यह भी स्पष्ट हो चुका है कि जीवन और संसार, जिस रूप में भी ये हैं, मुझ पर निर्भर हैं, बल्कि मुझे तो यह कहना चाहिए कि दुनिया सिर्फ मेरे वास्ते ही बनायी गयी है, अगर मैं खुद को मार दूंगा तो दुनिया बाकी नहीं रहेगी, कम से कम मेरे वास्ते तो नहीं। यह महज बतकही नहीं कि मेरे बाद सचमुच किसी के वास्ते कुछ नहीं रहेगा। यह संसार मेरी चेतना का भाग है और ज्यों ही मेरी चेतना शून्य होगी, यह सारा संसार प्रेत की भांति छिन्न-भिन्न हो जायेगा, क्योंकि यह संसार और ये तमाम लोग मुझमें अभेद है।

मुझे याद है, जब मैं बैठा सोच रहा था तो इन नये सवालों के अंबार ने सोच का एक नया ही सिरा पकड़ लिया था। मसलन, मेरे दिमाग में एक अजीब ही विचार कौंधा। अगर मैं पहले चांद या मंगल ग्रह पर रहता होता और वहां किसी बुरे या नीच व्यवहार के कारण मेरा निरादर या बेकदरी हो जाती इतना अपमान जिसके बारे में कोई किसी डरावने सपने या वहम में ही

सोच सकता है। और उसके बाद मैं खुद को सहसा धरती पर पाता तथा दूसरे ग्रह पर घटी घटना मेरे होशोहवास पर हावी ही होती। तिस पर मुझे यह भी मालूम होता कि अब मैं वहां कभी नहीं जा सकूंगा, तब अगर मैं धरती पर से चांद की तरफ देखता तो भी मुझे कोई परवाह होती या नहीं?

यह सवाल फालतू और बोदे हैं, क्योंकि पिस्तौल पहले ही मेरे सामने धरा था और मैं भली-भांति जानता था कि यह घटना तो घट कर ही रहेगी।

मगर इन सवालों ने मुझे उठने की हद तक उत्तेजित कर दिया। खासकर आखिरी सवाल को हल किये बिना मैं मर नहीं सकता था। संक्षेप में कहूं तो उस नन्हीं लड़की ने मुझे बचा लिया, क्योंकि उसी के कारण मेरे मन में पैदा हुए सवालों ने मुझे पिस्तौल का घोड़ा दबाने में रोक लिया था।

इस बीच कप्तान के कमरे में उठता शोर दबता जा रहा था। उन्होंने ताश खेलना बंद कर दिया था और सोने की तैयारियां कर रहे थे। इस फुरसत में वे खीजते-कुढ़ते एक-दूजे को गालियां दे रहे थे। ये सब सुनते-सुनते मैं आरामकुर्सी पर बैठा-बैठा ही सो गया। इससे पहले मैं इस तरह कभी नहीं सोया था। इस कदर बेसुध होकर तो कभी नहीं।

मैंने कहा था न कि मैं यही बातें सोचता-सोचता बेसुध-सा होकर सो गया था। सहसा मुझे सपना आया कि बैठे-बैठे मैंने पिस्तौल उठाया और सीधा अपने दिल की तरफ तान लिया अपने दिल पर, भेजे पर नहीं। जबकि पहले मैंने फैसला किया था कि गोली मैं अपने भेजे के पार उतारूंगा।

ऐन अपनी दाहिनी धड़कन पर निशाना साधकर मैंने एक

या दो सेकंड प्रतीक्षा की। मोमबत्ती, मेज और दीवार सब सहसा मेरे सामने कांपने लगे। मैंने तुरंत घोड़ा दबा दिया।

सपने में आप कभी-कभी ऊंची जगह से गिर पड़ते हैं या आपका कपोल कट जाता है या आपकी पिटाई होती है, तो आप कभी दर्द महसूस नहीं करते, जब तक आप सचमुच किसी भी तरह खुद को बिस्तर में ही जख्मी नहीं कर लेते। तब आपको दर्द महसूस होता है और प्रायः आपकी आंख खुल जाती है। मेरा सपना भी ऐसा ही था। मुझे कोई दर्द महसूस नहीं हुआ, पर मुझे लगा कि गोली के धमाके से मेरे भीतर एक भूचाल सा मच गया है और अचानक हर चीज नष्ट हो गई है।

फिर अचानक खामोशी फैल गयी। मुझे ताबूत में लिटाकर ले जाया जा रहा था। वह ताबूत फूलता-सा महसूस हो रहा था और जब मैं उसके बारे में सोच रहा था, तब पहली बार मुझे ख्याल आया कि मैं मर चुका हूं। मुझे इसकी जानकारी थी, इसलिए कोई शक नहीं हो रहा था। न मैं देख सकता था और न हिल पा रहा था। इसके बावजूद मैं उस वक्त सोच भी सकता था और महसूस भी कर सकता था। मगर जल्दी में मैंने इस अनहोनी को मान लिया और जैसे कि सपनों में आम तौर पर होता है, मैंने बिना न-नुकर किये सच्चाई स्वीकार कर ली।

मैं यहां पड़ा था और हैरान होकर कहना पड़ता है कि मेरे मन में कोई अभिलाषा नहीं थी। मैंने बिना किसी किंतु या परंतु के मान लिया था कि मरे हुए आदमी की कोई चाह नहीं होती। पर सीलन बहुत थी। मुझे नहीं मालूम कि कितना वक्त बीत गया एक घंटा, कुछ दिन या बहुत-से दिन। सहसा मेरी बायीं आंख, जो बंद थी, पर कब्र की मिट्टी से रिसकर आये पानी का एक कतरा आ गिरा, एक मिनट के बाद एक-एक करके कतरे टपकने लगे। तब मेरा दिल रोष से भर उठा और अचानक मुझे दर्द महसूस होने लगा।

यह जख्म है। मैंने सोचा, वही जगह जहां मैंने खुद ही गोली मारी थी और गोली शायद अभी तक जख्म में ही है।

इस बीच पानी सीधा मेरी बंद आंख पर टपकता रहा। सहसा मैं विचल उठा। पर नहीं, आवाज नहीं निकली, क्योंकि मैं स्थिर पड़ा था। यह तो मेरा समूचा अस्तित्व था, जो पुकार उठा, उस सर्वशक्तिमान सरपंच के सामने कि यह मुझ पर क्या बीत रही है। अगर कोई ऐसा उद्देश्य है जो यहां घट रहे घटनाक्रम से बढ़िया और बेहतर है, तब अगर तू है और जो कोई भी तू है, यहां मेरे सामने प्रगट हो और अगर तू मेरी मूर्खतापूर्ण आत्महत्या का बदला ले रहा है, तो यह जान ले कि अगले घटिया और अर्थहीन जीवन में चाहे जितने भी कष्ट क्यों न हों, उनकी तुलना कभी भी उस अपमान से नहीं की जा सकती, जिसे मैं चुपचाप सहन करूंगा।

मैं कराहकर चुप हो गया। लगभग एक मिनट तक गहन खामोशी छायी रही। फिर एक और बूंद टपकी। पर मुझे मालूम था और मेरा दृढ़ तथा अपार विश्वास था कि पलक झपकते ही सब कुछ बदल जायेगा और यही हुआ भी। सहसा मेरी कब्र फट गयी। मुझे नहीं मालूम कि यह फटी थी या खोली गयी थी, पर एक काले रंग की हस्ती, जिसे मैं नहीं जानता था, मैंने पाया कि मुझे ऊपर को उड़ाये लिये जा रही थी।

अब हम खला में थे। मैंने देखा, बड़ी गहन रात थी। इतना अंधेरा मैंने पहले कभी नहीं देखा था। हम खला में ऊंचे उठ रहे थे और जमीन बहुत पीछे छूटती जा रही थी। जो हस्ती मुझे उड़ाये लिये जा रही थी, उससे मैंने कुछ नहीं पूछा। मुझे अपने-आप पर घमंड था, इसलिए चुप रहा। फिर मुझे इस बात पर भी बहुत संतोष हुआ कि मैं उससे डरा नहीं और अपनी निडरता पर मेरा मन खुशी से मचल उठा। मैं ब्रह्मांड की सैर का मजा लूटने लगा।

मुझे याद नहीं कि हम खला में कितनी देर घूमते रहे। न ही इसका मैं कोई अनुमान लगा सकता हूं। क्योंकि हुआ तो वही न, जो सपनों में होता है। सपने में आप समय, स्थान, मन और जीवन सबके नियमों का उल्लंघन कर जाते हैं और केवल वहीं रूकते हैं, जहां आपका दिल खुश होता है।

तो यह कब्र में दफनाये जाने के बाद की जिंदगी है। मैंने स्वप्न की सुखद और फूल-सी हल्की तथा नाजुक अवस्था में सोचा। मगर मेरे दिल का सत्व अपनी भरी-पूरी गंभीरता समेत मेरे साथ ही रहा।

अब अगर एक बार और जीना जरूरी है और दोबारा जीना किसी की अटल इच्छा पर निर्भर करता है तो मुझे पराजित और अपमानित नहीं किया जा सकता। मैंने सोचा और फिर मैं अपने साथी से एक अपमानजनक सवाल, जिसमें मेरी स्वीकृति भी शामिल थी, पूछे बिना नहीं रह सका, 'तुम्हें मालूम है कि मैं तुमसे डरता नहीं और इसलिए नहीं डरता कि तुम मुझसे घृणा करते हो?'

उसने मेरे सवाल का कोई जवाब नहीं दिया तो उलटा मैंने अपने-आपको इस कदर अपमानित महसूस किया मानो मेरे दिल में कटार उतार दी गयी हो। पर इस पीड़ा को झेलते-झेलते अकस्मात मुझे लगा कि नहीं, मुझसे घृणा नहीं की जा रही, न ही मेरा मखौल उड़ाया जा रहा। यहां तक कि मुझ पर दया भी नहीं की जा रही। हमारे इस सफर का कोई अज्ञात और भेद भरा मंतव्य है, जो मुझसे जुड़ा हुआ है।

मेरे कलेजे में बला का दर्द हो रहा था और इस दर्द समेत मैं खला में कोई न कोई चमत्कार हो जाने की प्रतीक्षा कर रहा था कि अचानक एक जाने-पहचाने और बहुत जबरदस्त जज्बे ने मुझे झिंझोड़ डाला। मैंने अपना सूरज देखा, बेशक मुझे मालूम था कि यह हमारा सूरज नहीं हो सकता, जिससे धरती पैदा हुई थी।

हम एक-दूसरे से अनंत दूर थे, पर कैसे न कैसे मुझे लगा कि यह तो बिलकुल वैसा ही सूरज है जैसा कि हमारा, उसी की प्रतिलिपि और उसका दूजा रूप। एक मीठी और करूणामयी खुशी की रौ अपनी पूरी मस्ती से मेरी आत्मा में गूंज उठी। प्रकाश के उसके प्रिय पुंज ने उसी प्रकाश ने जिसने मुझे जन्म दिया था, मेरा दिल छू लिया और मुझे फिर से जीवित कर दिया। मैंने जिंदगी महसूस की, वही पुरानी जिंदगी। यह अनुभव अपनी मृत्यु के बाद मुझे पहली बार हुआ।

मैंने अपना सूरज देखा, बेशक मुझे मालूम था कि यह हमारा सूरज नहीं हो सकता, जिससे धरती पैदा हुई थी। हम एक-दूसरे से अनंत दूर थे, पर कैसे न कैसे मुझे लगा कि यह तो बिलकुल वैसा ही सूरज है जैसा कि हमारा, उसी की प्रतिलिपि और उसका दूजा रूप। एक मीठी और करूणामयी खुशी की रौ अपनी पूरी मस्ती से मेरी आत्मा में गूंज उठी। प्रकाश के उसके प्रिय पुंज ने उसी प्रकाश ने जिसने मुझे जन्म दिया था, मेरा दिल छू लिया और मुझे फिर से जीवित कर दिया।

पर अगर यह सूरज है, वही सूरज जैसा कि हमारा, तो फिर धरती कहां है? मैं पुकार उठा। तब मेरे साथी ने एक छोटे-से तारे की तरफ इशारा कर दिया, जो हरी-पीली लपटों में चमकता हुआ अंधेरे में टिमटिमा रहा था। हम सीधे उसी की तरफ उड़ते जा रहे थे।

'क्या ब्रह्मांड में कई एक ऐसे ग्रह हो सकते हैं? क्या यह प्रकृति का नियम है? और अगर यह ग्रह धरती है तो क्या यह बिलकुल हमारी धरती जैसी ही है? बंजर, अभागी, प्यारी, सदा ही प्यारी

धरती, जो अपने सबसे ज्यादा नाशुकरे बच्चे के मन में अपने लिए तीव्र प्रेम का जलवा उभार देती है। क्या वह ऐसी ही है? मैं चिल्ला उठा। अपनी पुरानी धरती का प्यार, जिसे मैं छोड़ आया था, मेरे मन में तरंगें उछालने लगी। उस नन्हीं बच्ची की तस्वीर, जिससे मैंने अन्याय किया था, मेरी आंखों के सामने बिजली की तेजी से कौंध गयी।'

'तुम हर चीज खुद देख लोगे।' मेरे साथी ने उत्तर दिया। उसके शब्दों में उदासी का स्वर था। मैंने देखा कि हम उस ग्रह की तरफ तेजी से पहुंच रहे थे। देखते-देखते उसका आकार मेरे सामने बड़ा होता गया। मुझे समुद्र दिखाई दिया, यूरोप की बाह्य सीमा की तरह और सहसा मेरे दिल में महान और पावन ईर्ष्या की भावना भड़क उठी।

मैंने सोचा क्या इस नयी धरती पर दुख नहीं है। अपनी धरती पर तो हम सच्चा प्यार केवल दुख उठाकर ही कर सकते हैं। सिर्फ दुख उठाकर ही किसी ढंग से हम प्यार नहीं कर सकते यहां तक कि अन्य किसी प्यार को जानते भी नहीं। प्यार करने के वास्ते मुझे दुख उठाना चाहिए। इसी पल मैं चाहता हूं और मेरी कामना है कि मैं गिरे आंसुओं का रूप धारण कर लूं और उस धरती को चूमूं, जिसे बहुत पीछे छोड़ आया हूं। मैं नहीं चाहता और न ही मुझे मंजूर होगा कि मैं किसी दूसरी धरती पर जिंदा रहूं।

मैंने सोचा कि यह जरूरी बात मैं अपने साथी को भी बता दूं, पर सहसा मैंने पाया कि मेरा साथी तो मुझे छोड़कर पहले ही जा चुका था और मैं, जिसका मुझे आभास तक नहीं था, एक नयी

धरती पर खड़ा था।

धरती क्या थी स्वर्ग था। चारों तरफ सूरज की किरणें चमक रही थीं। मुझे लगा कि मैं अपनी धरती के उन द्वीपों में से किसी एक द्वीप पर खड़ा था, जो 'यूनानी द्वीप समूह' के नाम से जाने जाते हैं। या फिर किसी महाद्वीप के सागर तट पर जो किसी द्वीप समूह-सा लगता है।

कमाल है, वह हर चीज बिलकुल वैसी ही थी जैसी धरती पर होती है। हर चीज में मानो छुट्टी के दिन-सा जलवा था, जो किसी महान, पवित्र और अंतिम विजय के बाद प्राप्त होता है। मुस्कराता हुआ हरा समंदर बड़े लाड़ से किनारों को गलबहियां डाल रहा था, उन्हें चाव से चूम रहा था। यह खुला-डुला, प्रत्यक्ष और सचेत प्यार था। लंबे, ऊंचे और शानदार वृक्ष अपनी भरपूर बहार में थे। मुझे खुशी हुई कि उनके असंख्य पत्तों ने अपनी मीठी और दुलार भरी आवाज में मेरा स्वागत किया।

फिर मैंने उस खुशहाल धरती के निवासियों को देखा।

वे अपने-आप मेरे पास आये। मुझे उन्होंने बड़े स्नेह से घेर लिया और चूमने लगे। सूरज के बालक, सूरज के बेटे। वे कितने सुंदर थे। धरती पर मैंने इतने आकर्षक नख-शिख वाला कोई इंसान नहीं देखा, केवल हमारे बच्चों में, जबकि वे शिशु ही होते हैं, ऐसे सौंदर्य की अबोध और मद्धम-सी झलक शायद ही किसी को दिखाई दी हो।

खुशी में सराबोर उन लोगों की आंखों में उत्साहपूर्ण क्रांति थी। उनके चेहरों पर ज्ञान की आभा, निखरी हुई सजगता और पूर्ण शांति थी। उनके चेहरे प्रफुल्ल थे। उनके शब्दों और स्वरों में बच्चों जैसी निश्छल खुशी थी। मैं उनके चेहरों की झलक देखते ही सब कुछ समझ गया, सब कुछ। यह धरती अभी अपराध से अछूती थी, अपवित्र नहीं हुई थी। इस पर ऐसे लोग बसते थे, जिनका पाप से कोई परिचय तक नहीं था। वे उस स्वर्ग में रहते थे जहां वर्जित फल खाने से पहले हमारे पुरखे रहा करते थे। भगवान झूठ न बुलवाये, इस धरती के कण-कण से स्वर्ग का स्वर्णिम पुंज फूटता दिखाई पड़ता था।

उन लोगों ने मुझे बाखुशी हाथों हाथ लिया और बड़े लाड़ से अपने घर ले गये। हर कोई मुझे खुश देखना चाहता था। मुझे बड़ी हैरानी हुई कि उन्होंने मुझसे कुछ भी तो नहीं पूछा, मानो

उन्हें हर बात का पहले से ही पता हो और वे जितनी भी जल्दी हो सके, मेरे चेहरे से दुख के निशान गायब कर दें।

मैं उन्हें समझने लगा था और मुझे उनसे गहरा लगाव भी हो गया था। बाद में मैंने उनके वास्ते कष्ट भी झेला।

मैं तत्काल ही जान गया था कि कई बातों के बारे में मैं उन्हें कतई नहीं समझ पाया। मसलन, आधुनिक रूसी अतिवादी और घटिया पीटर्सबर्गवासी, ये दोनों मेरी समझ से बाहर हैं। उस धरती के लोग मुझे लगा कि इतना कुछ जानते हुए भी हमारे विज्ञान से कोरे हैं, पर जल्दी ही मैंने जान लिया कि उनका प्राप्त किया हुआ समृद्ध ज्ञान हमारी धरती का नहीं, किन्हीं अन्य संस्थाओं की देन था। इसलिए उनकी इच्छाएं और ही थीं। उन्हें किसी चीज की इच्छा नहीं थी, जैसे कि हमें है, क्योंकि उनका जीवन संतुष्ट था। पर उनका ज्ञान हमारे विज्ञान से कहीं गहन और गंभीर था।

हमारा विज्ञान विस्तार से समझना चाहता है कि जीवन क्या है, इसे जीवन के विषय में जानने की लालसा है, यह दूसरों को शिक्षा दे सकता है कि कैसे जीना चाहिए। जबकि वे लोग विज्ञान के बिना ही जानते थे कि जिया कैसे जाता है। यह तो मैं भी समझ गया, लेकिन उनके ज्ञान को नहीं समझ सका। उन्होंने मुझे पेड़-पौधे दिखाये। पर मैं यह नहीं समझ पाया कि वे उन्हें कितने स्निग्ध भाव से देखते थे। बिलकुल ऐसे जैसे वे अपने साथियों से बातें कर रहे हों और शायद मैं गलत नहीं हूंगा, अगर मैं कहूं कि वे पेड़-पौधों से बातें भी करते थे। हां, वे उनकी भाषा जानते थे।

उन्होंने मेरा ध्यान सितारों की तरफ दिलवाकर उनके बारे में बहुत कुछ बताया, पर मैं समझ नहीं सका। फिर भी मुझे विश्वास हो गया कि वायुमंडल के सितारों से उनका संपर्क स्थापित हो गया कि वायुमंडल के सितारों से उनका संपर्क स्थापित हो चुका था और यह मेलजोल मात्र विचारों का ही नहीं बल्कि शारीरिक भी था।

कमाल की बात तो यह थी कि उन्होंने मुझे अपने बारे में समझाने की कोशिश नहीं की। वे तो इस औपचारिकता में पड़े बिना ही मुझे प्यार करते थे। फिर मैं यह भी जानता था कि वे भी मुझे कभी नहीं समझ सकेंगे। इसलिए मैंने उन्हें धरती के बारे में कुछ नहीं बताया। मैंने तो बस, उस धरती को चूम लिया, जिस पर वे रहते थे। मैंने बिना कुछ बोले ही उनका सम्मान किया। वे देखते रहे और सम्मान स्वीकार करते रहे। वे अपने आदर से लजाये नहीं, क्योंकि वह प्यार ही इतना करते थे। उन्हें कोई खेद नहीं हुआ, जब मैंने आंसू भरी आंखों से उनके पांव चूमे, क्योंकि उनके मन में खुशी थी कि इसका बदला वे अपने प्यार की अथाह क्षमता से अवश्य चुका देंगे।

कई बार मैं परेशान भी हुआ कि मेरे जैसे आदमी को उन्होंने कभी नाराज नहीं होने दिया और न ही मुझमें ईर्ष्या या वैर का भाव ही पैदा होने दिया है। कई बार मैं खुद से पूछता - 'क्या बात है कि एक दंभी और झूठा आदमी होते हुए भी मैंने उनके सामने अपनी विद्वता का दिखावा नहीं किया? इस बात की उन्हें हालांकि कोई भनक तक नहीं थी, किंतु यह कैसे हो गया कि मेरे मन में कभी यह इच्छा ही पैदा नहीं हुई कि मैं उन्हें अपनी विद्वता से स्तब्ध कर दूं?' शायद इसलिए कि मैं उन्हें प्यार करने लगा था।

वे बच्चों की भांति चंचल और हंसमुख थे। वे अपने नयनाभिराम बगीचों में सैर-सपाटे करते, अपने प्यारे गीत गाते और सात्विक भोजन करते। फल, शहद और दूध ही उनकी खुराक थी। वे अपने भोजन और वस्त्रों के लिए मेहनत तो करते थे, मगर बहुत जरूरी और सहज। उनमें परस्पर प्यार भी बहुत था और बच्चे भी जन्म लेते थे, पर उन लोगों में मैंने निर्दयी वासना की प्रवृत्ति नहीं देखी, जिससे प्रायः

धरती के सभी मर्द ग्रस्त होते हैं और जो सारे गुनाहों की जड़ है।

वे अपने नवजात शिशु की खुशी ऐसे मनाते थे जैसे कि इस आनंदमयी अवसर में वे उनके संगी-साथी हों। वे न तो आपस में झगड़ते और न ही एक-दूजे से जलते। उन्हें मालूम ही नहीं थे कि ईर्ष्या होती क्या है। सब बच्चे बराबर समझे जाते थे क्योंकि वे सब एक परिवार की तरह रहते थे। सच, मैंने तो उन्हें कभी बीमार पड़ते भी नहीं देखा।

मौत वहां थी तो जरूर, लेकिन उनके बुजुर्ग कुदरती मौत मरते थे, ऐसे जैसे कि उनको नींद आ रही हो। उस घड़ी वे अपने मित्रों में घिरे होते। उनसे चुपचाप विदा लेते, मुस्कराते हुए उन्हें आशीर्वाद देते और उनकी सुखद मुस्कराहटों के बीच अंतिम उड़ान भरजाते। इस अंतिम विछोह के क्षण मैंने न कभी किसी को शोक मनाते देखा और न ही जार-जार आंसू बहाते। वहां तो केवल प्यार था, जो आनंद की अवस्था में पहुंच जाता है। शांत, संपूर्ण और मग्न। उनका यह व्यवहार कुछ ऐसा था मानो उनका अपने मृतकों से मृत्यु के बाद संपर्क बना रहता है और उनका सांसारिक नाता दफनाये जाने के बाद भी कायम रहता है। इसलिए जब मैंने उनसे अमर जीवन के बारे में पूछताछ की तो मेरी बातें उनके पल्ले नहीं पड़ीं। मगर इस बारे में उनका विश्वास इतना यकीनी था कि उनके लिए ऐसा कोई भी सवाल फिजूल था।

वे जीवित हों या मृत, सबका संबंध विस्तृत होकर समूचे ब्रह्मांड से जुड़ना शुरू हो जाता है। वे उस घड़ी की प्रतीक्षा बड़ी आतुरता से करते थे, बिना किसी शीघ्रता तथा तीव्र लालसा के, क्योंकि ब्रह्मांड से जुड़े होने का एहसास उनके दिलों में सदा ही समाया रहता था और वे इसे एक-दूसरे तक संचारित करते रहते थे।

वहां कोई मंदिर नहीं था। पर उनकी संपूर्ण ब्रह्मांड से सच्ची और प्रत्यक्ष लौ लगी रहती थी। उनका कोई धर्म नहीं था। पर उन्हें भरोसा था कि जब उनकी सांसारिक खुशी, प्रकृति के नियमानुसार अपनी पूर्णता पर पहुंच जाती है तो वे जीवित हों या मृत, सबका संबंध विस्तृत होकर समूचे ब्रह्मांड से जुड़ना शुरू हो जाता है। वे उस घड़ी की प्रतीक्षा बड़ी आतुरता से करते थे, बिना किसी शीघ्रता तथा तीव्र लालसा के, क्योंकि ब्रह्मांड से जुड़े होने का एहसास उनके दिलों में सदा ही समाया रहता था और वे इसे एक-दूसरे तक संचारित करते रहते थे।

अब हर कोई मुझ पर हंसता और कहता है कि जो कुछ मैं बता रहा हूं, वह सब कुछ सपने में दिखाई देना संभव नहीं। इतने लंबे-चौड़े सपने कभी नहीं आते। वह कहते हैं कि मैंने अपने सपने में जो कुछ भी देखा या महसूस किया है, मेरे पागलपन के दौरे के दौरान मेरी कल्पना में रचा गया है। वह तो यहां तक भी कहते हैं कि यह किस्सा सोते हुए नहीं बल्कि जागते-जागते मैंने खुद ही घड़ डाला है।

'शायद ऐसे ही हुआ हो।' एक बार मैंने कह दिया तो, हे मेरे भगवान, वे कितने खिलखिलाकर हंस दिये थे। मैंने उन्हें कितनी खुशी दी थी।

मगर जो कुछ भी हुआ, मैं भला क्यों विश्वास न करूं कि यह घटना सचमुच घटी है? जो कुछ बीत चुका था वह मेरे बयान करने से कहीं बेहतर, सुंदर और रसीला है, बेशक सपना ही सही, पर था सच्चा।

मैं आपको एक भेद भरी बात बताता हूं। शायद यह सपना तो नहीं था। क्योंकि एक घटना घटी थी। घटना, जो खौफनाक हद तक सच्ची थी, इसे भला निंदयाये सपने से कैसे जोड़ा जा सकता है? माना कि यह मेरे दिमाग की उपज भी हो सकती है, लेकिन बाद में सामने आने वाली वह खौफनाक सच्चाई क्या केवल मेरे दिमाग की उपज हो सकती है? इसे मात्र मेरे दिमाग ने कैसे घड़ लिया? या यह सपना मुझे ही क्यों आ गया? क्या मेरा तुच्छ दिमाग और चंचल मन इतनी ऊंचाई पर पहुंच सकते थे कि इन्हें सच का एहसास हो जाये? इसका फैसला आप खुद करें।

हां, अब तक एक बात मैंने आपसे छुपाये रखी। मगर अब यह सच्चाई भी मैं सरेआम बताऊंगा कि मैंने उन लोगों को भ्रष्ट कर दिया।

हां, हां, बात का तोड़ यह कि मैंने उन सबको भ्रष्ट कर दिया। यह कैसे होता चला गया, मैं नहीं जानता, फिर भी मुझे सब कुछ भली-भांति याद है। मेरा सपना तो अनंत काल में जा समाया, लेकिन मुझमें अपना तीखा अनुभव छोड़ गया। मैं तो सिर्फ यह जानता हूं कि उनके पतन का कारण मैं था। प्लेग के गंदले कीटाणुओं द्वारा फैला दिये जाने वाले छूत के रोग की भांति

मैंने अपनी बुद्धि से उस खुशहाल धरती को बदहाल कर दिया।

मेरे वहां पहुंचने से लेकर मेरे दिमाग का अणु विस्फोट होने से पहले, उनमें से कोई नहीं जानता था कि पाप क्या बला होता है? पर देखते ही देखते उन्होंने झूठ बोलना सीख लिया और न केवल इसे पसंद ही करने लगे, बल्कि यह भी जान लिया कि ढकोसलेबाजी क्या होती है? ये सब हंसते-हंसते खेल-खेल में हो गया। एक भोली और चंचल तरंग में झूठ का छूत उनके दिलों में उतर गया और वे उसे भी चाहने लगे। फिर इस चाहत से विलासता पैदा हो गयी, विलासता से ईर्ष्या और ईर्ष्या से पहले क्रूरता और फिर हिंसा। उफ, मुझे नहीं मालूम, मुझे नहीं याद कुछ भी कि कैसे, पर जल्द ही वहां पहला खून हुआ। वे हैरान रह गये। उनमें घबराहट फैल गई। वे फूट का शिकार होकर बंटने लगे, उनमें एक-दूसरे के विरूद्ध दलबंदी होने लगी। वे एक-दूसरे का तिरस्कार करने लगे। वे एक-दूसरे पर लांछन लगाने लगे। वे बेशर्मी का मतलब भी जान गये और इसे ही कसौटी का आधार बनाकर जीवन को परखते हुए उनके सिरों पर मान-सम्मान का भूत भी सवार होकर नाचने लगा।

अब हर दल का अपना-अपना झंडा बन गया। वे पशुओं से बुरा सलूक करने लगे, जिस कारण पशु जंगलों में जा छुपे और उनके दुश्मन हो गये। उनमें विरोध की जंग छिड़ गई और इस जंग में वे अपना-अपना प्रभुत्व जमाने के लिए तू-तू, मैं-मैं करते रहे। यहां तक कि वे भाषाएं भी अलग-थलग ही बोलने लगे।

फिर उन्हें उदासी का बोध हुआ और वे इसी में रम गये। उनमें दुख पाने की शिद्दत पैदा हुई और वहां आम-तौर पर कहा जाने लगा कि भई, सच तो केवल कष्ट झेलकर ही हासिल किया जा सकता है। तत्पश्चात् उनका परिचय विज्ञान से हुआ।

इस तरह जब वे पूरी तरह दुष्ट और पापी हो गये तो तरह-तरह से मानवता और भाई-चारे की बातें करने लगे। अपराध दर अपराध करते-करते उन्होंने न्याय का आविष्कार भी कर लिया। न्याय स्थापित करने के लिए उन्होंने अपने वास्ते कई कानून तय किये और इनकी सुरक्षा के लिए फांसी भी लागू कर

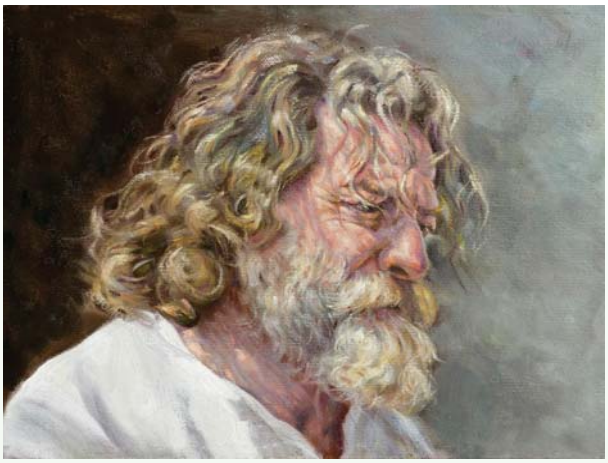

दी। वे भूल गये कि उनका कितना कुछ खो गया है। उन्हें तो इस बात पर भी विश्वास न रहा कि वे कभी बेहद भोले-भाले और खुशहाल हुआ करते थे।

'पुराने वक्तों में इस धरती पर खुशियां ही खुशियां थीं।' कोई कहता तो वे उसका मखौल उड़ाते हुए कहने लगे कि फालतू में सपने मत देखा करो। खुशी अपने-आप क्या और कैसी होती है, वे इससे भी जाते रहे।

मगर यह अनोखी और हैरान होने वाली बात है कि अतीत की खुशियों को मिथ्या मान लेने के बाद जब उन्हें अपने इस इतिहास पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं रहा, तब सहसा उनके मन में एक बार फिर से मासूम और खुशहाल होने की लालसा जाग उठी और अपनी इस भावना के समक्ष वे निरीह बालकों की भांति झुक गये। इसकी पूजा करने लगे। इसी की स्मृति में उन्होंने कई मंदिर बनवाये और इनमें अपने इष्ट के रूप में अपनी ही इच्छाओं की आराधना करने लगे। बेशक उन्हें मालूम था कि इसकी प्राप्ति कठिन ही नहीं, असंभव भी है, फिर भी वे इसे पूजते और इसके आदर में आंसू बहाते रहते। हालांकि अगर वह मासूम और खुशियों भरी अवस्था फिर से साकार हो उठती और कोई जना अचानक उन्हें उसके दर्शन करवाकर पूछता कि वे उसे अपनाना चाहते हैं या नहीं, तो वे अवश्य ही इंकार करते हुए कहते, 'माना कि हम झूठे, बुरे और अन्यायपूर्ण हैं और इसीलिए रोते-धोते भी रहते हैं, अपने-आपको दुख और कष्ट देते हैं। हम खुद को उस दयावान जज से भी सख्त सजा देते हैं, जिसने हमारा न्याय करना है और जिसका हम नाम तक नहीं जानते। पर हमारे पास विज्ञान है, इसकी मदद से हम फिर सच्चाई ढूंढ़ेंगे और इस बार हम इसे सचेत होकर स्वीकार करेंगे।'

वे पहले ही कहते हैं कि मैं बहक रहा हूं और अगर अभी से मैं इस कदर बहकता जा रहा हूं तो मेरा अंत भला क्या होगा? हां, यह सच है कि मैं बहकता जा रहा हूं। कुछ वक्त बाद मेरी हालत और भी बिगड़ जायेगी शायद। इसमें कोई शक नहीं कि अब मैं और भी कई बार बहकूंगा और तब तक बहकता रहूंगा जब तक मुझे यह नहीं मालूम हो जाता कि लोगों को किस प्रकार शिक्षित किया जा सकता है और इसके लिए मुझे कैसे-कैसे काम करके कौन-कौन से शब्द इस्तेमाल करने होंगे।

यह मेरे मन की कल्पना नहीं। मैंने इसे देखा है, भोगा है और इसके जीते-जागते रूप ने मेरी आत्मा सदा-सदा के लिए तृप्त कर दी है। मैंने इसे साक्षात देखा है और मुझे भरोसा हो गया है कि यह हम लोगों में विद्यमान है। फिर भला मैं कैसे भटक सकता हूं? क्योंकि इस पर कोई भी विश्वास नहीं करता, इसलिए हो सकता है एकाध बार मैं भुलावा खा जाऊं या लोगों की जुबान में ही बात करने लगूं, लेकिन यह कब तक होता रहेगा? जो कुछ मैंने देखा है, उसका जीवंत रूप सदा मेरे अंग-संग रहकर मेरा पथ प्रशस्त करता रहेगा। मेरे हौसले बुलंद हैं। मुझे कोई फिक्र नहीं। चाहे हजारों साल क्यों न लग जायें, मैं लोगों के पास जा-जाकर उन्हें सच की गाथा सुनाता रहूंगा।

प्यारे दोस्तों, क्या यह कोई समझदारी वाली बात है? कितना अभिमान करते हैं लोग अपने-आप पर। इसे सपना बताते हैं। पर सपना आखिर क्या होता है? क्या हमारा जीवन एक सपना नहीं? इसलिए मैं पीछे नहीं हटूंगा। भले ही मेरा देखा हुआ सच कभी साकार हो या न हो, यह पृथ्वी स्वर्ग बने या न बने (आखिर मुझे इसका एहसास तो है), मैं अपनी राह पर बढ़ता रहूंगा। इसका प्रचार करता ही रहूंगा।

वैसे अगर आप इसे समझ जायें तो यह कोई मुश्किल काम नहीं। इसे बड़ी आसानी से व्यवहार में लाया जा सकता है। एक दिन में नहीं बल्कि सिर्फ एक घंटे में सारे मामले हल किये जा सकते हैं। बस, आदमी को चाहिए कि वह दूसरों को भी उतना ही प्यार करे जितना वह खुद को करता है। यही सारी बात का निचोड़ है, दूसरी किसी चीज की कोई जरूरत ही नहीं, कतई कोई जरूरत नहीं। आदमी तुरंत जान जायेगा कि जीवन का व्यवहार कुलजमा क्या होना चाहिए। यह और कुछ नहीं, बल्कि एक पुरातन सत्य है।

'जीवन से जीवन की चेतना श्रेष्ठ है और खुशी के नियमों का ज्ञान, खुशियों से कहीं बेहतर है।' यही वह अवधारणा है, जिसके विरूद्ध हमें जेहाद छेड़ देना चाहिए और मैं जेहाद करूंगा क्योंकि सचमुच हर कोई सिर्फ यही चाहने लगे तो यह पृथ्वी तुरंत स्वर्ग बन जाए।

जहां तक उस मासूम बच्ची का सवाल है, मैंने उसे खोज लिया है मैं अपनी राह पर बढ़ता रहूंगा। हां, अवश्य बढ़ता रहूंगा।

❑❑❑

आख़िरी पत्ता

ओ. हेनरी

यह कहानी है वाशिंग्टन के एक चौक की, जो गलियों से बुना है, और चित्रकारों, फटीचर-चित्रकारों का अड्डा बन चुका है। शायद इसलिए कि यह बड़ी सस्ती जगह है।

पतझड़ का मौसम यानी सर्द हवाओं और जोरदार बारिश के मौसम में एक बेल के सारे पत्ते गिर गए हैं बस एक को छोड़कर।

क्यों नहीं गिरा यह पत्ता?

सू और जांसी दो नई उमर की कलाकार थीं। दोनों एक पुरानी-सी इमारत के तीसरे तल पर रहती थीं।

नवम्बर की बात है। जांसी को निमोनिया हो गया और उसकी हालत गंभीर हो गई। वो बिना हिले-डुले बिस्तर पर लेटी-लेटी बस खिड़की के बाहर ताकती रहती। सू, उसकी दोस्त को इससे बड़ी फिक्र होती। पहले डाक्टर के पास ले जाकर दिखाया, कुछ दिनों बाद डाक्टर घर पर ही आकर उसका मुआयना करने लगा। इलाज के बावजूद जांसी की हालत में कोई सुधार न हुआ।

एक दिन डाक्टर ने सू को अकेले में बुलाया और पूछा, 'क्या जांसी को किसी बात की फिक्र है?' सू इस बारे में कुछ नहीं जानती थी इसलिए उसने बस 'न' में सिर हिला दिया।

अगले ही क्षण उसने डाक्टर से पूछा कि उन्हें ऐसा क्यों लगा? डाक्टर ने सू को बताया, दरअसल जांसी के दिल में यह बात गहरे से बैठ गई है कि वो अब ठीक नहीं हो सकेगी। अगर उसने इस तरह जीने की इच्छा छोड़ दी तो दवाइयां शायद ही असर कर पाएं।

डाक्टर के जाने के बाद सू ने जी भर कोशिश की कि जांसी का मन किसी बात में लग जाए। उसने कपड़े, फैशन, सब कुछ पर बात छेड़ी मगर जांसी ने कहीं भी रुचि नहीं दिखाई। वो बस उसी तरह बिस्तर पर उदास-सी लेटी रही।

सू ने जांसी के कमरे में ही अपना ड्राइंगबोर्ड जमाया और पेंट करने लगी, बीच-बीच में वो कुछ न कुछ गुनगुनाती भी की शायद जांसी का ध्यान बीमारी से हटे।

विलियम सिडनी पोर्टर अपने उपनाम ओ हेनरी से पहचाने और पुकारे गये। 11 सितम्बर 1862 को ग्रीन्सबोरो, अमेरिका में उनका जन्म हुआ। वे लघुकथाकार थे। उनकी कहानियों को आश्चर्यजनक अंत और मजाकिया कथन के लिए जाना जाता है। उनके कार्यों में 'द गिफ्ट ऑफ द मैगी', द डुपलिसिटी ऑफ हैग्रेव्स और द रैनसम ऑफ रैडचीफ का सृजन सम्मिलित है। 5 जून 1910 को न्यूयार्क शहर में आपका निधन हो गया।

अचानक सू को लगा कि जांसी कुछ बड़बड़ा रही थी। सू झट से जांसी के करीब आई, देखा जांसी की नजरें खिड़की के बाहर टिकी, किसी चीज को गिन रही थी, 'बारह, ग्यारह, दस... सात...।'

सू ने बाहर झांका, एक अंगूर की बेल दीवार के सहारे ऊपर चढ़ रही थी। तेज हवाओं से उसकी तकरीबन सभी पत्तियां झड़ चुकी थीं।

'क्या हुआ यार।' सू ने जांसी से कहा।

'छै...' जांसी फिर फुसफुसाई। 'देखो अब तो वे और तेजी से गिर रही हैं। तीन दिन पहले ही की तो बात है जांसी। जानती हो तब इस बेल पर सौ पत्तियां रही होंगी और देखो अब सिर्फ पांच बची हैं।'

'अरे भाई पतझड़ का मौसम है पत्ते तो गिरेंगे ही।' सू ने जोड़ा।

'जानती हो सू जब आखिरी पत्ती गिरेगी... मैं मर जाऊंगी, और जानती हो यह बात मुझे सिर्फ तीन दिन पहले ही पता चली।' जांसी की इस बात पर सू चिढ़ गई।

'क्या बेवकूफी की बात कर रही हो, इन पुरानी पत्तियों और तुम्हारे अच्छे होने के बीच क्या रिश्ता है।' और डाक्टर भी तो कह रहा था कि तुम ठीक हो चली हो।

जांसी चुप ही रही, सू ने सूप तैयार किया। जांसी ने टाल दिया, 'मुझे भूख नहीं लगी है। देखो सू अब उस बेल पर बस चार पत्तियां बची हैं। मैं तो बस इतना चाहती हूं कि आखिरी पत्ता भी अंधेरा होने से पहले ही गिर जाए और मैं हमेशा के लिए सो जाऊं।'

सू जांसी के सिरहाने बैठ गई, उसे चूमा और बोली, 'पेंटिंग पूरी करनी है, अगर तुम वादा करो कि बाहर नहीं झांकोगी तो मैं पर्दे खींच दूं ताकि मुझे पेंट करने के लिए जरूरी रोशनी मिल सके। मैं चाहती हूं कि जल्दी से ये पेंटिंग पूरी हो जाए ताकि हमें कुछ पैसा मिल सके।'

'ठीक है' लेकिन अपनी पेंटिंग जल्दी पूरी करो, मैं इंतजार करते-करते थक गई हूं। बस अब आखिरी पत्ते को गिरते हुए देखना चाहती हूं और उतनी ही शांति से दूर जाना चाहती हूं जैसे ये आखिरी पत्ता गिर जाएगा।

'अच्छा तुम सोने की कोशिश करो। मैं बैरम को बुलाती हूं। मुझे एक बूढ़े मजदूर की तस्वीर बनाना है।'

जांसी ने आंखें बंद कर लीं। सू बैरम के घर चली गई। बैरम उसी इमारत के सबसे निचले तल पर रहता था। बैरम भी एक चित्रकार था। उमर होगी कोई साठ साल। उसका ख्वाब था कि वो कोई 'नायाब' चित्र बनाए। मगर उसका ये ख्वाब अभी ख्वाब ही था। सू ने एक सांस में जांसी का सारा किस्सा बैरम को कह डाला।

'वो बेवकूफ है क्या? वो इतनी मूर्ख भी हो सकती है?' बैरम ने हैरत और गुस्से से कहा।

'उसे बहुत तेज बुखार है, न तो कुछ खाती है न पीती है। समझ में नहीं आता क्या करूं।' सू ने कहा।

बैरम और सू दोनों जांसी के कमरे में आए। जांसी सो चुकी थी, सू ने पर्दे लगाए और वे दोनों दूसरे कमरे में चले गए।

सू ने देखा कि अब उस बेल पर बस एक पत्ता ही रह गया है। जोरदार बारिश के साथ बर्फीली हवाएं भी चल रही थीं। लगता था कि वो इकलौता पत्ता अब गिरा कि तब गिरा। बैरम बगैर कुछ कहे अपने घर चला गया।

अगली सुबह जांसी की आंख खुली, कमजोर सी आवाज आई, 'पर्दे खोल दो सू।'

सू ने बोझिल मन से पर्दे खोल दिए।

'अरे, देखो व पत्ता अभी भी गिरा नहीं। बिल्कुल स्वस्थ

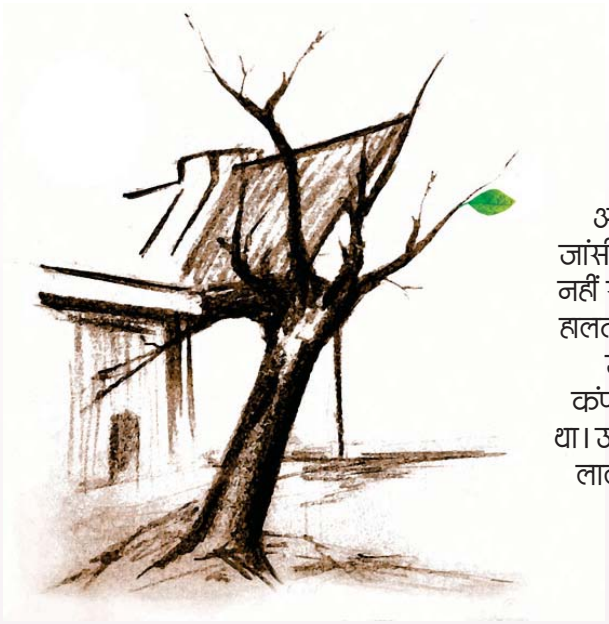

अगली सुबह सू जांसी के सिरहाने बैठ गई, उसने जांसी का हाथ अपने हाथों में ले लिया। `जांसी, बैरम नहीं रहा। सिर्फ दो दिन के निमोनिया में ही उसकी ये हालत हो गई। जानती हो पहले दिन जब चौकीदार ने उसे देखा तो उसके कपड़े गीले थे और वो ठंड से कंपकपा रहा था। वो उस तूफानी रात को बाहर गया था। उसके बिस्तर के पास उसे एक सीढ़ी और जलती लालटेन मिली। इसी सीढ़ी के पास हरे, पीले रंग का पैंट भी पड़ा था।'

और हरा लग रहा है। तेज हवाएं, तूफान सब मिलकर भी इसे कहां गिरा पाए।' जांसी ने पत्ती को देखकर कहा।

'हां जांसी, गुजरी रात मैंने भी बाहर तेज सरसराहट सुनी थी, मुझे लगता था कि ये पत्ता गिर जाएगा।'

सू अपनी बात कह पाती कि जांसी बोली, 'हां लेकिन ये आज तो नहीं ही बचेगा और फिर इसके गिरते ही मैं मर जाऊंगी।'

'तुम्हें कुछ नहीं होगा जांसी। तुम्हें अपने दोस्तों के लिए जीना होगा, अगर तुम्हें कुछ हो गया तो मेरा क्या होगा।' सू की इस बात पर जांसी के चेहरे पर एक दुबली-सी मुस्कुराहट आई। उसने आंखें बंद कर लीं।

बीच-बीच में वो खिड़की से बाहर एक नजर देखती। हर बार उसे वो इकलौता पत्ता मजबूती से लटका दिखता, जैसे कि बिल्कुल बेल से चिपक गया हो।

शाम होते-होते एक और तूफान आया। लेकिन पत्ता टस से मस न हुआ।

जांसी देर तक पत्ते को निहारती रही। उसने कुछ देर बाद सू को आवाज दी।

'मैं कितनी बुरी लड़की हूं सू। तुमने मेरा इतना ख्याल रखा और मैंने तुम्हें रत्ती भर हिम्मत नहीं दी, सच मैं बहुत दुखी हूं, शर्मिंदा हूं सू। इस आखिरी पत्ते ने बता दिया कि मैं कितनी कमजोर हूं। मर जाने की चाह, सचमुच बुरी बात है।' सू जांसी से लिपट गई।

कुछ देर बाद जांसी ने गरमागरम सूप लिया और फिर अपनी शक्ल देखी, अपने बाल ठीक किए। मुस्कुराई।

डाक्टर दोपहर को आया, जांसी में उसने जीने की ललक देखी और कहा, 'वह अब जल्दी ही ठीक हो जाएगी। मैं चलता हूं, मुझे बैरम को देखना है। उसे निमोनिया हो गया है, शायद ही बच पाएगा।' कहकर डाक्टर चला गया।

अगली सुबह सू जांसी के सिरहाने बैठ गई, उसने जांसी का हाथ अपने हाथों में ले लिया। 'जांसी, बैरम नहीं रहा। सिर्फ दो दिन के निमोनिया में ही उसकी ये हालत हो गई। जानती हो पहले दिन जब चौकीदार ने उसे देखा तो उसके कपड़े गीले थे और वो ठंड से कंपकपा रहा था। वो उस तूफानी रात को बाहर गया था। उसके बिस्तर के पास उसे एक सीढ़ी और जलती लालटेन मिली। इसी सीढ़ी के पास हरे, पीले रंग का पैंट भी पड़ा था।'

जरा खिड़की से बाहर तो देखो। क्या तुम्हें इस पत्ते के न हिलने-डुलने और न गिरने पर आश्चर्य नहीं हुआ। जानती हो ये बैरम की नायाब कलाकृति है जिसे उसने तब पेंट किया जब वो आखिरी पत्ता गिरा था।

(हिंदी अनुवाद : सुशील शुक्ला)

❑❑❑

आश्चर्य वृतांत

अंबिका दत्त व्यास

सारेऽपि सतीन्द्रजालमपरं यद्यस्ति तेनापि किम्'... इस संसार के रहते यदि कोई दूसरा इंद्रजाल भी है, तो इससे क्या? (कवि का अभिप्राय यह कि संसार ही सब से बड़ा इंद्रजाल है।

चित्रकूट से कुछ दक्षिण को झुकते, पुश्करिणी तीर्थ के पास विराधकुंड नामक एक तीर्थ है। वहां की भूमि भूपहाड़ों के कारण अत्यंत कठिन और पाषाणमय है। वहां लगभग सोलह सत्रह हाथ की चौड़ाई का गोल एक कुवां ऐसा गहरा है, कि उसके देखने ही से ऐसा आश्चर्य होता है कि इन चट्टानों को तोड़कर इस घोर जंगल में यह किस बली ने खुदवाया है। वहां यह बात प्रसिद्ध है कि श्री रामचंद्र जी ने विरोध राक्षस के गाड़ने को गड़हा करने के लिए पृथ्वी में बाण मारा, तब पाताल तक छेद हो गया था सो यही है। अब तक लोग उसमें बड़े पत्थरों के ढोके छोड़ते हैं, पर वह ऐसा गहरा है कि खड़का तक नहीं सुन पड़ता है। वह कितना गहरा हे और कैसा है इसके निश्चय करने को अंगरेज लोग बहुत दिनों से पीछे पड़े हैं पर अभी तक कुछ पता नहीं लगा। 1 मार्च सन् 1884 को अमेरिका के प्रसिद्ध प्रोफेसर, 'लूफ लिरपा' वहां पहुंचे, उसी के पास तंबू तान डेरा डाला और दूरबीन लगा नाप-जोख कर यह निश्चय किया कि किनारों की तरफ चारों ओर संधी से अनेक घास फूस और पेड़ वगैरह निकल आये हैं। यदि किसी किनारे से कुछ लटकाया जायगा तो उन झाड़-झंखाड़ों में फंस जायगा। इसीलिए जैसे कुएं में घरारी पर से बड़ा-बड़ा घड़ा लटकाया जाता है, वैसे ही एक बड़ी घरारी पर से कल के द्वारा एक भारी लंगर इसके बीचोंबीच लटकाया जाय। उसी से इसकी गहराई का पता लगैगा। बस 5 तारीख को कल और लंघर मंगाने के लिए बम्बई पत्र भेजा गया और 14 तारीख को सब सामान आ पहुंचा और 31 मार्च तक खोद खाद गाड़ गूड़ कर, घरारी ठीक ठीक जमा दी गई।

और 1 अप्रैल को सबेरे 7 बजे प्रोफेसर साहब के साथ और भी कई अंगरेज लोग चारों ओर दूरबीन ले ले कर बैठे और घरारी

जिन साहित्यकारों ने पहले-पहल हिन्दी विज्ञान लेखन किया उनमें अम्बिकादत्त व्यास का नाम प्रथम पंक्ति में शुमार है। आपने कवित्त, सवैया की प्रचलित शैली में ब्रजभाषा में रचना की। कवि अपनी असाधारण विद्वत्ता तथा प्रतिभा के कारण समकालीन विद्वन्मण्डली में भारत भास्कर, साहित्याचार्य, व्यास आदि उपाधियों से विभूषित थे। श्री अंबिकादत्त व्यास जी का जन्म 1858 ई. में जयपुर में हुआ। मात्र 12 वर्ष की अवस्था में काशी कवितावर्धिनी सभा ने सुकवि की उपाधि से आपको सम्मानित किया। 1900 ई. में 42 वर्ष की आयु में महाकवि का सम्मान प्राप्त कर व्यास जी पच्चतत्व को प्राप्त हो गये।

पर से 45 मन का लंघर लटकाया गया। उस गड़हे में बड़ा ही घोर अंधकार, था, इसलिए प्रोफेसर साहब ने इस लंघर में एक बड़ा लम्प भी बांध दिया था कि ज्यों ज्यों नीचे जाय त्यों त्यों उजाला भी होता जाय और ऊपर से सब कुछ देख भी पड़ता जाय। बस धीरे धीरे लंघर लटकने लगा और उस अंधेरे में के पेड़, झाड़ झंखाड़, मकड़ियो के जाले, सांपों की केंचुलियां, बिल और संधो में बैठे बिच्छू आदि जंतु देख पड़ने लगे। प्रोफेसर साहब उसे देख देख अपनी बही में कुछ लिखते जाते थे और वह लटकता जाता था। यहां तक दूर होने के कारण अंत में वह लंघर केवल एक गुब्बारे या तारे ऐसा चमकने लगा और उसके चारों ओर केवल अंधेरा देख पड़ने लगा।

नौ बजने के समय साहब ने निश्चय किया तो वह लंघर दो माइल और (337) तीन सौ सैंतीस गज नीचे जा चुका था। जब पंद्रह मिनट और बीते तब वह लंघर एकाएकी लटकने से रुक गया। साहब ने हिसाब किया तो उतनी देर में 450 गज और नीचे पहुंचा था। अर्थात् कुल दो माइल और 787 गज नीचे आ पहुंचा था।

जब उन लोगों ने यह निश्चय किया कि अब लंघर का नीचे की ओर लटकाना किसी प्रकार हो ही नहीं सकता तो हार कर ऊपर ही खींचने लगे। पर खींचने के समय उस लंघर का बोझा बढ़ जाना देख साहब को लोगों को भी बड़ा आश्चर्य हुआ और चकचिहाकर देखने लगे कि देखें, लंघर के साथ उलझा पुलझा क्या आता है।

फिर क्रम से पहले धीरे धीरे उस लंघर की लालटेम चमकने लगी, फिर उसका भी कुछ कुछ आकार देख पड़ने लगा, फिर जब तक लोग एक टक लगाकर देखते ही हैं तब तक तो उस गंभीर गड़हे से एक बड़ी गूंज के साथ ध्वनि भी आने लगी। तब तो सभों को और भी आश्चर्य हुआ और ध्यान देकर सुनने से जाना गया कि 'धीरे-धीरे' यह शब्द है। साहब को आदमी के शब्द का निश्चय होते ही लंघर धीरे-धीरे खींचा जाने लगा और थोड़ी देर में यह शब्द स्पष्ट सुन पड़ने लगा। फिर देखा कि जाले औ सूखी लताओं के साथ एक आदमी उस लंघर में चिपट रहा है। देखते ही साहब ने औ और लोगों ने भी उसे धीरज धराया कि 'घबराओ मत, लंघर को जोर से पकड़े रहो।' ज्यों ही लंघर ऊपर आया त्यों ही कल बल से साहब ने उस आदमी को लंघर से उतारा और उसके जाले छुड़ा, धूल झाड़ी, पर घबराहट के एकाएकी बेचेत-सा होकर हांफता हुआ लेट गया।

उसके कपड़े लत्ते से जान पड़ता था कि राजपुताने की ओर का रहने वाला, किसी भले घर का आदमी है। झट छाया में ले जाकर, लोगों ने उसे पानी के छींटे दे, हवा कर ठंढा किया, घंटे भर में वह अपने में आया। जल पीने के अनंतर उसने पूछा कि यह कौन स्थान है? समीप कौन पहाड़ी है? यहां से गया जी कितनी दूर हैं? और आप लोग क्यों जुटे हैं?

ये प्रश्न सुन के लोग और भी चकित हुए, क्योंकि इस समय ये कई बातें आश्चर्य की उपस्थित हुईं कि पहले तो उस विराध कुंड ही की गहराई बहुत लंबी पाना और फिर उसमें से विचित्र रीति से एक आदमी का निकलना, तिस पर भी वह आदमी राजपुताने की ओर का, और फिर भी वह पूछने लगा कि यहां से गया जी कितनी दूर हैं। उस समय उन लोगों को गड़हे की गहराई का कौतुक छोड़, इसकी बातें सुनने का एक नया ही कौतुक आ उमगा और चारों ओर से भीड़ों के ठट्ट जमने लगे।

पहले उसे संक्षेप से यह कह सुनाया गया कि यह चित्रकूट के पास का जंगल है और झन्ना पन्ना, पथर कछार वगैरह की राजधानी यहां से समीप है। वे पहाड़ भी उसी लगाव के हैं। यहां से गया जी सैकड़ों कोस पर हैं तथा हम लोग आज इस गड़हे की गहराई नापने को इकट्ठे हुए थे और इसीलिए हम लोगों ने यह लंघर लटकाया था। पर इस लंघर के साथ आपको देख, अब हम लोगों को कैसा आश्चर्य और कौतुक हो रहा है सो कह नहीं

सकते। आप कौन हैं? कहां के हैं? कैसे इस गड़हे में आये? और कब से इसमें हैं? वहां का क्या हाल है? हम लोगों को बड़ा ही आश्चर्य है कि आप इधर से गिर के भीतर जाते तो जीते कैसे? कोई सुरंग होती तो क्या इस अंगरेजी राज्य में भी छिपी रहती? भूगर्भ की किसी विचित्र सृष्टि के आदमी होते तो हम लोगों से झट पट बोल चाल कैसे मिलती?

यह सुन कर वह आदमी और भी आश्चर्य में भर उठा, इधर-इधर ताकने लगा और बोला कि 'क्या! गयाजी सैकड़ों कोस पर हैं?' वे बोले- 'हां हां, सैकड़ों कोस पर है' यह सुन वह चार पांच मिनट तक चुप होकर मन ही में विचारने लगा कि 'ओः! परमेश्वर की क्या माया है! मैं कहां का रहने वाला, कहां सैर करने गया! कहां जा पड़ा!!, और कहां आ निकला!!!' फिर कुछ ठठक कर प्रगट बोला कि 'अच्छा आप लोगों को मेरा इतिहास सुनने का कुतूहाल हो तो सुनिये, मैं कहूंगा। मेरी कथा बड़ी लंबी चौड़ी और आश्चर्यमयी है।' फिर जब चारों ओर से 'हां हां कहिये, कहिये, हमारा बड़ा जी लगा है' यह ध्वनि हुई तो वह बोला कि 'अच्छा तो मैं बड़ी देर से प्यासा हूं, थोड़ा जल पी लूं तो स्वस्थ होकर कहूं'।

फिर उसने उठ कर, पास ही वाले एक पहाड़ की चट्टान के बीच से झरते हुए झरने का टटका पानी पिया और हाथ मुंह धो, आखें मल, रुमाल से मुंह पोछता हुआ, फिर उसी समाज में आ बैठा और चारों ओर से लोगों की एकटक अपनी ही ओर ताकता हुआ देख, अपनी कथा कहने लगा। 'मैं राजपुताने का रहने वाला एक वैश्य हूं पर मैं बहुत दिन से कलकत्ते में कोठी का काम करता हूं और प्रयाग काशी पटने आदि स्थानों में बेर-बेर आता जाता रहता हूं। नये नये नाटकादि तथा संवादपत्रों को उलट पुलट किया करता हूं, इसलिये, मेरी बोलचाल से आप लोग कुछ भी न पहचानियेगा कि यह पछांही है, पर हां, हम लोग अपने वेष ही बदलते हैं।

मैं कलकत्ते से अपने पिता का श्राद्ध करने गयाजी आता था। मैं अकेला न था। साथ दस पंद्रह पुरुष और भी थे। हम लोगों ने तीर्थ में जा विधिपूर्वक श्राद्ध किया। तक इच्छा हुई कि अब गया के इधर उधर घूमकर पहाड़ों की भी हवा खांय। पहले हम लोग बुद्ध गया गये। यह गया जी के दक्षिण लगभग तीन कोस की दूरी पर है। वहां एक बड़ा भारी बुद्ध का मंदिर है, जिसे बहुत पुराना और टूटा फूटा समझ कर पहले ब्रह्मा के बादशाह ने मरम्मत करवाई थी और अब सर्कार अंगरेज बहादुर की ओर से भी बड़ी मरम्मत कराई जा चुकी है। सचमुच ऐसा ऊंचा और विशाल मंदिर मैंने आज तक कहीं नहीं देखा था। वहां के स्थान स्थान में बुद्ध के चिह्न देखने से मुझे इस देश में किसी समय बौद्ध मत के पूरे फैल जाने का स्मरण होता था। वहां एक सम्पन्न महंत की बड़ी गद्दी है। इनको वहां के छोटे राजा ही कहना चाहिये। इनके यहां साधुओं की जमात है और विदेशियों को नियम से सीधा मिलता है। ये लोग शंकरमतानुयायी हैं। इनके देखने से मुझे साथ ही यह भी स्मरण हुआ कि स्वामी शंकराचार्य कैसे प्रतापी और बौद्धमत के विरुद्ध थे कि जहां बौद्ध का मंदिर, वहां साथ ही उनकी गद्दी भी अब तक जम रही है।

फिर हम लोग ब्रह्मयोनि के ऊंचे पहाड़ पर गये। यह गया के बहुत समीप है। इस पर से गया और साहबगंज के नगर भर की शोभा देख पड़ती थी। ऐसा जान पड़ता था कि किसी ने उस नगर का चित्र लिख, पैर के पास धर दिया है। जैसे काशी और कलकत्ते में मिंट और हाईकोर्ट, नगर भर की शोभा देखने को ऊंचे-ऊंचे स्थान हैं, उन्हीं की टक्कर में मुझे गया में ब्रह्मयोनि का पहाड़ जान पड़ा।

मैं उसे भलीभांति देख भाल कर, फिर बस्ती में आया, वहां लोगों के मुंह से बराबर के पहाड़ की बड़ी प्रशंसा सुनी कि वह अभी तक सिद्धस्थान है और वहां बहुत तपश्वी मुनि लोग भी रहते हैं। तब मैं बड़ा उत्कंठित होकर चार पांच इष्ट मित्र और नौकरों के साथ पहाड़ की ओर चला।

यह पहाड़ गया से कुछ दूर पड़ता है और मैं सैलानी आदमी, इसलिये दूसरे दिन पहुंचा। रात में कई एक गांव पड़े।

यों सांझ होते होते उस बराबर के पहाड़ की जड़ में पहुंचे। उस समय एक तो सांझ होने के कारण अंधकार होता ही आता था फिर उस पहाड़ के पेड़ों ने तो गझिन होने के कारण, एकाएकी नील ही स्वरूप धारण किया। वह आकाश चूमता हुआ ऊंचा पहाड़-वह श्याम पेड़ों की घटा - वह ठंडी हवा का सर्राटा - वह बनैले जंतुओं का शब्द - वह बड़ी कंदराओं का गूंजना-औ वह एक विलक्षण सन्नाटा, इस समय भी मुझको प्रत्यक्ष ही सा जान पड़ता है। फिर हम लोगों का एक साथी, जो मार्ग जानता था, आगे आगे चला, हम लोग पीछे पीछे चले। उसी पेड़ों के झमाट में, एक ऊंची सी भूमि पर चढ़ना आरंभ किया। पैर पैर पर भालू का भय होने लगा। मेरे पास कोई शस्त्र न था पर मैंने अपनी छड़ी ही कस के थामी। तब फिर उतार की भूमि आई। एक ने कहा- 'इस ठिकाने भूत पिशाच अधिक रहते हैं, कोई संग छोड़ के आगे पीछे मत होना।' दूसरे ने कहा 'हां, यहां ही बैठ के आस लगाये

रहते हैं कि हमें कोई गया में पिंड दे।' मैं दोनों की बात सुन के मन ही मन हँसा और धीरे से कहा कि 'हां, पर यहां के भूत, भालू और बाघ हो के विचरते हैं।'

इतने में रात हो गई, चंद्रमा उगे, दूध की सी वर्षा होने लगी, झरनों का जल चमाचम चमकने लगा, हवा से पेड़ों का कांपना देख पड़ने लगा, और चारों ओर बिखरे हुए काले पत्थर भालुओं का भ्रम देने लगे।

मैं बहुत थक गया था, सो चुपचाप एक ऊंचे पत्थर पर बैठ गया। मेरे साथियों में से यह बात किसी ने न जानी औ मैंने भी न कहा, समझा कि झट साथ हो ही जाता हूं, कहूं क्या। फिर थोड़ी देर उसी शीतल मंद सुगंध वायु का अनुभव कर उठ कर, मैंने अपने साथियों को जगाया। वे भी ऊं आं कर, कर्र मर्र हो, अंगुली तोड़, बांह मरोड़, देह ऐंठ, लोट पोट कर, उबासी ले, आंखें मल, कपड़ा सम्हाल, इधर उधर देखते औ आंख मिचमिचाते उठ बैठे हुए। मैंने कहा 'अब चट-पट नित्य-क्रिया से निपट लो तो पर्वत-यात्रा का आरंभ करें, फिर घाम हो जायगा तो कुछ न बनेगा।

बस, थोड़ी देर में हम सब नित्य-नियम से निपट, कुछ जलपान कर, झट पहाड़ पर चलने को उद्यनत हुए और एक वहीं वाले बाबाजी के चेले को मार्ग बतलाने के लिए साथ लिया।

वह पहाड़ी बाबाजी के चेला तो, बंदर की तरह झट चढ़ चले, पर हम लोग गिरने के डर से धीरे-धीरे चढ़ते जाते थे और इधर उधर देखते भी जाते थे। इतने में टेढ़े मेढ़े होते, घूमते, हांफते सुस्ताते, एक चढ़ाव पूरा किया। वहां थोड़ी दूर तक कुछ बराबर भी भूमि थी। हरे हरे पेड़, घेर बांध, डाल फैलाये थे। हवा चलने से उनकी डालें हिलती जाती थीं। ऐसा जान पड़ता था कि हम लोगों को चढ़ाव से थके औ पसीनों में झाब झाब देख, पेड़ अपने पास बुला रहे है।

हम लोग थाक मिटाने के लिए थोड़ी देर तक उन्हीं पेड़ों के नीचे बैठ गये और फिर के पृथ्वी की ओर ताके तो एक विचित्र शोभा देख पड़ने लगी। कहीं ऊंचे ऊंचे तालों के झमाट, कहीं पीपल बड़ आदि, कहीं और सैकड़ों जंगली पेड़, कहीं पत्थरों के ऊंचे चट्टानों के चित्र की भांति फैले थें, भांति-भांति के पक्षी आनंद से कुहूक मारते हुए, एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर जाते थे। ऊपर से दखने में इसकी अपूर्व शोभा देख पड़ती थी। बस क्या कहैं।

सब लोग बैठे हवा खा रहे थे और शोभा देख रहे थे, इतने में मुझसे न रहा गया। मैं उठ कर इधर उधर टहलने लगा और शोभा देखने लगा। उन सफेद छींटे वाले काले पत्थरों को और पत्थरों को लपेटती हरी लताओं को देखता ज्यों आगे बढ़ा कि एकाएकी मेरे कान में शब्द पड़ा 'ओः की शर्वनाश!' मैं कलकत्ते में रहने के कारण बंगभाषा समझता था, इसलिए समझ गया कि यह कोई घबराया बंगाली है। पर कहीं कोई पुरुष न देख पड़ा। मैं उसके खोजने के यत्न में चुप मार, सटक के खड़ा हो गया। इतने में फिर सुना कि 'आः एखन कि करी, कोथाय जाई'। अरे! क्या करुं? कहां जाऊं?, मैं इसी ध्वनि के अनुसार घूमा और एक छोटे से शिखर के बगल में एक पेड़ की छाया में एक चट्टान पर देखा कि एक बंगाली बाबू शोकमुद्रा से बैठे हैं।

मैं तो अचानक उन बंगाली बाबू के सामने आ गया सो एक बेर तो वे मुझे देख चौंक उठे, फिर स्थिर होके मेरी ओर देखने लगे। मैंने उन्हें देखा तो विचित्र ही झांकी हुई। उस समय उनका सांस फूल रहा था, आंखें चपल हो रही थीं, मुंह पर पसीने झमझमा रहे थे, छाती लपलप करती थी और मुंह लाल हो रहा था। मैं उनसे पूछा 'बाबू! आप घबराये से क्यों देख पड़ते हैं"। तब बंगाली माशा थोड़ी सी देर ठमक कर बोले अम क्या बोलेगा हमारा सर्वनाश हो गया'। मैं क्या कहूं, मेरा तो सर्वनाश हो गया, मैंने समझा कि क्या सर्वनाश हुआ! क्या किसी ने ठोकर मार के कुछ बकुचा सकुचा तो न छीन लिया! फिर मेरे पूछने पर उन ने बंगला हिंदी और अंगरेजी की खिचड़ी भाषा में अपना चरित कह सुनाया जिसका निचोड़ यह था कि उनके साथी लोग बिछुड़ गये थे, सो सब को इधर उधर ढूंढ़ ढांढ़ कर थके हुए, छके से सिसक रहे थे। मैंने उनसे कहा कि आप डरिए मत, हम लोग हैं न! आपको पहाड़ पर से कुशल पूर्वक उतार ले चलैंगे और आप को रास्ते लगा देंगे। वह विचारे गद्‌गद् हो गये और खड़े हो मुझसे पूछने लगे कि 'आप एखाने कहां शे आई गीया'। आप यहां कहां से आ गये?, मैंने कहा कि 'मैं भी यात्री हूं। कई साथियों के साथ यहां आया हूं। उधर और लोग बैठे हैं। मैं इधर टहल रहा था। इतने में आप की कुछ-कुछ आहट लगी सो इधर ही चला आया, अब आइये चलैं, साथियों से मिलैं'।

बंगाली माशा मेरे पीछे पीछे चले। मैं भी वैसे ही शोभा देखता बाबू माशा से बात करते फिरा। चलते चलते देर हो गई, पर साथी लोग न देख पड़े। तब अचानक मेरी आंखें चकरा गई। मैं खड़ा होकर देखने लगा कि कहां आये, कितनी दूर आये और वे लोग कहां है, पर उन पत्थरों के ढोंकों में कुछ संकेत न मिला।

मैंने उनसे कहा कि आप डरिए मत, हम लोग हैं न! आपको पहाड़ पर से कुशल पूर्वक उतार ले चलैंगे और आप को रास्ते लगा देंगे।
वह विचारे गद्‌गद् हो गये और खड़े हो मुझसे पूछने लगे कि `आप एखाने कहां शे आई गीया'।
आप यहां कहां से आ गये ?, मैंने कहा कि `मैं भी यात्री हूं। कई साथियों के साथ यहां आया हूं। उधर और लोग बैठे हैं। मैं इधर टहल रहा था। इतने में आप की कुछ-कुछ आहट लगी सो इधर ही चला आया, अब आइये चलैं, साथियों से मिलैं'।

तब मैंने खड़े होकर कुछ देर विचारा तो स्मरण हुआ कि चढ़ के आते ही एक पीपल का पेड़ देखा था और दो तीन साथी उसके नीचे बैठे ठंढे होते थे। मैं इधर उधर दौड़ भाग कर उस पीपल को देखने का उद्योग करने लगा तो देखा कि उस पीपल को छोड़ आगे तक आ गया हूं और उस पीपल के नीचे, आस पास कोई साथी नहीं है। मैं तो एक ऊंचे ढोके पर खड़ा हो, चुपचाप एकटक साथियों को ढूंढ़ने की दृष्टि इधर उधर फेंकने लगा, इधर बंगाली महाशय मुझे उदास देख, मुझसे भी अधिक घबराने लगे और पूछने लगे कि 'की की हयेछे आपनी व्यस्त केनो' क्या? ख्क्या हुआ है? आप घबराये क्यों हैं, मैंने बंगला ही में उन्हें समझा दिया कि 'मेरे साथी यहां ही थे सो न मालूम क्या हुए!' बंगाली बाबू लंबा सांस लेकर बोले- 'ओः सर्वनाश'। मैंने कई साथियों का नाम लेकर पुकारा पर कोई वहां हो तब तो बोले! थोड़ी देर चिंता में पड़ मैंने विचार लिया कि अब चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वे मेरे खोजने ही को इधर उधर कहीं गये होंगे पर इस 'देखतभूली' पहाड़ में आप भी बहक गये होंगे।

मैंने थोड़ी देर तक वहां ही ठहर, उन लोगों की प्रतीक्षा की। जब उनके आने का कोई चिह्न न देखा तब बंगाली बाबू से कहा कि बाबू! चलिये, हम लोग पहाड़ की कुछ सैर कर उतरैं। बंगाली बाबू ने कहा- 'ओरे बाबा बड़ा सैर हुआ अब सैर करने सकता नहीं, अब नीचे चोलो' ख्अरे बाबा! बड़ी सैर हुई! अब सैर नही कर सकता, अब नीचे चलो,। मैंने कितना कहा, पर वे न माने, हार कर मैंने उस पहाड़ से उतरने का उद्योग किया। जिस घाटी से चढ़े थे, उसी से उतरने लगे।

उतरने के समय मैंने एक ऊंचे चट्टान से नीचे की ओर देखा तो चिचित्र ही ढंग देख पड़ा। मैं यों उस शोभा में डूब ही गया था कि ओः, कहीं किसी ने घिघिया कर मुझे पकड़ लिया। मैंने अचानक चकपका कर अपनी दृष्टि उधर फेरी तो देखा कि यह कृपा उन्हीं 'शमैनाश' वाले महाशय ने की थी। मैंने पूछा-'क्या बाबू! क्या हुआ, कुछ कहिये तो?' उन ने कहा- 'आर कि बोलबो' ख्अब और क्या कहूं,?, मैंने कहा- 'कुछ तो भला कहिये' तो उन ने जो कुछ गोल अक्षरों में कहा, उससे यही निकला कि इस पेड़ के नीचे से क्या जाने क्या निकला कि उस पेड़ के नीचे चला गया। फिर मैंने उन्हें बहुत समझा बुझा कर ठिकाने किया और कहा कि देखिये, अब जी कड़ा कीजिये, अब नीचे उतरते हैं। अब भी घबराइयेगा तो पैर फिसलते ही गड गड गड गड धम् हो जाइयेगा।

फिर मैं बायें हाथ से उनका हाथ पकड़ धीरे धीरे उतरने लगा। उतरने के समय कितने कितने उपद्रव भये सो कहां तक कहूं। अंततः जब हम लोग लगभग आधा पहाड़ उतर आये तक जहां धीरे धीरे उतर रहे थे, वहां से आगे पास ही एक गुफा ऐसा बड़ा भारी गढ़ा था और उसके मुंह पर लता जाल ऐसा छा रहा था कि उसका आकार सब ढँप रहा था। यदि मैं उस सुध से आता तो मैं ही उसमें गिर पड़ता पर दैवात् मैं कुछ दहनी ओर झुका उतर रहा था, पर बाबू साहब मेरा अचानक यही देखा कि एकाएकी चिल्ला कर और घिघिया कर बाबू ने मेरा पांव पकड़ लिया और साथ ही जब तक मैं सम्हलूं-सम्हलूं तब तक मेरे भी, उनके गिरने का ऐसा झोंका लगा कि उनके साथ ही मैं भी उस गढ़े में गड़गप्प हो गया।

अब यह वृत्तांत मैं स्पष्ट नहीं कर सकता कि हम लोग कितनी दूर तक नीचे गिरते चले गये, केवल इतना अवश्य कह सकता हूं कि उस अंधकार में हम लोग जिधर ही शरण लेते थे, उधर ही एक और गढ़ा ऐसा पाते थे कि उसमें फिर लत्थ पत्थ हो ढलक चलते थे, ऐसे ही क्या जाने कै बेर गड़ गड़ गड़ गड़ धम् हुआ अंत मे एक प्रशस्त सी भूमि में हम लोग जा पड़े और थोड़ी देर तक ज्यों के त्यों शिथिल, अचेतन से पड़े रहे।

यों हम लोग वहां बैठे ही हैं कि देखा तो कंदरा के एक कोने की ओर एक सूक्ष्म छेद में से कुछ प्रकाश निकला। देखते ही मुझको बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह नीचे से प्रकाश कहा से और कैसे आया! मैं विचारने लगा कि यह कोई मणि की प्रभा है कि कोई जड़ी इस अंधेरे में लगी है और चमक रही है कि कोई भयंकर सर्पादि अपने मुंह से ज्वाला छोड़ रहा है कि कोई जुगनूं से भी चमकदार तितली बैठी? तब तक देखा कि वह किरण इधर से उधर घूमी और उस ओर कुछ धमधमाहट भी जान पड़ी, जिससे विदित हुआ कि कोई प्रकाशमान पदार्थ चला है। मेरे साथी तो कुछ डरे, पर मैंने उन्हें रोका औ चुपचाप उस छेद के समीप आया तो कुछ पगाहट सी सुन पड़ी औ समीप समीप और कई एक छेदों से कुछ कुछ प्रभा निकलने लगी। यह देख मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ और निश्चय किया कि उस ओर अवश्य एक भारी कंदरा है और बीच में ये ढोकों की एक भींत सी बन गई है। उधर कोई यक्ष गंधर्व भूत प्रेत जो कुछ हो, उसी की यह प्रभा है। तब तक मेरे कान में एक मनुष्य का सा शब्द पड़ा तब मैंने और कान लगाया तो विचित्र सा उच्चारण से जान पड़ा कि अंगरेज बोलता है। फिर चुपके से और एकाग्र हो सुना तो जान पड़ा कि संस्कृत भाषा में

एक अंगरेज कुछ पढ़ रहा है। तब मैंने देखने के अभिप्राय से अंगुली से एक छेद की मट्टी खरखरा कर कुछ बड़ा करना आरंभ किया। तब तक उस प्रकाश में कुछ कुछ देख पड़ता था। इसलिए मेरा साथी मुझे कुछ खसर फसर करता देख, बलात् रोकने लगा। पर मेंरे डांटने पर चुप रह गया। मैंने चार अंगुल का मोखा कर, उसमें आंख लगा कर देखा तो सचमुच उधर एक अंगरेज खड़ा देख पड़ा। मैं तो चकित हो गया कि वाह! भारतवर्ष के पहाड़ों के तल तक भी अंगरेज पहुंच गये।

कोटि कोटि आश्चर्यों का अनुभव करता मैं देख रहा था तो देखा कि उसके हाथ में एक छोटी सी बड़ी चमचमाती लालटेन है। उसी की प्रभा चारों ओर छटक रही है औ साहब ने उस लालटेन को ऊंची कर एक ओर एक चट्टान पर प्रभा फैला रखी है और उसमें कुछ लिखा है उसे बांच रहा है। उसने दो दो अक्षर करके धीरे धीरे एक श्लोक बांचा। वह मुझे अभी तक कंठ है।

वह यह कि–

'मगधेश्वरवीरेण जरासंधेन भूभृता।
निबद्धाः शतशो भूपा महाध्वांतेऽत्र कंदरे।।

'मगध के वीर राजा जरासंध ने इस बड़ी कंदरा में सैकड़ों राजाओं को कैद किया', साहब ने तो यह बांचते ही झट लालटेन एक पत्थर पर रख, कक्षपुस्तिका (पाकेट बुक) निकाल, इस श्लोक को झटपट लिखना आरंभ किया। तब मैंने समझा कि हम लोग चुपचाप इस कंदरा ही मैं बैठे रहेंगे तब तो सड़ा करेंगे, पर यदि साहब के साथ ही लगे तो एक प्रकार के रस्ते लगेंगे। तब तक मेरे साथी ने फिर डर के मेरा हाथ खींच, बल से कहा कि– 'कि तुमि भूतेर जाले पड़िया छ' क्या तुम भूत के फेर में पड़ गये हो,? मैंने कहा 'नहीं, भूत नहीं है, भाग्योदय से यहां भी यह साथ मिलता है।'

दैवात् हम लोगों का शब्द साहब के कान तक गया सो साहब झट घूम कर लालटेन ले देखने लगे कि यह किसने, कहां से, क्या कहा? थोड़ी देर में उस मोखे की ओर उजाला कर बोले – 'कौन बोलटा हाई?' इधर मारे डर के मेरे साथी जी कहने लगे–'हाम नाई हाम नाई' ख्हम नही हम नहीं, पर मैंने कहा– 'साहब! हम आदमी हैं' तब साहब ने कहा– 'आदमी? वेल, किडर से?' तब मैंने कहा– 'ठहरिये, मैं सब कुछ कहूंगा' यों कह मैंने एक लात उस भीत पर ऐसी दी कि खरखरा कर कई ढोके गिर पड़े और आने जाने को खिड़की सा आवकाश हो गया। तक अचानक चमचमाती किरन इस कंदरा में आ गईं और लंबी चौड़ी साहब की मूर्ति सामने खड़ी देख पड़ी। अचानक यह देखते ही मेरे साथी के तो प्राण उड़ गये और 'ओः ओः, ओरे बाप! सर्वनाश' का हल्ला मचा, घबराने लगे। तब मैंने औ साहब ने समझा बुझा ठंढा किया तो ठिकाने आये। फिर हम दोनों उसी मोखे से साहब वाली बड़ी कंदरा में चले गए। तब साहब ने स्थिर दृष्टि से हम लोगों को देखा और हम लोगों ने साहब को देखा कि उनकी लंबी उजली दाढ़ी फरफरा रही है, उजला कुरता और पायजामा पहरे हैं, आंख पर उपनेत्र (चश्मा) लग रहा है, औ कई खलीतों में कितने ही कागद आदि के पुलिंदे अधनिकले रक्खे हैं। मेरी समझ में साहब लगभग पैंसठ बरस के होंगे पर उनका ऊंचा शरीर, दृढ़ अंग औ अंग की स्फूर्ति ऐसी थी कि बाल छोड़ सर्वांग में यौवन झलकता था। साहब के एक हाथ में वह छोटी लालटेन और दूसरे में एक काला डंडा था।

साहब ने हम लोगों का चरित पूछा सो मैंने क्रम से कहा सुनाया। तब मैंने साहब का वृत्तांत पूछा। वहां से हम लोग कुछ दक्खिन की ओर दबते हुए आगे बढ़े तो देखा कि एक बड़ा मैदान है। उस पर कुछ उजला सा भी था। उधर से एक उत्कट दुर्गंध सी आ रही है। उसी समय साहब ने लालटेन भूमि में रख, जेब से दूरवीक्षण (दूरबीन) निकाल, आंखों पर लगा, बड़ी देर तक देखा और हम लोग से कहा कि 'इसी ओर गयासुर को पछाड़ के, ऊपर पहाड़ रख, नारायण ने अपने पांव से दबाया था' इसकी कथा मैंने भी गया में सुनी थी, सो उनके इस संक्षेप से कहने ही में, मैं भी समझ गया।

तब हम लोग वहां से उत्तर की ओर दबते हुए पश्चिम चले। लगभग एक कोस के चले होंगे कि कुछ चढ़ावा सा मिलने लगा। आगे चल के देखा तो पृथ्वी में बड़े बड़े चट्टान जमाये हुए मिले और चिकनी भूमि भी मिली। फिर आगे बढ़े तो ऐसा भारी महल देख पड़ा कि जैसे कोई महाराज का गढ़ हो। वह स्थान हम लोगों को क्यों देख पड़ता, पर उस भींत की जड़ में एक ऐसे अपूर्व पेड़ों की पंक्ति थी कि वे पेड़ प्रकाशमय थे। हम लोग समीप से उन पेड़ों को देख, एक अपूर्व आश्चर्य में डूब गये कि धन्य ईश्वर! अंधेरे स्थान के लिए पेड़ भी ऐसे बनाये कि जिनके फूल और पत्तों से भी उजाला निकल रहा है। इस उजाले से वहां दिन सा हो रहा था और इस कारण उस महल के खिड़की, झरोखे आदि स्पष्ट देख पड़ते थे।

हम लोग उसके बड़े फाटक की ओर पहुंचे तो देखा कि द्वार के ऊपर बड़े अक्षरों की एक पंक्ति खुद रही है। ये अक्षर तिरहुल से कुछ कुछ मिलते थे। इस कारण इनका पढ़ना कठिन न था।

वहां यह श्लोक लिखा था कि-

'चाणाक्यो नीतिचतुरो नन्दवंशनिकन्दनः।
युद्धोपकरणैर्युक्तं गृहमेतदकारयत्।।
अग्न्यष्टनगबाह्याख्ये 27 83 शुभे यौधिष्ठिरेब्दके।
एतन्निस्मिंतिसम्पूर्तिरभूद्वर्षत्रयेण हि'।।

'नंद के वंश को नष्ट करने वाले नीति चतुर चाणक्य ने, युद्ध की सामग्रियों से भरा हुआ यह मकान; युधिष्ठिर संवत् २७८३ में बनवाया और यह मकान तीन बरसों में बन कर पूरा हुआ।'

मैंने मुद्राराक्षसादि कई ग्रंथ ऐसे पड़े थे जिससे चाणक्य की कथा मैं भलीं भांति जानता था। इसलिए इसी क्षण मुझे चाणक्य की बुद्धिमत्ता और महिमा का पुनः स्मरण हो गया और हम लोग सब कोई यह देख के चकित हो गये कि भूगर्भ के भीतर भी चाणक्य ने यह आश्चर्य रचा कर रक्खी है।

साहब ने चट वह श्लोक लिख लिया और कहा कि इस गढ़ को बाहर भीतर अच्छी तरह देखना चाहिये।

हम लोग द्वार के पास गये तो देखा कि फाटक भीतर से बंद है। कितना धक्का मुक्की किया, पर साहब ने कहा, यह व्यर्थ है, क्योंकि पहले तो ये किवाड़ ही ऐसे नहीं है कि इन पर कुछ भी हम लोगों के बल लहने की आशा हो और फिर हमें इस में और भी संदेह होते हैं। हम लोगों के पूछने पर साहब ने कहा कि आश्चर्य है कि आप राजपुताने के रहने वाले हो कर भी ऐसी बात पूछते हैं। गढ़ों के द्वार पर अनेक धोखे होते हैं। कितने ही मारकयंत्र लगाये जाते हैं। इसलिये सूधे फाटक हो के बढ़ों में बहुत समझ के घुसना होता है, सो चलो, कोई और पथ ढूंढ़ें।

तब हम लोग पथ ढूंढ़ने को इधर उधर घूमने लगे।

घूमते घूमते एक सूखा सा बांस पाया। साहब ने चट उसको उठा लिया और कहा कि इसी के आसरे हम लम लोग भीत फांद के गढ़ के भीतर जायंगे। उन ने भीत में टेढ़ा सटा के बांस खड़ा कर दिया और चट सटकते फटकते चढ़ ही तो चले। यद्यपि उस बांस के अग्र भाग से भीत अधिक ऊंची थी तौं तभी साहब ने गिरने का कुछ डर न किया और भीत के घास फूसों को पकड़ चढ़ने का यत्न किया।

अब विस्तार करूंगा तो इस किले के वर्णन का एक बड़ा ही ग्रंथ सा होय जायेगा। संक्षेप ही में सुन लीजिये कि ऊपर आते ही हम लोगों ने विचित्र शोभा देखी। छतों और बुरुजों के ऊपर छोटे छोटे ऐसे पौधों की पंगत लगी थी कि उनके फूल और पत्तों से उजाला निकलता था और उनके पास पास भीतों में ऐसे बड़े बड़े स्फटिक के दर्पण जड़े थे, कि उनसे वह प्रकाश दूना चौगुना होकर सामने दौड़ता था और किले के भीतर थोड़ी थोड़ी दूर पर ऐसी मणियां लगी थीं कि उनके प्रकाश की चांदनी सी फैल रही थी। यहां तक कि उस किले में अंधेरा कहीं खोजने से भी न मिलता

था। हम लोग शोभा देखते किसी सीढ़ी से उतरे और स्थान-स्थान में तरवार बरछी त्रिशूल कटार आदि हथियारों का समूह देख के चकित हो गये और तो जहां वहां गोले बारूद बंदूक और तोप भी जहां सहस्रों प्रकार की, सहस्रों ही देखने में आईं, जिन्हें देख देख साहब कहते जाते थे कि देखिये, आपके देशी लोग कितने प्राचीन काल से बंदूक और बारूद के प्रकार जानते है। और क्या कहूं, स्थान स्थान में झरने झरते थे। जिसके ऊपर करोड़ों जल की कलें बार के फेंक दी जायं और एक ओर हम लोगों ने देखा कि पचासों कोठरियां हैं और सबके द्वारों पर संस्कृत में कुछ कुछ लिखा था। समीप आके हम लोगों ने देखा और पढ़ा कि उनी अक्षरों में 'विशम्' 'भोज्यम्' 'शस्त्रम्' 'वस्त्रम्' इत्यादि लिखा था। विषवाली कोठरी में इतने यंत्र और मणियों के पात्रों मे विष रखे थे कि हम लोग कुछ समझ न सके और हम लोगों को यह डर हुआ कि इसकी हवा से हम लोग भी न मर जांय, इस डर से हम लोग लौट आये। 'भोज्यम्' वाली कोठरी में बड़ा ही आश्चर्य देखा। वहां सहस्रों रुई के बोरे लदे थे! एक बोरा खोल के देखा तो उसमें बटियों मिलीं। साहब ने उसी समय एक बाटी तोड़ के खाई और जै जेब में अमाई तै भर लीं और बंगाली बाबू ने भी वही कर्म किया, पर मैंने तो वैष्णवता के कारण न कुछ खाया न उठाया। साहब चकित हो, क्षण क्षण में इसकी प्रशंसा करते, दांतों से अंगुली दबाते थे कि भारतवासियों ने यह कौन सी युक्ति कहां से सीखी थी कि सहस्रों वर्ष तक खाने के सिद्ध पदार्थ न बिगड़ें।

घूम के फाटक की ओर हम लोगों ने देखा तो साहब का अनुभव ठीक पाया। फाटक के समीप एक भारी तोप, कल पर चढ़ी, भरी रखी थीं; और उसमें ऐसे यंत्र लगे थे कि फाटक खुलते ही वह आप ही छूट पड़े और सामने के सहस्रों मनुष्यों की राख की ढेरी लगा दे। किले के ठीक मध्य में एक बड़ी सुंदर भारी कोठी थी। उस में भी हम लोग घुसे। भीतर वैसा ही उजाला पाया। एक ओर से ऊपर चढ़ने की सीढ़ियां थीं। उसकी पहली सीढ़ी, पर ज्यों साहब ने पांव दिया कि सीढ़ी की ऊपर की चौकी पर खड़ा

हुआ एक मनुष्य, सिर घुमा के देखता हुआ देख पड़ा। उसको देखते ही हम लोग समझ गये कि यह बनाया हुआ मनुष्य है। फिर ज्यों दूसरी सीढ़ी पर पांव रखा कि वह मनुष्य पूरा पूरा हम लोगों की तरफ घूम गया और सामने पंजा हिला कर मानों हम लोंगों को ऊपर जाने से मना करने लगा। उस समय उसका पहरावा देख कर हम लोगों को प्रत्यक्ष हुआ कि चंद्रगुप्त के समय में सिपाही लोग कैसे कपड़े पहरते थे। हम लोगों को उसे देख आश्चर्य भी होता जाता था और भय भी होता जाता था। पर साहब न माने तो तीसरी सीढ़ी पर भी पैर रखा। तब तक उसने भी चट सामने बंदूक तान दी। जब उस पर से साहब ने पैर हटा लिया तो फिर बंदूक को बांये हाथ में ले, दहने हाथ से वैसे ही मना करने लगा। यों ही साहब उलट पुलट, उन तीनों सीढ़ियों पर पैर रख गये और वह बनाया हुआ सिपाही भी वैसे ही नखरे करता गया। साहब ने कहा कि चौथी सीढ़ी पर पैर रखते ही यह बंदूक मार देका। इसमें ऐसी ही कल लगी है कि चौथी सीढ़ी के दबने ही से बंदूक साथ ही छूट जाय। तब हम लोगों ने चौथी सीढ़ी छोड़, पांचवीं सीढ़ी को हाथ से दबाया तो वह चपरासी बंदूक समेट कोने में खड़ा होने लगा। तब हम लोगों को निश्चय हुआ कि चौथी सीढ़ी छोड़ जाने पर कोई भय नहीं है। बस, हम लोग वैसे ही चढ़ गये।

ऊपर जाकर जो शोभा और आश्चर्य देखे सो अकथनीय है। सामने एक मणिमय चौकी पर एक तालियों का झब्बा था। हम लोगों ने उसे केवल दूर से देखा और पुराने शिल्पकारों की प्रशंसा करते हुए कुशल से नीचे उतरे, किले के बाहर चले जायं।

इतना वृत्तांत सुन सब कोई चकित हो गये और भारत की शिल्पविद्या के विषय में आश्चर्य करने लगे। वह भी मुंह पोंछ, रूमाल से कुछ हवा कर, खांस छींक, फिर मुंह पोंछ, स्थिर हुआ। तब लोगों ने कहा कि ठाकुर साहब! आप को परिश्रम भी होता है और यह बारह बजती है। हम लोग भी भूख और घाम से व्याकुल हैं, पर आप जो बात कह रहे हैं, सो ऐसी आश्चर्यमयी और मधुर है, कि अभी लूट आ जाय तो भी हम लोग न हटें। सो कृपा करके आगे चलिये। उसने कहा-'हां हां सुनिये' मैं भी जब तक ये बातें किसी से कह न लूंगा, तब तक मेरे पेट में बिल्ली सी लड़ती रहैंगी, सुनिये। मैं यह सब छोड़ गया हूं कि हम लोग बड़ी देर तक उस किले में बैठे और लेटे और जल पिया और ठहाके उड़ाये। हां, संक्षेप में सुनिये, अग्निवृक्ष के एक एक दो दो गुच्छे हम लोगों ने तोड़ लिये और बर्कदाजों की लालटेनों की भांति कमर में लगा लिये और उत्साह से भर, झूमते झामते फिर आगे बढ़े । हम लोग कई कोस तक गये, कितना कहें। अनंतर एक स्थान में समस्त काली मट्टी और यव तिल के गंधवाली राख पाई। हम लोग क्या निश्चय करते! हम लोग इस देश के होकर तो विदेशी ऐसे घूमते थे और यूरप के रहने वाले एक साहब हम लोगों के पंडे थे। उन्होंने कहा कि यह विश्वामित्र के यज्ञ का स्थान जान पड़ता है और कदाचित् हम लोग बकसर तक पहुंच गये। मैंने ज्यों ही विश्वामित्राश्रम का नाम सुना त्यों ही मुझे श्रीरामचंद्र के वहां आगमन का स्मरण हुआ और मेरे नेत्रों में आदंदाश्रु उमग आये। मैंने यह राख सिर में लगाई और थोड़ी सी पगड़ी के कोने में उठा ली। यह किसी ने न देखा। फिर आगे बढ़े। बैठते उठते, ठहरते लुढ़कते, क्या जाने कितने कोस चले आये। तब एक ठिकाने चट्टान पर बैठे। वहां उन दोनों ने तो चाणक्यवाली बाटियां खाईं, पर मैं त्यों ही बैठा रहा। मुझे देख, बंगाली बाबू तो मुझे उल्लू समझते थे, पर साहब मुझे पराक्रमी और पुरुषार्थी समझते थे। फिर वहां से उठ हम लोग एक अंधेरी सी कंदरा में पच्छिम की ओर चल पड़े। थोड़ी दूर आगे चलते ही थे कि जल की ढलढल ध्वनि सुन पड़ी। तब साहब ने अपनी लालटेन की एक खूंटी घुमा दी और साथ ही उसका प्रकाश ऐसा बढ़ गया कि मानों चांद को हाथ में ले लिया हो। फिर उसके प्रकाश से हम लोग देखने लगे तो देख पड़ा कि हम लोग बड़े प्रशस्त स्थान में आ पड़े हैं। अभी तक केवल लगभग 20 फुट चौड़ी कंदरा थी पर अब देखा तो बड़ी दूर तक का अवकाश देख पड़ा और अवकाश क्या था, एक ईश्वर की विचित्र सृष्टि थी। उस स्थान का वर्णन करना मेरा काम नहीं। वह तो वेदव्यास और बाल्मीकि की लेखनी के नृत्य का स्थान था, तो भी संक्षेप से कहता हूं, सुनिये।

हम लोग तो उस लालटेन के इतने प्रकाश होने पर पूरी शोभा नहीं देख सकते, पर थोड़ी थोड़ी दूर पर बीच में छोटे छोटे एक ऐसे विचित्र पौधे खिल रहे थे, जिनके फूलों मे तारों की सी चमचमाहट थी और उनी के उजियाले से उस अपूर्व कुन्जभवन में चारों ओर चांदनी सी छटक गई थी। वाह रे जगदीश्वर! जहां सूर्य और चंद्र की गति नहीं, वहां के पेड़ ही ऐसे बना दिये कि सूर्य चंद्र की आवश्यकता न पड़े।

वहां हम लोगों के सिर से एक पुरसा और ऊंचा तो पहाड़ की छत हो गई थी और वह पृथ्वी से उतनी ही समानांतर दूरी पर, बराबर बड़ी दूर तक चली गई थी और जैसे तरंग किसी राज-मंदिर की बड़ी दालान में दूर दूर खम्भे लगे हों, वैसे ही देखा कि पचास पचास साठ हाथ की दूरी पर स्वयं नीचे से ऊपर तक आधार लगे हैं और खम्भ का काम दे रहे हैं।

हम लोग तो उस लालटेन के इतने प्रकाश होने पर पूरी शोभा नहीं देख सकते, पर थोड़ी थोड़ी दूर पर बीच में छोटे छोटे एक ऐसे विचित्र पौधे खिल रहे थे, जिनके फूलों मे तारों की सी चमचमाहट थी और उनी के उजियाले से उस अपूर्व कुन्जभवन में चारों ओर चांदनी सी छटक गई थी। वाह रे जगदीश्वर! जहां सूर्य

और चंद्र की गति नहीं, वहां के पेड़ ही ऐसे बना दिये कि सूर्य चंद्र की आवश्यकता न पड़े।

इन ठिकाने जल की और भी अधिक अधिक ढलढलाहट सुन पड़ती थी, उससे अनुमान में आता था कि मानो हम लोगों के सिर पर बड़ी धूमधाम से कोई नदी बहती है। हम लोगों ने कितना ही जानने की जतन किया कि हम लोग किस स्थान तक चले आये हैं और किस नदी के नीचे चले जाते हैं, पर कुछ समझ न पड़ा। हम लोगों को बड़ी प्यास लगी थी, सो, सबकी इच्छा हुई कि पानी पीयें। ज्यों ही हम लोग पानी पीने की इच्छा से उस झरने के अति समीप आये कि अचानक हम लोगों के सिर के ऊपर की ओर फरफराहट के साथ किसी चिड़िया के बोलने और उड़ चलने की सी आहट आई और मेरे बायें कंधे पर धड़ से कुछ ठंढा ठंढा नरम गरम गिरा। मैं सांप सांप कह, कूद के अलग हो गया पर फिर स्थिर दृष्टि फेरी तो देख पड़ा कि वहां सैकड़ों अंगूरों के झुमके लटक रहे हैं। हम लोगों ने अंगूर के कई गुच्छे तोड़ लिये और इधर-उधर टहल के देखा तो पिस्ता, बदाम, अनार, मुनक्का, किसमिस आदि अनेक मेवे पाये। तब तो हम लोगों ने भूखे ब्राह्मण की भांति आसन जमा, बैठ के, परिपूर्ण भोजन किया और वही झरझर झरने का जल पिया। उन मेवों के और उस जल के स्वाद का वर्णन करना मेरी शक्ति से बाहर है।

वहां बीच बीच में एक विचित्र पीले पत्थर की चट्टानें पड़ी थीं, उनी पर हम तीनों जा कर लेट गये और इतनी नींद से सोये कि ईश्वर जाने, बारह घंटे पड़े रहे कि चौबीस घंटे।

फिर उठके हाथ मुंह धो हम लोग बड़ी देर तक बैठ, वहीं बातचीन करते रहे; तब तक साहब ने जेब से पाकेटबुक निकाल, इतनी यात्रा का सब हाल लिख डाला, और बोले कि अब चलना चाहिये। हम लोग फिर चले, इतने में देखा कि एक चट्टान में कुछ लिखा हुआ है, पर क्या है सो पढ़ा नहीं जाता। तब साहब ने अपने जेब से सैकड़ों तरह की अक्षरावली निकाली और एक एक से उसे मिलाने लगे तो विदित हुआ कि गौरीतंत्र वर्णोद्धार के अनुसार, ये अति प्रचीन अक्षर हैं और उनके अनुसार पढ़ने से वह यह श्लोक निकला-

'पापापहारि दुरितारितरङ्गधारि
शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि।
झन्कारकारि हरिपादरजोऽपहारि
गांगः पुनातु सततं शुभकारि वारि'।।

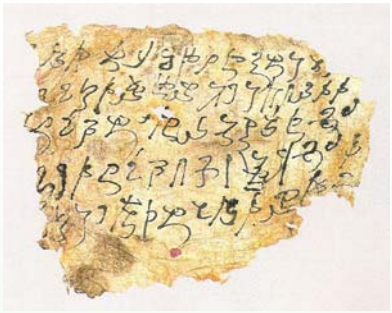

कुछ दूर चल के देखा कि एक बड़ी भारी चट्टान ऊपर से लटक रही है और उसमें उनी यंत्र शास्त्र वाले अक्षरों में कुछ लिखा है-अक्षर, तिरहुत और बंगला अक्षरों से बहुत मिलते थे। साहब ने कहा, देखिये, भारतवर्ष के सबसे प्राचीन अक्षर ये ही हैं। इन्हीं से संसार भर के सब अक्षर निकले हैं।

'स्नातवान् गांगःतीर्थेस्मिन् सशिष्यो देवलो मुनिः।

स्नायादस्मिन् भुवो गर्भे को जनः सुकृतैर्विना'।

पाप को दूर करने वाला, पाप की शत्रु रूपी तरंगों को धारण करने वाला, पहाड़ से निकलने वाला, हिमालय की गुफाओं को फोड़ने वाला, झंकार (शब्द-युक्त), भगवान् विष्णु (के चरण-कमल से निकलने के कारण) की पदरज को धारण करने वाला तथा मंगल करने वाला गंगा जी का जल, सदा पवित्र करे)।

गंगाजी के इस तीर्थ में, शिष्य सहित देवलमुनि ने स्नान किया। पृथ्वी के भीतर के इस तीर्थ में पुण्य के बिना कौन स्नान कर सकता है?,

साहब कुछ कुछ संस्कृत जानते थे, इसका अर्थ समझ गये और बोले कि देखो! हिंदुओं के धर्मशास्त्र बनाने वाले देवल ऋषि ने यहां आके स्नान किया है। यह गंगाजल बह रहा है। यहां स्नान का बड़ा पुण्य है। आओ! हम भी नहावैं, तुम लोग भी नहाओ। मैंने पूछा- 'क्या साहब! आप भी हमारे हिंदू धर्म पर विश्वास करते हैं।?' तब साहब ने कहा- 'हां हां! अवश्य' तब बंगाली बाबू बोले कि- 'साहब हम लोगों का मन रखता है।'

फिर हम लोग तीनों ने वहां स्नान किया और फिर थोड़ी देर तक जिधर बड़ा उजाला देख पड़ता था, उधर, पश्चिम की ओर चले।

कुछ दूर चल के देखा कि एक बड़ी भारी चट्टान ऊपर से लटक रही है और उसमें उनी यंत्र शास्त्र वाले अक्षरों में कुछ लिखा है-अक्षर, तिरहुत और बंगला अक्षरों से बहुत मिलते थे। साहब ने कहा, देखिये, भारतवर्ष के सबसे प्राचीन अक्षर ये ही हैं। इनी से संसार भर के सब अक्षर निकले हैं। फिर जेब से उनी अक्षरावलियों को निकाल, साहब ने मिला जुला, पढ़ा तो यह यों पढ़ा गया।

'व्यासाश्रमः'

'काशीद्विजाशीर्भिरहोसुलभ्या किंवा प्रसादेन च विश्वभर्तुः'

(ब्राह्मणों के आशीर्वाद से या भगवान के प्रसाद के काशी मिल सकती है।)

बस, साहब ने इस श्लोक को लिख लिया और कहा कि हम लोग काशी तक आ गये, काशी खंड के तर्जुमे में हम लोगों ने देखा था कि कुछ दिन वेदव्यास ने काशी के पूर्व निवास किया था। बस, यह उनी की गुफा जान पड़ती है और यह सामने जो

चमचाहट आ रही है, यह काशी ही की तेजोमयी मूर्ति है। फिर हम लोग आगे चले तो थोड़ी दूर पर सामने से इतनी चमक आने लगी कि आंख खोल चलना कठिन हो गया।

इतनी दूर चल के हम लोग कुछ थक भी गये थे और वहां जैसा कुन्जभवन ऐसा स्थान था, सो मैं कही चुका हूं। सोनहुले रंग के मोटे मोटे चट्टान थोड़ी थोड़ी दूर पर स्वयं पड़े थे, लता फूलों की अपूर्व क्यारियां थीं। पानी कहीं तो मोतियों के परदों की भांति चलता था और कहीं ज्वलामुखी स्थान ऐसा रमणीय बना था कि उजाला भी दूर तक था और उसकी गरमी से भूमि सूखी थी और जल धारा अधिक अधिक प्रिय लगती थी। हम लोग थोड़ी दूर और आगे चले। अंधेरे से आये थे, इसलिए पहले यह चमक बहुत ही कड़ी मालूम पड़ती थी पर अब सह चली। पीली चमक से हम लोग सब पीले हो गये। और चारों ओर भी जैसे हलदी की बरसा होती हो। वा राम-रज की आंधी उठती हो अथवा हरताल से सब कुछ लीप दिया गया हो, ऐसा पीला ही पीला देख पड़ने लगा। पर अब थकावट अधिक आ गई, हम लोगों को चलना कठिन हो गया। बैठ गये, अंगूर किसमिस खाये, जल पिया, गप्पे उड़ाई, गाया बजाया, औंघाई आने लगी, लेट गये। थोड़ी देर में मैंने देखा कि मेरे दोनों साथी तो एक इधर के चट्टान पर एक और उधर के चट्टान पर पड़े घर्र घर्र कर रहे हैं और धीरे धीरे मंद मंद वायु चल रही है और कोरी पानी की झर झर झर ध्वनि आ रही है। मैं अकेला जाग रहा हूं, अब मेरे चित्त की बात न पूछिये, अब तो पेट में भांति भांति की खिचड़ी सीझने लगी, मन कबड्डी मारने लगा। कभी तो मेरी आंख के सामने यह दृश्य उपस्थित हुआ कि मानो मेरे संगी साथी मुझे उसी बराबर के पहाड़ में खोज रहे हैं और उनमे कोई रोता है, कोई कोई हवसता है, कोई आंसू बहाता है, कोई पुलिस पुलिस करता है और मानों यों ही घूमते घूमते उन लोगों ने किसी ठिकाने लोहूभरे बाघ के पन्जों के चिह्न पाये और उसी को देख उनने हल्ला मचा दिया कि- 'बारे रे बाप! उसे तो शेर खा गया, यह देखो यह उसे मार अभी इधर से गया है' कभी आंख के आगे एकदम चित्र पर बदल गया और जयपुर नगर की तस्वीर खिंच गई।

तब तक दूसरी ओर से झनाझन्न रुपयों की आवाज आई, देखा कि एक दुकान पर डाकिया खड़ा है। बेग से रुपये निकाल के दे रहा है और दुकानदार कान पर कलम रखे, चश्मा लगाये, सावधानता से रुपये गिन रहा है और दूसरा एक आदमी मनीआर्डर की रसीद पर कुछ लिख रहा है।

तब तक दूसरी ओर से झनाझन्न रुपयों की आवाज आई, देखा कि एक दुकान पर डाकिया खड़ा है। बेग से रुपये निकाल के दे रहा है और दुकानदार कान पर कलम रखे, चश्मा लगाये, सावधानता से रुपये गिन रहा है और दूसरा एक आदमी मनीआर्डर की रसीद पर कुछ लिख रहा है। इतने में मनीआर्डर वाले ने कहा कि- 'आज वा बापडो मादो छै सये चीठयां बी म्हारे ई मांथै पड़ी हैं। चिन्येक देखो तो या कुण की छैं', आज वह बेचारा बीमार है इसलिये ये चिट्टियां भी मेरे ही माथे पड़ी हैं जरा देखो तो किसकी है। उसने पढ़ा तो मेरे ही नांव के साथ मेरे लड़के का नांव मिला। डाकिए ने पता पूछ लिया। उसने भी बता दिया कि 'बस विश्वनाथ जी का मंदिर कै कनै गली में जाय्य चावै जी सूंई गोपीनाथ जी बालमुकुंद जी की ग्वाड़ी पूछ लीजो' बस, विश्वनाथ जी के मंदिर के पास गली में जाकर, चाहे जिससे भी गोपीनाथ बालमुकुंद जी का घर पूछ लेना।, वह बोला- 'मैं ई म्हौला में नयों छूं स सैंधो कोय न ख्मैं इस मोहल्ले ने नया हूं, सो किसी से परिचय नहीं है।,

वह वहां से उठा, विश्वनाथ जी के मंदिर के पास आ 'अगड़बं महादेव' कहता हुआ उसी गली में घुसा। कुछ पूछ पाछ कर मेरे मकान पर पहुंचा। दरवाजे पर से बोला- 'अजी गोपीनाथ जी छो कां ई' अजी गोपीनाथ जी हो क्या?, ऊपर से आवाज आई- 'कुण छै' कौन है?, इसने कहा 'देखो थां का नावू की चीठी आई छै' देखो यह तुम्हारे नाम की चिट्टी आई है?, चट दरवाजा खुल गया एक लड़का नौ बरस का, गोटे की, दुपलियो टोपी पहरे, कान में मुरकी झमकाये, हाथ पांव में चांदी का कड़ा पहने, सामने खड़ा हुआ और चिट्टी के लिए हाथ पसारा। डाकिये ने पूछा-'थारो नांव?' तुम्हारा नाम?, वह बोला- 'बालमुकुंद'। डाकिये ने कहा-' अर गोपीनाथ जी कौठे?' और गोपीनाथ जी कहां हैं?, उसने कहा-'दादाजी किकलत्तै गया छै।' ख्दादाजी कलकत्ते गये हैं।, डाकिये ने कहा-'चोखो' चीठी बेरंग छै, जा चाय्य पीसा ने आ' अच्छा, चिट्टी बैरंग है। जा, चार पैसे ले आ, लड़का अंगने की ओर फिर कर बोला- 'अरी मा, पीसारी पीसा चायजे' ख्ओ मां! पैसे चाहियें पैसे, तब तक पायजेब झमझमाती, भारी घेर का घाघरा घमकाती, घूंघट काढ़,

उसी में, २ अंगुली से छिद्र बना कर देखती, एक गोरी गोरी औरत चली आई और उसने एक आने के पैसे डाकिये के हाथ में दे दिये। डांकिया चिट्टी दे, नौ दो ग्यारह हुआ। भीतर दालान में वह मेरी स्त्री बैठी है। लड़का इधर खेल उछल रहा है, मेरी बूढ़ी मां भी भीतर से खांसती हुई निकल आई। एक चिट्टी बांचने वाला लड़का भी पड़ोस से बुला लिया गया। सब सुनने लगे। वह लिफाफा फाड़ पढ़ने लगा।

'सब को गया के पंडा बैजनाथ का आशीर्वाद, आगे गोपीनाथ जी यहां आये थे, यहां से निमट कर, बराबर के पहाड़ पर गये। वहां साथियों से संग छूट गया, पांच दिन से हम लोग खोज रहे हैं, पता नहीं, पहुंचे हों तो खबर दीजियेगा। आगे क्या लिखे। यह सुनते ही मेरी स्त्री और मां रो उठी, लड़का भी रोने लगा- 'कोई छै कांई छै' क्या है? ख्क्या है?, करते अड़ोसी पड़ोसी आ जुटे। मेरा जी तो एकाएकी यह चरित्र देखते ही घबरा गया, और मेंरे आंख से टपाटप आंसुओं की धारा लग गई, छाती धड़धड़ करने लगी, वेग से सर्वांग में रुधिर घूमने लगा और पसीने से शरीर भर गया। मैं चट उठ खड़ा हुआ और एक केले का पत्ता तोड़, उससे हवा करता, इधर उधर टहलने लगा। कभी फूल तोड़े, कभी तितलियां देखीं, कभी जल से मुंह आंख धोआ, और कभी गुच्छों पर बैठे भौंरों को हाथ से उड़ा उड़ा के उनके झंकार सुने, पर चित्त स्थिर न हुआ।

फिर आके उसी चट्टान पर लेटा और ऊपर की ओर जो लताओं के जाल छा रहे थे उनी की ओर देखता, मनीमन अपने इष्टदेव श्रीनाथ जी महाराज के शरण गया और मानो मैं उस मंदिर के द्वार पर जा के पुकार ही उठा कि- 'दीनबन्धों! मेरे घरवालों को धीरज धराइये और मुझे उनसे मिलाइये।' इस समय श्रीनाथ जी के दर्शन में भी मैं ऐसा डूब गया कि यह नहीं जानता, वह मंदिर ही मेरे समीप आ गया कि मैं ही मनोरथ के रथ पर चढ़ के वहां चला गया।

अच्छा आप लोग फिर उसी ठिकाने पहुंचिये। मैं तो पृथ्वी

मैंने तो थोड़े से मेवे अपने खीसे में रख लिये और इनके निमट लेने पर हम तीनों फिर आगे चले। साहब ने कहा कि चलें इस प्रकाशमय भूमि में चलैं, यहां बड़े-बड़े आनन्द देख पड़ेंगे। हम तीनों उसी ओर चले। ज्योंही फूलों की सुगन्ध लेते, लताओं का आपस में लिपट जाली बनाना देखते, भौंरों के मधुर गुंजार सुनते, आगे बढ़े कि अचानक एक काला ज्वान धम्म कूद के हम लोगों के सामने आ खड़ा हुआ। ओह! उसका शरीर लगभग दस हाथ लम्बा था और तीन साढ़े तीन हाथ चौड़ी छाती थी, कटि पर बाघ का चमड़ा लपटा था, भूरे-भूरे लम्बे घटा ऐसे बाल पीठ की ओर छाये थे, लाल लाल अंगारे ऐसी आंखें चमकती थीं, सिर छाती और बाहों पर बिभूत लगी थी, गले में मोटे 2 रुद्राक्ष की माला छटक रही थी और हाथ में एक भारी मुग्दर था।

के भीतर उस मंदिर के पास ही खड़ा खड़ा उछल के कालिदास और गुसांई तुलसीदास जी से भी दो दो बातें कर आया, पर अब आप लोगों को लिये दिये फिर वहीं पहुंचना चाहता हूं, चलिये। उस समय मेरी छाती धड़क रही थी कि अचानक किसी ने पीछे से मेरे कंधे पर अंगुली गोदी। फिर के देखूं तो वही योगिराज बाबाजी खड़े हैं और हाथ के संकेत से मुझे चुपचाप बुला रहे हैं। मैं डर गया कि मैं इन स्त्रियों पर लुभा रहा हूं और बाबा जी मुझे देख रहे हैं। कुछ आगे चल बाबाजी के चरणों में साष्टांग प्रणाम कर, खड़ा हो, उनकी शोभा देखने लगा।

अनंतर बाबाजी ने कहा 'चलो, तुम्हें थोड़ी काशी की सैर दिखायैं।' मैंने कहा- 'महाराज! मेरे वे काले गोरे साथी कहीं उठ के चले तो न जायेंगे?' उनने कहा-'नहीं नहीं, जब तुम जाके जगाओगे तब जागैंगे'। तब मैंने उन के साथ हो लिया। वे मुझे संग लिये उस महा तेजोमय मंडल मे घुसे। जैसी कनकमयी भूमि का मैं पहले वर्णन कर चुका हूं वहीं भूमि, पर तेज कुछ अधिक हो चला। अब कहीं तो देखा कि देवी देव बैठे गान वाद्य कर रहे हैं। कहीं मुनि समाधि में मस्त बैठे हैं। कहीं मणिमय देवमूर्ति है। कहीं सरोवर, महल और गुम्बज बने हैं। आगे बढ़ के एक बड़ा भारी गहरा स्थान देखा जहां सहस्रों योगी ऋषि और महात्मा तप कर रहे हैं। मेरे पूछने पर बाबाजी ने कहा कि यह जैगीषव्य मुनि की गुफा है। काशी खंड में इसका बहुत वर्णन है।

फिर मेरे और बाबाजी के बीच बहुत सी बातें हुईं और उनके साथ मैंने बहुत काशी की यात्रा की से कहां तक कहूं। अन्त में मैंने बाहर निकलने के विषय में पूछा तो उन ने कहा कि भगवान की प्रेरणा से बहुत लोग तुमारे निकालने के यत्न में हैं। तुम चित्रकूट के आगे पहुंचोगे तब एक स्थान में ऊपर से लटका एक लंगड़ पाओगे, उसी पर चढ़ लेना।

यों बातें करते-करते उन में मुझे उन सुतक्कड़ों के पास पहुंचा दिया। मैं उनके घुर्राटों पर हंस, दहिनी ओर फिर, ज्यों ही

बाबा जी से कुछ कहना चाहता हूं कि बस बाबाजी नहीं।

तब मैं थोड़ी देर तो चकपकाता रहा और योग के विचित्र प्रताप पर आश्चर्य करता रहा; अनन्तर उन दोनों की झंझोड झंझोड के जगाया। उनको ऐसी घोर निद्रा थी कि वे इस जगाने पर भी बड़ी देर तक गुम साधे सचेत से बैठे थे और लाल-लाल आंखे मल इधर-उधर देखते थे। बंगाली बाबू मुझे झड़कार कर बोले 'केनो हाम को इतना जोल्दी जागाता है' क्यों हमको इतनी जल्दी जगाते हो?, और पैर फैला धड़ से फिर पड़ रहे। पर साहब ने अपने खीसे निकाल घड़ी देखी और 'ओ माई गाड' ख्अरे परमेश्वर,, कहके कहा कि 'अब किटना सोने मांगटा! छ घंटा तो सोआ' फिर साहब ने उठ, मुँह धोआ, कुल्ला किया। बंगाली बाबू ने भी आंय-बांय-शांय करते उठ, कुछ मुंह सुंह धोआ। तब तक साहब ने अपनी लटपटाती बोली में कहा 'कुछ और खा पी लेना चाहिये। फिर कौन जाने ऐसा अवसर मिले कि नहीं, यहां जल में वे सब कुछ है।' यों कह साहब ने थोड़े अंगूर तोड़ लिये और खीसे से बिस्कुट निकाल स्वाहा करना आरम्भ किया। बंगाली राम भी उनी के पास आ बैठे और उनी से एक टुकड़ा मांग कर्र मर्र करने लगे। मैंने मनीमन कहा कि ठीक है, अब ब्रह्मसमाजी ही हुए तो फिर खाने पीने का बन्धन कहां रहा?

मैंने तो थोड़े से मेवे अपने खीसे में रख लिये और इनके निमट लेने पर हम तीनों फिर आगे चले। साहब ने कहा कि चलें इस प्रकाशमय भूमि में चलैं, यहां बड़े-बड़े आनन्द देख पड़ेंगे। हम तीनों उसी ओर चले। ज्योंही फूलों की सुगन्ध लेते, लताओं का आपस में लिपट जाली बनाना देखते, भौंरों के मधुर गुंजार सुनते, आगे बढ़े कि अचानक एक काला ज्वान धम्म कूद के हम लोगों के सामने आ खड़ा हुआ। ओह! उसका शरीर लगभग दस हाथ लम्बा था और तीन साढ़े तीन हाथ चौड़ी छाती थी, कटि पर बाघ का चमड़ा लपटा था, भूरे-भूरे लम्बे घटा ऐसे बाल पीठ की ओर छाये थे, लाल लाल अंगारे ऐसी आंखें चमकती थीं, सिर छाती और बाहों पर बिभूत लगी थी, गले में मोटे २ रुद्राक्ष की माला छटक रही थी और हाथ में एक भारी मुग्दर था। देखते ही हम लोग सन्ना गये और बंगाली बाबू तो पछाड़ खा औंधे गिरे। तब तक उस पुरुष ने कुछ संस्कृत मिले शब्दों से कहा कि 'डरो मत। इधर काशी है और इस मार्ग से केवल दिव्य देह अथवा मुनी लोग अथवा उनके साथी लोग ही जा सकते हैं, तुम लोग नहीं जा सकते, फिरो'। उस ने कितनी ही कोमलता से कहा कि जिस में हम लोग भय से मूर्छित न हो जांय, पर तो भी वो मूर्ति ऐसी भयंकर थी और स्वर ऐसा भयानक था कि हम लोगों के रोएं खड़े हो गए और साहस, वीरता, निर्भयता, कौन जाने किधर घुसड़ गये।

साहब ने तो धड़ से इसे भी अपनी नोट बुक में लिख लिया और कहा कि देखिये! ये भी उसी धरन के अक्षर हैं! जहां तक पता लगा सबसे पुराने अक्षर ये ही जान पड़ते हैं! मैं कुछ संस्कृत समझ ही सकता था। मैंने चट उसका अर्थ साहब को सुनाया। साहब ने कहा-ठीक है, तब तो स्नान करना चाहिये।

वह चटपट ही हम लोगों को समझा, उछला। उसकी उछल ही देख हम लोगों की आंख झप गई। फिर आंख खोल देखा तो वह शिव का गण न जाने किधर अलालोप हो गया। अब हम लोग उस डरपोक जीव को सचेत करने में लगे। कभी नाक दबाई, कभी पानी छींटा, कभी फल सुंघाये, कभी उठाया, कभी कोलाहाल किया। अन्त में बिचारा हवसता, हांफता, डरता, गिडगिड़ाता, घिघियाता, सचेत हुआ।

क्या समझौवल बुझौवल हुई सो सुन के क्या कीजियेगा, हम लोग दक्षिन चले। थोड़ी दूर चलते ही देखा कि उसी प्रकाशमय भूमि में एक नदी बड़े वेग से बह रही है। उसके तट पर आये। मैंने नीलकमल कभी न देखे थे पर वहां देखा कि नदी के दोनों किनारों को नीलकमलों ने सारा नीला कर रखा है। इसलिये किनारे ही किनारे टहलने लगे। एक स्थान में देखा कि एक सुनहरे पत्थर में हरे-हरे पन्ने के अक्षरों में लिखा है कि-

'असिर्नाम नदी पुण्या, असिः पातककर्त्तने!
असिपत्रं प्रदग्धासि, असि चेत् कृतमज्जनः।,

यह असिनाम की पवित्र नदी जो पापों को काटने के लिये तलवार के समान है। अगर आप ने इसमें स्नान कर लिया है तो आप ने असि-पत्र (एक नरक) को नष्ट कर दिया (अर्थात् इसमें स्नान करने से असि-पत्र नामक नरक का भय नहीं होता।,

साहब ने तो धड़ से इसे भी अपनी नोट बुक में लिख लिया और कहा कि देखिये! ये भी उसी धरन के अक्षर हैं! जहां तक पता लगा सबसे पुराने अक्षर ये ही जान पड़ते हैं! मैं कुछ संस्कृत समझ ही सकता था। मैंने चट उसका अर्थ साहब को सुनाया। साहब ने कहा-ठीक है, तब तो स्नान करना चाहिये । तब मैंने और साहब ने तो स्नान किया पर वह आलसी जीव ज्यों का त्यों ही खड़ा रहा। हम लोगों ने स्नान किया, मैंने तर्पण भी किया पर वेग इतना अधिक था कि पौर के भी पार जाने का किसी का साहस न हुआ। फिर कपड़े पहर, इधर उधर दौड़ भाग का उद्योग कर रहे थे कि देखा, एक स्थान में पाट बहुत कम चौड़ा है और नदी के बीच में तीन चार प्रकार के पेड़ ऐसे लगातार हैं कि एक डाल से दूसरे डाल का लगाव इस पार से उस पार तक हो रहा है। हम लोग चट कमर कस, बांह चढ़ा, उसी पर चढ़े और बड़े यत्न से घंटों में इस पार से उस पार पहुंचे। आश्चर्य यही हुआ कि वह बंगाली भी रोते झींखते पार हुए। नहीं तो हम लोगों को आशा न थी।

हम लोग दक्षिण चले जाते थे। यद्यपि आगे उतना

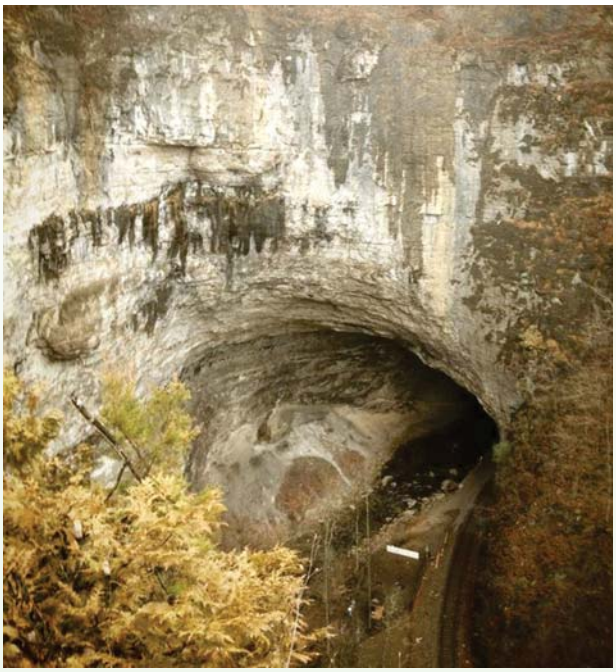

भयानक उजाला न था तो भी अंधेरा भी न था। ऊपर से जल दौड़ने की ढलढल ध्वनि भी आती थी। जान पड़ता था कि गंगा की धारा दाहिने हाथ की ओर छोड़, हम लोग तीर-तीर चले जाते हैं। बड़ी दूर चलने पर फिर एक शान्त और अपूर्व सा आश्रम देख पड़ने लगा। वहां देखा कि एक स्थान में मोर नाच रहे हैं और बड़े-बड़े सांप सामने बैठे, फन उठा, उसका नाच देख रहे हैं। मैंने साहब से पूछा 'यह क्या है? इनका तो स्वयंसिद्ध बैर है, फिर इनकी मित्रता कैसी!' साहब ने कहा 'मुनियों के आश्रम का ऐसा महात्म्य है कि वहां जाने से चित्त शुद्ध हो जाता है, सो इन ने भी अपने हृदय का द्वेष छोड़ दिया है।' और आगे बढ़ के देखा कि पृथ्वी के भीतर समाधि स्थान सा है पर इसका द्वार एक भारी शिला से बंद है। उसी के समीप एक पत्थर के खम्भे में पाचीन अक्षरो से यो लिखा था।

'खत्रिखत्रि (3030) मिते वर्षे यौधिष्ठिरसमाह्वये।
प्राप्ते वसन्तसमये योगी भर्तृहरिः स्वयम्।
गोरक्षनाथनिर्दिष्टयुक्तिभिः संयतेन्द्रियः।
स्थानेऽस्मिन् कलयामास समाधिं व्याधिनाशनम्'।।

युधिष्ठिर सं. 3030 में, वसन्तकाल में, गोरखनाथ के उपदिष्ट मार्ग से, संयतेन्द्रिय होकर इसी स्थान में योगी भर्तृहरि ने व्याधिनाशिनी समाधि ली- इस लेख को भी साहब ने उतार लिया। मैंने भी कहा कि ठीक है, चरणाद्रि भर्तृहरि का स्थान प्रसिद्ध है। सो जान पड़ता है कि हम लोग सचमुच चरणाद्रि के नीचे पहुंचे हैं और अवश्य भर्तृहरिही की समाधि है। साहब ने मुझ से कहा कि 'देखो, इस संवत् की ओर आँख फेरो। यह 3030 युधिष्ठिराब्द है और भर्तृहरि के अनन्तर विक्रम संवत् चला है उसे भी 1939 बरस बीते। जोड़ 4969 चार हजार नौ सौ उतहत्तर बरस हुए। इससे अधिक वर्ष युधिष्ठिर राज्य को बीते हुए और युधिष्ठिर के समय में भारत की उन्नति का सूर्यास्त हुआ। युधिष्ठिर अंतिम राजा हुए हैं, जिन ने राजसूय यज्ञ किया और जो चक्रवर्ती कहा सके। तब देखो, कैसा आश्चर्य है कि पांस सहस्र वर्ष ही से तो भारत की दुर्दशा का दिन आया है जिसे यहां के मुनि लोग पहले ही से कहते आये हैं कि कलियुग आवैगा और आज कलके हिस्ट्री के लिक्खाड़ और तुम्हारे देश के अंगरेजिहा विद्वान एकाएकी बक उठते हैं कि भारत में पहले केवल जंगली लोग रहते थे और लगभग चार हजार वर्ष हुए कि ऐरियन् लोग यहां आये, जिनके वंश में सब आर्य जाति हुए।

बैठते-उठते कुछ पच्छिम चले। देखा कि एक वट ऐसा भारी दूर तक फैल रहा है कि एक ही वृक्ष ने जंगल कर रक्खा हे। कुछ पास आने से विदित हुआ कि वह वृक्ष तो ऊपर है पर उस की जटायें नीचे लटक-लटक कर पृथ्वी पर जम गई हैं और उनसे नई-नई शाखा फूट गई हैं। उसी शाखामंडल से वहां जंगल ऐसा हो गया था। देखते ही मैंने कहा कि 'अब किसी से पूछना न होगा। यही अक्षयवट है इस में संदेह नहीं।' साहब ने मुझसे कहा कि 'आप जाके इस वृक्ष को छूइये, देखिये, मैं म्लेच्छ हूं मैं इस के समीप न जाऊँगा। नहीं तो काशी पर जैसे रोका गया वैसे ही रोका जाऊँगा।'।

हम लोग वहां बैठे। मनीमन में मैं विचारने लगा कि ये भूगर्भ के पवित्र स्थान अब तक केवल मुनि ऋषि के ही भाग में थे पर अब यह कलियुग का माहात्म्य है कि यहां अंगरेज और ब्रह्यों भी पहुंचे। अब इस स्थान को अंगरेजों ने देख लिया। अब स्थान स्थान से सुरंग लगा कि पथ निकाल लें तो कौन आश्चर्य है। बस ये साहब बहादुर नोट में लिखते ही जाते हैं। ऊपर जा के लोगों से कहैं ही गे और अंगरेज लोग इस भूगर्भ की सम्पत्ति को भी आत्मसात् करेंगे। यों सोच ही रहा हूं कि साहब ने कहा, चलिये और टहलें। बस हम लोग उठे और दक्षिण की ओर चले। अब साधारण बात का फैलाव कहां तक करैं। बैठना उठना सोना फल खाना सब कुछ होता गया, चलते गये।

वहां से बड़ी देर तक दक्षिण चले आये। अब न पूछिये। अब एक और ही आश्चर्य के स्थान में पहुंचे। आगे बड़ा प्रकाश देख पड़ने लगा। हम लोगों का जी ललचने लगा, पांव आप ही खटाखट उठने लगा, उजाला और अधिक अधिक आंखों को ललचाने लगा, दूध की धोई सफेद भूमि देख पड़ने लगी। कुछ आगे चलते ही देखा कि चारों ओर स्फटिक ही स्फटिक है। और उनी ढोकों में कहीं कोई टुकड़ा आप ही आप ऐसा चमकाता था कि उसने उजाला कर रक्खा था।

आगे चले। अब क्या पूछते हैं! चारों ओर स्फटिक ही की

चट्टानें मिलने लगी। कहीं-कहीं मट्टी भी थी वह थी काशीपूर की चीनी ऐसी श्वेत थी। और उस पर जो छोटे-छोटे पौधे फूले थे वे मैंने पृथ्वी पर कभी देखे ही नहीं कि मैं उनका नाम कहूं। देखने में विचित्र सुन्दरता और सूंघने से विचित्र गन्ध!

और बढ़े! सिर पर भी स्फटिक की छत। और उसमें से उजाले की किरणें बाहर निकली आती थीं। उस पर दृष्टि के देखने से विदित होने लगा कि ऊपर कोई नदी बह रही है। स्फटिक की शिला कांच सरीखी पारदर्शक थी, उस कारण ऊपर के कछुए मछलियों की भी कुछ कुछ आभा झलकने लगी और नदी बहने की गहगह ध्वनि भी कुछ कुछ कान पड़ने लगी। पर पांव बहुत थक गये थे। बैठने की इच्छा हुई। स्फटिक की चिकनी शिलाओं की कमी न थी। हम लोग बैठे। सामने देखा कि एक लता की झमाट में से गुलाब के फूल ऐसी गुलाबी चिड़िया बोलती हुई निकली।

हम लोगों ने देखा कि हर एक हरा सा पेड़ हैं और उसकी सफेद २ डालियां हैं। उसी की दो तीन परिक्रमा कर यह चिड़िया भी उसी की एक डाल पर बैठ गई। हम लोग जब तक उस चिड़िया के विषय में कुछ बात चीत करना चाहे तब तक तो उसने पोंछ और सिर के झोंके से फुनगी को झुला झुला अति स्पष्ट स्वर से 'सीताराम सीताराम' इस नाम का गीत गाया।

फिर मैंने कहा कि साहब! इस चिड़िया की बोलचाल से तो यह चित्रकूट सा स्थान जान पड़ता है। साहब ने अपना भी ऐसा ही अनुभव बतलाया। हम लोग बातें करते उसी पेड़ के समीप आये। अब और आश्चर्य की बातें सुनिये। उस पेड़ की डालों में बराबर 'राम राम राम राम' लिखा था। साहब ने कहा देखिये, इस स्थान का माहत्म्य। यहां सब कुछ राममय है। मेरी आंखों से तो आसुओं की धारा लग गई। साहब ने चक्कू निकाल कर डाल पर से थोड़ा सा छिलका छील लिया पर देखा कि भीतर भी उन अक्षरों के चिह्न ज्यों के त्यों देख पड़े। साहब ने कहा, देखिये। रामावतार का माहात्म्य! हाय रे नींद! कहां तो मैं उस चित्रकूट की कन्दरा में था कि कहां चटपट क्षणभर के भीतर गया में करसल्ली पर अपने पंडे मेहरवार की बैठक में पहुंच गया। ओः अब क्या कहना है!

साहब साथ ही मुझ से सपने का हाल पूछने लगे पर मैं कुछ आंय बांय कर उठ खड़ा हुआ और कहा कि बहुत देर से यहां जमे हैं। आगे चलिये। अकस्मात् मेरी दृष्टि बंगाली बाबू पर पड़ी। देखा कि वे भी एक चट्टान पर पीठ लगाये दोनों हाथों से घुटनों को पकड़ गरदन झुकाये बैठे हैं। आखें नासाग्र की ओर टकटकी बांधे हैं, दोनों मोंछ और डाढ़ी के अग्र भाग से आंसू टपटपा रहे हैं, मुंह पर कुछ पिलाई सी आ रही है, और रुक-रुक के गरम सांस चल रहे हैं।

उसी प्रवाह के किनारे हम लोग पच्छिम दक्खिन के कोने पर चले। यह एक ही रंग का लम्बा पथ चलना पड़ा, तब देखा कि वह प्रवाह पतला पड़ता जाता है। हम लोगों ने निश्चय किया कि यही गुप्त गोदावरी है। सबने जल पिया, मुंह धोआ। वहां विचित्र सफेद सफेद पत्थर थे और अति चमकदार पीली मट्टी थी। उस मट्टी का मैंने टीका लगाया। देखिये, अभी तक कुछ-कुछ ललाट में लगा होगा।

हम दोनों चट उनके पास चले गये और कहा कि बाबू! आप किस सोच में पड़े हैं, आप की आंखों में आंसू क्यों आ रहे हैं। यह क्यों? हम लोगों के जीते आपको कोई कष्ट न होगा। उठिये! चलिये, और आगे चलें।

यह सुनते ही तो वह मानुष और भी रो उठा और आंसू पोंछता हुआ हुटुक-हुटुक कर कहने लगा 'आमार सर्वनाष होलो के, आंमी की कोरबो, कोथा जाबो' ख्मेरा सर्वनाश हो गया रे! मैं क्या करूंगा, कहा जाऊंगा?, हम लोगों ने दुःख का कारण पूछा तो उसने फिर उसी अपनी सड़ी बूसी बोली में जो कुछ रोना रोआ, उसका तात्पर्य यह था कि 'बाप रे! मैं कहा आ पड़ा, मैं अपनी स्त्री से केवल दो सप्ताह की छुट्टी लेके इधर आया था। सो अभाग्य से इस ऐसी विचित्र कन्दरा में आ पड़ा हूं कि यहां से चिट्ठी भेजना भी कठिन है। मेरी स्त्री डाक्टरनी है, मेरे बिना समय पर रसोई बना के खिलानेवाला भी उसे कोई नहीं है। मेरी विधवा लड़की का डिप्टी बाबू के लड़के से इसी महीने ब्याह होने वाला है। मै क्या करुं, कैसे ऊपर निकलूं? बाप रे बाप! मरा रे मरा!' इतना कह वह रोता हुआ साहब के पैरों पर गिर पड़ा और हवस-हवस के अपने ढंग से कहने लगा, 'साहब! आप लोगों की शक्ति का पार नहीं, आप जो चाहैं सो करैं, आप बड़ी नदियों को बांधते हैं, बड़े 2 पहाड़ों को तोड़ते हैं और बड़े-बड़े जंगलों को काटते हैं। जल में आप, स्थल में आप, आकाश में आप, औ

भूगर्भ में भी आप ही हैं, शीघ्र मुझे किसी बिल के पथ से पृथ्वी पर पहुंचाइये, देर होने से मेरी स्त्री मुझे घर में न घुसने देगी।'

साहब ने उसे उठाया, आंसू पोंछे और कहा कि घबराइये मत, चलिये, यह चित्रकूट स्थान है। यहां ऐसी बहुत कन्दराओं का मिलना सम्भव है जिन में ऊपर निकास का पथ हो। उसका यह डौल देख मुझे उसकी बातों पर हंसी भी आती जाती थी, और साथ-साथ अपने घर का स्मरण होने से आंखें भी डबडबाती जाती थीं!

मैं ज्यों अपने साथियों के साथ थोड़ा आगे बढ़ा कि, ऊपर नदी का प्रवाह कम जान पड़ने लगा, पर प्रकाश की कमी न थी। कुछ दक्षिण कुछ पूर्व की ओर चलना पड़ा, सुगन्ध अधिक अधिक मनोहर आने लगी। हम लोग उसी ओर झुक चले। मन में जो सैकड़ों प्रकार की चिन्ता थी सो क्या जाने किधर गई।

वहां से सीधे दक्खिन चले। कुछ दूर चलने के अन्तर देखा कि एक पत्थर में मणिमय अक्षर खुदे हैं कि 'अत्रिस्थानम्' ख्अत्रिमुनि का स्थान,, मैंने कहा, 'देखिये, यह अत्रि अनुसूया का स्थान जा पड़ता है। मैंने सुना था कि चित्रकूट के समीप अत्रि स्थान है। वहां पहाड़ पर एक बाबा जी योगी रहते हैं। साहब ने अपनी नोट बुक में यह भी लिख किया और आगे चलने पर एक ऐसा स्थान मिला, जहां कई पथ थे। एक पर लिखा था 'माण्डव्याश्रममार्गः' ख्माण्डव्यऋषि के आश्रम का रास्ता,, दूसरे पर 'कालन्जरगिरिमार्गः' कालन्जर पर्वत का रास्ता।, और तीसरे पर 'गुप्तगोदावरीमार्गः' ख्गुप्त गोदावरी का रास्ता,, हम लोगों ने बड़ी देर तक बातचीत करके गुप्तगोदावरी ही की ओर चलना स्थिर किया क्योंकि और पथों में कुछ अंधेरा सा था, पर इधर उजाला अधिक था।

कुछ चढ़ाव मिलने लगा। बंगाली बाबू बोले 'एखुन हय तो आमरा बाहिर हबो'। ख्अब शायद हम लोग बाहर निकल सकेंगे,, पर हम लोगों ने उस मार्ग का बाहर तक आने का कोई निश्चय न समझा। वही बात हुई, फिर बराबर भी भूमि मिली, तक तक देखा कि दहने हाथ की ओर एक दो हाथ चौड़ा जल का प्रवाह दौड़ा जा रहा है। उसी प्रवाह के किनारे हम लोग पच्छिम दक्खिन के कोने पर चले। यह एक ही रंग का लम्बा पथ चलना पड़ा, तब देखा कि वह प्रवाह पतला पड़ता जाता है। हम लोगों ने निश्चय किया कि यही गुप्तगोदावरी है। सबने जल पिया, मुंह धोआ। वहां विचित्र सफेद सफेद पत्थर थे और अति चमकदार पीली मट्टी थी। उस मट्टी का मैंने टीका लगाया। देखिये, अभी तक कुछ-कुछ ललाट में लगा होगा। वहां से बांये हाथ हो पथ फिरा था, उसी मोड़ पर 'विराधकुण्डमार्गः' ख्विराध कुंड का रास्ता,, लिखा था। साहब ने कहा 'डेको, इंडिया में लिक्ना किट्ना पुराना हाई।' मैंने कहा 'साहब! यहां पृथ्वी के भीतर आके कौन लिखा गया होगा?' साहब ने कहा 'पहले यहां बहुत लोग आटा ठा, टुम लोग डरटा है'।

अब इस पथ में उजाला कम था। पर हम लोग जिन बड़े बड़े अन्धकार के स्थानों के पार हो आये थे, उनके आगे यह कुछ भी भयानक न था, इस कारण बेधड़क घुस चले। डरपोग महाशय कुछ-कुछ हिचकिचाये पर हम लोग धकेल धकाल आगे ले चले।

बीच में दूर तक की कोई कहने सुनने योग नई बात न थी। यह आप लोग समझ ही सकते हैं कि चित्रकूटवाली रमक झमक धीरे-धीरे बहुत ही कम हो गई थी। हां, चमकती तितलियां और कहीं-कहीं अग्निवृक्ष और कहीं-कहीं दूर तक ऊपर खुले हुए बिल ऐसे थे, जिनके द्वारा प्रकाश आता था। हम लोग कुछ-कुछ बातचीत करने चले जाते थे। साहब ने अपनी टेढ़ी-मेढ़ी भाषा में कहा कि देखिये! आप लोग भूगर्भ में आने से इतना सुख होने पर भी यों डरते हैं और कब निकलैं कब निकलैं करते हैं, पर किसी समय भूगर्भ में महिरावण नामक राजा की राजधानी थी और लंकेश से मित्रता के कारण वह राम लक्ष्मण को पकड़ लाया था, फिर हनुमान् रूपान्तर कर उसी राजधानी में नये और अपने बाहुबल से उसे मार, राम लक्ष्मण को छुड़ा लाये। भारत में पहले दैत्य दानव एक बड़े ही धूर्त्त वर्ग थे। वे लोग इनी भूगर्भों में छिपे रहते थे, और जब अवसर पाते थे तभी पृथ्वी के ऊपर अपना अधिकार जमा लेते थे और जब उन पर आपत्ति आती थीं तो फिर भाग के इनी भूगर्भों में घुस जाते थे।

यों हम लोग भांति-भांति की बाते करते आगे बढ़े जाते थे कि, सफेद पत्थर की भूमि मिलने लगी और आकाश बड़ा होने लगा। थोड़ी दूर आगे आते ही स्थान बहुत चौड़ा मिला और वहां बड़ा उजाला देख पड़ा। पास आने से विदित हुआ कि एक बड़ा चक्कर ऊपर से खुला है, सूर्य का प्रकाश नीचे फैला था, और जहां ऊपर से खुला था उसी की सुध में नीचे भी एक बड़ा भारी कुवां सा चक्कर गहरा चला गया था। किनारे से झुक के देखने में, उस का अन्त नहीं जान पड़ता था।

मैंने कहा 'बस यहीं विराधकूप है। यहां ही रामचन्द्र ने विराध दानव को गाड़ा है।' साहब ने कहा, और ये सफेद पत्थर उसी की हड्डी जान पड़ती है। हम लोगों ने देखा कि एक किनारे बहुत भारी बड़ का पेड़ लगा है और वह ऐसा टेढ़ा है कि आधा कुवां छेंक रखा है। हम लोग वहां टहल के देख रहे हैं कि ऊपर से कुछ-कुछ दूर के से अस्पष्ट शब्दों के गूंज आने लगी। हम लोगों की दृष्ट ऊपर पड़ी। दूर गुब्बारे ऐसा प्रकाशमय पदार्थ उतरता देख पड़ा। अब तो चकित हो हम तीनों देखने लगे और विचार करने लगे कि यह क्या है। यह प्रकाश समीप आ चला और मुझे बाबाजी की बात का स्मरण हुआ। मैंने कहा 'साहब! जान पड़ता है कि किसी ने ऊपर से काई लंघड़ लटकाया है।' सुनते ही साहब डाढ़ी पर हाथ रख, आधी मिनट सोच, चिंहुक उठे और बोले कि 'ओः ओः! ठीक बोलटा, फस्ट एप्रिल को प्रोफेसर लूफ लिरपा इस कुएं को नापने को था। आज ओ डीन मालूम होटा।'

मैंने कहा 'साहब, यह ऊपर जाने का अच्छा अवसर है। बस, लंघड़ आने दीजिये और उसे पकड़ कर हम लोग लटक जांय तो जब वे लोग लंघड़ ऊपर खींचेंगे तो हम लोग निकल चलैंगे।' बंगाली बाबू तो चिल्ला के बोले 'नारे बाबू! पड़लेई प्रान जाबे।' ख्नहीं बाबू! गिरते ही प्राण जायेंगे।,, साहब ने कुछ सोच विचार के साथ चश्मा लगा के बड़ी देर तक ऊपर देखा। तब तक तो लंघड़ और उसी लालटेम स्पष्ट देख पड़ने लग गई थी और लंघड़ चला आता था। साहब ने प्रगट किया कि लंघड़ में तीनों आदमी के साथ लटकने से बोझा बहुत बढ़ जाएगा, कहीं टूट गया तो हम लोगों के शरीर के टुकड़े-टुकड़े छितरा जायंगे। इसलिये हम लोगों में से कोई एक पुरुष इसमें लटक जाय तो बिना परिश्रम ऊपर जा सकता है, और वही ऊपर के लोगों से बातचीत कर, फेर लंगर लटकवावे तो क्रम से सब निकल सकते हैं।

मैंने कहा कि अच्छा, तो अब लंगर समीप आया, कहिये? आप पहले जायेंगे? तब तक बंगाली बाबू बोल उठे कि 'नाना! उनी आमा के ना निये जाबेन्ना, तुमी निजे जाओ' 'नहीं नहीं! वे मुझे बिना लिये नहीं जायँगे, तुम खुद जाओ, मैंने साहब की ओर देखकर कहा कि अच्छा तो क्या हुआ, मैं ही आगे जाऊं! सहब ने कहा 'कुछ चिन्टा नई, टुम आगे जाएगा और अम् लोगों का इन्टजाम करेगा।'

तक तो वह लंगड़ समीप आ गया और बट वृक्ष की मोटी डालों के ऊपर टिक गया। मैं उसी क्षण दुपट्टे से करिकस, लटकते हुए अंगों के पल्लों को खोंस, उसी डार-डार समीप आ, लंगर में लिपट, दोनों हाथों से लंगड़ के कड़े को पकड़ बैठ गया और इष्टदेव का स्मरण कर, बाबा जी का स्मरण करने लगा। थोड़ी ही देर के अनन्तर तो वह लंगर उठा और सन्नाटे से ऊपर की ओर चला। मार्ग में कभी डरता, कभी झूलता कभी इधर उधर संधों में से लटकते हुए लत्ते पत्तों को देखता, ऊपर चला आया और आप लोगों से मिला। अब इस के आगे तो कहने की कोई आवश्यकता ही नहीं। हां, इतना कहना हूं कि वे दोनों भी, इसी गढ़े में नीचे खडे प्रतीक्षा कर रहे हैं, सो उन्हें भी निकालिये।

यह सुन सब कोई चकपका उठे और प्रोफेसर साहब ने चट उस लंगड़ को खोल लिया और उसके ठिकाने काठ की चौकी का झलुआ बना, आप चढ़ बैठे और लोगों से ढीलने को कहा। बात की बात में उनका झलुआ नीचे उतर गया और वैसे ही अटक गया। 15 मिनट के अनन्तर फिर खींचा गया तब सबों ने देखा कि उसमें एक ओर तो प्रोफेसर साहब बैठे हैं, एक ओर भूगर्भ वाले साहब बैठे हैं और बीच में डरपोक बाबू आः ऊः कर रहे हैं।

बड़ी युक्ति से झलुए पर से तीनों उतरे और इन्हें देखते ही देखने वाली भीड़ ने खूब बल से ताली पीटी और सब कोई हँस पड़े। इसकी इतनी ध्वनि प्रतिध्वनि हुई की मेरी नींद भी खुल गई। मैं भड़भड़ा के उठ बैठा हुआ आंखें मल के देखता हूं तो सामने चौकी पर वहीं षड्दर्शन की पोथियाँ धरी हुई हैं। आंख के आगे वहीं गोदाहन की तस्वीर टंगी हुई है और आकाश में कुछ-कुछ प्रकाश आने से तारे मंद टिम-टिमा रहे हैं और चिड़ियों की चकचकाहट चुहुल मचा रही हैं। वहां न तो कहीं विराधकूप ही और न कहीं वह भीड़ ही है। इतना जंजाल अंत में कुछ न निकला। ऐसे ही सपने ऐसा यह संसार हैं

यह सच है कि-

'संसारेऽपि सतीन्द्रजालमपरं यद्यस्ति तेनापि किम्।'

इस संसार के रहते यदि कोई दूसरा इन्द्रजाल भी है, तो इससे क्या?

(कवि का अभिप्राय यह है कि संसार ही सब से बड़ा इन्द्रजाल है।)

रचनाकाल : ईस्वी सन् 1884, 1888,
प्रथम मुद्रण सन् 1893, व्यास यंत्रालय,
आश्चर्य-वृत्तांत से संक्षिप्त प्रस्तुति

❑❑❑

बाईसवी सदी

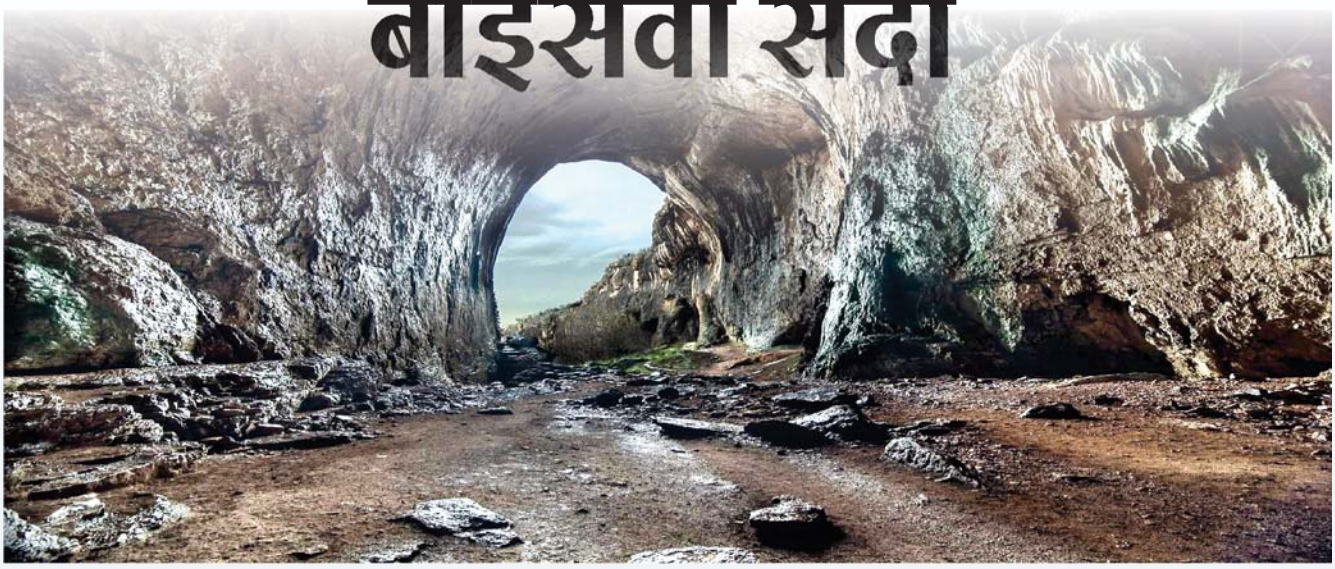

राहुल सांकृत्यायन

लंबी नींद का अंत!

ओह, इतना परिवर्तन। यहाँ इतने मोटे-मोटे वृक्ष पहले कहाँ थे? यह बड़ी चट्टान भी तो यहाँ नहीं थी। तब यह आई कहाँ से? हाँ, उस शिखर से टूट कर आई मालूम पड़ती है, लेकिन इस ऊँची चट्टान के बीच में आ जाने से यह बागमती में नहीं गिर सकी। पर वहाँ से आई कैसे, राह में बड़े-बड़े वृक्ष जो हैं। तो ज्ञात होता है, ये वृक्ष पीछे उगे हैं और ये आकृति से सौ वर्ष पुराने मालूम होते हैं। तो क्या मुझे आये इतने दिन हो गये - ओह हो, हाँ, मुझे स्मरण हो रहा है, मैं फरवरी 1924 में यहाँ आया था। यदि तबसे 100 वर्ष बीते, तो अब 2024 होना चाहिए।

ओह। अब यहाँ से उतरना भी मुश्किल है। बागमती हाथों नीचे चली गई। यहाँ वह किनारे वाली चट्टान भी नहीं है। जिस खुड्डी से चढ़ कर मैं यहाँ आया था, वह भी पानी के बहने से नाली-सी हो गई है। किंतु हाँ, पर्वतराज का यौवन तो और भी बढ़ गया है। चारों ओर हरियाली ही हरियाली उग आई है और झरना। - अरे, यह तो एक छोटा सा प्रपात ही हो गया। वाह-वाह। इधर तो और भी कई झरने आस-पास दिखाई देते हैं। पर बागमती का 'कल-कल' तो वही है। दो-एक चट्टानों के हटने और कुछ नीचे चले जाने के अतिरिक्त इसमें और कोई हेर-फेर नहीं हुआ है किंतु, पहले का वह किनारे वाला वृक्ष नहीं दिख पड़ता। सचमुच मेरे परिचित एक भी वृक्ष यहाँ नहीं है। जब यहाँ इतना परिवर्तन है, तो बस्तियों में, न जाने, क्या हुआ होगा? बड़ा कौतूहल हो रहा है। देखना चाहिए, मानव संसार ने क्या-क्या रूप बदले हैं। रास्ता भीमफेरी होकर गया था। वहाँ कुछ लोग जरूर होंगे। उनसे भी कुछ पता लगेगा।

यह विचारते हुए मैंने अपनी चिर-सहयोगिनी गुफा से विदा ली। 35-36 हाथ ऊपर की अपनी गुफा से नीचे आने में मुझे बड़ी कठिनाई मालूम हुई। मेरे कपड़े का पता नहीं वह कब सड़-गल गया। आदमियों में जाना है - बदन ढांकने के लिए वस्त्र तो नितांत आवश्यक है। यह विचार कर मैं झट एक वृक्ष से बड़े-बड़े पत्ते तोड़, जंगली बेल से कमर में बांध लिये। नीचे आने पर नदी के किनारे-किनारे चलना ही मुझे उचित मालूम हुआ क्योंकि मुझे संदेह होने लगा कि वह नजदीक वाला मार्ग साफ है या नहीं। गंगा किनारे आते ही मेरी इच्छा पहले स्नान करने की हुई। सूर्य की धूप यद्यपि सामने पड़ रही थी, दिन भी दो-तीन घंटे चढ़ आया था, लेकिन अभी थोड़ी-थोड़ी पहाड़ी सरदी पड़ रही थी। तो भी मैंने खूब स्नान किया। नहा-धो चुकने पर सामने कुछ परिचित फल लगे दिखाई पड़े। मैंने उन्हें तोड़कर खूब मतलब भर खाया। इस तरह पेट पूजा से निश्चिंत हो, कदम आगे बढ़ाया।

जब मैं पहले यहाँ आया था, तभी 60-61 वर्ष का हो चुका था, बाल बहुत से पक गये थे, लेकिन अब तो ये सर्वथा सन-जैसे श्वेत हो गये थे। चिरकाल तक निराहार रहने से शरीर सूख गया था, किंतु उत्साह और फुर्ती अब भी कम नहीं थी। चलते-चलते चार-पाँच घंटे हो गये। प्रायः छः-सात कोस चल पाया होगा कि ऊपर से तार जाते दिखाई पड़े। धूप में चमकने से मालूम पड़ा कि तार

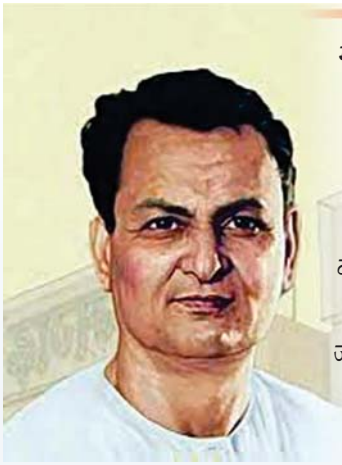

महापंडित राहुल सांकृत्यायन को हिन्दी यात्रा साहित्य का जनक माना जाता है। आपका जन्म 9 अप्रैल 1893 को आजमगढ़, उ.प्र. में हुआ। आपका मूल नाम केदारनाथ पाण्डेय था। आपकी प्रसिद्ध रचनाओं में उपन्यास - बाइसवीं सदी, जीने की राह, सिंह सेनापति, जय यौधय, भागो नहीं, दुनिया को बदलो, मधुर स्वप्न, राजस्थान निवास, विस्मृत यात्री, दिवोदास प्रसिद्ध है जबकि सरदार पृथ्वी सिंह, नये भारत के नये नेता, बचपन की स्मृतियाँ, अतीत से वर्तमान, स्तालिन, लेनन, कार्लमार्क्स, माओत्से तुंग, घुमक्कड़ स्वामी, मेरे असहयोग के साथी, वीर चंद्रसिंह गढ़वाली, सिंहल घुमक्कड़ जयवर्धन, सिंहल वीर पुरुष और महामानव बुद्ध जीवनियाँ हैं। आपने लंका, जापान, ईरान, चीन, लद्दाख, तिब्बत, रूस आदि देशों पर केन्द्रित यात्रा साहित्य लिखा है। सतनी के बच्चे, वोल्गा से गंगा, बहुरंगी मधुपुरी और कनेला की कथा आपकी चर्चित कहानियाँ हैं। 14 अप्रैल 1963 को आपका निधन हो गया।

तांबे के हैं। तांबे के तार तब यहाँ दिखाई न पड़े थे, इसलिए यह नया परिवर्तन मालूम हुआ। मैंने अनुमान किया, शायद इधर कहीं बिजली पैदा की जाती है, जो इन तारों के द्वारा और जगहों पर जाती होगी। अब आगे, आस-पास, पर्वतों पर दोनों तरफ अनार, नारंगी और केले के बाग दिखाई पड़ने लगे। कोसों तक चल आया, पर अभी कोई आदमी दिखाई न पड़ा। मुझे बगीचों में होकर रास्ता जाता मालूम पड़ा, विचार आया, उससे चलने पर क्या जाने जल्दी कोई आदमी मिल जाय। मैंने अब नदी-तट छोड़, ऊपर का रास्ता पकड़ा और नारंगी के वृक्षों की छाया में चलना प्रारंभ किया। देखा, फल खूब लगे हैं और वह भी साधारण नहीं, बहुत बड़े-बड़े। फिर सौंदर्य का क्या कहना है? मन में सोचा, अगर आगे कोई रखवाला मिले, तो पूछूं। मैं जितना ही आगे बढ़ता जाता था, मेरी उत्सुकता और बढ़ती जाती थी।

अब नारंगी के बगीचे समाप्त हो चले सेबों के शुरू हुए। यह बात नेपाल के लिए मुझे नई मालूम पड़ी। सेब बहुत बड़े-बड़े लदे हुए थे और बाग भी पर्वत की ऊँचाई के साथ-साथ ऊपर चोटी तक चले गये थे। जगह-जगह बरसाती पानी के नीचे गिरने के लिए नालियां और नल लगे हुए थे। मोटे-मोटे नलों से पानी सब जगह पहुँचाया गया था। कहीं-कहीं पीने के भी नल दिखाई पड़ते थे। रास्ते से कुछ हटकर एकाध छोटे-छोटे टीन के मकान खड़े मालूम देते थे। पर मैंने रास्ता छोड़कर वहाँ जाना न चाहा। सोचा, अभी आगे चले चलें, कहीं-न-कहीं रास्ते पर ही कोई मिल जायेगा।

पूरे चार कोस चलने के बाद आखिर आदमियों की आवाज सुनाई दी। ज्यों-ज्यों नजदीक आता जाता था, आवाज स्पष्ट होती जाती थी। जब पास आया, तो देखा उनमें स्त्री और पुरूष दोनों ही हैं। उनके वस्त्र बहुत ही स्वच्छ हैं, चेहरे खिले हुए हैं। मन में विचारा, क्या ये नेपाल राज-परिवार के स्त्री-पुरूष तो नहीं हैं, जो शायद मनोरंजन के लिए यहाँ आये हैं लेकिन ऐसी बात नहीं मालूम पड़ती। ये तो डालियों से तोड़-तोड़कर फलों को जमीन पर रखते जाते हैं और कुछ लोग उन्हीं फलों को सामने लिये जा रहे हैं। मालूम होता है, वहाँ वे ढेर लगाते होंगे। इसके अलावा, राज-खानदान का बीस-गजी पायजामा भी इन स्त्रियों के पास नहीं है, यद्यपि इनका रंग-रूप, वेश-भूषा, शारीरिक गठन, स्वच्छता, व्यवहार उनसे कहीं ऊचे दर्जे का है। किंतु फर्क भी अवश्य है। ये सब की सब पैंट पहने हैं, इनके हाथ-पैर मोजे और दस्तानों से ढंके हैं। पैरों में जूते भी हैं। इसमें अवश्य कोई रहस्य है। अच्छा, इनसे मिलकर ही पता लगेगा और अब तो बिल्कुल पास ही आ गया हूँ। काम में लगे रहने के कारण उन्होंने मुझे नहीं देखा। लेकिन वह देखो, वहाँ एक ने मुझे देखकर अपने साथियों से कुछ कहा। सब-के-सब क्या मेरी तरफ आंखें फाड़-फाड़ कर देख रहे हैं? क्या मैं कोई जंतु हूँ? कोई मेरे पत्तों के कपड़ों की ओर देख रहा है, तो कोई दाढ़ी की ओर। अच्छा, वह एक आदमी इधर आ रहा है, उसी से सब बातें मालूम होंगी।

हालांकि आने वाला व्यक्ति सीधे ही आ रहा था, पर मेरी उत्सुकता मुझे अधीर बना रही थी।

सेबग्राम का बाग

उस पुरूष ने धीरे-धीरे मेरे पास आ, 'स्वागत' कहा। यद्यपि उसने मुझसे एक ही बार यह शब्द कहा, लेकिन मेरे कानों में, न जाने कितनी बार, उसकी आवृत्ति होती रही। इसके बाद ही वार्तालाप शुरू हुआ -

'आप कहाँ से आ रहे हैं?'

'कहीं दूर से तो नहीं, करीब दो घंटे दिन चढ़ा था, तब मैं अपने स्थान से चला हूँ।'

'अब, झट घड़ी देखकर - तीन बजकर बीस मिनट हो चले हैं। मुझे क्षमा करेंगे, अगर मेरी बातों में कुछ ढिठाई हो,

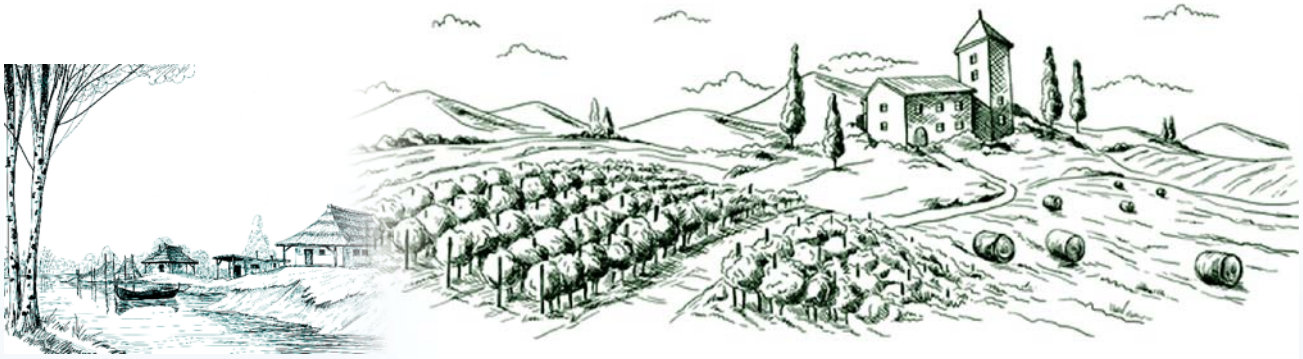

क्योंकि आपके दर्शन ने ही जिज्ञासा-तरंगों से हृदय को डांवाडोल कर दिया है।'

'जो कहना हो, निस्संकोच होकर कहो। मेरे कुतूहल भी कुछ कम नहीं है, यद्यपि, इस स्थान से मेरा निवास बहुत दूर नहीं, लेकिन समय से कुछ अवश्य दूर है। अच्छा, यह तो बताओ, आज सन्-संवत् क्या है?'

'सन् 100'

'कौन से सन्?'

'सार्वभौम। आप कौन सन् पूछते हैं?'

'ईसवी'

'वह है, 2124'

'ओ-हो, तो मुझे गुफा में बैठे दो सौ वर्ष हो गये? तभी तो सब जगह परिवर्तन दिखाई पड़ता है। अच्छा, पूछो जो कुछ पूछना हो।'

'क्या आपको गुफा में बैठे दो सौ वर्ष हो गये? और बैठते समय अवस्था क्या रही होगी?'

'60 वर्ष'

'260 वर्ष बहुत होते हैं। मेरी अवस्था अभी 60 वर्ष की है। वृद्धपुर में 100 से 120 वर्ष के भीतर के कई पुरुष हैं। किंतु आपकी अवस्था का पुरुष अभी तक सुनने में नहीं आया। यह सब बातें मुझे और भी आश्चर्य में डाल रही हैं, साथ ही बहुत-कुछ पूछने की उत्सुकता भी उमड़ रही है। किंतु, वहाँ जो मेरे साथी स्त्री-पुरुष हैं, वे भी मुझसे कम उत्सुक नहीं हैं। इसलिये क्या ही अच्छा हो, अगर उनके सामने ही आप अपनी आत्म-कथा कहें। हाँ, एक बार और। अब ऐसे वस्त्रों का रिवाज नहीं रहा, अनुचित तो न होगा, यदि आपको पहनने के लिए एक वस्त्र ला दूं?'

'नहीं, कुछ अनुचित नहीं। इसकी आवश्यकता मैंने भी महसूस की थी।'

उस भद्र पुरूष ने, मेरा वाक्य खत्म होते ही 'अर्जुन, अर्जुन' पुकारा, और आवाज सुनते ही एक युवक दौड़ा आया। उसने स्मितमुख हो मेरा स्वागत कर अपने साथी से पूछा - 'क्या है?'

'यहाँ, इस मकान में धोती-जोड़े रखे होंगे। दौड़कर उनमें से एक यहाँ लाइये आपके पहनने के लिए।'

'बहुत अच्छा,' कहकर अर्जुन दौड़ गया और दो मिनट में निहायत साफ एक धोती ले आया।

मैंने धोती लेकर कहा - 'पहली बात तो यह कि चूंकि हमें बातें बहुत करनी है, अतः नाम से परिचित होना चाहिये। मेरा नाम विश्वबंधु है और आप अपना नाम बताइये।'

'मेरा नाम सुमेध।'

'तो सुमेध जी। सहायता के लिए धन्यवाद।'

'नहीं, वैसी कोई बात नहीं। अब हम लोगों के जलपान का भी समय हो गया है। आप भी थके माँदे होंगे। भूख लग जाना भी स्वाभाविक ही है। अभी चलकर जल-पान करें और इसके बाद आत्म-वृत्तांत से हमें कृतार्थ करें।'

'सुमेध। सचमुच तुम्हारे थोड़े से वार्तालाप ने मुझे बहुत आकृष्ट कर लिया है। इस समय मेरे आनंद का ठिकाना नहीं। अच्छा, चलो।'

अब सुमेध मुझे साथ लेकर उस मकान की ओर चले। इतने में यकायक तोप के गोले की सी आवाज हुई। पहले तो मैं चौंक गया, पीछे पूछने पर मालूम हुआ, यह जलपान की सूचना है। मेरी अनेक जिज्ञासाओं में एक की और वृद्धि हुई। मैंने देखा, उधर से वे स्त्री-पुरूष भी जो काम में लगे थे काम छोड़कर इसी मकान की ओर चले आ रहे हैं। मकान के पास जाकर क्या देखता हूँ, साफ पानी के कितने ही नल लगे हुए हैं। एक हॉल है, जिसमें डेढ़-दो-सौ आदमी बैठ सकते हैं। कमरों में बहुत-सी कुर्सियां हैं।

मैंने बड़े हॉल में देखा, पांती से कुर्सियां और मेज लगे हुए हैं। मेजों पर एक-एक तश्तरी में सेब, केले, अंगूर आदि कितने ही फल रखे हुए हैं और गिलासों में भरकर दूध। हम सब स्त्री-पुरूषों की संख्या करीब एक-सौ थी। मैंने उतनी ही थालियां वहाँ देखकर पहले आश्चर्य किया। क्या स्त्रियां भी पुरुषों की बगल में बैठकर नाश्ता करेंगी? इतने ही में वे सब स्त्री-पुरुष भी आ गये। सबने स्मितमुख हो स्वागत किया। महाशय सुमेध ने उन्हें संबोधित करके कहा-

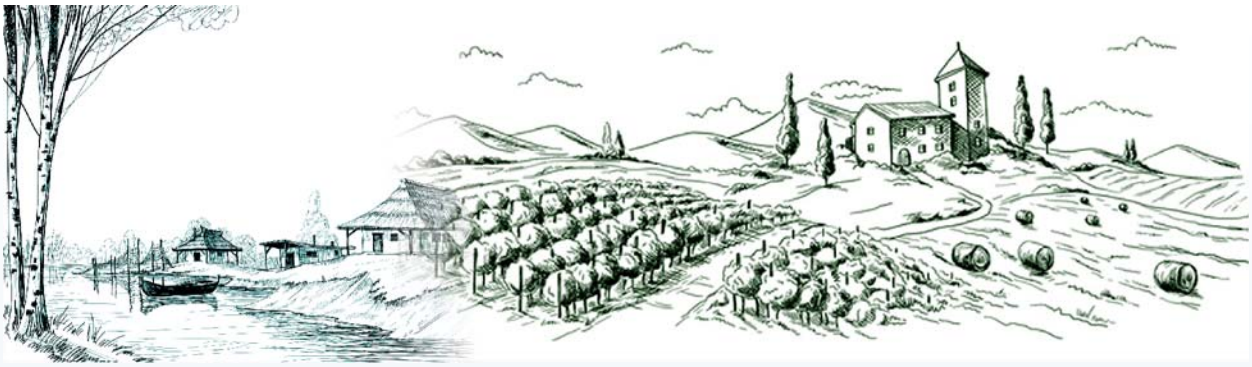

'साथियों, हमारे आज के अतिथि को देखकर सबसे बड़ी जिज्ञासा है। फिर हमारे जैसों की जिनने एकाध बात सुन ली है उत्सुकता का तो कोई हिसाब नहीं। इसीलिए मैंने अकेले ही सब सुन लेना अच्छा नहीं समझा। अभी तो सिर्फ इतना जान पाया हूँ, कि हमारे विश्वबंधु जी 1924 से ही, यहाँ से 10-12 कोस की दूरी पर जमे हुए थे, जहाँ से आज ही आ रहे हैं।'

इतना सुनने पर नर-नारियों का कौतूहल और भी उत्तेजित हुआ, पर जलपान करने का समय बीत रहा था। इसलिए सबने हाथ-मुंह धोकर अपना-अपना आसन ग्रहण किया। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि अर्जुन ने मेरे जलपान की थाली परोसने की धोती ले जाते समय ही कह दिया था। सुमेध ने मुझे एक कुर्सी पर बैठाया और पास ही स्वयं भी बैठ गये। उनके समीप ही एक महिला बैठी थी, जो आगे चलकर मालूम हुआ कि, उनकी साथिन सुमित्रा थीं। परोसने वालों ने अपना काम समाप्त कर, स्वयं भी एक-एक आसन ग्रहण किया। अब सबका नाश्ता शुरू हुआ। मैंने भी एक कतरा सेब मुख में डाला। मुझे उसकी मधुरता और रसता अद्‌भुत मालूम हुई। मैंने तो उस समय यही समझा कि शायद चिरकाल के बाद खाने से यह इतना स्वादिष्ट मालूम हो रहा है, किंतु पीछे मालूम हुआ कि, यह वैज्ञानिक रीति से फलों की खेती होने का परिणाम है। मुझे अधिक भूखा समझकर कुछ ज्यादा फल दिया गया था। उसमें नारंगी की भी कुछ फांकें थी। नेपाल की नारंगी पहले भी खाई थी, लेकिन इतनी मधुर और सुस्वादु नहीं। बीज तो पता ही नहीं था, रेशे भी नदारद। अंगूरों के दाने बनारसी बेरों के बराबर थे। मैंने पूछा - 'ये अंगूर कहाँ के हैं?'

सुमेध ने बतलाया - 'यहाँ से चार कोस के फासले पर इसका बाग है।'

'क्या नेपाल में भी अंगूर होता है।'

'बहुत। इसको तो सैकड़ों वर्ष हो गये। सारे बिहार, उड़ीसा, आधे बंगाल, काशी और कोसल को यहीं से अंगूर जाता है।'

अब जलपान समाप्त हो गया। सबने हाथ-मुंह धो, एक कमरे की ओर मुंह किया। वहाँ बहुत-सी कुर्सियां पड़ी थीं। सुमेध ने मुझे ले जाकर एक आरामकुर्सी पर बैठाया। मैं तो मन-ही-मन कह रहा था कि ये लोग मुझसे जरूर बीसवीं सदी का जंगली समझते होंगे और उसमें भी इन्होंने मुझे पत्ते पहने भी देख लिया है। दूसरे, इनमें किसी को दाढ़ी का भी शौक नहीं है और मेरे रीछ के-से बाल।

मैंने इन लोगों को बाग में काम करते देखा था, इसलिए समझ बैठा था कि ये जरूर मजदूर हैं। लेकिन अब उत्सुकता हुई की पूछूं इन बागों का मालिक कौन है? पर हिम्मत नहीं हुई।

वर्तमान जगत्

'आपकी बातें सुनने के लिए हम सभी बड़े उत्सुक हैं।'

'आपसे ज्यादा आपकी बातें जानने के लिए मैं उत्सुक हूँ। सुमेध जी, मेरी कहानी बहुत बड़ी नहीं है। उक्त गुफा में आने से पूर्व मैं बिहार प्रांत के नालंदा में रहता था। उस समय वहाँ एक विद्यालय था, जिसमें मैं पहले पढ़ता-पढ़ाता था।'

'ओ-हो। आप नालंदा विद्यालय के अध्यापक विश्वबंधु हैं? सचमुच हम कितने भाग्यशाली हैं कि आपके दर्शन कर सके। मैं भी तीन वर्ष से बीस की अवस्था तक आपके ही विद्यालय की गोद में पला हूँ। वहाँ के वसुबंधु-भवन में मैंने आपकी प्रस्तर-मूर्ति भी देखी है।'

'तो हमारा प्यारा विद्यालय अब भी जीवित है?'

'जीवित ही नहीं, बल्कि आज उस विद्यालय के मुकाबले में संसार में शायद ही कोई दूसरा विद्यालय हो। दर्शन, ज्योतिष, भाषा-विज्ञान, इतिहास और राजनीति के लिए नालंदा अद्वितीय है।'

मैं जिस समय नालंदा विद्यालय के उत्कर्ष को सुन रहा था, मेरे आनंद की सीमा न थी, हृदय में आनंद का सिंधु तरंगें मार रहा था। श्रोतागण भी इस परिचय से बहुत प्रभावित दीख पड़े। सब-के-सब मेरी ओर एक ऐसी दृष्टि से देख रहे थे, जिसमें प्रेम और सम्मान का भाव था। अब मेरी ज्ञातव्य बातें उन्हें मालूम

ही हो चुकी थी। मैंने उनकी बात जानने के लिए अपनी राम कहानी का यों शीघ्र अंत कर दिया-

'कोई तीस वर्ष तक विद्यालय की सेवा करने के बाद मैं उत्तराखंड घूमने आया। उस गुफा में, जो यहाँ से 12-13 कोस पर है, पहुँचकर मुझे मूर्छा या नींद आ गई, और अब तक वहीं पड़ा रहा। बस, यही मेरी संक्षिप्त कथा है। अब आप लोग बतलायें, आपकी जन्मभूमि कौन-सी है, आपकी भाषा तो नेपाली नहीं मालूम होती?'

'अब उस नेपाली भाषा को तो आप कहीं बोली जाती न पायेंगे। हाँ, पुस्तकालयों मे उसकी पुस्तकें अवश्य पाई जायेंगी। अब सारे भारतवर्ष में एक ही भाषा बोली जाती है। हम सबका जन्म एक ही जगह नहीं हुआ है। यद्यपि मेरे पिता का जन्म काठमाँडो का था, लेकिन नालंदा विद्यालय में शिक्षा समाप्त करने पर उन्होंने गया जिले के शाक-ग्राम को अपना कार्य क्षेत्र बनाया। मेरा जन्म वहीं का है। अभी मेरे पिता जीवित हैं और आजकल माता के साथ हजारीबाग के वृद्ध ग्राम में रहते हैं। उनकी अवस्था सौ वर्ष से ऊपर की है। इसी तरह यहाँ के हमारे सभी साथियों के बारे में समझिये। मेरी साथिन सुमित्रा का (पास में बैठी महिला की ओर संकेत करके) जन्म काशी का है, किंतु इनकी शिक्षा भी नालंदा विद्यालय में हुई है। विवाह के बाद हम दोनों ने वहीं काम करना निश्चित किया। साथी अर्जुन का जन्म लंका के अनुराधपुर का है, किंतु जब यह एक ही वर्ष के थे, तो इनके माता-पिता बोध गया में आ बसे और इन्होंने भी नालंदा में ही शिक्षा पाई। इनकी साथिन प्रतिभा काश्मीर की है, लेकिन शिक्षा इनकी उसी विद्यालय में हुई है। इसी तरह यहाँ कितने साथी उपस्थित हैं, इनकी संख्या 100 है और इनके जन्म स्थान भी सौ से कुछ ही कम होंगे। हमारे सेवाग्राम में पाँच हजार की आबादी है, जिसमें आधे स्त्री-पुरूष दूसरी जगह के हैं। बात यह है कि तीन साल की उम्र में ही लड़के शिक्षा के लिये विद्यालय में चले जाते हैं और बीस वर्ष की अवस्था में शिक्षा समाप्त होने पर उनमें बहुत कम अपने जन्म के गाँव को लौटते हैं। जिनकी जिस विद्या और शिल्प की ओर रूचि हुई, वे उसी तरह की बस्ती में जा बसते हैं?'

'तो जान पड़ता है, अब सभी बातों में पुराने जमाने से अंतर हो गया है। अच्छा, यह तो बताओ, इस समय नेपाल का राजा कौन है?'

'नेपाल का राजा। राजा शब्द तो अब पुस्तकों की ही शोभा बढ़ाता है। अब राजा कहाँ?'

'अच्छा, ये बाग किसके हैं'

'अब तो सभी चीजें राष्ट्रीय हैं, सिर्फ बाग क्या? यह घर, कुर्सी, पलंग, लड़के, स्त्री-पुरुष सब राष्ट्र के हैं।'

'तो राष्ट्र का संचालन कैसे होता है?'

'हमीं लोगों द्वारा चुने गये पंचों की पंचायतों से। ग्राम, जिला, प्रांत, देश, अखिल भूमंडल सबका संचालन इसी तरह होता है।'

'क्या भूमंडल का एक ही राष्ट्र है?'

'हाँ, आज सौ वर्ष से। अच्छा, तो अब हमें आज्ञा दीजिए, हम लोग भी अपना बचा काम समाप्त कर आवें। (घड़ी देखकर) चार बज गये, पाँच बजे हम लोग यहाँ से चलेंगे। मैं अभी ग्रामणी को आपके मिलने की सूचना देता हूँ। शाम को वहीं विश्राम करना होगा।'

'हाँ, आप लोग अपना काम करें। मैं मजे से यहाँ बैठा हूँ।'

सुमेध के उठते ही सभी लोगों ने बाग का रास्ता लिया।

सुमेध ने टेलीफोन की घंटी बजाई। जिसका उत्तर भी तुरंत मिला। उन्होंने चुपके से, न जाने क्या कहा। फिर कुछ सुनकर वह मुझसे बोले - हमारी ग्रामणी देवमित्र आपसे कुछ बात करना चाहते हैं। मैं तो अब काम पर जा रहा हूँ। यह कहकर वह भी काम पर चले गये। मैं रेडियो फोन के पास गया। वहाँ देखता हूँ, एक शीशे पर एक मनुष्य का प्रतिबिम्ब है। मैं चकित होकर देखने लगा। वह मेरा प्रतिबिंब तो है ही नहीं, साथ ही वहाँ कोई दूसरा आदमी भी नहीं, फिर यह कोई चित्र भी तो नहीं है। मैं स्तब्ध और चकित हो रहा था, इतने ही में उस प्रतिबिंब का होठ हिला और टेलिफोन से आवाज आई - 'स्वागतम्। मैं देवमित्र हूँ। अभी साथी सुमेध ने आपके शुभागमन की सूचना दी थी। सबसे बड़ा काम तो यह है कि अभी आपके चित्र और समाचार को पटना भेज रहा हूँ। वहाँ से छः बजे के भीतर-ही-भीतर सारे भूमंडल में आपका चित्र और समाचार पहुँच जाएगा। आपके यहाँ आने पर मैं तो स्वागत के लिए हाजिर रहूँगा ही, इस समय आपको अधिक कष्ट नहीं देना चाहता। आप थके-माँदे होंगे - विश्राम करें।'

मैंने देवमित्र की बातों को यद्यपि आश्चर्य से सुना, किंतु मन को समाधान किया, यह सब विज्ञान के चमत्कार है। बहुत दिन के बाद चलने से सचमुच मेरे पैरों में थकावट मालूम होती थी, किंतु निद्रा नहीं। अभी लेटने का विचार कर ही रहा था, कि खुले किवाड़ से दूसरे कमरे में देखा, एक आलमारी में, और

उसके पास के मेज पर कुछ किताबें हैं। मेरी उत्सुकता ने मुझे पलंग की ओर कदम बढ़ाने न देकर उधर आकृष्ट किया। जाकर देखता हूँ, आलमारी में बहुत ही सुंदर जिल्दों से सज्जित किताबें रखी हुई हैं। पास की एक कुर्सी पर बैठकर, मैंने मेज से एक किताब उठाकर देखी। किताब में मालूम से कुछ अधिक वजन मालूम हुआ। खोलकर देखा तो चांदी के रंग के से किसी धातु के पन्ने हैं। छपाई सफाई अतीव सुंदर। मेरे दिल में इच्छा हुई, देखूं, कहाँ की छपी है। देखने पर ज्ञात हुआ, नालंदा प्रेस में 2024 में छपी है। आज 100 वर्ष छपे हो गये, लेकिन देखने से मालूम होती है, बिल्कुल अभी प्रेस से आई है। खोलने पर उसके पन्ने निहायत बारीक दीख पड़े। एक इंच में प्रायः तीन हजार पृष्ठ रहे होंगे। मुझे पग-पग पर वर्तमान जगत की सभी घटनायें आश्चर्यजनक मालूम होने लगीं। मैंने विचारा, पहले यह देखना चाहिये कि कौन-कौन सी पुस्तकें हैं। मेज पर एक ओर मोटे अक्षरों में सूचीपत्र अंकित एक गुटका देखी। देखने से ज्ञात हुआ, इतिहास, वनस्पति विज्ञान, साहित्य और भूगोल संबंधी यहाँ दो सौ पुस्तकें हैं। भाषा के विचार से अधिकतर पुस्तकें हिंदी की थी। कुछ पुस्तकें सार्वभौम भाषा में भी थीं और एक-दो अंग्रेजी की भी। मैंने जिसे उस समय के लिए सबसे उपयुक्त समझा, वह था सार्वभौम राष्ट्र संगठन इतिहास। उसे उठाकर मैं कुर्सी पर जा बैठा। पुस्तक की छपाई आदि अद्वितीय थी। छपी भी इसी वर्ष की थी। लेखक नालंदा विद्यालय के इतिहासज्ञ, अध्यापक विश्वमित्र थे, मैंने विचारा, दो-ढाई हजार पृष्ठों वाली इस पुस्तक का एक घंटे में पढ़ना मुश्किल है, अतः विषय सूची ही देख लूं।

सूची देखने से 1924 के बाद की मोटी-मोटी बातें जो मालूम हुई, वे वह हैं ब्रिटिश छत्र-छाया में भारत को स्वराज्य 1940 तक, संयुक्त एशिया राष्ट्र 1990 तक, संयुक्त एशिया अफ्रिका-आस्ट्रेलिया राष्ट्र 2000 तक, संयुक्त यूरोप अमेरिका राष्ट्र 2010 तक, भूमंडल का एक राष्ट्र 2024 तक। मैंने कहा, देखूं आजकल अखिल भूमंडल का राष्ट्रपति कौन है। मैंने इसके लिए पुस्तक का अंतिम अध्याय देखा, जिसमें नामों के साथ उन व्यक्तियों के चित्र, जन्मस्थान और शिक्षा स्थान भी दिये गये थे। सम्पूर्ण भूमंडल के राष्ट्रपति अगले तीन वर्षों के लिए श्री दत्त चुने गये हैं, जिनका जन्म स्थान भारत ही है। शिक्षा उन्होंने तक्षशिला में पाई। अवस्था चौहत्तर वर्ष की है। प्रधानमंत्री ओहारा जापानी हैं। शिक्षा मंत्रिणी मोनोलिन एक रूसी महिला, स्वास्थ्य मंत्री डेविड अमेरिकावासी, इसी प्रकार और-और विभागों के भी मंत्री भिन्न-भिन्न देशों के लोग हैं। मैंने खूब गौर करके देखा, तो भी वहाँ सेना मंत्री कोई नहीं दिखाई पड़ा। विचार में आया, कदाचित् छापे की भूल से नाम छूट गया हो। भला ऐसा महत्वपूर्ण पद रिक्त कैसे रह सकता है। पीछे मैंने देश-देश की राष्ट्र सभाओं में देखा, सभी जगह सेना-मंत्री का अभाव था। मैंने अंत की शब्द सूची

उलटकर देखी, जहाँ सेना, सेनापति, सेनामंत्री शब्द आये थे। उन पृष्ठों के पढ़ने से ज्ञात हुआ, २०२४ ई. ही में प्राचीन संसार का यह महत्वपूर्ण पद उठा दिया गया। अब न तो सेना कहीं है, न सेनापति ही।

मैंने अभी इतना ही देख पाया था कि इतने में सभी लोग काम पर से चले आये। आते ही सुमेध ने मुझे चलने के लिए कहा। मैं उठ खड़ा हुआ। मकान से बाहर जाने पर, केवल किवाड़ लगाकर जब सबको ही चलते देखा, तो मैंने पूछा -

'क्या यहाँ कोई नहीं रहेगा?'

'काम क्या है?'

'चीजों की रखवाली के लिए और नहीं तो मकान में ताला ही लगा चलते?'

'अनजान आदमी द्वारा भूल-चूक से पुर्जा छू जाने के डर से ताले को बिजली के कारखानों में लगाते हैं। यहाँ किताबों के छूने से कौन मर जाएगा? कोई जीव-जन्तु भीतर जाकर कोई चीज खराब न कर दे, इसके लिए दरवाजे तो लगा ही दिये हैं।'

जानवर नाम आते ही स्मरण आ गया कि यहाँ तो बहुत बंदर थे, पूछा- 'अच्छा, यह तो मालूम हुआ कि अब चोरी की संभावना नहीं है। परंतु यह तो बताओ, पहले यहाँ बहुत से बंदर रहते देखे थे, अब वे क्या हुए - एक भी नहीं दीख पड़ते?'

'आप यह सौ वर्ष से पूर्व की बात पूछ रहे हैं। मैंने पुस्तकों में पढ़ा है, पहले जिन-जिन स्थानों पर बंदर बहुत थे, फसल का नुकसान देखकर सरकार ने बड़े यत्न से पकड़-पकड़ कर उनमें से बंदरियों को तो हजारों पिंजड़ों वाले घरों में रख छोड़ा और बंदरों को एक टापू में छोड़ दिया। इस प्रकार २०-२५ वर्ष के अंदर सारे बंदर स्वयं नष्ट हो गये, क्योंकि उनकी संतान वृद्धि रूक गई।'

'तो क्या अब बंदर है ही नहीं?'

'कुछ हैं, जो प्राणि विद्या के उपयोग के लिए बड़े-बड़े संग्रहालयों में रखे गये हैं, जहाँ उनकी संतति आवश्यकता के अनुसार बढ़ाई जाती है। बंदर ही नहीं और भी ऐसे अनेक जीव हैं, जो अब केवल संग्रहालयों की ही शोभा बढ़ा रहे हैं, जिनको कि पहले लोग बड़े चाव से पालते थे।'

मैंने स्मरण करके पूछा - 'कुत्ते-बिल्ली तो ग्रामों में हैं न?'

'नहीं, उनसे ग्राम को लाभ क्या? उनकी जाति भी अब

आप संग्रहालयों में ही पाइयेगा।'

मोटरें सड़क पर लगी दिखलाई पड़ीं, हमने भी बात करते-करते अपना-अपना स्थान ग्रहण किया। एक-एक मोटर में बीस-बीस आदमियों के बैठने का खुला स्थान था। मैंने पूछा तोड़े हुए फल कहाँ गये?

'वे तो उसी समय तोड़े जाते और मोटरों पर लादे जाते थे। आपके आने के समय ज्ञात होता है मोटरें बोझ लेकर चली गई थीं। यहाँ देर तक रखकर सुखाने से तो फलों की हानि होती, इसलिए स्टेशन पर जाते ही, उन्हें बर्फ लगी हुई गाड़ी में रखकर माँग वाले स्थानों पर भेज दिया भी गया होगा?'

'तो आपके गाँव में केवल फल ही पैदा होते हैं?'

'हाँ केवल फल, उसमें भी सेब के बगीचे ही ज्यादा हैं। यही कारण है कि हमारे ग्राम का नाम ही सेब ग्राम पड़ गया है। हमारे यहाँ से 15 मील पर नारंगी ग्राम है, जहाँ नारंगी के ही बगीचे हैं। आपने पीछे बागमती के उस पार केलों का वन देखा होगा।'

'हाँ, देखा था।'

'वह कदली ग्राम की हद में है। वहाँ प्रायः केले ही केले उत्पन्न होते हैं, हमारे ग्राम में थोड़ा नारंगी का भी बगीचा है। आपने जलपान में जो केला खाया था, वह वहीं का था।'

'मैंने सभी फलों में एक विशेष प्रकार का स्वाद और मिठास पाई। आकृति भी उनकी बड़ी देखी, क्या इसमें भी कोई बात है?'

'हाँ, अब वनस्पति विज्ञान आपके समय से बहुत उन्नत हो गया है। फलों में विचित्र रूप, गंध, आकृति पैदा करना मनुष्य के हाथ में है।'

हमारा वार्तालाप जारी था। मोटरें सर्राटे के साथ आगे भागती जा रही थीं। दोनों ओर सड़क के किनारे सेबों के बगीचे थे। हमारी सड़क यद्यपि कहीं-कहीं दस-बीस हाथ ऊँचे-नीचे चली जाती थी, किंतु वह चढ़ाई-उतराई ऐसी थोड़ी-थोड़ी थी, कि मालूम नहीं पड़ती थी। दाहिनी ओर बागमती थी और बांई ओर पर्वत। बागमती कहीं-कहीं 400 गज नीचे है, कहीं इससे कम, किंतु बगीचा तट तक चला गया है। भूमि एक रस कर दी गयी है। चट्टान, जो भूमि को ऊबड़-खाबड़ बनाती रही, या तो ढांक दी गई हैं या तोड़कर गंगा में फेंक दी गई है। मुझे मनुष्य की इस शक्ति को देख आश्चर्य और आनंद दोनों होता था।

विचार करते-करते मेरे दिल में आया, सेब-नारंगी की फसल सदा तो नहीं होती। दूसरे दिनों में ये लोग क्या काम करते होंगे? उत्तर पाने से पहले ही आसपास बागों में छोटे-छोटे फल लगे दिखाई पड़े। मैंने पूछा - 'यह क्या किसी दूसरी जाति के सेब हैं, जो इतने छोटे हैं?'

'जाति में भेद तो अवश्य है, किंतु कद में नहीं। ये तो बढ़कर उनसे भी बड़े और लाल होते हैं, इनकी फसल अभी दो मास में तैयार होगी। हमारे यहाँ फसल बराबर ही लगती और टूटती रहती है।'

अभी यह बात हो ही रही थी कि मोटरें रेल की सड़क पार कर गईं। मैंने पूछा - 'यह रेल कहाँ जाती है?'

'यह चंद्रागढ़ी होती हुई काठमाँडों और वहाँ से और आगे बहुत दूर तक फैली हुई है।'

मैंने आश्चर्य से पूछा - 'क्या रेल इन पहाड़ों पर चली गई। मैंने तो उस समय चंद्रागढ़ी पर बोझे ढोने के लिए 'रोप लाइन' का प्रबंध होते देखा था। उस समय उसके लिए फर्पिंग के बिजली घर से बिजली के खंभे गड़ गये थे।'

'अब तो फर्पिंग में वैसा कोई बिजली का कारखाना नहीं है। मैने भी पढ़ा है, पहले नेपाल में चंद्र शमशेर नाम का एक राजा था, उसने अपने देश को लाभ पहुँचाने के लिए ही वहाँ एक बिजली का कारखाना बनवाया था, किंतु आज डेढ़ सौ वर्षों से भी ऊपर हुए, वह बंद कर दिया गया।'

'क्या मालूम है, क्यों बंद कर दिया गया?'

'वहाँ आसपास के पहाड़ी झरनों के पानी को एक तालाब में जमा कर उससे बिजली तैयार की जाती थी, यद्यपि इससे कुछ बिजली तैयार होती थी, जो शायद उस समय के खर्च के लिए पर्याप्त भी समझी जाती हो, किंतु झरनों के पानी का इस प्रकार विनियोग करने से, फर्पिंग के आसपास के पर्वत सूखते चले गये। चंद्र ने अच्छे ही विचार से इन दोनों कामों को क्यों न किया हो!'

'दूसरा काम कौन-सा?'

'दूसरा काम पहाड़ों और आसपास के जंगलों को काटकर खेत बनवा डालना।'

'उससे हानि क्या थी?'

'उससे भी पहाड़ धीरे-धीरे सूखे चले वृष्टि कम होने लगी। आखिर पचास वर्ष के भीतर-ही-भीतर पानी के अभाव से उन खेतों को छोड़कर लोगों को भाग जाना पड़ा।'

'तो क्या उस कारखाने को बंद करने से कुछ फायदा पहुँचा?'

'हाँ बहुत। अगर आप अब जाकर देखें, तो फर्पिंग के आसपास के पर्वत रम्य उद्यानों से हरे-भरे मिलेंगे। चारों तरफ सेब, नासपाती, अंगूर और अनार के बाग लहलहाते पायेंगे। ये सब फल वहाँ होते भी हैं बहुत बड़े और मीठे। इस तरह बगीचों का जंगल लग जाने से पहले से अब कई गुना ज्यादा लाभ है। पहाड़ फिर तर हो गये हैं, झरने भी बहुत हैं।'

'तब तो, सभी जगह भारी क्रांति हो गई। अच्छा, अब शायद आपका गाँव भी करीब है। वही मकान तो दिखाई दे रहे हैं?'

'हाँ, वही, किंतु अभी तीन मील है - यही दस मिनट का रास्ता।'

'क्या आपने नेपाल की सैर की है?'

'हाँ, बहुत। मेरा वार्षिक विश्राम बहुधा वहाँ और तिब्बत की सैर ही में कटा है। मुझे तीस वर्ष यहाँ रहते हो गये। प्रति वर्ष दो मास का विश्राम मिलता है। मैंने 10-12 छुट्टियां वहाँ की ही यात्रा में बिताई है। भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि से भी मैंने वहाँ के विषय में बहुत अध्ययन किया है।'

इस पुरुष की इस प्रकार की बातें सुनकर मुझे और भी आश्चर्य होता था। बीसवीं शताब्दी में ऐसा पुरुष किसी अच्छे कालेज का प्रोफेसर होता। किंतु आज यह सामान्य जनों में है। क्या विद्या की कदर कम हो गई, या विद्वता का मान ऊँचा हो गया? मैंने पूछा - 'आपके इस ज्ञान से औरों को भी कुछ लाभ पहुँचता है?'

'क्यों नहीं? हमें ड्यूटी तो तीन घंटे ही बजानी होती है। बाकी समय में करते ही क्या हैं? मैंने कई बार अपने परिशीलित विषय पर यहाँ व्याख्यान दिये हैं, छुट्टियों के समय दूसरे जनपदों और देशों में भी व्याख्यान दे आया हूँ। मासिक पत्रों में भी चर्चा करता हूँ।'

'अच्छा, यह तो हुआ, भला यह तो बताओ, नेपाल क्या-क्या चीजें पैदा करता है?'

'खनिज पदार्थों में यहाँ तांबा, लोहा और सीसा। अपने यहाँ काम चलाने के लिए कोयला भी निकल आता था, किंतु अब बिजली का उपयोग अधिक होने से कोयले की उतनी बड़ी आवश्यकता नहीं रही। विदेह, मल्ल और कोसल तक यहाँ से बिजली जाती है और यह बिजली तैयार होती है कई नदियों के जल प्रपात से। यह रेल भी उसी बिजली से चलाई जाती है। फिर उसी से हमारी मोटरें चल रही हैं। इसके अतरिक्ति नेपाल मेवों की खान है। करोड़ों भेड़ें और बहुत से कम्बल के कारखाने भी यहाँ है।

आधे से अधिक भारतवर्ष को गर्म कपड़े नेपाल ही देता है।'

'तो ज्ञात होता है, यहाँ चावल गेहूँ नहीं होता।'

'नहीं, ये सब चीजें और प्रांतों से आती हैं। आजकल जो वस्तु जहाँ अच्छी हो सकती है वही वहाँ पैदा की जाती है। प्रायः एक गाँव एक ही चीज पैदा करता भी है। वहाँ जरूरत की दूसरी-दूसरी चीजें और जगहों से पहुँचती हैं।'

हम गाँव के पहले घर के पास पहुँचे रहे थे। मैंने देखा, वही पुरुष जिसके प्रतिबिम्ब को मैंने टेलीफोन में देखा था, मेरे स्वागत के लिए कुछ और आदमियों के साथ खड़ा है। स्वागत हुआ।

मैंने देखा कि सभी स्त्री-पुरूष सुंदर और स्वच्छ हैं। सड़क के किनारे सुंदर मकानों की कतारें हैं। सभी मकान एक से तथा बिना कोठे के हैं। मुझे यह एक बिल्कुल नई दुनियां मालूम होने लगी। अभी मैं इन बातों पर कुछ विचार ही रहा था, कि देवमित्र ने मुझसे कहा - 'इस रास्ते।' मैं पीछे हो लिया। मेरे साथ वे सभी स्त्री-पुरुष भी शामिल थे। अब साढ़े पाँच बज चुके थे। जिस मकान की ओर हम जा रहे थे, मैंने देखा, उस पर मोटे अक्षरों में लिखा हुआ है, 'अतिथि-विश्राम'। ग्रामणी महाशय ने पहुँचते ही वहाँ पर उपस्थित एक पुरुष से पूछा, 'साथी देव। कौन-सा कमरा आज के मेहमान के विश्राम के लिए ठीक हुआ है?' देव ने कहा - 'यही पांचवां कमरा तो।'

अभी कमरे के द्वार पर ही हम पहुँचे थे कि बगल वाले कमरे से एक दूसरे सज्जन निकल आये, जिनकी अवस्था सत्तर और अस्सी के बीच की होगी। उन्होंने भी स्वागत किया। अब हम लोग कमरे में दाखिल हुए। ग्रामणी महाशय ने कहा -

'इस समय हम लोग आपको अधिक कष्ट न देंगे। आप मार्ग के थके-माँदे हैं। थोड़ी देर विश्राम करें। आठ बजे भोजन हो चुकने पर आपके दर्शन के लिए उत्सुक सभी ग्रामवासी संस्थागार में एकत्रित होंगे। मुझे तो आप जानते ही हैं। मैं आजकल यहाँ का ग्रामणी (ग्राम-सभा का सभापति) हूँ। ये दूसरे बीस साथी पुरुष

और महिलायें ग्राम सभा के सभ्य हैं। यह दूसरे अतिथि विश्वमित्र, नालंदा विद्यालय में इतिहास के अध्यापक हैं। कुछ ऐतिहासिक खोज के संबंध में तिब्बत गये थे, जहाँ से आज ही विमान से यहाँ आये हैं। पीछे बात करने पर आपको इनसे और बातों की जानकारी होगी। यह साथी देव हैं।'

थोड़ी ही देर में और लोग मुझसे विदा माँगकर चले गये। देव ने झट बिजली की रोशनी की, क्योंकि अब सूर्यास्त हो गया था। पहाड़ी सर्दी भीनी-भीनी लग रही थी। यद्यपि मार्ग में सुमेध ने मुझे एक ऊनी लबादा दे दिया था, पर वह पर्याप्त नहीं था। देव ने तापक को खोल दिया, और थोड़ी देर में कमरा गर्म हो गया। मैं एक कुर्सी पर बैठा और विश्वमित्र से भी कहा कि यदि कोई अन्य आवश्यक कार्य न हो तो बैठ जाइये। वह दूसरी कुर्सी पर बैठ गये।

बाग में जो ऐतिहासिक ग्रंथ देखा था, उसके रचयिता के नाम से यद्यपि मुझे निश्चित-सा हो गया था, कि यह वही विश्वमित्र हैं, तो भी मैंने पूछा - 'क्या आप सार्वभौम राष्ट्र के संगठन का इतिहास के लेखक अध्यापक विश्वमित्र हैं?'

उन्होंने नम्रतापूर्वक कहा - 'हाँ, वही।'

'तो मुझे आपकी मुलाकात से बहुत प्रसन्नता हुई।'

'उससे कहीं अधिक मुझे हमारा नालंदा परिवार आपको सदा याद रखता है। आपने जो बीज वहाँ बोया था, उसे देखकर आज आप प्रसन्न होंगे। आपके और ग्रामणी महाशय के वार्तालाप के बाद ही आपके शुभागमन की मुझे खबर लग गई थी। वहाँ सारा विद्यालय परिवार बड़ा उत्सुक है। हमारे आचार्य वशिष्ठ ने अभी मुझे कहा है कि सबसे प्रथम आपके दर्शनों का अधिकारी नालंदा परिवार है।'

'आपने क्या टेलीफोन द्वारा यह वृत्तांत जाना है?'

'हाँ। अभी तो पुस्तकालय में टेलीफन पर बात ही कर रहा था। आपके इस जगह आने का समाचार भी उन्हें मैंने दे दिया। उन्होंने कहा है यदि कष्ट न हो तो इसी समय वार्तालाप और दर्शन देने के लिए कहें।'

'नहीं, कुछ नहीं। मुझे भी कष्ट नहीं है। कौन पैदल आया हूँ। चलो, चलें। यह मेरे लिए भी कम आनंद का विषय नहीं है।' यह कह कर हम दोनों उठकर पुस्तकालय में गये। यहाँ सौ-डेढ़ सौ आदमियों के बैठने लायक एक खुला हाल है। दो आलमारियां किताबों की हैं। शनी जल रही है। बीच में बड़े-बड़े मेज और बैठने के लिए बहुत सी कुर्सियां पड़ी हैं। विश्वमित्र ने जाकर टेलीफोन में घंटी दी। मैं वहाँ ही कुर्सी पर बैठ गया। वह कुछ क्षण के बाद मुझसे बोले - 'हमारे आचार्य आपकी प्रतीक्षा में खड़े हैं।'

मैंने जाकर देखा, शीशे में एक वृद्ध पुरुष का प्रतिबिंब है। प्रतिबिंब ने होठ हिलाकर सिर झुकाया और टेलीफोन से आवाज आई - 'स्वागतम्। मैंने भी सिर झुकाकर उत्तर दिया।'

विश्वमित्र ने कहा, 'यही हमारे आचार्य हैं। आप सत्तर वर्ष से विद्यालय की सेवा कर रहे हैं, जिसमें बीस वर्ष से आप आचार्य के पद पर वर्तमान हैं।'

मैंने कहा, 'वशिष्ठ जी, आपको मिलने से मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। वास्तव में आप सब धन्य हैं, जो इस प्रकार अनवरत विद्या दान द्वारा जगत् का उपकार कर रहे हैं।'

'यह हमारा कर्तव्य है। हाँ, नालंदा परिवार की ओर से मेरी प्रार्थना है कि अन्यत्र कहीं का निमंत्रण स्वीकार करने से पूर्व पहले अपने विद्यालय में पधारें।'

'यह मेरी स्वयं ही इच्छा है, इसके विषय में और कुछ कहना न होगा। मैं यहाँ से सीधे वहाँ ही आऊँगा।'

'अध्यापक विश्वामित्र आपकी सेवा में हैं ही, यह भी खुशी की बात है। वह अब विद्यालय को लौट रहे हैं, उन्हीं के साथ पधारें। आपका शरीर अत्यंत कृश है। इसलिए हमारा यह आग्रह नहीं, कि आप तुरंत आयें।'

'मैं अवश्य यहाँ से वहाँ ही आ रहा हूँ। सभी बालक-बालिकाओं और अध्यापक-अध्यापिका परिवार से मेरी मंगल कामना कहें।'

'यहाँ शब्द प्रसारक से सभी सुन रहे हैं। अच्छा, तो अब आप विश्राम करें।'

इस वार्तालाप ने एक अद्‌भुत आनंद मेरे हृदय में पैदा कर दिया। मैं विश्वमित्र का हाथ पकड़े वहाँ से अपने कमरे में आया। मैंने कहा - 'विश्वमित्र। मेरे समय के और अबके संसार में बड़ा फर्क है। तुम तो इतिहास के अध्यापक ही हो इन बातों को जानते हो। किंतु यह मुझे अधिक आश्चर्यमय इसलिए मालूम होता है, कि मैंने दो सौ वर्षों के पूर्व का संसार इन्हीं आंखों से देखा था। मुझे वे बातें कल की-सी दीख पड़ती हैं। उस समय समानता की धीमी-सी आवाज उठी थी, किंतु यह रूपरेखा स्वप्न में भी कहाँ मालूम होती थी? मैं आज ही तुम्हारे संसार में आया हूँ। अभी तो मैं इसका शतांश भी देख-समझ न पाया। किंतु इतने ही में आश्चर्य समुद्र में डूब रहा हूँ। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हो रही है कि तुम्हारे संसार ने आशातीत उन्नति की है।'

❑❑❑

लापता तूफान

जगदीश चंद्र बसु

पहला परिच्छेद

कई वर्ष पहले बहुत ही आश्चर्यजनक भौतिक घटना घटी थी। इसे लेकर बहुत मुबाहिसा हुआ और इस विषय पर यूरोप तथा अमेरिका की विज्ञान पत्रिकाओं में अनेक लेख वगैरह प्रकाशित हुए। लेकिन अब तक कोई निष्कर्ष नहीं निकल पाया है।

28 सितंबर के कोलकाता के अंग्रेजी अखबार में शिमला से आई एक खबर छपी :

'शिमला, मौसम विभाग दफ्तर, 27 सितंबर, बंगाल की खाड़ी में जल्द ही तूफान उठने की संभावना।'

मौसम विभाग दफ्तर, अलीपुर : दो दिन के अंदर प्रचंड तूफान आने का अंदेशा है। डायमंड हार्बर में इस सिलसिले में निशान लगाया गया है।

30 तारीख को जो खबर प्रकाशित हुई, वह बड़ी ही आतंकित करने वाली थी :

आधे घंटे के दबाव यंत्र दो इंच नीचे चला गया। कल दस बजे के आसपास कोलकाता में बहुत ही प्रचंड तूफान आएगा। कितने ही सालों से ऐसा तूफान नहीं आया है।

कोलकातावासी उस रात सो नहीं सके। कल क्या होगा, डरे-सहमे लोग सारी रात इसका इंतजार करते रहे।

पहली अक्टूबर के दिन आसमान घने-काले बादलों से पूरा भर गया। बारिश की दो-चार बूंदें भी गिरने लगीं। आसमान सारा दिन बादलों से ढंका रहा। लेकिन शाम चार बजे अचानक आसमान साफ हो गया। तूफान और बारिश का कोई निशान नहीं रहा।

उसके अगले दिन मौसम विभाग ने अखबारों को खबर भेजी।

कोलकाता में तूफान आने की बात थी, लेकिन लगता है तूफान ने अपना रास्ता बदल लिया।

तूफान किस ओर गया, विभिन्न इलाकों देशों के लोगों ने इसकी जानकारी पाने की कोशिश की, लेकिन उसका कोई पता नहीं चला।

जगदीश चंद्र बसु एक ऐसे वैज्ञानिक थे जिन्होंने प्राथमिक तौर पर विज्ञान कथाएँ भी लिखीं। आपको बंगाली विज्ञानकथा-साहित्य का पिता भी माना जाता है। आपका जन्म 30 नवंबर 1858 को हुआ। आपको भौतिकी, जीवविज्ञान, वनस्पतिविज्ञान तथा पुरातत्व का गहरा ज्ञान था। आप पहले वैज्ञानिक, जिन्होंने रेडियो और सूक्ष्म तरंगों की प्रकाशिकी पर कार्य किया। वनस्पति विज्ञान में उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण खोजें की। भारत के पहले वैज्ञानिक जिन्होंने एक अमरीकन पेटेंट प्राप्त किया। उन्हें रेडियो विज्ञान का पिता माना जाता है। आपका निधन 23 नवंबर 1937 को हुआ।

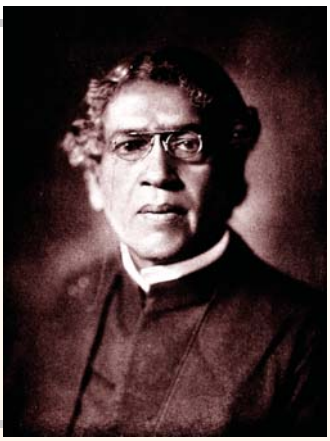

सबसे बड़े, अंग्रेजी अखबार ने लिखा : 'देर से ही सही, इतने दिनों बाद पता चला कि विज्ञान का सर्वे भी झूठा होता है।'

एक दूसरे अखबार ने लिखा : 'अगर ऐसा ही है तब गरीब करदाताओं को पीड़ित करने वाले मौसम विभाग जैसे अकर्मण्य दफ्तर को जारी रखने का क्या फायदा?'

अन्य और भी अखबारों ने उसके सुर से सुर मिलाते हुए कहाः 'इसे बंद कर दिया जाना चाहिए।'

सरकार बड़ी मुश्किल में पड़ गई। कुछ ही दिन पहले मौसम विभाग के लिए लाखों रुपये के बैरोमीटर, थर्मामीटर आदि मंगवाए गए थे। अब तो टूटी बोतलों यानी रद्दी के भाव भी इनकी बिक्री नहीं होगी। और मौसम विभाग के बड़े अधिकारी को दूसरे किस काम में लगाया जाए?

लाचार सरकार ने कोलकाता मेडिकल कालेज को पत्र लिखा : 'औषधिशास्त्र के एक नए अध्यापक को नियुक्त करने की हमारी इच्छा है। वे हवा के दबाव सहित इंसानों के स्वास्थ्य संबंधी विषय पर व्याख्यान देंगे।'

मेडिकल कालेज के अधीक्षक ने जवाब भेजा : 'बड़ी अच्छी बात। हवा का दबाव घटने से धमनी फूल जाती है, जिससे रक्त का संचालन बढ़ जाता है। कोलकातावासी फिलहाल विभिन्न प्रकार के दबाव में हैं:

पहला	वायु	प्रतिवर्ग इंच	15 पाउंड
दूसरा	मलेरिया	प्रतिवर्ग इंच	20 पाउंड
तीसरा	पेटेंट दवा	प्रतिवर्ग इंच	30 पाउंड
चौथा	यूनिवर्सिटी	प्रतिवर्ग इंच	50 पाउंड
पांचवां	इनकम टैक्स	प्रतिवर्ग इंच	80 पाउंड
छठा	म्यूनिसिपल टैक्स	प्रतिवर्ग इंच	1 टन

हवा के 2/1 इंच दबाव में अतिरिक्त वृद्धि 'बोझ पर साग का बंडल' जैसा होगा। इसीलिए कोलकाता में यह नया अध्यापन कार्य शुरु करने से कोई खास फायदा होगा, ऐसा लगता नहीं है। लेकिन शिमला के पहाड़ों में हवा का दबाव और अन्य दबाव अपेक्षाकृत बहुत कम है। वहां उन अध्यापक महोदय को नियुक्त करने से कुछ खास फायदा हो सकता है'।

इसके बाद सरकार निरुत्तर हो गई। और मौसम विभाग पहले की तरह चलता रहा। लेकिन जिस समस्या को लेकर इतना कुछ हुआ, उसी का कोई समाधान नहीं निकला।

एक बार किसी वैज्ञानिक ने विदेश के 'नेचर' नामक अखबार में लिखा। उनकी थ्योरी यह है कि किसी अ°श्य धूमकेतु के आकर्षण से उठने वाला तूफान ऊपर चला गया।

यह अनुमान भर है। अभी भी इस विषय पर वैज्ञानिक जगत में जबर्दस्त बहस-चर्चा चल रही है। ऑक्सफोर्ड में ब्रिटिश एसोसिएशन के अधिवेशन में एक प्रख्यात जर्मन अध्यापक ने 'लापता तूफान' के बारे में बहुत ही पांडित्यपूर्ण आलेख का पाठ किया, जिससे वैज्ञानिक मंडली विस्मित हुई। शोध-प्रबंध के आरंभ में अध्यापक ने कहा, 'तूफान वायुमंडल का आवर्त्त मात्र है। सबसे पहले देखा जाए कि किस तरह वायुमंडल की उत्पत्ति हुई।'

पृथ्वी जब जलते हुए पिंड की तरह सूर्य से छिटक गई, तब वायु की उत्पत्ति नहीं हुई थी। वायुमंडल में ऑक्सीजन, कार्बन- डाइऑक्साइड, हाइड्रोजन की उत्पत्ति कैसे हुई - यह सृष्टि का एक अनजाना रहस्य है। खासतौर पर नाइट्रोजन की उत्पत्ति और भी अधिक हैरानीजदा है। मान लिया जाए, किसी तरह वायु की सृष्टि हो भी गई। पर गंभीर समस्या यह है कि किस वजह से और आखिरकार क्यों हवा शून्य में खो नहीं जाती है। इसका मूल कारण है पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति। आपेक्षिक

पदार्थ के बारे में पंचतत्व वाली बात का प्रयोग करना गलत होगा, क्योंकि रेडियम का धक्का खाकर पदार्थ त्रितत्व प्राप्त करता है, अर्थात् अल्फा, बीटा और गामा में परिणत होता है। इस तरह पदार्थ का अस्तित्व जब लोप होता है, तब अ-पदार्थ शून्य में मिल जाता है। लेकिन जब तक पार्थिव पदार्थ जीवित रहता है, तब तक वह पृथ्वी से पलायन नहीं कर सकता।'

गुरुत्वाकर्षण के कारण पदार्थ पर पृथ्वी का आकर्षण कम या अधिक होता है। वजनदार वस्तु पर आकर्षण अधिक होता है और वे उसी परिणाम में आबद्ध होते हैं। हल्की वस्तु पर गुरुत्वाकर्षण अपेक्षाकृत कम काम करता है, इसलिए वे अपेक्षाकृत उन्मुक्त होते हैं। इस कारण जब तेल और पानी को मिलाया जाता है, तब हल्का होने के कारण तेल ऊपर तैरने लगता है। अदृश्य गैस हल्की होने से बड़े हद तक उन्मुक्त होती है और ऊपर उठते हुए लापता होने के बारे में जो वैज्ञानिक सत्य का वर्णन किया गया, वह पृथ्वी में सब जगहों पर लागू हो, इसके संदेह की गुंजाइश रह ही जाती है, क्योंकि भारत जैसे देश में वैसे तो पुरुष वजनी माना जाता है, लेकिन वे उन्मुक्त व स्वच्छंद होते हैं। और पुरुषों की तुलना में हल्की-फुल्की महिलाएं आबद्ध होती हैं।

'जो भी हो, पदार्थ मात्र ही गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण जमीन के साथ आबद्ध रहते हैं। पदार्थ की मौत के बाद एक अलग स्वतंत्र स्थिति पैदा होती है। मरने के बाद इंसान जब भूत बन जाता है तब पृथ्वी का उस पर किसी तरह का अधिकार नहीं रह जाता। लेकिन कुछ लोगों का कहना है कि मरने के बाद भी चैन नहीं, क्योंकि भूतों को भी थियोसोफिकल सोसायटी के आदेशानुसार चलना पड़ता है। पदार्थ भी पंचतत्व को प्राप्त होता है - पदार्थ के बारे में पंचतत्व वाली बात का प्रयोग करना गलत होगा, क्योंकि रेडियम का धक्का खाकर पदार्थ त्रितत्व प्राप्त करता है, अर्थात् अल्फा, बीटा और गामा में परिणत होता है। इस तरह पदार्थ का अस्तित्व जब लोप होता है, तब अ-पदार्थ शून्य में मिल जाता है। लेकिन जब तक पार्थिव पदार्थ जीवित रहता है, तब तक वह पृथ्वी से पलायन नहीं कर सकता।'

हालांकि अध्यापक महोदय ने पदार्थ क्यों पलायन नहीं करता है, इस संबंध में अकाट्य वैज्ञानिक तर्क प्रस्तुत किया, फिर भी तूफान ने क्यों पलायन किया, इसके बारे में कुछ भी नहीं कहा।

इस घटना की असलियत के बारे में पृथ्वी पर सिर्फ एक व्यक्ति जानता है- वह मैं हूं। (अगले अध्याय में इस विषय पर विस्तार से बताऊंगा।)

दूसरा परिच्छेद

पिछले साल मैं बहुत बीमार रहा। लगभग एक महीने तक बिस्तर पर पड़ा रहना पड़ा।

डॉक्टर ने कहा, 'समुद्र यात्रा करनी पड़ेगी, वरना फिर से बीमार पड़े तो बचने की कोई संभावना नहीं होगी।' मैं जहाज से लंका जाने की तैयारी करने लगा।

इतने दिन बीमार रहने के कारण मेरे बाल बहुत झड़ गए थे। एक दिन मेरी आठ साल की बिटिया ने पूछा, 'बाबा, द्वीप किसे कहते हैं?' मेरी बेटी ने भूगोल पढ़ना शुरु किया था। मेरे उत्तर देने से पहले ही उसने कहा, 'यही है न द्वीप।' ऐसा कहते हुए उसने मेरे सिर के गंजेपन की ओर इशारा किया।

उसके बाद उसने कहा, 'आपके बैग में एक बोतल कुंतल केशरी तेल रख दिया है, बराबर लगाते रहना। वरना खारा पानी लगने से द्वीप के बचे-खुचे निशान भी जाते रहेंगे।'

'कुंतल केशरी' का आविष्कार एक रोमांचकारी घटना है। सर्कस दिखाने के लिए विलायत से एक अंग्रेज आया था। उस सर्कस में काले बालों वाला सिंह ही सबसे बड़ा आकर्षण का केंद्र था। लेकिन दुर्भाग्यवश जहाज से आने के समय सूक्ष्म कीटों के दंश के कारण उसके सारे बाल झड़ गए और इस देश में पहुंचने से पहले ही उसमें और एक बाल झड़े कुत्ते में कोई खास फर्क नहीं

हम लोगों का अंतिम समय सामने था। संकट के समय जीने की ललक के साथ बीती जिंदगी के पल-छिन याद आते हैं, अपने परिजनों की याद आती है। मुझे भी याद आने लगे। पर आश्चर्य यह था कि इन सबके साथ मेरी बिटिया ने जिन झड़ते बालों का मजाक बनाया था, उसके ति भी मेरे मन में मोह उमड़ने लगा। उसने कहा था, `बाबा, एक बोतल कुंतल केशरी का आपके बैग में रख दिया है।'

रहा। लाचार सर्कस मालिक ने एक संन्यासी की शरण ली। उससे संन्यासी के पांव छुए और हाथ जोड़कर समस्या का समाधान निकालने की प्रार्थना की। गोरे साहब का भक्ति भाव देखकर संन्यासी पिघल गए और वरदान में अवधूत तेल दान में दे दिया। बाद में वही तेल 'कुंतल केशरी' नाम से विख्यात हुआ। तेल लगाने के एक सप्ताह के अंदर सिंह के बाल उगने लगे। गंजे पुरुष और उसकी पत्नी के लिए इस तेल की शक्ति आमोघ है। जनहित में यह खबर सभी अखबारों में छपी। यहां तक कि बहुत विख्यात मासिक पत्रिका के पहले पृष्ठ पर ही इस आविष्कार का समाचार प्रकाशित किया गया।

अट्ठाईस तारीख को मैंने चूसान जहाज से अपनी समुद्र यात्रा शुरु की। शुरु के दो दिन ठीक-ठाक ही बीत गए। पर पहली तारीख की सुबह समुद्र ने अदभुत रुप धारण कर लिया। हवा बिल्कुल बंद हो गई। समुद्र का पानी भी धुंधला हो गया। कप्तान के चेहरे को देख हमें डर लगने लगा। कप्तान ने कहा, 'जैसे लक्षण हैं, उससे लगता है कि बहुत जल्दी भयानक तूफान आएगा। हम लोग किनारे से बहुत दूर हैं। अब ईश्वर का ही भरोसा है।'

इस बात को सुनकर जहाज में जैसा भयानक शोरगुल शुरु हुआ, उसे बताने लायक मेरे पास शब्द ही नहीं है। देखते-देखते आसमान बादलों से भर गया। चारों ओर घटाटोप अंधकार छा गया। दूर से आते झोंको से जहाज हिलने लगा। उसके तुरंत बाद जो कुछ हुआ, उस बारे में मेरी बस एक अस्पष्ट

धारणा है। पता नहीं, कहां से क्षुब्ध दैत्यों का दल पृथ्वी का संहार करने के लिए टूट पड़ने को तैयार था।

हवा के गर्जन के साथ समुद्र के अपने महागर्जन ने सुर मिलाकर भयानक संहार का रूप धारण कर लिया। उसके बाद तो एक-एक कर बड़ी-बड़ी लहर जहाज पर धावा बोलने लगीं। एक बहुत ही विकराल लहर जहाज पर बरस पड़ी और जहाज का मस्तूल, लाइफ बोट वगैरह को बहा ले गई।

हम लोगों का अंतिम समय सामने था। संकट के समय जीने की ललक के साथ बीती जिंदगी के पल-छिन याद आते हैं, अपने परिजनों की याद आती है। मुझे भी याद आने लगे। पर आश्चर्य यह था कि इन सबके साथ मेरी बिटिया ने जिन झड़ते बालों का मजाक बनाया था, उसके प्रति भी मेरे मन में मोह उमड़ने लगा। उसने कहा था, 'बाबा, एक बोतल कुंतल केशरी का आपके बैग में रख दिया है।'

अचानक इस बात से एक और बात याद आई। विज्ञान पत्रिका में लहरों पर तेल के प्रभाव के बारे में पढ़ा था। तेल चंचल लहरों को शांत कर देता है, इस विषय पर अनेक घटनाएं याद आईं।

अपने बैग से तेल की शीशी निकालकर बड़ी मुश्किल से डेक पर जा चढ़ा। जहाज डगमगा रहा था। ऊपर जाकर देखा कि एक पर्वताकार लहर जहाज को निगलने के लिए लगातार बढ़ती आ रही है। मैंने जीवन की उम्मीद छोड़े बिना समुद्र की ओर 'कुंतल केशरी' बाण का निक्षेप किया। खुली हुई बोतल समुद्र में फेंक दी। कुछ ही पलों में उसका सारा तेल समुद्र में फैल गया। इंद्रजाल जैसा प्रभाव पड़ा और तुरंत समुद्र ने प्रशांति की मुद्रा अपना ली। कोमल तेल के स्र्पा से वायुमंडल भी शांत हो गया कुछ ही देर में सूर्य देवता के भी दर्शन हुए।

इस तरह हम निश्चित मृत्यु से बच निकले और इसी कारण वह भयानक तूफान कोलकाता को छू नहीं पाया था। कितने हजार लोग इस मामूली एक बोतल तेल के कारण अकाल मृत्यु से बच गए, इसका हिसाब कौन लगाएगा?

❑❑❑

कृष्ण विवर

जयंत विष्णु नार्लीकर

''यह कम्प्यूटर तो बहुत ही परेशान कर रहा है यार!'' कॉफी के प्याले में चम्मच चलाते हुए, प्रकाश बड़ी झल्लाहट से बोला! ''पिछले हफ्ते से कम से कम पचास बार पूछ चुका हूँ। पर, वह एक ही जवाब पर अड़ा हुआ है।''

"क्या कहता है। तुम्हारा कम्प्यूटर?'' संजय ने भोला बनते हुए पूछा! वह शुद्ध गणित का विद्यार्थी था। अतः कम्प्यूटर को कुछ तुच्छ भाव से देखता था। कोई चित्रकार किसी पुताई करने वाले को जिस प्रकार से देखता है, बस वैसे ही।

"कम्प्यूटर कहता है कि मेरे मूल सिद्धांत ही गलत हैं। मैंने सोचा था कि 'प्रॉफ' द्वारा दिया गया डेटा कम्प्यूटर के सुपुर्द कर दूँगा और सारा दिन हाइकिंग टूर पर निकल जाऊँगा। पर 'मैन प्रपोजेज एन्ड कम्प्यूटर डिसपोजेज' यही सत्य है।''

यर्किस वेधशाला से गुरु ग्रह के बारे में मिली नई जानकारी, कम्प्यूटर में जांच कराने के लिए, प्रकाश के पास आई थी।

''तुमने जोड़-बाकी में गड़बड़ कर दी होगी।'' यूँ भी फिजिक्स वालों का गणित कच्चा ही होता है। प्रत्येक गणित वाले की यही धारणा होती है, उसी बात को बड़े विश्वास से संजय ने कह डाला।

''देखो मेरे जोड़-बाकी का सवाल ही नहीं उठता! यदि गलती होगी भी तो न्यूटन तथा आइन्स्टीन की समझो। ग्रहों की गति उन्हीं के सिद्धांतों पर तय की जाती है। यह बात तुम जैसे अल्पज्ञानी को पता होनी चाहिए और यह कम्प्यूटर कहता है कि यह जानकारी सिद्धांतों के अनुसार नहीं है। प्रॉफ को विश्वास है कि डेटा गलत नहीं है। पता नहीं गड़बड़ कहाँ है?" प्रकाश शिकायत भरे स्वर में बोला।

मेरे विचार से तुम खगोल शास्त्र के दशावतारों का जाप करो, ताकि तुम्हें प्रेरणा मिल सके! मजाक में संजय का मंत्र शुरू हो गया। ''बोलो, न्यूटनाय नमः, हैल्य नमः, हर्शलाय नमः, एडम्साय नमः, एडिंग्टनाय नमः....,"

''एडम्स... क्या पते की बात कही यार। बालादपि सुभाषितं ग्राह्यम''! संजय की पीठ पर धौल जमा कर, कॉफी वहीं छोड़कर प्रकाश तेजी से निकल गया।

संजय ठगा सा देखता रहा, इंस्ट्रिटयूट में घनचक्कर बने रहने का हक सिर्फ गणित वालों का था। प्रकाश का पागलपन उसे रास नहीं आया।

इंस्ट्रिटयूट में खगोलशास्त्र के प्रोफेसर रमेश अग्रवाल ही 'प्रॉफ' हैं। ग्रहों तथा उपग्रहों के भ्रमण के गणित 'सेलेस्टियल

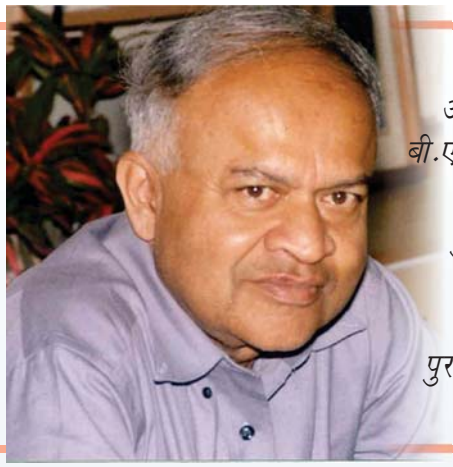

जयंत विष्णु नार्लीकर को आधुनिक विज्ञान कथाओं का मानक माना जाता है। आपका जन्म 19 जुलाई 1938 को कोल्हापुर, महाराष्ट्र में हुआ। सन 1957 में बी.एस-सी की डिग्री तथा गणित में अपनी कैंब्रिज डिग्रियाँ प्राप्त कीं। खगोल-विद्या और खगोल-भौतिकी में विशेष प्राविण्य प्राप्त किया। सन 1962 में 'स्मिथ पुरस्कार' और 1967 में 'एड्म्स पुरस्कार' प्राप्त किये। किंग्ज कॉजिल के फेलो (1963-1972) और इंस्टीट्यूट ऑफ थिओरेटिकल एस्ट्रोनामी के संस्थापक सदस्य (1966-1972) के रूप में सन 1972 तक कैंब्रिज में रहे। भटनागर पुरस्कार तथा बिडला पुरस्कार से सम्मानित। वर्ष 1965 में 26 वर्ष की युवावस्था में 'पद्मभूषण' से अलंकृत।

मैकेनिक्स' में वे दुनिया के जाने-माने व्यक्ति थे। इक्कीसवीं सदी के आरंभ में इस विषय में अनुसंधान करने वाले, बहुत कम वैज्ञानिक थे। यदि इस विषय में कोई गंभीर प्रश्न सामने आता तब उससे संबंधित खगोलशास्त्री, अग्रवाल जी के पास दौड़ जाते। इसीलिये गुरु ग्रह के बारे में प्राप्त नई जानकारी उनके पास भेज दी गई थी।

प्रकाश पावटे उनका प्रिय विद्यार्थी था। नई जानकारी का निरीक्षण करने के पश्चात् अधिक जाँच हेतु उन्होंने उसे प्रकाश के पास भेज दिया था। 'अंतिम निष्कर्ष निकालने से पहले मुझसे न मिलना' ऐसी हिदायत उसे देने की जरुरत भी नहीं थी।

इस बात को एक हफ्ता गुजर गया, और प्रकाश का कोई पता नहीं। इस बात से वे आश्चर्य में डूब गए। उन्हें खुद उससे जा कर मिलना होगा, ऐसा वे सोच ही रहे थे कि वही दौड़ता हुआ उनके कमरे मे दाखिल हुआ। कम्प्यूटर द्वारा दिए गए जवाबों का सारा पुलिंदा उसने टेबल पर पटका और जल्दी-जल्दी कुछ बताने लगा। उसकी एक भी बात प्रोफेसर साहब की समझ में नहीं आई। इससे पहले उन्होंने प्रकाश को कभी इतना उत्तेजित नहीं देखा था।

''आराम से! आराम से अपनी बात कहो। प्रति मिनट सिर्फ एक ही वाक्य बोलो, तब ही मैं कुछ समझ पाऊंगा।'' वे शांति से बोले।

"सर! सन् १८४६ के आस-पास एडम्स ने यूरेनस ग्रह की गति में अनियमितता पा कर यूरेनस के निकट रहे नेपच्यून ग्रह को खोज निकाला। मुझे विश्वास है कि गुरु के निकट किसी ग्रह जैसी ही कोई वस्तु आ गई है। कम्प्यूटर के जवाब, इसी बात की पुष्टि कर रहे हैं।''

बिना सबूत ऐसी घोषणा न करने के नियम का पालन, प्रोफेसर साहब तथा उनके विद्यार्थी अवश्य करते थे। फिर भी प्रकाश का कथन इस कदर अनपेक्षित था कि उन्होंने स्वयं ही, इसकी जांच करने का निर्णय किया। अगले दस दिन वे दोनों इसी काम में जी जान से जुटे रहे और खगोलशास्त्रीय पद्धतियों के सहारे इस कथन की सत्यता की पुष्टि की।

लंदन से प्रकाशित होने वाली साप्ताहिक विज्ञान पत्रिका 'नेचर' में अग्रवाल एवं प्रकाश पावटे का लेख प्रकाशित हुआ और खगोल वैज्ञानिकों के बीच खलबली मच गई। गुरु की गति में उत्पन्न अनियमितता का कारण उसके निकट मौजूद नई वस्तु ही है। यही उस लेख का सारांश था।

उस नवीन वस्तु का अस्थायी संबोधन 'क्ष' तय हुआ। उस का घनत्व, गति, गुरु से दूरी आदि की उस लेख में जानकारी दी गई थी।

'क्ष' को लेकर अनेक तर्क किए जाने लगे। किसी के अनुसार मंगल तथा गुरु के दरम्यान घूमने वाले अनेक एस्टराइड्स में से कुछ आए होंगे। दुनिया की तमाम वेधशालाओं में 'क्ष' को प्रत्यक्ष रूप से देखने की जैसे होड़ लग गई। परन्तु कुछ भी दिखाई नहीं दिया।

इस बात को तीन साल हो गए। 'क्ष' कहीं दिखाई नहीं दिया पर उसके अस्तित्व के प्रति वैज्ञानिकों को दृढ़ विश्वास था। अतः अब 'क्ष' की ओर एक आकाशयान भेजने की बात तय हो गई। यह बात इसलिए महत्वपूर्ण थी, क्योंकि सदियों से मान्यता प्राप्त गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांतों का भविष्य ही इस खोज पर निर्भर था। 'क्ष' को भारतीय वैज्ञानिकों ने खोजा था। इसलिए आकाशयान की उड़ान के लिए भारत के 'श्रीहरिकोट्टा' बेस को चुना गया और उस यान पर प्रवासी वैज्ञानिक के तौर पर जाने का सम्मान प्रकाश पावटे को मिला। उनके साथ एकमात्र सहप्रवासी के रूप मे अंतरिक्ष यान के अमरीकन कैप्टन जान फाकनर को चुना गया। वर्ल्ड स्पेस आर्गनाइजेशन ;ब्द्ध के भारत से, गुरु की ओर जाने वाला यह दसवाँ यान था। इसीलिए उसका सांकेतिक नंबर डब्ल्यू.आई.जे.10 था। प्रस्थान के लिए उचित दिन तय

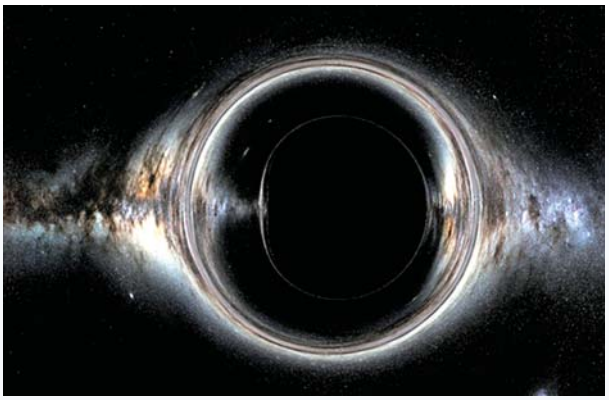

ष्णविवर यानी एक बहुत ही आकुंचित वस्तु है जिसका गुरुत्वाकर्षण इतना अधिक होता है कि उसमें से प्रकाश बाहर की ओर निकल ही नहीं पाता और इसीलिए `क्ष' पृथ्वी पर बसी वेधशालाओं को, या उसके निकट पहुँचे जॉन एवं प्रकाश को भी दिखाई नहीं दिया।

करने के पश्चात् डब्ल्यू आई जे १० की उड़ान की तैयारियाँ होने लगीं।

तीन वर्ष की इस अवधि के दरम्यान प्रकाश पावटे तथा संजय जोशी ने पीएच-डी. हासिल की तथा अपने ही इंस्ट्रिटयूट में फेलो बन गए। संजय की शादी हुए एक साल बीत गया। प्रकाश अभी तक कुँवारा ही था पर दोनों की गहरी दोस्ती पहले जैसी ही बनी रही। गपशप, दिल्लगी होती रहती। अंतरिक्ष की उड़ान के एक हफ्ते पहले संजय की नवजात बेटी का नामकरण समारोह था। बालिका के लिए एक, बड़ा सा खिलौना, टेडीबियर लेकर प्रकाश, संजय के घर पहुँचा।

"भाभी जी, क्या नाम रखा बेटी का?" टेडीबियर देते हुए उसने पूछा।

"अनुपमा! गोद में लेंगे क्या इसे?"

"ना बाबा! दूर से ठीक है। शिशुओं को हाथों में लेने से डरता हूँ मैं।"

"तब दूर से बताएँ, किस पर गई है हमारी बेटी?"

"आप दोनों पर!" प्रकाश ने डिप्लोमैटिक जवाब दिया। "बड़ी प्यारी है बच्ची, अट्ठारह-बीस साल बाद देखना कितने रोमियो आगे-पीछे घूमेंगे इसके"

"आप ही रुक जाइये अट्ठारह बीस साल। हम आपको ही दामाद चुन लेंगे।"

अनुपमा की माँ ने दामाद को खोजना आंरभ कर दिया। पर, शादी की बात छिड़ते ही, फिर चाहे अट्ठारह सालों के बाद की बात क्यों न हो, प्रकाश शरमा जाता। उसने आनन-फानन में वहाँ से बिदा ली और नौ दो ग्यारह हो गया।

"तुमने तो बेकार ही डरा दिया ब्रह्मचारी महाराज को!" संजय पत्नी से बोला!

डब्ल्यू.आई.जे.१० की यात्रा नियत समय पर आरंभ हो गई।

पृथ्वी पर बने अनेक स्टेशनों से यान का संपर्क बना रहा। संदेशों का आदान-प्रदान नियमित रूप से हो रहा था, परन्तु अंतरिक्ष में गुरु के आस-पास पहुँचने पर, परिस्थिति में काफी बदलाव नजर आए। प्रकाश ने मिशन कंट्रोल की ओर निम्नलिखित संदेश भेजा।

"लगता है 'क्ष' के परिक्षेत्र में पहुँच गया हूँ। पर, अभी तक कुछ भी दिखाई नहीं दिया। हाँ 'क्ष' की दिशा में अनेक वस्तुएँ जैसे मीटिओराइट, एस्टराइड आदि बड़ी गति से जाती हुई दिखाई दे रही हैं। यदि 'क्ष' में चमक होती तो शायद यह कहता मैं कि भगवद्गीता में दीये की लौ पर निछावर होने वाले पतंगों के वर्णन ....."

"ठीक है। ठीक है, यूँ कवि कल्पनाओं में मत उलझो। तुम्हारा अगला कदम क्या होगा?" कंट्रोल ने टोका।

"अजी नाभिक विस्फोट को देखकर ओपेनहायमर को गीता का स्मरण हो आया था परन्तु मुझे यहाँ जो दिखाई दे रहा है या जो दिखाई नहीं दे रहा, वह ऐसे विस्फोट से अधिक विचित्र है। मैं इसे पास से देखना चाहता हूँ।" प्रकाश का संदेश था।

"स्वीकृति है पर यदि खतरा महसूस हो तो तुरंत लौट आना होगा।"

"अवश्य! मैं डब्ल्यू.आई.जे.१० का पूरा ध्यान रखूँगा।" प्रकाश द्वारा कंट्रोल को भेजा गया यह आखिरी संदेश था।

प्रकाश की आज्ञानुसार कैप्टन जॉन ने यान को 'क्ष' की दिशा में मोड़ दिया। धीरे-धीरे यान की गति तेज होती गई। "कैप्टन इतनी तेजी से मत चलो। हमें उसके अधिक निकट नहीं जाना है।" प्रकाश ने सचेत किया।

"मैंने तो इंजन कब से बंद कर रखा है। पता नहीं गति तेज क्यों हो गई?" गतिमापक की ओर चिंता से देखते हुए जॉन ने जवाब दिया।

गतिमापक की सुई निरंतर आगे बढ़ रही थी।

प्रकाश के दिमाग में एक विचार बिजली की तरह कौंध गया। वह यान में स्थित कम्प्यूटर की ओर दौड़ गया। अभी तक उपयोग में न लाया हुआ एक प्रोग्राम उसने कम्प्यूटर में डाला। उस पर लेबल लगा था..... 'कृष्णविवर'।

यान की वेगवृद्धि की जानकारी को पंच करने के बाद कंप्यूटर में डाला। पल भर में कंप्यूटर ने छपा हुआ जवाब प्रस्तुत कर दिया। उसे पढ़ते ही प्रकाश तेजी से जान के निकट पहुँचा।

"जॉन, जॉन, 'क्ष' के बारे में जानकारी मिल गई है। मेरे हिसाब से अब बड़ी देर हो गई है। क्ष तो कृष्णविवर है। और हम,

बड़ी तेजी से उसके करीब पहुँच रहे हैं।" कृष्णविवर यानी एक बहुत ही आकुंचित वस्तु है जिसका गुरुत्वाकर्षण इतना अधिक होता है कि उसमें से प्रकाश बाहर की ओर निकल ही नहीं पाता और इसीलिए 'क्ष' पृथ्वी पर बसी वेधशालाओं को, या उसके निकट पहुँचे जॉन एवं प्रकाश को भी दिखाई नहीं दिया।

आइन्स्टाइन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत कृष्णविवर की पुष्टि करता था पर बहुत ही थोड़े वैज्ञानिकों को इनकी जानकारी हो पाई थी। अतः बहुत ही थोड़े वैज्ञानिकों ने 'क्ष' को कृष्णविवर माना था पर इस विचार को अन्य सभी वैज्ञानिकों ने अनदेखा कर दिया।

जवाब क्या है, यह जानते हुए भी जॉन ने पूछा ''अब आगे क्या होगा? शायद हम 'क्ष' के जबड़े में जा गिरेंगे। आशा की एक धुंधली सी किरण बाकी है। हमारी यात्रा का मार्ग क्ष के केन्द्रबिंदु से न होकर उसके बाहरी घेरे पर निश्चित किया गया है। कम्प्यूटर निश्चित रूप से बता नहीं पाएगा पर मैं उसे चलाता हूँ। तब तक तुम कन्ट्रोल से संपर्क बनाओ। जॉन ने कन्ट्रोल को संदेश भेजने के प्रयत्न किए पर कोई फायदा नहीं हुआ। कंट्रोल की ओर से तेज गति से उच्चारित शब्द आ रहे थे जिन्हें समझ पाना मुश्किल था, तभी प्रकाश वहाँ आया। उसके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं।

''जॉन, कम्प्यूटर ने हमारी मृत्यु की बात कही है। उसके अनुसार हम 'क्ष' के पास पहुँचकर करीब दस लाख परिक्रमाएँ करेंगे और फिर अंदर गिर जाएँगे। कंट्रोल से क्या संदेश आया है?'' जॉन ने उसे अपना अनुभव कहा। कंट्रोल से संपर्क टूट चुका था सो अब सभी निर्णय स्वयं ही लेने होंगे, यह प्रकाश की समझ में आया।

तब प्रकाश बोला, ''आशा की एक छोटी किरण बाकी है। कृष्णविवर के नजदीक अस्थिर गोलाकार कक्ष के निकट से, हम गुजरने वाले हैं। उस मार्ग की अस्थिरता का हमें लाभ लेना होगा। उचित समय पर एक रॉकेट के फायर करने पर आसपास निर्मित अस्थिरता की वजह से शायद हमारा यान बाहर फेंका जा सकेगा। यह एक संभावना मात्र है। यदि ऐसा घटित होता है। तो अच्छा ही है वर्ना दुनिया को राम-राम कहने का समय आ गया है। अब हमें शीत कक्ष में प्रवेश करना होगा।"

"शीत कक्ष में प्रवेश? किसलिए'' जॉन ने पूछा। "देखो, जैसे-जैसे हम क्ष के निकट होते जाएंगे। उसके गुरुत्वाकर्षण की टाइडल पावर हमें अधिकाधिक प्रतीत होगी। इसी टाइडल पावर की वजह से चन्द्र का गुरुत्वाकर्षण पृथ्वी पर समुद्र में ज्वार-भाटे के समय प्रतीत होता है।

"अब कल्पना करो कि क्ष की ओर जाते समय तुम्हारा सिर 'क्ष' के निकट है और पैर दूरी पर है। ऐसी स्थिति में क्ष के गुरुत्वाकर्षण का जितना प्रभाव तुम्हारे सिर पर होगा उतना पैरों पर नहीं। तब क्या होगा? तब शरीर पर सिर से पांव तक खिंचाव पैदा होगा।" अब जॉन की बुद्धि काम करने लगी थी।

"मेरा शरीर सिर से लेकर पैरों तक खींचा जाएगा।" जॉन ने कहा। "बिल्कुल ठीक! और यह खिंचाव इतना अधिक होगा कि हम उसे सह ना पाएँगे। अब यदि हम शीत में जमे होंगे तब शायद हमारा शरीर उसे सह लेगा।'' प्रकाश ने समझाया।

तुम आकाशयान को स्वयंचलित स्थिति में रख देना ताकि कंप्यूटर उसे पृथ्वी की दिशा दिखा सकेगा। यदि हमारा नसीब बलवान होगा तब बेस पर मौजूद लोग हमें जगा देंगे। सारी तैयारी कर लेने के पश्चात् शीत कक्ष में प्रवेश करने से पहले दोनों ने आकाश का दर्शन किया। तारों का समूह, विशेष तेजोमय हो चमक रहा है, ऐसा उन्हें लगा।

क्या उनके लिए दुनिया का यही अंतिम दर्शन था?

जब श्रीहरिकोट्टा बेस पर डब्ल्यू.-आइ.-जे.-10 नामक आकाशयान उतरा तब वहाँ उपस्थित सभी वैज्ञानिक चकित रह गए। इस नाम के किसी यान का उन्हें स्मरण तक न था। खास बात तो यह थी कि इस यान के आने की पूर्वसूचना भी न मिली थी। इस अचानक आए अनिमंत्रित यान की गहरी जाँच की गई। अन्दर गहरी नींद में डूबे दोनों कुंभकर्णों को बाहर निकाला गया। उन्हें मेक्सिमम सिक्युरिटी मेडिकल सेक्शन (एम.एस.एम.एस.) में भेज दिया गया। बेस पर मौजूद सभी लोग इन दोनों के नाम तथा चेहरों से पूर्णतया अनभिज्ञ थे।

जब श्रीहरिकोटा बेस पर डब्ल्यू.-आइ.-जे.-10 नामक आकाशयान उतरा तब वहाँ उपस्थित सभी वैज्ञानिक चकित रह गए। इस नाम के किसी यान का उन्हें स्मरण तक न था। खास बात तो यह थी कि इस यान के आने की पूर्वसूचना भी न मिली थी। इस अचानक आए अनिमंत्रित यान की गहरी जाँच की गई। अन्दर गहरी नींद में डूबे दोनों कुंभकर्णों को बाहर निकाला गया। उन्हें मेक्सिमम सिक्युरिटी मेडिकल सेक्शन (एम.एस.एम.एस.) में भेज दिया गया। बेस पर मौजूद सभी लोग इन दोनों के नाम तथा चेहरों से पूर्णतया अनभिज्ञाथे।

"जरा आराम से। डॉक्टर साहब ने आपको हिलने-डुलने तथा सोच-विचार करने की मनाही की है। एम. एस. एम. एस. की परिचारिका अनुपमा, प्रकाश से कह रही थी। यहाँ के प्रमुख वैज्ञानिक जल्दी ही आप से भेंट करेंगे। उन्हीं से कह दीजिये सारा कुछ!''

"मेरे अपने एक-दो मित्रों को कम से कम फोन तो करने दीजिए। मैं कुशल हूँ इतना तो कहने दें। देखिए, मेरी यह आटोमैटिक घड़ी बता रही है कि मैं पूरे तीन साल बाद लौटा हूँ। वे लोग चिंता में पड़ गए होंगे कि मैं कहाँ गायब हो गया।'' ''तीन साल?'' प्रकाश की बात सुनकर बेस के प्रमुख वैज्ञानिक डॉ. रामास्वामी ने पूछा जो कमरे में आ रहे थे। "तीन वर्षों के पहले, यहाँ से कोई मानव वाले यान, नहीं भेजे गए। बल्कि पाँच साल से हम स्वयंचलित यंत्रों वाले मानव रहित यान ही भेज रहे हैं।"

"बिल्कुल असंभव! आप अपने रिकार्ड की जाँच करें।" प्रकाश आश्चर्य से चीखा। मेरी घड़ी के अनुसार मैं तथा जॉन फाकनर, ठीक तीन वर्ष पंद्रह दिनों पहले गुरु की दिशा में निकल पड़े थे। जॉन से पूछें अथवा प्रोफेसर रमेश अग्रवाल जी से संपर्क करें ताकि आप को यकीन हो जाए।''

''प्रोफेसर साहब तो अब रिटायर हो गये हैं। पर, हम उनसे संपर्क स्थापित करने की कोशिश करेंगे।'' रामास्वामी बोले। प्रकाश का दिमाग चकरा गया। जिस समय वह डब्ल्यू.आई.जे.-१० से प्रवास हेतु निकला था तब अग्रवाल जी चालीस की कगार पर थे। उसने डरते-डरते पूछा, ''कौन सा सन् चल रहा है?''

इसके जवाब में रामास्वामीजी ने उसके हाथ में उसी दिन का अखबार थमा दिया। उस पर लिखी तारीख को पढ़ कर उसे गश आ गया। वह पूरे बीस वर्षों बाद पृथ्वी पर लौटा था।

प्रकाश को सामान्य होने में करीब दो हफ्ते लगे। इस कार्य में नर्स अनुपमा बहुत सहायक सिद्ध हुई और उस ब्रह्मचारी की विकेट डाउन होने के आसार नजर आने लगे। प्रेम की इस आँखमिचौली में अंतरिक्ष-यात्रा का नाम भी न निकले, डॉ. द्वारा दी गई सख्त हिदायत का अनुपमा ने पूरे मनोयोग से पालन किया। प्रकाश के स्वस्थ होते ही रामस्वामी जी ने उसकी अग्रवालजी से भेंट करवाई।

तब अग्रवालजी ने सर्व प्रथम प्रकाश के सकुशल लौटने के लिए उसे बधाई दी तथा उसे अनुकूल वधू के मिलने की भी बधाई दी। फिर उन्होंने कालहरण का खुलासा किया। कृष्णविवर के प्रखर गुरुत्वाकर्षण का ही सारा असर था। निद्रावस्था में कृष्णविवर के चारों ओर चक्कर लगाते समय कालमापन के अनुसार एक सेकंड की अवधि ही पर्याप्त थी क्योंकि गुरुत्वाकर्षण ने उनके काल की गति को करीब-करीब शून्य कर दिया था। उस एक सेकंड की अवधि में बाकी की दुनिया सत्रह साल आगे निकल गई। जॉन तथा प्रकाश की बीस वर्षीय तरुणाई वैसी ही बनी रही। आइन्स्टाईन की रिलेटिविटी के जीते-जागते उदाहरण ये दोनों थे।

कृष्णविवर के प्रखर गुरुत्वाकर्षण का ही सारा असर था। निद्रावस्था में कृष्णविवर के चारों ओर चक्कर लगाते समय कालमापन के अनुसार एक सेकंड की अवधि ही पर्याप्त थी क्योंकि गुरुत्वाकर्षण ने उनके काल की गति को करीब-करीब शून्य कर दिया था। उस एक सेकंड की अवधि में बाकी की दुनिया सत्रह साल आगे निकल गई। जॉन तथा प्रकाश की बीस वर्षीय तरुणाई वैसी ही बनी रही। आइन्स्टाईन की रिलेटिविटी के जीते-जागते उदाहरण ये दोनों थे।

''तब संजय कहाँ है? मुझे देखकर उसे जबर्दस्त झटका लगेगा।''

हंसता हुआ प्रकाश बोला।

''संजय ....कौन संजय?'' अनुपमा ने पूछा।

''संजय जोशी मेरा परम मित्र। हम दोनों एक ही इंस्टिट्यूट में अनुसंधान का काम कर रहे थे। कई बार मेरा उसका विवाद.... अरे!

रो क्यों रही हो?''

''वे मेरे पिता थे। उनका तथा माँ का विमान दुर्घटना में देहान्त हो गया.... और मैं अनाथ हो गई।'' अनुपमा ने सुबकते हुए कहा।

अनुपमा की माँ द्वारा किया गया ''दामाद अनुसंधान'' सफल हो गया था.... कृष्णविवर की कृपा से।

❑❑❑

अंतरिक्ष से चेतावनी

अमृतलाल वेगड़

यह आकाशवाणी है। मास्को से प्राप्त ताजा समाचारों के अनुसार रूसी यान एफ 59, जिसे आज प्रात 5:30 बजे चन्द्रमा पर पहुँचना था, अभी तक वहाँ नहीं पहुँचा है। मास्को का चन्द्रमा पर स्थित रूसी अड्डे से सम्पर्क भी टूट गया है। यान की तलाश जोरों से शुरू हो गई है। अधिकारियों को आशा है कि वे यान का पता लगाने में शीघ्र ही सफल हो जाएँगे। वैसे, इस घटना पर उन्हें हैरानी जरूर है, क्योंकि यह प्रथम अवसर है जब ऐसी दुर्घटना घटी हो। यान पर 15 यात्री सवार थे।

पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच बस-सर्विस शुरू हुए कोई दो साल हो गए थे। यहाँ 'बस-सर्विस' के बारे में थोड़ा बता देना जरूरी है। उसका वास्तविक नाम तो था 'अन्तर्ग्रह-यात्री-राकेट-परिवहन'। किन्तु बोल-चाल की भाषा में लोग उसे बस-सर्विस ही कहने लगे थे। इस तरह की दो बस-सर्विस थी। एक अमरीकी, दूसरी रूसी। रूसी बस-सर्विस से चन्द्रमा के जाने-आने का किराया कोई 90 लाख रुपए था। अमरीकी बस-सर्विस का किराया इससे कुछ अधिक बैठता था, पर उसमें सुविधाएँ अधिक था और समय भी कम लगता था। दोनों देशों के आकाश यानों के बारे में सबसे बड़ी बात यह थी कि आज तक एक भी दुर्घटना नहीं हुई थी। प्रायः हर देश से थोड़े-बहुत चन्द्रमा की सैर कर आए थे और वहाँ की धूल का माथे पर तिलक कर आए थे।

हमारे देश में चन्द्रमा की सैर कर आने वालों की संख्या कोई 22 के करीब पहुँच चुकी थी। जाने को तो बहुत लोग आतुर थे, पर 90 लाख रुपए की विदेशी मुद्रा जुटा पाना लोहे के चने चबाना था। किसी तरह जो लोग इतनी विदेशी मुद्रा पा जाते थे, उनमें से कई स्वास्थ्य के कारणों से अयोग्य साबित हो जाते थे। चन्द्रमा पृथ्वी से कोई 2,40,000 मील दूर है। इतनी लम्बी उड़ाने भरने के लिए ऐसा उत्तम स्वास्थ्य चाहिए, जो विकट से विकट परिस्थितियों में साथ दे। चुने हुए लोगों को एक माह तक प्रशिक्षण दिया जाता था। वहाँ की सारी बातें यहाँ से इतनी भिन्न हैं कि बिना प्रशिक्षण के जाना मौत को बुलावा देना है। फिर भी अमरीका, रूस और यूरोप के तो हजारों लोग चन्द्रपुर हो आए थे।

किन्तु आज तक एक भी महिला को चन्द्र-यात्री होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। उन्हें टिकट ही नहीं दिया जाता था। महिलाओं ने इसके खिलाफ संसार-व्यापी आन्दोलन छेड़ रखा था। उनका आग्रह था कि उनके खिलाफ भेदभाव की यह नीति तुरन्त बन्द होनी चाहिए। किन्तु अधिकारियों का रुख अत्यन्त दृढ़ था। उनका कहना था कि महिलाओं को वहाँ ले जाकर वे किसी प्रकार का खतरा मोल लेना नहीं चाहते।

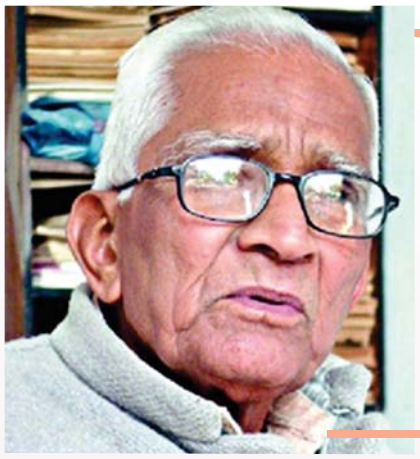

अमृतलाल वेगड़ की यह विज्ञान कथा एक उल्लेखनीय कथा है। आपने बहुत कम कहानियाँ लिखीं हैं। आप हिन्दी के विख्यात साहित्यकार और चित्रकार हैं। सौंदर्य नर्मदा, नर्मदा अमृतस्य, सौंदर्य की नदी नर्मदा आपके प्रसिद्ध यात्रा वृत्तांत हैं। 3 अक्टूबर 1928 को जबलपुर में जन्में अमृतलाल वेगड़ ने विश्व भारती यूनिवर्सिटी में शिक्षा पायी। 6 जुलाई 2018 को आपका निधन हुआ।

इधर बातें तो यहाँ तक चल पड़ी थी कि शीघ्र ही चन्द्रमा पर दवाई बनाने का कारखाना खोला जाएगा। वहाँ ऐसे इन्जेक्शन तैयार किए जाएंगे, जो कैंसर जैसे असाध्य रोगों को भी साध्य बना देंगे। कुछ दिनों से यह भी सुनाई पड़ रहा था कि जर्मनी के वैज्ञानिक राकेटों को चलाने वाले ईंधन की निर्माण-विधि में कुछ ऐसा सुधार करने में सफल हो गए हैं कि अब वह पहले से काफी सस्ता पड़ेगा। शीघ्र ही चन्द्रमा तक जाने-आने का किराया 90 लाख से घटकर 70 लाख तक हो जाएगा। बहुत से लोग उस दिन का इन्तजार कर रहे थे। कब किराया कम हो और कब वे भी चन्द्रमा का टिकट कटाएँ।

इस प्रकार सब ठीक था कि एक दिन लोगों ने हठात् रेडियो पर, और बाद में अखबारों में यह दुःसंवाद पढ़ा।

केप केनेडी, 5.8.1978 स्थानीय आकाश-यान-परिवहन-संस्थान के अधिकारियों ने आज दोपहर को घोषित किया है कि प्रातः 9:45 पर चन्द्रमा से वापस आने वाला यान अभी तक नहीं पहुँचा है। चन्द्रमा से वह ठीक समय पर चला था और वहाँ से संदेश भी बराबर आ रहे थे कि एकाएक रात के 10:20 बजे से संदेशों का आना बन्द हो गया। किसी दुर्घटना की आशंका की जा रही है। यान में विभिन्न देशों के 18 यात्री थे। खोजबीन जोरों से चल रही है।

इस समाचार ने सारे संसार में तहलका मचा दिया। चारों ओर इसी की चर्चा चल पड़ी। लोग अभी इस संवाद को ठीक से हजम भी न कर पाए थे कि इसी से मिलता-जुलता संवाद रेडियो पर पुनः घनघना उठा -

यह आकाशवाणी है। मास्को से प्राप्त ताजा समाचारों के अनुसार रूसी यान एफ 59, जिसे आज प्रातः 5:30 बजे चन्द्रमा पर पहुँचना था, अभी तक वहाँ नहीं पहुँचा है। मास्को का चन्द्रमा पर स्थित रूसी अड्डे से सम्पर्क भी टूट गया है। यान की तलाश जोरों से शुरू हो गई है। अधिकारियों को आशा है कि वे यान का पता लगाने में शीघ्र ही सफल हो जाएंगे। वैसे, इस घटना पर उन्हें हैरानी जरूर है, क्योंकि यह प्रथम अवसर है जब ऐसी दुर्घटना घटी हो। यान पर 15 यात्री सवार थे।

एक साथ ऐसी दो चिन्तनीय खबरें पाकर लोग दंग रह गए। तरह-तरह की अटकलबाजियाँ होने लगी। षडयंत्र तक की आशंका की जाने लगी। अमरीकी और रूसी दोनों परिवहन - संस्थाओं ने अपनी अगली उड़ानें रद्द कर दी। जब तक इन गुमशुदा यानों का पता नहीं चल जाता, अधिकारियों को चैन नहीं।

सबसे पहले ग्रीनविच स्थित वेधशाला ने यह घोषणा की कि पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच रात के 10:25 के करीब एक छोटा-सा पुच्छल तारा सरपट निकल गया। यह पुच्छल तारा था या और कुछ, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। वह इतना छोटा था कि बहुत कम वेधशालाओं की निगाह उस पर पड़ी होगी। किन्तु छोटा होते हुए भी उसमें इतनी ताकत तो जरूर थी कि वह दो-एक आकाशयानों को, पास आ जाने पर, अपने धरातल पर खींच ले। इस प्रकार हो न हो इन यानों का अपहरण इसी आकाशी लुटेरे ने किया है। स्विट्जरलैण्ड की ऊँची पहाड़ियों पर स्थित वेधशाला ने भी इस बात की पुष्टि की। उन यानों को हथियाकर वह आकाशी बटमार जाने कहाँ गायब हो गया है।

अमरीका और रूस ने इन यानों की खोज में आकाश-पाताल एक कर दिया। नाना प्रकार के यंत्रों से लैस कुछेक उपग्रह अन्तरिक्ष में छोड़े गए। किन्तु इन देशों के मिले-जुले प्रयासों का कोई परिणाम न निकला। दोनों यान एक साथ इस रहस्यमय ढंग से गायब हुए थे कि बेचारे वैज्ञानिक हैरान रह गए। कुछ वैज्ञानिकों ने तो उन यानों की वापसी की आशा ही छोड़ दी थी। यदि सचमुच किसी धूमकेतु या अन्य किसी आकाशीय पिण्ड ने इन्हें लौहचुम्बक की तरह खींच लिया है तब तो वे निश्चित रूप से उससे टकरा कर चूर-चूर हो गए हैं, या जलकर राख हो गए हैं। इस प्रकार उन यानों के साबुत रहने की व उन पर सवार यात्रियों के जीवित रहने

की आशा नहीं के बराबर रह गई थी। फिर भी खोज-कार्य में शिथिलता आने नहीं दी गई।

इन यानों के लापता होने के पाँचवें दिन एकाएक अमरीकी और रूसी परिवहन संस्थाओं ने यह संदेश साफ-साफ सुना –

हम दोनों यान के सभी यात्री सकुशल हैं। आप तनिक भी चिन्ता न करें। हम जल्द ही वापस आएंगे।

इस संवाद को पाकर अधिकारी मारे खुशी के उछल पड़े। सारे संसार में यह समाचार बिजली की तरह तेजी से फैल गया। खुशी का त्यौहार छा गया। जिन लोगों के सगे संबंधी उन यानों पर सवार थे, उनकी प्रसन्नता का तो कहना ही क्या। वैज्ञानिक जहाँ एक ओर बेहद खुश थे, वहीं दूसरी ओर अचरज भी कर रहे थे कि आखिर यह संवाद आया कहाँ से। उनकी अकल काम नहीं कर रही थी। समाचार पर शंका लाना व्यर्थ था, क्योंकि वह बहुत साफ सुनाई पड़ा था। इस कारण इतना तो तय हो गया कि इन यानों को भगा ले जाने वाला कोई पुच्छल तारा नहीं था। उस हालत में कोई भी यात्री जीवित न होता। तब इन यानों को कौन उड़ा ले गया?

रहस्य और भी गहरा होता गया। पर सिवा इन्तजार करने के कोई और चारा न था।

इसके सोलहवें दिन अमरीकी और रूसी रेडियो ने अपने कार्यक्रम एकाएक रोककर यह सूचना प्रसारित की कि दोनों यान वापस आ रहे हैं और कोई डेढ़ दिन में पृथ्वी पर आ जाएंगे। दोनों देशों के अंतरिक्ष-अड्डों के आसपास भारी भीड़ जमा हो गई। इतनी व्यग्रता से लोगों ने कभी किसी यान की प्रतीक्षा नहीं की थी। अखबारों के संवाददाता, फोटोग्राफर एवं टेलीविजन वालों की भीड़ का तो कहना ही क्या।

ठीक डेढ़ दिन बाद दोनों यान अपने-अपने देश के अन्तरिक्ष अड्डों पर सकुशल उतर गए। किसी भी यान को खरोच तक नहीं आई थी। बाहर खड़ी जनता ने तुमुल करतल ध्वनि से यात्रियों का स्वागत किया, हालांकि उसे तो इन यात्रियों की केवल एक झलक भर दिखाई दी-वह भी काँच की खिड़की के पीछे से। सभी यात्रियों को सीधे विश्राम कक्ष में ले जाया गया। जब वे पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गए, तब वहाँ के अधिकारियों ने चुने हुए प्रेस-संवाददाताओं के साथ उनसे जो वार्तालाप किया, उसमें बड़ी दिलचस्प बातें सामने आईं। दोनों यानों के यात्रियों की कहानी प्रायः एक-सी ही थी, अतः यहाँ एक भारतीय यात्री की कहानी दी जा रही है जो इस प्रकार है :

चन्द्रमा की यात्रा के बाद हमारा यान पृथ्वी को लौट रहा था। अधिकांश यात्रा तय हो चुकी थी। पृथ्वी कोई 10-12 घण्टे दूर रह गई थी। सब कुछ बिल्कुल ठीक चला हुआ था। इतने में हठात् एक विशाल अन्तरिक्ष-यान हमारे करीब से गुजर गया। यही नहीं, देखते-देखते हमारा यान उसके पीछे-पीछे घिसटने लगा। उसमें

हमारे यान उस यान के पीछे रेल के डिब्बों की तरह खिंचे चले जा रहे थे। या यूँ कह लीजिए कि हमारे यानों की हालत जाल में फँसी मछली जैसी थी। हम लोग निःसन्देह चण्ड वेग से आगे बढ़ रहे होंगे। इसके चौथे दिन वह यान हमारे यानों को साथ लेकर किसी ग्रह पर उतरा। हम लोगों को तुरन्त बाहर निकलने नहीं दिया गया। हम लोग अचरज कर रहे थे कि आखिर हमें कहाँ उतारा गया है। खिड़कियों में से झाँक कर देखा तो बाहर अजीब डील-डौल के सैकड़ों आदमी खड़े थे।

कोई ऐसी चुम्बकीय शक्ति थी कि हमारा यान उसके पीछे बरबस खिंचता चला गया। चालक बेचारे भौंचक रह गए। लाख कोशिश की। पृथ्वी से सम्पर्क स्थापित करने के भी बहुत प्रयत्न किए, पर हमारी संचार-व्यवस्था भी भंग हो चुकी थी। तब हम लोगों की समझ में आया कि हम पूरी तरह से आगे वाले यान की दया पर निर्भर हैं। यह बिल्कुल अनहोनी और अप्रत्याशित घटना थी। सभी मारे भय के काँप उठे।

हम लोग तरह-तरह की भय-मिश्रित कल्पनाएँ कर रहे थे। एक-एक पल काटना मुश्किल हो रहा था। मैं गीता के श्लोकों का पाठ करने लगा। अन्तरिक्ष में गीता-पाठ। सभी अपने-अपने धर्मों की प्रार्थना करने में जुट गए थे। इस प्रकार कुछ समय बीता। इतने में हम लोगों ने देखा कि हमारे साथ-साथ एक यान और घिसट रहा है। वह यान और कोई नहीं, रूसी यान एफ 59 ही था जो चन्द्रमा को जा रहा था और जो उसके काफी पास पहुँच चुका था।

एक से भले दो। उस यान को पाकर हमें बड़ी राहत मिली। भय मानो बँटकर आधा रह गया। कुछ साहस बढ़ा। जो होगा, देखा जाएगा। उस यान के यात्रियों के भाव भी ठीक इसी प्रकार के रहे। वे भी सोच रहे थे, तैरेंगे तो साथ, डूबेंगे तो साथ।

हमारे यान उस यान के पीछे रेल के डिब्बों की तरह खिंचे चले जा रहे थे। या यूँ कह लीजिए कि हमारे यानों की हालत जाल में फँसी मछली जैसी थी। हम लोग निःसन्देह प्रचण्ड वेग से आगे बढ़ रहे होंगे। इसके चौथे दिन वह यान हमारे यानों को साथ

खेती बड़े-बड़े काँच घरों में की जाती है। दोपहर को ये भी बाहर लाए जाते हैं। इन्हें कुछ अधिक देर तक बाहर रखा जाता है। कहीं-कहीं पहाड़ खोदकर उसके अन्दर फलों की खेती की जाती है। पशु वहाँ बहुत कम नज़र आए।

लेकर किसी ग्रह पर उतरा। हम लोगों को तुरन्त बाहर निकलने नहीं दिया गया। हम लोग अचरज कर रहे थे कि आखिर हमें कहाँ उतारा गया है। खिड़कियों में से झाँक कर देखा तो बाहर अजीब डील-डौल के सैकड़ों आदमी खड़े थे। हाँ, वे आदमी ही थे, हालांकि शक्ल-सूरत से हमसे काफी भिन्न थे। उनका कद काफी लम्बा था। आठ फुट से नीचे तो शायद ही कोई रहा हो। थोड़ी देर के बाद वहाँ अधिकारी हमें एक शानदार विश्राम कक्ष में ले गए। एक दीवार पर उस ग्रह की भाषा में बड़े-बड़े अक्षरों में कुछ लिखा गया था। बाद में हमें पता चला कि उसका मतलब होता है :

मंगल ग्रह आपका स्वागत करता है।

तो हम लोग अनायास मंगल-ग्रह पर आ पहुँचे थे और ये मंगल के निवासी थे। मंगल के बारे में तरह-तरह की कल्पनाएँ सुनते आए थे। शायद अभी पृथ्वी पर वैज्ञानिक यह बहस कर रहे होंगे कि मंगल पर मनुष्य है या नहीं। इधर हम मंगल-ग्रह के मनुष्यों के सामने साक्षात खड़े थे।

हमारे प्रति उनका व्यवहार अत्यन्त शिष्ट था। इस पर से हमने यह अनुमान लगाया कि हमारे प्रति उनकी दुर्भावना नहीं है, डरने की कोई बात नहीं। पहले तो हमें यह लगा कि वे हमें कुछ-कुछ उसी तरह पकड़ लाए हैं, जैसे हम किसी नए जानवर को पकड़कर अपने चिड़िया घर में रखते हैं और अपने बच्चों को दिखाते हैं। वे अपने देशवासियों को दिखाना चाहते थे कि देखो, पृथ्वी का आदमी कैसा होता है। पर उनके सौजन्यपूर्ण व्यवहार से हमें लगा कि ऐसी कोई बात नहीं। भाषा की दिक्कत तो चुटकियों में हल हो गई। आप सुनेंगे तो विश्वास नहीं करेंगे। उनका दुभाषिया हिन्दी जानता था। मुझे तो मानों समुद्र में टापू मिल गया। मैं उसके गले लग जाता, अगर वह आठ फुट ऊँचा न होता हालांकि उसकी हिन्दी टूटी-फूटी थी और उसके उच्चारण विचित्र थे, पर हम लोगों का काम मजे से चल गया। उसने मुझे और भी बड़े अचम्भे में यह कहकर डाल दिया कि वह हिन्दुस्तान भी हो आया है।

हिन्दुस्तान। पृथ्वी की कौन कहे, यह आदमी हिन्दुस्तान हो आया है। फिर सोचा कि उसकी बात सही ही होनी चाहिए, नहीं तो उसे हिन्दी कहाँ से आती। मेरी उलझन वह समझ गया। उसने पूछा कि क्या आज से 9-10 वर्ष पूर्व आपके अखबारों में आसाम में उड़न तश्तरियों के दिखने के समाचार छपे थे?

मुझे याद हो आया कि ऐसे समाचार भारत के प्रायः सभी अखबार में छपे थे और चर्चा का विषय बन गए थे। तब उसने कहा कि उस समय मैं ही वहाँ आया हुआ था। यही नहीं, वहाँ कुछ दिन रहा भी और रेडियो तथा टेपरिकार्डर की सहायता से हिन्दी भी वहीं सीखी। हमारे यहाँ दुभाषिए और हैं जो पृथ्वी के विभिन्न देशों में खासकर यूरोप के देशों में हो आए हैं और उन देशों की भाषा भी सीख आए हैं।

उसने बताया कि आप लोगों के बहुत पूर्व हमारा आपके चन्द्र पर आना-जाना शुरू हो गया था। जबसे आपका आवागमन भी शुरू हो गया, तो हमने वहाँ आना बन्द कर दिया। बाद में हमारे यहाँ के लोगों को जब आप लोगों से मिलने की प्रबल इच्छा हुई, तो हम आपको यहाँ ले आए। कृपया यह न समझें कि हम आपको प्रदर्शन की वस्तु बनाकर लाए हैं। आप हमारे शाही मेहमान हैं, उसी हैसियत से आपकी आवभगत की जाएगी। और बाद में आपको सकुशल पृथ्वी पर पहुँचा दिया जायेगा।

भला हम लोग इससे अधिक और क्या चाह सकते थे? कुछ समय तक हमें आवश्यक प्रशिक्षण दिया गया ताकि हम अपने आपको वहाँ के वातावरण के अनुकूल बना सकें। हमें आवश्यक यंत्रों एवं उपकरणों से लैस कर दिया गया ताकि हमें किसी प्रकार की तकलीफ न हो। जब हमने उनसे कहा कि हमारे देशवासी हमारे बारे में व्यग्र होंगे, तो वे हमें अपने संचार केन्द्र पर ले गए और कहा कि यहाँ से आप अपने देशवासियों को कुशलक्षेम के संवाद भेज सकते हैं किन्तु यह न बताएँ कि आप कहाँ से बोल रहे हैं। इससे आपके बारे में उनकी उत्सुकता बनी रहेगी।

तीसरे दिन से हमारा भ्रमण शुरू हो गया। हमें यह देखकर बड़ा ताज्जुब हुआ कि वहाँ की धरती पर मनुष्य के निवास करने का कोई चिह्न नहीं था। उनके सारे शहर धरती के अन्दर पाताल में थे। बात यह है कि वहाँ का वायुमण्डल इतना कष्टदायक है कि जमीन पर आदमी अधिक समय तक जिन्दा नहीं रह सकता। अतः

उनके सारे शहर-गाँव वहाँ होते ही नहीं- भूगर्भ में बने हुए हैं। एक-एक मकान 150-200 मंजिल तक नीचे चला जाता है। उनके बाजार, दफ्तर, शालाएँ, पार्क, स्विमिंग पूल आदि सभी वहीं पर स्थित हैं। दोपहर को जब सूरज की धूप अनुकूल रहती है, तब वे डेढ़-दो घण्टे के लिए बाहर आते हैं और खूब खेलते-कूदते और दौड़ते फिरते हैं। दो घण्टे होते-होते कड़ाके की सर्दी पड़नी शुरू हो जाती है और लिफ्ट के माध्यम से पलक झपकते वे अपनी पाताल नगरी में गायब हो जाते हैं। वहाँ आपको केवल दोपहर को, वहाँ के निवासी दिखाई देंगे। उसके बाद सारा ग्रह सुनसान और वीरान नज़र आएगा।

खेती बड़े-बड़े काँच घरों में की जाती है। दोपहर को ये भी बाहर लाए जाते हैं। इन्हें कुछ अधिक देर तक बाहर रखा जाता है। कहीं-कहीं पहाड़ खोदकर उसके अन्दर फलों की खेती की जाती है। पशु वहाँ बहुत कम नज़र आए।

हमें वहाँ पहली बार भान हुआ कि हमारी पृथ्वी कितनी सुखद, कितनी शीतल, कितनी आरामदेह है। हम कितने भाग्यवान हैं कि रहने के लिए हमें इतना सलोना ग्रह मिला है। यहाँ के निवासियों को तो डग डग पर यहाँ की जलवायु से जूझना पड़ता है। पृथ्वी की कद्र हमें मंगल में हुई।

परिस्थिति जितनी विकट होती है, उससे मुकाबला लेने की मनुष्य की इच्छा भी उतनी ही प्रबल होती है। विपरीत जलवायु के कारण मंगल-ग्रह कृषि-प्रधान हो नहीं सकता, अतः विज्ञान और तकनीकी में इतनी प्रगति की कि हम उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। उनकी तुलना में हम प्रस्तर-युग या अधिक से अधिक लौह-युग में हैं।

इतना सब होते हुए भी हमें वहाँ एक भी कारखाना दिखाई नहीं दिया। पूछने पर बताया गया कि उनके सारे कल-कारखाने उनके ग्रह के बाहर छोटे-छोटे उपग्रहों में स्थित हैं। ऐसे हजारों उपग्रह आकाश में चक्कर काट रहे हैं जो दरअसल उनके कारखाने ही हैं। इससे वहाँ की जलवायु-जो उनके लिए अत्यन्त मूल्यवान है- दूषित नहीं हो पाती। कारखानों से निकलने वाला विषैला धुँआ, गन्दा पानी तथा घनघोर शोर जन-स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक होता है। अतः इन कारखानों का मंगल-ग्रह में प्रवेश निषिद्ध है।

वहाँ हमें बार-बार लगता कि हम कहीं किसी मायालोक में तो नहीं आ गए। एक बार वे हमें अपनी विशालतम वेधशाला दिखाने ले गए। आप विश्वास नहीं करेंगे लेकिन उनके शक्तिशाली दूरवीक्षण-यंत्र से वहाँ से हमने ताजमहल देखा। अन्तरिक्ष विद्या में वे बेहद आगे बढ़े हुए हैं। रेलगाड़ियाँ, बसें या मोटरें तो वहाँ होती ही नहीं। इसकी जगह उड़न-तश्तरियों का प्रचार है।

उन्होंने यह बताकर हमें और भी ताज्जुब में डाल दिया कि

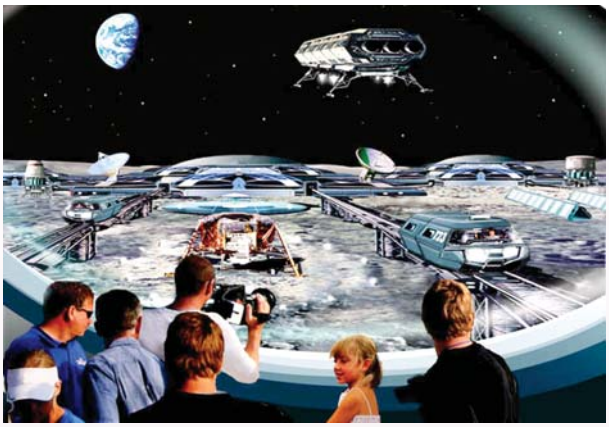

इतना सब होते हुए भी हमें वहाँ एक भी कारखाना दिखाई नहीं दिया। पूछने पर बताया गया कि उनके सारे कल-कारखाने उनके ग्रह के बाहर छोटे-छोटे उपग्रहों में स्थित हैं। ऐसे हजारों उपग्रह आकाश में चक्कर काट रहे हैं जो दरअसल उनके कारखाने ही हैं। इससे वहाँ की जलवायु-जो उनके लिए अत्यन्त मूल्यवान है- दूषित नहीं हो पाती। कारखानों से निकलने वाला विषैला धुँआ, गन्दा पानी तथा घनघोर शोर जन-स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक होता है। अतः इन कारखानों का मंगल-ग्रह में प्रवेश निषिद्ध है।

उनका शुक्र-ग्रह में काफी आना-जाना है। दोनों ग्रह निवासी एक-दूसरे के यहाँ बराबर आते-जाते रहते हैं। उस समय भी शुक्र के कुछ निवासी वहाँ आए हुए थे किन्तु किन्हीं अज्ञात कारणों से हमें उनसे मिलाया नहीं गया। कितने मजे में कटे वे दिन। विज्ञान के कैसे-कैसे आविष्कार-चमत्कार हमने वहाँ देखे, वहाँ के निवासियों ने हमारे स्वागत में किस तरह पलक-पावड़े बिछा दिए और मंगल-ग्रह की धरती पर पाँव रखने में हमें कैसा रोमांच हो आया, यह एक लम्बी कहानी है। वह कहने बैठूँ तो अन्त ही न हो। अतः मैं अन्तिम दिन की बात बताऊँगा जो जितनी रोचक है उतनी ही महत्त्वपूर्ण है।

आखिरी दिन हमें वहाँ के संसद-भवन में ले जाया गया। वहाँ के प्रधानमंत्री ने हमारे सम्मान में एक वक्तव्य दिया और हमारी पृथ्वी के प्रति अपने मंगल-ग्रह की अनेक उत्तम मंगल-कामनाएँ व्यक्त कीं। यह देखकर मुझे रोमांच हो आया कि उनके संसद-भवन में उनके प्रमुख नेताओं के चित्रों के साथ-साथ महात्मा गांधी का भी भव्य चित्र लगा हुआ है। मुझे शायद पहली बार भारतीय होने पर गर्व हुआ। अपनी शुभकामनाएँ जताने के बाद प्रधानमंत्री ने अपना भाषण शुरू किया :

''पृथ्वी के निवासियो! अन्त में एक गम्भीर बात मैं आपसे कहना चाहता हूँ। पिछले कुछ वर्षों में आपने दो विश्वयुद्ध लड़े। इससे भी आपको सन्तोष नहीं हुआ और अणु-बम,

हाइड्रोजन-बम, कोबाल्ट-बम और मेगा-बम जैसे खतरनाक शस्त्रों का निर्माण करने में आप अपनी बुद्धि और धन का व्यय कर रहे हैं। मुझे कहने दीजिए कि आप आत्महत्या के मार्ग पर बढ़ रहे हैं। आपने देखा ही होगा कि हम यहाँ कैसी प्रतिकूल परिस्थितियों में जी रहे हैं, जबकि आपको निवास करने के लिए सौर-मण्डल का श्रेष्ठतम ग्रह मिला हुआ है। लेकिन आप हैं उसको चौपट करने पर तुले हुए हैं। एक मित्र के नाते हमारी आपको सलाह है कि आप यह खिलवाड़ बन्द कर दें। पृथ्वी रहने के लिए है, आग लगाने के लिए नहीं। आपकी नादानी से वह किसी भी दिन धू-धू करके जल उठेगी और देखते-देखते राख की ढेरी बनकर रह जाएगी। उसमें न मनुष्य रह जाएगा, न पशु-पक्षी, न पेड़ी-पौधे। जीवन नाम की कोई चीज नहीं रहेगी। क्या आप अपनी पृथ्वी को सौर-मण्डल का भूत-बंगला बनाना चाहते हैं?''

सहमे-सकुचे हम उनकी बात सुन रहे थे। महात्मा गांधी के चित्र की ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा - ''अभी हाल में ही आपके यहाँ एक महामानव हुआ था, जिसने सत्य और प्रेम की, अहिंसा और भाईचारे की बात कही थी। लेकिन आपने उस देवता को सुना नहीं। किन्तु, अब अधिक दिनों तक हम आपकी इस विनाश लीला के मूक दर्शक बनकर बैठे नहीं रह सकते। पैतृक-सम्पत्ति को अगर एक भाई फूँकने पर आमादा हो जाए, तो क्या दूसरा भाई इसे चुपचाप देखता रहेगा? या तो आप शांति से रहें, या हमारे लिए पृथ्वी खाली कर दें।''

हम सकते में आ गए। बड़ा भय लगा। किन्तु वे जरा उत्तेजित नहीं थे। शांति से बोल रहे थे, ''मेरी बातें कठोर हैं, किन्तु सत्य है। आपके हित में हैं। क्यों आप अपना अथाह धन इन घातक शस्त्रों पर बरबाद कर रहे हैं?इसी धन का यदि आप सदुपयोग करें, तो आपकी पृथ्वी स्वर्ग बन सकती है। सुनिए, हम आपको पाँच साल की मुहलत देते हैं। इन पाँच सालों में यदि आपने अमन-चैन और भाईचारे से रहना नहीं सीखा, और अपने आणविक विस्फोट से पृथ्वी के वायु मण्डल को विषाक्त करते चले गए, तो याद रखिए, आप पृथ्वी पर रहने के अधिकारी नहीं रह जाएंगे। आपसे पृथ्वी खाली करवा ली जाएगी।''

अब हमारी समझ में आया कि हमें यहाँ क्यों लाया गया था। वैसे, सच कहूँगा, मन ही मन में बड़ा खुश हुआ। हमारे उन्नत कहलाने वाले राष्ट्रों की आणविक अस्त्रों के पीछे की अंधी दौड़ को रोकने के लिए ऐसे ही किसी चमत्कार की जरूरत थी। लेकिन इसके आगे उन्होंने जो कहा, उससे मेरे होश भी ठिकाने लग गए।

उन्होंने कहा - ''लेकिन मुझे विश्वास है कि ऐसी स्थिति नहीं आएगी। आप विश्वशांति का, बल्कि ग्रह शांति का, मार्ग अपनाएँगे और लाखों बरस तक पृथ्वी पर निवास करते चले जाएंगे। हाँ, एक बात आपके पिछड़े देशों से भी कहनी है। वह यह है कि वे अपनी आबादी बेतहाशा बढ़ाते चले जा रहे हैं। पृथ्वी पर यह अनावश्यक बोझ है। जानते हैं, हमारी कुल आबादी तीन करोड़, जबकि आप अरबों और खरबों के नीचे बात ही नहीं करते। पृथ्वी घर है, घूरा नहीं। तो आपको दो काम करने हैं- उन्नत देशों को अणु-विस्फोटों को बन्द करना है और पिछड़े देशों की जनसंख्या के विस्फोट को बन्द करना है। इन दो विस्फोटों को बन्द करने पर ही आपकी पृथ्वी निवास योग्य बनी रहेगी।

आप सोच सकते हैं कि यह आपका आन्तरिक मामला है और इसमें दखलंदाजी करने का हमें कोई हक नहीं। लेकिन बात ऐसी नहीं है। आपके यहाँ जनसंख्या का विस्फोट होगा, तो आप स्वाभाविक ही पृथ्वी के बाहर अन्य ग्रहों पर नज़र दौड़ाएंगे। वहाँ अपने निवासियों को बसाने की सोचेंगे। इन ग्रहों को अपना उपनिवेश बनाने की कोशिश भी कर सकते हैं। यदि आप अपने घातक अस्त्रों में हमारे ऊपर आक्रमण कर दें, तो बचाव के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं। आपके समान संहारक अस्त्र हमने न तो कभी बनाए, न कभी बनाएँगे। लेकिन वह अप्रिय स्थिति हम आने ही नहीं देंगे। हमारी शक्ति का थोड़ा-बहुत अन्दाज तो आपको लग ही गया होगा।'' हम साँस रोके उनकी बात सुन रहे थे। अन्त में उन्होंने कहा- ''मैं पुनः आप लोगों के प्रति अपनी अनेक सद्भावनाएँ व्यक्त करता हूँ और आशा व्यक्त करता हूँ कि शीघ्र ही पृथ्वी पर एक ऐसा स्वर्ण-युग शुरू होगा, जिसकी मिसाल सारे ब्रह्माण्ड में ढूँढे नहीं मिलेगी।''

''वहाँ से जब हम बाहर निकले, तो हममें से प्रत्येक यात्री गम्भीर हो उठा था। वहाँ से हमें सीधे उसी अन्तरिक्ष अड्डे पर ले जाया गया। हमारे वे दोनों यान वहाँ खड़े थे। वह बड़ा यान नहीं था। हमारे ही यानों में आवश्यक परिवर्तन कर दिए गए थे ताकि बिना किसी दूसरे यान की सहायता के, अपने आप पृथ्वी तक पहुँच सके। हमारे यानों को ढेर सारी हल्की-फुल्की किन्तु बहुमूल्य वैज्ञानिक भेंट-सौगात से लाद दिया गया था। और चार दिन की यात्रा के बाद कल हम यहाँ आ भी गए।''

यह है उस भारतीय मंगल यात्री की कहानी। दोनों यानों के यात्रियों का यात्रा-वृत्तान्त प्रायः एक-सा था। वे वहाँ से एक गम्भीर चेतावनी लेकर आए थे। उस पर शीघ्र विचार करना अत्यन्त आवश्यक था। इसलिए दुनिया के सभी प्रमुख देशों के अनुरोध पर 2 अक्टूबर, 1978 को पेरिस में संयुक्त राष्ट्र की एक आपातकालीन बैठक बुलाई गई है। देखें, उसमें क्या होता है।

❑❑❑

अतीत में एक दिन

देवेन्द्र मेवाड़ी

ट्रेन छूटने का समय हो चुका था। स्टेशन पर ट्रेन छूटने की गहमा-गहमी थी। प्लेटफार्म पर लोग भीड़ में एक-दूसरे को धकियाते हुए इधर-उधर आ-जा रहे थे। चारों ओर शोर था- चाये...चाये गरम...कुली!...खिलौने वाला...चना मसाले वाला !...चाये गरम !

प्रोफेसर पांडे दरवाजे का सहारा लेकर प्लेटफार्म पर झांक रहे थे कि कहीं कोई छात्र छूट न जाए। छात्रों का आरक्षण शयनयान में था।

तभी हड़हड़ाकर किसी ने उनसे पूछा।

'कौन-सा कोच है ये? एस फाइव?'

'जी हां। एस फाइव ही है।' प्रोफेसर पांडे ने कहा।

'प्लीज हेल्प मी...गाड़ी छूटने वाली है। मेरा सूटकेस पकड़ेंगे जरा...'

प्रोफेसर पांडे ने उस व्यक्ति का सूटकेस भीतर खींच लिया। तभी गाड़ी ने सीटी दे दी और खट-खट-खटाक...खट-खट-खटाक करती हुई पटरियों पर सरकने लगी।

उस व्यक्ति ने राहत की सांस ली। फिर पूछा- 'आपकी बर्थ?' प्रोफेसर पांडे बोले- 'सी थ्री'।

'चलिए अच्छा है। सी टू मेरी है। अच्छी कंपनी रहेगा सफर में। पूरी रात का सफर है।' उस व्यक्ति ने कहा और फिर लंबी सांस

देवेन्द्र मेवाड़ी (जन्म 1944) वरिष्ठ विज्ञान साहित्यकार हैं। ये साहित्य की कलम से विज्ञान लिखते हैं। इन्होंने वनस्पति विज्ञान में एम.एससी., हिंदी साहित्य में एम. ए. और पत्रकारिता में पी.जी. डिप्लोमा किया है। श्री मेवाड़ी ने प्रिंट मीडिया के साथ-साथ रेडियो, टेलीविजन तथा फिल्म आदि माध्यमों के लिए भी विज्ञान लिखा है। रेडियो विज्ञान नाटक लिखे हैं। इनकी तीस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें मेरी प्रिय विज्ञान कथाएं, विज्ञाननामा, मेरी विज्ञान डायरी, नाटक- नाटक में विज्ञान, विज्ञान बारहमासा, विज्ञान की दुनिया, विज्ञान और हम आदि शामिल हैं। 'मेरी यादों का पहाड़', कथा कहो यायावर, स्मृति वन में भटकते हुए इनके स्मृति आख्यान है। ये विभिन्न प्रदेशों के दूर-दराज इलाकों में जाकर लगभग एक लाख बच्चों तथा बड़ों को विज्ञान की कहानियाँ सुना चुके हैं। इन्हें अनेक राष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित किया जा चुका है।

छोड़कर बोला- 'बड़ा मुश्किल है ट्रेन पकड़ना भी। और, खास तौर पर ऐसी ट्रेन जो सही समय पर चल पड़े।'

प्रोफेसर पांडे हंस पड़े। बोले- 'आप ठीक ट्रेन छूटते समय पहुंचे इसलिए, अन्यथा यह ऐसा कोई मुश्किल का काम नहीं है। आप अब भी हांफ रहे हैं - लगता है आपको काफी भागना पड़ा।'

'हां, कोच ढूंढ़ना कोई आसान काम है क्या? वो तो आप मिल गए...आप?'

'मैं? मैं नवीन पांडे। प्रोफेसर ऑफ हिस्ट्री। इतिहास पढ़ाता हूं।'

'इतिहास पढ़ाते हैं और नाम नवीन?' वह व्यक्ति ठठाकर हंस पड़ा 'मतलब यह है कि नवीन और प्राचीन को जोड़ रहे हैं.. .तो कहां तक जा रहे हैं प्रोफेसर?'

'आगरा। वहां से दिल्ली। शैक्षिक टूर पर अपने छात्रों को ले जा रहा हूं। वे मेरे सहयोगी के साथ दूसरे कोच में हैं ।'

'अच्छा-अच्छा... शैक्षिक टूर है। इतिहास के खंडहर दिखाएंगे।'

'इतिहास के नहीं ऐतिहासिक किलों के खंडहर जिनमें इतिहास सोया हुआ है। मैं भारत के मध्यकाल के बारे में पढ़ाता हूं। विशेष रूप से मुगल साम्राज्य। ...बाबर, अकबर, जहांगीर, शाहजहां वगैरह।'...

'बहुत खूब। तो, उस समय की जो बची-खुची चीजें हैं, अवशेष हैं- उन्हें दिखाएंगे?'

प्रोफेसर पांडे ने कहा- 'हां आप ठीक कह रहे हैं।'

वह बोला, 'पांडे जी कितनी रोमांचक, कितनी अजीब लगती हैं उन दिनों की बातें...सच पूछिए तो आदमी की फितरत है कि अतीत से उसको बड़ा मोह होता है...जनाब तब ये था, वो था। मगर, सब सुनी-सुनाई। इतिहासकारों ने लिखा और हम रटते चले गए। आज और आने वाले कल के बारे में बहुत कम लोग सोचते हैं...क्यों ठीक कह रहा हूं मैं?'

'ऐसा है...'

'अरे, लीजिए, मैंने अब तक अपना परिचय ही नहीं दिया आपको। मैं... मैं गजानन। डॉ. गजानन।'

डॉ. गजानन ने प्रोफेसर पांडे के इतिहासकार को छेड़ दिया था। इसलिए उन्होंने कहा, 'डॉ. गजानन हमारा 'आज' और बल्कि मैं तो कहूंगा 'आने वाला कल' भी हमारे बीते हुए 'कल' या अतीत से तय होता है।' डॉ. गजानन भी चूकने वाले व्यक्ति नहीं थे। बोले- 'आपका मतलब है हमारा वर्तमान इतिहास की देन है? वाह! पांडे जी। इसे कहते हैं विषय के लिए समर्पित व्यक्ति। तो आप वहां मुगल सम्राटों के योगदान का पता लगाने जा रहे हैं?'

'जी हां, मेरे छात्र उस काल पर रिसर्च कर रहे हैं?'

'क्या रिसर्च कर रहे हैं? कि उनकी शासन प्रणाली मजबूत थी। उनके समय में वास्तुकला, साहित्य और ललित कलाओं का खूब विकास हुआ?'

'हां! यही नहीं, अकबर चाहता था भारत एक मजबूत राष्ट्र बने। जहांगीरी न्याय तो आज भी याद किया जाता है।'

'किया जाता है, लेकिन जानते हैं इन सब बातों में कितना सच है? सुनी-सुनाई बातें ही तो हैं ।'

'सुनी-सुनाई क्यों? तमाम प्रमाण हैं इन बातों के। डॉ. गजानन उस काल के अवशेषों के अलावा लिखित रेकार्ड भी हैं - बाबरनामा, आइने अकबरी, तुजुके जहांगीरी...'

'ठीक है। लेकिन सच क्या था तो उस समय के लोग ही जानते होंगे। अब जहांगीर की न्याय की जंजीर को ही ले लीजिए।

कितने फरियादी आते होंगे न्याय के लिए?'

'डॉ. गजानन, व्यवस्था तो थी ना न्याय के लिए? फरियादी भी आते होंगे। कितने आते होंगे यह भला कौन बता सकता है?'

'बता सकता है, लेकिन विश्वास कौन करेगा?' डॉ. गजानन ने कहा।

प्रो. पांडे ने चौंक कर पूछा- 'बता सकता है? आप...आप क्या कह रहे हैं डॉ. गजानन, कौन बता सकता है?'

शांत भाव से डॉ. गजानन ने कहा, 'समय बता सकता है पांडे जी।'

'हें? समय? आप मजाक तो नहीं कर रहे हैं?'

'नहीं , यह मजाक नहीं है। मैं आपकी बात का पूरी गंभीरता से उत्तर दे रहा हूं।'

फिर उदास होकर बोले- 'मुश्किल तो यही है। मेरी बात को लोग गंभीरता से नहीं लेते। इसीलिए मैं हर किसी को कुछ बताना नहीं चाहता।'

'सॉरी, डॉ. गजानन। मेरा मतलब यह नहीं था। मैं तो बस यही कहना चाहता था कि भला समय कैसे...मेरा मतलब है ऐसा कैसे हो सकता है?' प्रोफेसर पांडे ने कहा।

'हो सकता है। यह ट्रेन आगरा के लिए शाम को कितने बजे छूटी थी?' डॉ. गजानन जैसे अपनी बात साबित करने पर तुल गए।

'पांच बज कर पैंतालिस मिनट पर।'

'अब अगर हम समय के साथ चलने के बजाय समय में पीछे की ओर चलें तो फिर वापस पांच बजकर पैंतालिस मिनट पर पहुंच सकते हैं। ट्रेन चलने को तैयार होगी। मैं तेजी से आऊंगा। आप दरवाजे पर खड़े होंगे...और फिर हम ट्रेन में चल पड़ेंगे क्यों?'

प्रोफेसर पांडे उलझन में पड़ गए- 'हां...हां...लेकिन डॉ. गजानन...अच्छा, अब हमें सोना चाहिए...सुबह फिर बात करेंगे।'

'प्रोफेसर पांडे मैं जानता हूं आप मेरी बात को बकवास समझ रहे हैं । सोच रहे हैं भला कहीं ऐसा भी हो सकता है? मेरी बात पर विश्वास कीजिए। हम समय में पीछे जा सकते हैं । इतिहास को देख सकते हैं। आपको अतीत की घटनाएं दिखाई जा सकती हैं ।'

न चाहते हुए भी प्रोफेसर पांडे को उत्तर देना पड़ा। उन्होंने पूछा- 'कौन दिखा सकता है यह सब?'

'मैं...मैं दिखाऊंगा। शर्त यह है कि आप मेरी बात पर विश्वास करें और मेरे साथ मेरी प्रयोगशाला में चलें। हां, एक

बात और। मैं हर किसी को यह ऑफर नहीं देता।'

'लेकिन, मेरे छात्र?'

'वे आपके सहयोगी के साथ कल कुछ ऐतिहासिक जगहें देख सकते हैं। आप मेरे साथ इतिहास यात्रा पर होंगे। शाम को उन लोगों के पास पहुंच जाएंगे।'

प्रोफेसर पांडे सोच में पड़ गए...क्या करूं? लगते तो विद्वान आदमी हैं। लेकिन बात असंभव लगती है। कहीं मानसिक रोगी तो नहीं हैं? क्या पता इसीलिए आगरा जा रहे हों।...'

'क्या सोचने लगे प्रोफेसर पांडे। सबकी तरह यही कि कहीं मेरा दिमाग तो नहीं फिर गया? मगर ऐसा नहीं है। मैं अपनी प्रयोगशाला में वर्षों से वैज्ञानिक खोजें कर रहा हूं। अपने बलबूते पर। ऐसी खोजें जो आज असंभव लगती हैं। आज तो 'टाइम ट्रैवल' मेरा मतलब है 'कालयात्रा' भी असंभव लगती है ना? मैं कई साल से इस पर खोज कर रहा हूं। मैंने 'कालयंत्र' बना लिया है। इस 'कालयंत्र' यानी 'टाइम मशीन' में एक हजार साल पीछे, अतीत में जा सकते हैं।.. मैं इससे और भी पीछे, और भविष्य में आगे जाने के बारे में खोज कर रहा हूं। हो सकता है-कल यह भी संभव हो जाए।' डॉ. गजानन बोले।

फिर कुछ रुककर, प्रो. पांडे के चेहरे पर नजरें गड़ाकर कहा- 'तो क्या सोचा आपने? चलेंगे मेरे साथ अतीत के सफर पर?'

'हां, जरूर चलूंगा डॉ. गजानन। मैंने निश्चय कर लिया है।' प्रो. पांडे ने कहा और 'शुभ रात्रि' कह कर, मुंह ढक सो गए।

सुबह आगरा स्टेशन पर उतरने के बाद प्रो. नवीन पांडे ने अपने सहयोगी और छात्रों को आवश्यक हिदायतें दीं। स्वयं शाम को मिलने का आश्वासन देकर डॉ. गजानन के साथ चले

डॉ. गजानन बेचैन हो उठे। उन्होंने कालयंत्र के समय को बाहर के समय के साथ मिलाया और पारदर्शी द्वार सरका कर चिल्लाए- `बंका! वापस आओ। उतना ही पूछो जितना कहा है।' फिर प्रोफेसर पांडे से बोले- `हम सैकड़ों वर्ष पीछे मुगल काल में घूम रहे हैं। कहीं गलती नहीं होनी चाहिए।'

गए।

डॉ. गजानन का घर शहर की भीड़-भाड़ से दूर थोड़ा सुनसान इलाके में था। घर पहुंच कर 'कॉलबेल' का बटन दबाया। थोड़ी देर रुके। फिर ऊंची आवाज में चिल्लाए- 'बंका! दरवाजा खोलो।'

दरवाजा खुला। बंका सामने था। उससे बोले- 'प्रणाम करो। प्रोफेसर पांडे हैं ये।'

फिर प्रो. पांडे से कहा- 'ये बंका है। मेरा सेवक। है तो बांके बिहारी मगर मैं बंका कहता हूं इसे। छोटा नाम ठीक लगता है न?'

तब तक बंका दोनों के सूटकेस लेकर भीतर चला गया।

थोड़ी देर बाद डॉ. गजानन प्रो. पांडे को अपनी प्रयोगशाला में ले गए। उन्हें अपने अनुसंधान के बारे में बताया। प्रयोगशाला में अनेक प्रकार के उपकरण थे। एक कोने में पारदर्शी चौंबरनुमा चीज की ओर संकेत करके बोले- ये देखो प्रोफेसर, ये है मेरा 'कालयंत्र'।

पास जाकर प्रोफेसर पांडे ने देखा वह कांच के चौंबर की तरह का यंत्र था। भीतर मीटर और सुइयां चमक रही थीं। रंगीन रोशनी के छोटे-छोटे बल्ब जल और बुझ रहे थे। वे कुतूहल से उस यंत्र को देख रहे थे कि डॉ. गजानन ने कहाः 'इतिहास के किस काल की सैर करना चाहेंगे पांडे जी? वही, मुगलों की सल्तनत या कुछ और?'

'नहीं डॉ. गजानन, जब इतिहास में झांकना ही है तो फिर मुगल साम्राज्य को ही देखा जाए।'

डॉ. गजानन हंसे- साम्राज्य नहीं पांडे जी, साम्राज्य का एक दिन। बताइए कौन-से बादशाह के शासकाल में चलना है?'

प्रोफेसर पांडे ने क्षण भर सोचा। फिर बोले- 'तो चलिए, जहांगीर के महल में चलते हैं। सत्रहवीं शताब्दी...सन् १६१५ के आसपास...'

बात बंका के कान में पड़ गई। चलने की बात सुनते ही गिड़गिड़ाकर डॉ. गजानन से बोला- 'अब कहां चल रहे हैं साहेब? हमहु चलना चाहित हैं ।'

डॉ. गजानन ने हंसकर कहा- 'बंका, तुम वहां चलकर क्या करोगे? हम बादशाह जहांगीर के दरबार में जा रहे हैं।'

बंका ने कहा- 'तब तो हमारा जरूर ले चलिब साहेब! हम कौनो राजा का दरबार नहीं देखे हैं अब तक।...ले चलिब हुजूर। हम अकेले बहूत ऊब जाइत हैं घर में ।'

'अच्छा...अच्छा। तो चलो तुम्हें भी साथ ले चलते हैं ।' डॉ. गजानन ने कहा और अपने कालयंत्र का द्वार खोलकर उन्होंने प्रोफेसर पांडे और बंका को भीतर आने का संकेत किया।

डॉ. गजानन ने यंत्र के बटन दबाकर समय सेट किया। फिर प्रोफेसर पांडे की ओर देखकर पूछा- 'तो चलें?'

प्रोफेसर पांडे के हामी भरते ही डॉ. गजानन ने कहा- 'शुभ यात्रा! बॉन वॉयेज!' और कालयंत्र अचानक हरकत में आ गया। प्रोफेसर पांडे को लगा जैसे पूरा कालयंत्र तेज गति से घूम रहा हो। फिर कालयंत्र की पारदर्शी दीवारें जैसे अदृश्य हो गईं। सब कुछ धुंधला पड़ गया।

रफ्तार रुकने के अहसास के साथ ही कालयंत्र की पारदर्शी दीवारें दिखाई देने लगीं और उनके पार चलते-फिरते लोग भी दिखाई देने लगे।

बंका ने चौंककर पूछा- 'अरे! कहां आ गए साहेब? ये कौन जगह है? वू देखो साहेब, कमर पर छोटी-सी धोती लपेटे, पगड़ी बांधे लोग घूम रहे हैं!'

प्रोफेसर पांडे बोले- 'किसी से पूछना चाहिए।'

'पूछने के लिए कालयंत्र से बाहर निकलना होगा। इसके भीतर हमें कोई नहीं देख सकता क्योंकि मैंने समय में क्षणभर का अंतर रखा है। कालयंत्र के भीतर और इसके बाहर के समय में चंद सेकेंड्रों का अंतर है।...बंका, तुम सावधानी से बाहर निकल कर पूछो। ध्यान रहे, कोई गड़बड़ी न हो। कोई चीज छेड़ना नहीं. ..हम बीते हुए समय में हैं।' डा. गजानन ने आगाह करते हुए बंका को कालयंत्र से बाहर भेजा।

बंका बोला- 'नाहीं साहेब, हम कुछ नाहीं छेड़ेंगे। अबहि पूछ के आते हैं।'

बाहर निकलकर बंका ने सामने जाते हुए आदमी की

तभी उनकी नजर फरियादी पर पड़ी। वह कोई औरत थी। साथ में छह-सात साल का बच्चा था। सिपाही उन्हें साथ ला रहे थे। झरोखे के पास दरबार लग रहा था! प्रोफेसर पांडे डॉ. गजानन के कान में फुसफुसाए- `दरबार में काजी, मुफ्ती और दूसरे मुसाहब मौजूद रहते थे...'

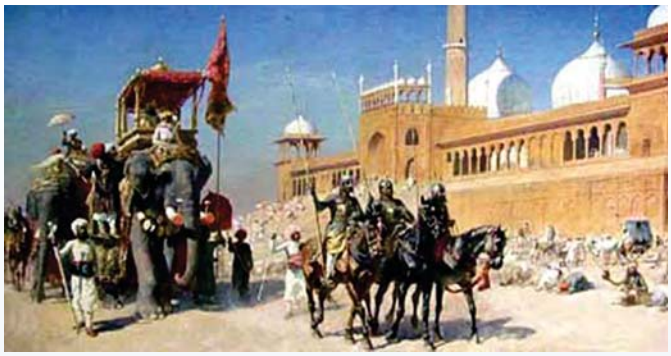

ओर हाथ हिलाकर पूछा- 'सुनो भैया, ये कौज जगह रही?'

आदमी ठिठककर बोला- 'क्या परदेशी हो?'

'हां परदेशी हैं । हम बंका हैं भैया। आगरा से आ रहे हैं!'

उस आदमी ने कनखियों से इधर-उधर देखा और बोला- 'चुप...चुप। धीरे बोलिए हुजूर, कोई सुन लेगा। ये अकबराबाद है। बादशाह सलामत के अब्बा हुजूर ने रखा है ये नाम। कहां जाना है आपको?'

'वो जहांगीर साहेब से मिलना है।' बंका अकड़कर बोला।

'जहांगीर साहेब? कौन जहांगीर साहेब?'

'बादशाह जहांगीर और कौन।' बंका बोला।

आदमी सकपका गया। बोला- 'हें? तो महल में जाइए हुजूर। वो उधर है बादशाह सलामत का किला...'

डॉ. गजानन बेचैन हो उठे। उन्होंने कालयंत्र के समय को बाहर के समय के साथ मिलाया और पारदर्शी द्वार सरका कर चिल्लाए- 'बंका! वापस आओ। उतना ही पूछो जितना कहा है।' फिर प्रोफेसर पांडे से बोले- 'हम सैकड़ों वर्ष पीछे मुगलकाल में घूम रहे हैं। कहीं गलती नहीं होनी चाहिए।'

बंका के आने पर उससे पूछा- 'क्या कहा उस आदमी ने?'

'कहता है अकबराबाद है। किला उधर है।'

'ठीक कहता है। बादशाह अकबर ने इसका नाम अकबराबाद रख दिया था। लेकिन, लोग दबी जुबान से इसे आगरा ही कहते रहे। क्यों ठीक कह रहा हूं प्रोफेसर?' डा. गजानन ने पूछा।

प्रोफेसर पांडे ने कहा- 'बिल्कुल ठीक कह रहे हैं । चलो शुक्र है हम आगरा में ही हैं । तो अब चलिए किले में चलते हैं... जहांगीर के महल में ।'

डा. गजानन ने कालयंत्र का रुख किले की तरफ मोड़ दिया और कुछ ही क्षणों में वे किले के भीतर पहुंच गए।

बंका की आंखें फटी रह गईं। आश्चर्य से चारों ओर देखकर कहने लगा- 'अरे...अरे। ये हम क्या देख रहे हैं साहेब?'

'चुप बंका। जो दिखाई दे रहा है उसे चुपचाप देखो।' डा. गजानन ने उसे झिड़का और फिर प्रोफेसर पांडे से बोले- 'हां तो पांडे जी...लीजिए यह रहा आपका इतिहास। देखिए...'

प्रोफेसर पांडे चकित और अभिभूत होकर जैसे अपने आप से बोल रहे थे- 'वाह! कितनी शानो-शौकत! कितना वैभव! कितना सुंदर, कितना भव्य है सब कुछ!'

तभी कहीं घंटियां टुनटुनाईं। कई घंटियां एक साथ। प्रोफेसर पांडे चौंक उठे। डॉ. गजानन का हाथ हिलाकर बोले- 'ये...ये...घंटियां...लगता है ये जहांगीर की न्याय की जंजीर की घंटियां बज रही हैं। किसी फरियादी ने शायद न्याय मांगने के लिए अपनी अर्जी न्याय की जंजीर के दूसरे सिरे पर टांग दी है। इसका मतलब है जहांगीर के न्याय की जंजीर थी...'

'आप फिर इतिहास की किताब पढ़ने लगे प्रोफेसर! अरे भई 'थी' नहीं 'है'! आप बादशाह जहांगीर के महल में हैं। वह देखिए न्याय की जंजीर किले में उस दीवार पर बंधी है।...और यह नौबत? नौबत क्यों बज रही है...सुनो...' डॉ. गजानन ने कहा और काल लगाकर सुनने लगे।

किसी फरियादी को झरोखा दरबार में पेश करने की मुनादी की जा रही थी।

प्रोफेसर पांडे ने डॉ. गजानन को बताया- 'बादशाह जहांगीर झरोखा दरबार में लोगों की गुहार सुनता था और अपना फैसला सुनाकर न्याय करता था।'

तभी उनकी नजर फरियादी पर पड़ी। वह कोई औरत थी। साथ में छह-सात साल का बच्चा था। सिपाही उन्हें साथ ला रहे थे। झरोखे के पास दरबार लग रहा था! प्रोफेसर पांडे डॉ. गजानन के कान में फुसफुसाए- 'दरबार में काजी, मुफ्ती और दूसरे मुसाहब मौजूद रहते थे...'

'रहते हैं ।' डा. गजानन ने प्रो. पांडे को फिर टोका।

तभी पहरेदार चिल्लाया- 'बाअदब...बामुलाहिजा होशियार...अबुल मुजफ्फर नुरुद्दीन मुहम्मद जहांगीर बादशाह-ए-गाजी तशरीफ ला रहे हैं...होशियार...'

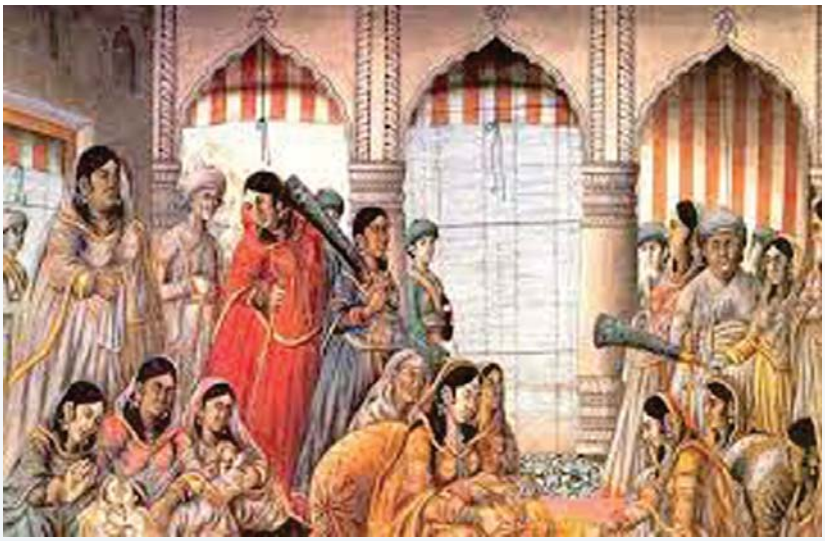

सभी मुसाहब सिर झुकाकर खड़े हो गए और झुककर कोर्निश बजाने लगे। बादशाह जहांगीर दरबार में आकर बैठे और उन्होंने फरियादी को पेश करने का हुक्म दिया।

फरियादी औरत बच्चे के साथ पेश हुई। काजी ने कहा- 'फरियादी, बादशाह-ए-गाजी के सामने तुम अपना बयान दे सकती हो।'

औरत ने दोनों हाथ बादशाह की ओर फैलाकर कहा- 'बंदा परवर मुझे इंसाफ चाहिए। मैं एक गरीब बेवा औरत हूं... मेरा कोई नहीं है...।' वह सुबकने लगी।

तब शंहशाह जहांगीर ने स्वयं कहा- 'रोओ मत फरियादी। अपनी बात कहो। तुम्हारा कोई कैसे नहीं है? खुदा है- यह बच्चा है।'

औरत ने बच्चे को सीने से लगा लिया और बोली- 'हां, खुदावंद। मगर मेरी बात कोई नहीं सुनता। यह एक गरीब मजदूर का बेटा है। मजदूर का इंतकाल हो गया है। मैं बच्चे को पालना चाहती हूं, गोद लेना चाहती हूं हुजूर।'

तभी मुफ्ती ने कहा- 'जहांपनाह, यह बच्चा दूसरे मजहब का है।'

जहांगीर ने कहा- 'तो क्या हुआ? क्या फरियादी दूसरे मजहब के बच्चे को अपने बच्चे की तरह नहीं पाल सकती?'

दरबार में खामोशी छा गई। बादशाह जहांगीर ने क्षणभर सोचा और कहा- 'हमें वह वाकया याद आ रहा है जिसे हमने अपने रोजनामचे में लिखा है।'

काजी ने अदब के साथ पूछा- 'कौन-सा वाकया हुजूर?'

बादशाह ने उस घटना को याद करते हुए कहा- 'हम गुजरात में थे। हमने दोहद में पड़ाव डाला था। पहलवान बहाउद्दीन बंदूकची एक लंगूर का बच्चा और बकरी लेकर हाजिर हुआ। बोला- हमारे एक बंदूकची ने लंगूरनी को निशाना बनाकर मार डाला।'

पूरा दरबार खामोशी से बादशाह की बात सुन रहा था।

...'बच्चा अपनी मां के लिए बुरी तरह चीखने लगा। बहाउद्दीन उसे पेड़ से उतार लाया। पड़ाव में आकर उसने भूख से तड़पते बच्चे को बकरी के पास छोड़ दिया। वह लंगूर के बच्चे को चाटने लगी। ऐसे, जैसे उसी का बच्चा हो! फिर उसे दूध पिलाने लगी।'

'अच्छा हुजूर?' मुफ्ती ने ताज्जुब से कहा।

'लंगूर के बच्चे को तो दूध की जरूरत थी-मगर वह बकरी? दूसरी नस्ल का जानवर होने के बावजूद बकरी ने उसे अपना बना लिया। क्या हमें इससे सबक नहीं लेना चाहिए?' बादशाह जहांगीर ने वाकया सुनकर सवाल किया।

मुफ्ती, काजी और दूसरे मुसाहब एकसाथ बोले- 'फरियादी, यह बच्चा अब तुम्हारा है। इसकी परवरिश के लिए शाही खजाने से मदद दी जाए। यह हमारा हुक्म है।'

उधर जहांगीर ने अपना फैसला सुनाया और इधर डॉ. गजानन कालयंत्र की दिशा मोड़कर किले के भीतरी हिस्सों की ओर ले चले। प्रोफेसर पांडे उन्हें बताते जा रहे थे कि इस किले को शहंशाह अकबर ने बनवाया। लाल पत्थरों से बना जहांगीरी महल धूप में बेहद खूबसूरत लग रहा था।

वे कालयंत्र में बैठकर काफी देर तक किले के भीतर घूमते रहे। सामने हरा-भरा सुंदर बाग था। उस ओर संकेत कर डॉ. गजानन अचानक बोले- 'वो...वो देखो प्रोफेसर। बादशाह सलामत मलिका-ए-नूरजहां के साथ बाग की ओर जा रहे हैं।'

प्रोफेसर पांडे ने बाग की ओर देखा और कुछ याद करते हुए बोले- 'डॉ. गजानन मेरा ख्याल है यह 'आरामगाह-ए-मुकद्दस' है। यही आगे चलकर अंगूरी बाग कहलाया। देखिए वे अंगूर की बेलें...'

'देखिए...देखिए साहेब, वे तो सारसों के जोड़े के पास रुक गए हैं।' बंका ने कहा।

प्रोफेसर पांडे बोले- 'सारसों से बहुत लगाव था जहांगीर को। डॉ. गजानन, कभी 'तुजुके जहांगीरी' जरूर पढ़िएगा। उसमें जहांगीर ने सारसों के दांपत्य-प्रेम के बारे में बड़ी मार्मिक बातें लिखी हैं। सारस अपने जीवनकाल में एक बार ही जोड़ा बनाता है और वे एक-दूसरे के लिए जान दे देते हैं। अरे हां, सारसों का यह जोड़ा तो जहांगीर के लैला-मजनूं का जोड़ा होगा।'

'लैला-मजनूं?' डॉ. गजानन ने पूछा।

'हां लैला-मजनूं जहांगीर के सारसों के पालतू जोड़े का नाम था। उनके बारे में भी उसने 'तुजुके जहांगीरी' में लिखा है। आप जरूर पढ़िए...'

'पढूंगा लेकिन फिलहाल जहांगीर को यह सब लिखने दीजिए प्रोफेसर।!' कहकर डॉ. गजानन जोर से हंस पड़े।

तभी बंका ने चिरौरी की- 'साहेब, हमरे बड़े भाग। बादशाह जहांगीर, बेगम नूरजहां, सिपाही, दरबारी तो देखत रहे। लेकिन महल के भीतर कुछो ना देखी। कौनो कमरा, जेवरात, खजाना कुछो नहीं । हम सुने हैं साहेब, ई राजा-महाराजा लोगन के पास तो लाख्यों रुपया के जेवर होवत रही...का हम देख सकत हैं साहब?'

'देख सकते हो, मगर बंका छू नहीं सकते। समझे? इसलिए नहीं छू सकते कि अगर वहां कुछ गड़बड़ी हो गई तो उसका असर हमारे जमाने पर पड़ेगा।' डॉ. गजानन ने कहा।

'नाहीं साहेब, हम कछू नाहीं छूएंगे।' बंका कानों पर हाथ लगाकर बोला।

'तो ठीक है। चलो महल के भीतर चलें।'

कालयंत्र महल के भीतर उतरा। प्रोफेसर पांडे ने चारों ओर देखा और धीरे से बोले- 'यह तो ख्वाबगाह लगती है।'

'ख्वाबगाह?' डॉ. गजानन ने पूछा।

'हां...मेरा मतलब है बेडरूम। देखिए यह बेशकीमती बिस्तर।' प्रोफेसर पांडे ने संकेत करते हुए कहा।

डॉ. गजानन ने कहा- 'लगता है यहां अभी कोई नहीं है। हम कालयंत्र से निकलकर घूम सकते हैं। लेकिन ध्यान रहे किसी के आने से पहले ही हमें कालयंत्र के भीतर आना होगा। कोई अचानक आ जाए तो घबराकर भागें नहीं। हम अतीत में यहां किसी को छोड़कर नहीं जा सकते।'

प्रोफेसर पांडे कमरे की हवा में गहरी सांस लेते हुए बोले- 'वाह! गुलाब की भीनी खुशबू! डॉ. गजानन हो न हो यह बेगम नूरजहां की ख्वाबगाह है। गुलाब के इतर की खुशबू है यह। और, गुलाब का इतर नूरजहां ने ही ईजाद किया था। उससे पहले तो इसे कोई जानता नहीं था।'

'हो सकता है प्रोफेसर। अच्छा जरा इस झरोखे से उस पार देखो और इतिहास को याद करो।' रहस्य से मुसकराकर डॉ. गजानन ने कहा।

प्रोफेसर पांडे ने झरोखे से उस पार देखा। चारों ओर हरे-भरे पेड़ दिखाई दिए। बीच में साफ-सुथरी नदी बह रही थी। प्रोफेसर पांडे क्षणभर उस दृश्य में खो गए।

डॉ. गजानन की आवाज से उसका ध्यान टूटा।

'क्या सोचने लगे प्रोफेसर?'

'इस हरे-भरे दृश्य में भी कुछ खाली-खाली-सा नहीं लग रहा है डॉ. गजानन?'

`आप जानते हैं इसने कितना बड़ा अपराध कर डाला है? प्रोफेसर, कदंब का यह पौधा बड़ा हुआ होगा। इसमें वर्षों फूल खिले होंगे। हजारों बीज बने होंगे। उन बीजों से हो सकता है कदंब के सैकड़ों भरे पेड़ बने होंगे।...इसने उन सभी पेड़ों को एक झटके में नष्ट कर दिया है।...बेवकूफ! और, आप कह रहे हैं इसे माफ कर दीजिए?...चलिए, हमें फौरन वापस लौट जाना चाहिए-इससे पहले कि कोई और गलती न हो जाए।'

डॉ. गजानन चौंक पड़े। बोले- 'बिल्कुल लग रहा है प्रोफेसर। ताजमहल के बिना यमुना का किनारा सूना-सूना-सा लग रहा है। ताजमहल तो तब था ही नहीं।'

'हां, उसके निर्माण का काम तो कई साल बाद शुरू हुआ। लेकिन, यमुना? यमुना क्या तब इतनी साफ और सुंदर थी? डॉक्टर गजानन वहां यमुना तट पर हमें जरूर चलना चाहिए।'

'ठीक है, चलते हैं। लेकिन बंका? बंका कहां है? बंका?' डॉ. गजानन ने घबराकर आवाज दी।

'आया साहेब!' बगल के कमरे से आवाज आई।

'कहां गए थे? तुम्हें मना किया था?'

'यहीं था साहेग। तनी बगल के कमरा मां झांकत रही। वहां तो कितना सुंदर कपड़ा, जेवरात, हीरा-मोती है साहेब...।' वह झिझकते हुए बोला।

प्रोफेसर पांडे ने कहा- 'तोशाखाना होगा।'

डॉ. गजानन ने कड़ककर पूछा-'कुछ छेड़ा तो नहीं?'

बंका ने सकपकाकर कहा- 'नाही साहेब।'

'ठीक है। चलो चलें यहां से।' डॉ. गजानन ने कहा और कालयंत्र को यमुना-तट पर ले गए।

प्रोफेसर पांडे ने पेड़ों की ओर गौर से देखा और बोले- 'इतनी हरियाली और घनी छांव। कौन सोच सकता था इस इलाके में इतनी हरियाली होगी।'

`सब इतिहास बन गए हैं प्रोफेसर। पिछले पांच सौ वर्षों में बंका जैसे न जाने कितने नासमझ लोगों ने कितने पेड़-पौधों को काट डाला। एक-एक पेड़ के साथ उसकी आगे उगने वाली पीढ़ियां नष्ट हो गईं। परिणाम आपके सामने है। प्रोफेसर हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि एक पेड़ सिर्फ एक पेड़ नहीं होता- वह भविष्य का एक पूरा जंगल होता है।'

'हरियाली की बात कर रहे हो प्रोफेसर? इन कदंब, तमाल और नीम के पेड़ों को देखो। आपके इतिहास में तो पता नहीं विज्ञान में हमें पढ़ाया गया था कि चौरासी कोस में फैले पूरे ब्रजमंडल में पहले कदंब और दूसरे तमाम पेड़ों के घने वन थे। घनी झाड़ियां और कुंज थे। पशुपालन का यह सबसे बड़ा इलाका था...'

'उनहीं वन-कुंजन मां कृशन जी बलराम भइया अऊर ग्वाल-बालन के संग गैयन चराइत रहे, मुरली की टेर पर।' बंका बोला और बैठने की जगह बनाने लगा।

प्रोफेसर पांडे ने डॉ. गजानन से पूछा- 'तो कहां गए वे घने जंगल?'

अचानक डॉ. गजानन चीखे- 'बंका! बंका! यह क्या कर रहे हो तुम?' उन्होंने झपटकर गुस्से में बंका का हाथ पकड़ लिया।

बंका बोला- 'बैठने की जगह बना रहा था साहेब...'

डॉ. गजानन चिल्लाए- 'कदंब का वह पौधा तोड़ डाला है तुमने...अब क्या होगा।...चलो बैठो कालयंत्र में!'

प्रोफेसर पांडे ने कहा- 'माफ कर दीजिए। एक छोटा-सा पौधा ही तो तोड़ा है उसने।'

'एक पौधा!' डॉ. गजानन उसी तरह क्रोध में भरकर बोले- 'आप जानते हैं इसने कितना बड़ा अपराध कर डाला है? प्रोफेसर, कदंब का यह पौधा बड़ा हुआ होगा। इसमें वर्षों फूल खिले होंगे। हजारों बीज बने होंगे। उन बीजों से हो सकता है कदंब के सैकड़ों भरे पेड़ बने होंगे।...इसने उन सभी पेड़ों को एक झटके में नष्ट कर दिया है।...बेवकूफ! और, आप कह रहे हैं इसे माफ कर दीजिए?...चलिए, हमें फौरन वापस लौट जाना चाहिए-इससे पहले कि कोई और गलती न हो जाए।'

प्रोफेसर पांडे चकित रह गए। इस तरह तो उन्होंने सोचा ही न था।

कालयंत्र के भीतर सब कुछ धुंधलाया और वे वापस वर्तमान समय की ओर चल पड़े।

कालयंत्र सूखी रेत में उतरा। पास ही भूरा-मटमैला गंधाता हुआ पानी बह रहा था। वे कालयंत्र से बाहर निकले।

प्रोफेसर पांडे ने पूछा- 'यह हम कहां आ गए डॉ. गजानन?'

'वहीं हैं जहां थे, यमुना के उसी तट पर।' मायूस होकर डॉ. गजानन ने कहा।

'वहीं? मैं समझा नहीं?' प्रोफेसर पांडे ने पूछा।

'वही जगह है। उधर सामने देखो। ताजमहल के पीछे हैं हम। उधर दायीं ओर दूर आगरा के किले की प्राचीर और वीरान बुर्जियां दिख रही हैं ।'

'लेकिन यह रेत? वे घने पेड़ और झाड़ियां?'

'सब इतिहास बन गए हैं प्रोफेसर। पिछले पांच सौ वर्षों में बंका जैसे न जाने कितने नासमझ लोगों ने कितने पेड़-पौधों को काट डाला। एक-एक पेड़ के साथ उसकी आगे उगने वाली पीढ़ियां नष्ट हो गईं। परिणाम आपके सामने है। प्रोफेसर हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि एक पेड़ सिर्फ एक पेड़ नहीं होता- वह भविष्य का एक पूरा जंगल होता है।'

'समझ गया डॉ. गजानन' प्रोफेसर पांडे ने दर्द के साथ कहा और चारों ओर देखा। रेत ही रेत। बीच में मैली यमुना की कटी-फटी धाराएं। उनमें बहता गंधाता कचरा। उन्होंने जेब से रूमाल निकालकर नाक पर रख लिया।

डॉ. गजानन ने देखा और कहने लगे- 'कहां यमुना का वह निर्मल जल और यह गंदा बदबूदार पानी। यह सब हमारी ही करतूत है। मिलों और फैक्टरियों का जहर घुल रहा है। शहर-शहर के गंदे नाले इसमें कूड़ा-कचरा और गंदगी भर रहे हैं। पवित्र यमुना को हमने अपवित्र बना दिया है। चलिए, यहां से चलें।'

उन्होंने कालयंत्र को अपनी प्रयोगशाला के लिए रवाना किया।

प्रयोगशाला में लौट आने पर डॉ. गजानन ने कहा- 'लो, लौट आए मेरी प्रयोगशाला में।'

'सही-सलामत!' प्रोफेसर पांडे ने हंसते हुए कहा। फिर

बोले- 'सच कहूं, मैं तो भीतर-भीतर बहुत डरा हुआ था कि न जाने क्या होगा।...एक अनोखा अनुभव रहा यह। लेकिन मेरी इस कालयंत्र की यात्रा पर कोई विश्वास नहीं करेगा।'

'करेगा। जरूर करेगा।' डॉ. गजानन बोले।

'कौन करेगा?'

'मैं करूंगा प्रोफेसर। क्या यह काफी नहीं है?'

'है डॉ. गजानन। इस कालयात्रा को मैं कभी नहीं भूलूंगा। जब भी इतिहास पढ़ाऊंगा तो आपके साथ अतीत की इस सैर में बिताए हुए क्षण याद आएंगे।'

प्रोफेसर पांडे देर रात अपने होटल के कमरे में वापस लौट गए।

छात्रों से सुबह भेंट हुई। उनसे पता चला कि पिछला दिन यात्रा की थकान मिटाने और शहर घूमने में ही व्यतीत हो गया। प्रोफेसर पांडे ने आगे का कार्यक्रम तय किया- 'चलो ठीक है। आज आगरा फोर्ट चलेंगे। वहां अगले दो दिन और लगेंगे। उसके बाद फतेहपुर सीकरी, ताजमहल, इतमादुद्दौला का मकबरा और सिकंदराबाद। फिर दिल्ली चलेंगे।'

सुबह समाचारपत्र पढ़ने की पुरानी आदत थी। उन्होंने पूछा- 'आज का अखबार है?'

एक छात्र झपटकर ले आया।

प्रोफेसर अखबार पर नजर डाल रहे थे कि बाक्स में समाचार पढ़कर चौंक पड़े। वह समाचार उन्होंने दुबारा पढ़ा और धीरे से बुदबुदाए- 'नूरजहां का बेशकीमती हार गायब? ऐसा कैसे हो सकता है? वह भी राष्ट्रीय संग्रहालय से?'

'हां सर, राष्ट्रीय संग्रहालय से गायब हो गया। पूरी सुरक्षा के बावजूद। सर, ये चोरी करने वाले नहीं जानते कि वे इतिहास की धरोहर चुरा रहे हैं। नूरजहां का हार केवल हीरे-मोतियों का हार नहीं मुगल सल्तनत की एक यादगार भी है।' एक छात्र ने कहा।

लेकिन प्रोफेसर पांडे को तो जैसे कुछ सुनाई ही नहीं दे रहा था। उन्होंने हड़बड़ाकर कहा- 'टेलीफोन है?'

'रिसेपशन पर है सर,' किसी छात्र ने कहा।

प्रोफेसर पांडे रिसेपशन की ओर भागे। छात्र कुछ समझ नहीं पा रहे थे।

नंबर मिलते ही चिल्लाए- 'हैलो! हैलो!'

दूसरी ओर से शांत आवाज में उत्तर मिला- 'गजानन'।

'डॉ. गजानन? आपने आज का अखबार पढ़ा? वह नूरजहां के कीमती हार की खबर? मैं नवीन पांडे बोल रहा हूं।'

'डॉ. प्रोफेसर खबर पढ़ी....और चोर भी पकड़ लिया है। उसने अपना जुर्म कुबूल कर लिया है। कहता है, उसने सोचा उतने सारे जेवरों में क्या पता लगेगा? मैंने कहा, फैसला तो अब बादशाह जहांगीर के झरोखा दरबार में ही होगा! सुनकर बहुत

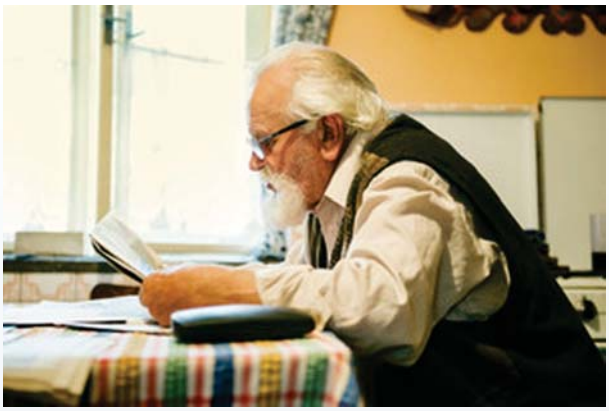

प्रोफेसर अखबार पर नजर डाल रहे थे कि बाक्स में समाचार पढ़कर चौंक पड़े। वह समाचार उन्होंने दुबारा पढ़ा और धीरे से बुदबुदाए- `नूरजहां का बेशकीमती हार गायब ? ऐसा कैसे हो

डर गया है। जीवन भर चोरी न करने की कसम खा ली है।' कहकर डॉ गजानन हंसे।

प्रोफेसर पांडे ने पूछा- 'तो अब? अब क्या होगा? क्या हार आप राष्ट्रीय संग्रहालय को लौटा रहे हैं?'

डॉ. गजानन बोले- 'आप इतिहास को भूल रहे हैं प्रोफेसर पांडे। क्या यह हार मैंने राष्ट्रीय संग्रहालय को दिया था? नहीं न? तो अगर मैं इसे सीधे राष्ट्रीय संग्रहालय को दे दूंगा तो हार के बीच के इतिहास का क्या होगा? इस हार से हो सकता है कहीं प्यार हुआ हो या षड्यंत्र हुए हों। हम उन घटनाओं को कैसे बदल सकते हैं? ऐसा करने पर इतिहास नहीं बदल जाएगा?'

'तो आप क्या करेंगे?'

'हार को वापस तोशाखाना में रखने के लिए मैं फिर अतीत की यात्रा पर जा रहा हूं। अभी यह बात आपके और मेरे बीच ही रहनी चाहिए। इतिहास की अमानत को उसी जगह पर रखना जरूरी है। बस इतना मनाइए कि हार की गैर-मौजूदगी के समय में कोई खास घटना इतिहास में न घटी हो।...प्रोफेसर अगर हार राष्ट्रीय संग्रहालय में आ गया तो समझना वह तोशाखाना में उसी जगह वापस रखा गया और यह भी कि मेरी यह अतीत यात्रा सफल रही...और मैं सही सलामत हूं।'

'बॉन वायेज डॉ. गजानन!' प्रोफेसर पांडे ने ऊंची आवाज में टेलीफोन पर कहा तो छात्र चौंके।

एक छात्र ने पूछ लिया- 'सर कौन डॉ. गजानन? कहीं बाहर जा रहे हैं सर?'

'हां। कल मैं उन्हीं के पास था न। लंबी यात्रा पर जा रहे हैं...आप लोग तैयार हों। आगरे का किला देखना है आज। हरी अप!'

❑❑❑

मुहूर्त्त

संतोष चौबे

एशियन इलेक्ट्रिक कंपनी के वरिष्ठ प्रबंधक विश्वनाथन ने ठीक सवा आठ बजे अपने केबिन का दरवाज़ा खोला, ब्रीफकेस टेबल पर रखा और सीधे, एक कोने में लगे भगवान बालाजी और भगवान विश्वकर्मा के चित्रों की ओर कदम बढ़ाये। चित्रों के पास पहुँचकर विश्वनाथन ने सिर नवाया, पास रखे अगरबत्ती के पैकेट में से अगरबत्ती निकाली, जलायी और एक बार फोटो के चारों ओर घुमाकर उसे वहीं तख्ते पर लगा दिया। केबिन अगरबत्ती की मीठी सुगंध से महकने लगा। विश्वनाथन ने एक बार फिर सिर झुकाकर भगवान को नमस्कार किया और आगे बढ़कर दीवार के पास वाली खिड़की खोल दी।

हवा के झोंके ने हल्का सा थपथपा कर उसे आश्वस्त किया। विश्वनाथन ने अपनी कुहनियाँ खिड़की की मुडेर पर टिका लीं और नीचे की ओर झाँकने लगा।

आठ बीस वाला सायरन बज चुका था। अफसर अपना ब्रीफकेस लटकाये, मजदूर अपना टिफिन झुलाते हुए और असेंबली लाइन की लड़कियाँ हाथों में हाथ ड़ाले गपियाते, फैक्टरी में प्रवेश कर रहे थे। सिक्यूरिटी वाले कभी-कभी लोगों के पहचान-पत्र देख लिया करते थे और किसी बड़े अफसर की कार आने पर चुस्ती से, बड़ा दरवाज़ा चौपट खोल दिया करते थे।

लोग किसी यंत्रमानव की तरह अपने शेड के सामने पहुँचते, वहाँ दरवाजे पर लगी पंच घड़ी में अपना कार्ड डालकर समय पंच करते और फिर अपने शेड में घुस जाते थे। विश्वनाथन को मालूम था कि यह सारी जल्दी साढ़े आठ बजे से पहले कार्ड पंच करने की है। उसके बाद अपने काम करने की जगह पहुँचकर थोडी गप्प हांकी जायेगी, टी.वी. पर कल प्रसारित हुए मैच या किसी प्रोग्राम की चर्चा की जायेगी, अखबार की किसी ताज़ा खबर पर छींटाकशी होगी और फिर साढ़े नौ बजे आने वाली चाय का इंतज़ार शुरू हो जायेगा। असल काम तो फैक्टरी में दस बजे के बाद शुरू होता है। विश्वनाथन मुड़ा और अपने टेबल पर जाकर बैठ गया। घूमने वाली कुर्सी पर उसने आधा चक्कर मारा, अपनी ऊपर की जेब से विल्स का पैकेट निकाला और सिगरेट सुलगा ली। एक बार सरसरी निगाह से उसने केबिल के शीशे के पार देखा। उसके विभाग के इंजीनियर आना शुरू हो गये थे। धीरे-धीरे वे अपने टेबलों पर बैठेंगे और अपने काम में लग जायेंगे।

विश्वनाथन ने ईश्वर को धन्यवाद दिया कि वरिष्ठ प्रबंधक बनाते समय उसे शॉप फ्लोर पर नहीं भेजा गया। वहाँ मौके-बे-मौके

विज्ञान संचारक और लेखक संतोष चौबे ने कम्प्यूटर शिक्षा पर आधारित अपनी पहली ही किताब 'कम्प्यूटर एक परिचय' के माध्यम से अपूर्व ख्याति अर्जित की और इसी किताब ने विक्रय के क्रीर्तिमान स्थापित किये। विज्ञान लेखन के लिए उन्हें मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी का डॉ. शंकरदयाल शर्मा पुरस्कार और भारत सरकार का मेघनाद साहा पुरस्कार मिला। उन्हें भारत सरकार का राष्ट्रीय विज्ञान प्रचार पुरस्कार, राष्ट्रपति द्वारा इंडियन इनोवेशन अवार्ड तथा नेसकॉम आईटी इनोवेशन अवार्ड, एवं एशियन फोरम का प्रतिष्ठित i4d अवार्ड प्राप्त हुआ है। सामाजिक उद्यमिता के लिए श्वॉब फॉउन्डेशन अवार्ड मिला तथा वे अशोका फैलोशिप प्राप्त कर चुके हैं। आप भारतीय इंजीनियरिंग सेवा तथा भारतीय प्रशासनिक सेवा में चयनित हुए।

मजदूरों से उलझना पड़ता और उत्पादन बढ़ाने के लिए ऊपर वालों का दबाव अलग से सहना पड़ता। यहाँ रिसर्च में अच्छा है। उसके साथ काम करने वाले सभी इंजीनियर हैं, पढ़े-लिखे हैं, बात समझते हैं और ज़्यादा परेशान नहीं करते। एक बार काम बता दिया तो छुट्टी। धीरे-धीरे पूरा हो ही जाता है।

विश्वनाथन ने कुर्सी पीछे की ओर झुका ली। सुबह उसकी पत्नी शारदा ने नरम-नरम इडलियों का शानदार नाश्ता उसे कराया था। और फिर उसके बाद साउथ से लाई गई बढ़िया कॉफी का आधा गिलास उसने धीरे-धीरे अपने कंठ से नीचे उतारा था। एक अजीब-सी तृप्ति उसे नाश्ता करके हुई थी और उसका सुखद एहसास अभी भी विश्वनाथन के मन में बाकी था।

विश्वनाथन ने कुर्सी सीधी कर ली। शीशे के पार उसका साम्राज्य बिखरा पड़ा था, करीब तीस इंजीनियर उसके नीचे काम करते थे। वह उन्हें कभी भी बुला सकता था, आदेश दे सकता था, काम बता सकता था। करोड़ों के आधुनिक उपकरण उसके डिपार्टमेंट में थे। फैक्टरी का प्रत्येक विभाग उस पर निर्भर करता था। महत्वपूर्ण निर्णय उससे पूछ कर लिये जाते थे। एक छोटा-मोटा साम्राज्य ही तो था उसके पास। एक अजीब सुख से विश्वनाथन का मन भर गया। उसने आँखें बंद कर लीं और सिगरेट के हल्के-हल्के कश लगाने लगा।

चिड़िया की तरह चहचहाती टेलीफोन की घंटी ने उसकी तंद्रा भंग की। वह जानता था कि फोन ग्रुप कैप्टन अहलूवालिया का होगा।

उसने फोन उठाया और धीमी मगर ठोस आवाज में कहा,

''गुड मॉर्निंग सर।''

फिर कुछ देर वह फोन पकड़े खड़ा रहा। उधर से बात समाप्त होने पर बोला, ''यस सर''।

हाथ की सिगरेट ऐश ट्रे में मसलकर बुझाई, डायरी उठाई और केबिन का दरवाजा खोलकर बाहर निकल गया।

अहलूवालिया एयर फोर्स का रिटायर्ड ग्रुप कैप्टन था। सेवानिवृत्ति के बाद मंत्रालय में अपनी जान-पहचान और रसूख के कारण फैक्टरी की शानदार सिविल पोस्टिंग पा गया था। अपनी मूँछें उमेठ कर रखता था और मातहतों से सख्ती से पेश आता था। आखिर एयर फोर्स के आदमी की छवि भी तो बनाये रखनी थी।

विश्वनाथन जब उसके कमरे में घुसा तो अहलूवालिया अपने विशाल कक्ष में टेबल पर झुका कुछ लिख रहा था। विश्वनाथन कुछ देर खडा रहा। अहलूवालिया को किसी का उससे बिना पूछे कुर्सी पर बैठ जाना अच्छा नहीं लगता था। थोड़ी देर बाद उसने सिर उठाया, विश्वनाथन को इशारे से बैठने के लिए कहा और खुद पीछे कुर्सी पर टिक गया।

कुछ देर चुप रहकर उसने वातावरण में गंभीरता पैदा की। फिर छाती से आती हुई खरखराती आवाज़ में बोला,

''यू सी विश्वनाथन, वी आर इन ट्रबल''।

यह उसकी आदत थी। अपनी कठिनाई को 'हमारी' कठिनाई कहकर वह उसे दूसरों के ऊपर थोप देता था। विश्वनाथन कुछ नहीं बोला अहलूवालिया ने कहना जारी रखा, ''एयर हैड क्वार्टर से फोन आया था। उन्हें राडार इसी महीने चाहिए।''

''लेकिन सर अभी तो हमारी डिजाइन ही पूरी...''

''आई डोंट वांट ऐनी लेकिन वेकिन। मैंने उन्हें प्रॉमिस कर दिया है। राडार इसी महीने अंबाला एयर फोर्स स्टेशन पहुँच जाना चाहिए।''

''लेकिन सर अभी तो....''

''विश्वनाथन, ये हमारी प्रेस्टिज का सवाल है। पहली बार हमारी फैक्टरी को इतना बड़ा काम मिला है। उन्होंने कहा है तो

विश्वनाथन के दिलो-दिमाग से सुबह का सुखद एहसास हवा हो गया। उसका स्थान एक अजीब सी बेचैनी ने ले लिया। उसने राडार की सभी इकाईयों की स्थिति को अपने दिमाग में उलट-पुलट कर देखना शुरू किया। ट्रांसमीटर अब तक स्थिर नहीं हुआ था, चलते-चलते रूक जाता था। ऐंटेना के महत्वपूर्ण पुर्जे कुछ दिनों पहले जल गये थे। हालाँकि उन्हें ठीक कर दिया गया था, पर ये पता नहीं चल पाया था कि वे जले क्यों थे ? रेडियो सिग्नल बीच-बीच में गायब हो जाता था। राडार कभी चलता था, कभी नहीं। निश्चित ही वह फील्ड में जाने लायक नहीं था।

हमें इसी महीने राडार देना होगा। अपने इंजीनियर्स से कहो, चाहे दिन-रात काम करना पडे पर राडार इसी महीने फील्ड में जायेगा।''

''ओ.के. सर।''

विश्वनाथन उठा और बाहर निकल आया।

अपने केबिन में घुसने से पहले उसने बाहर टहलते सूरजभान को बुलाया और कहा, ''सबको खबर करो। मैं दस बजे मीटिंग लूंगा।''

और जाकर अपनी कुर्सी पर बैठ गया।

इस राडार का काम पिछले अठारह महीनों से चल रहा था। फ्रांसीसी तकनीक थी। पहले तो महीनों फ्रेंच डाक्यूमेंट्स को समझने, उनका अनुवाद करने में ही निकल गये। पर धीरे-धीरे इंजीनियरों ने अपनी-अपनी इकाईयों को समझ लिया था। एक बार फैक्टरी में उन्हें बना भी लिया गया था। लेकिन अब भी टेस्टिंग बाकी थी। सिस्टम को पूरी तरह से काम करा कर देखना बाकी था। और सिस्टम ने एक बार फैक्टरी में काम कर भी लिया तो फील्ड का क्या भरोसा? फील्ड बहुत अलग बात है।

विश्वनाथन के दिलो-दिमाग से सुबह का सुखद एहसास हवा हो गया। उसका स्थान एक अजीब सी बेचैनी ने ले लिया। उसने राडार की सभी इकाईयों की स्थिति को अपने दिमाग में उलट-पुलट कर देखना शुरू किया। ट्रांसमीटर अब तक स्थिर नहीं हुआ था, चलते-चलते रूक जाता था। ऐंटेना के महत्वपूर्ण पुर्जे कुछ दिनों पहले जल गये थे। हालाँकि उन्हें ठीक कर दिया गया था, पर ये पता नहीं चल पाया था कि वे जले क्यों थे? रेडियो सिग्नल बीच-बीच में गायब हो जाता था। राडार कभी चलता था, कभी नहीं। निश्चित ही वह फील्ड में जाने लायक नहीं था।

विश्वनाथन ने तय किया कि अपने इंजीनियरों के सामने वह ये सब बातें नहीं स्वीकारेगा। अगर राडार को फील्ड में जाना है तो वह जायेगा ही।

दस बजने के पाँच मिनिट पहले ही विश्वनाथन मीटिंग रूप में अपनी तयशुदा कुर्सी पर जाकर बैठ गया।

मित्रा सबसे पहले आने वालों में से था। फिर सप्रे, बैनर्जी, कपूर, शर्मा... एक-एक करके सभी इंजीनियर आये और विशाल मीटिंग-टेबल के चारों ओर बैठ गये।

विश्वनाथन ने बिना भूमिका बाँधे बात शुरू की,

''फ्रेड्स, हमारा डी डे आ गया है।''

सब चुप थे।

''राडार इसी महीने फील्ड में जायेगा।''

मित्रा ने अचंभित होते हुए कहा,

''पर सर ट्रांसमीटर अभी स्थिर नहीं हुआ है।''

सप्रे ने झुंझलाते हुए कहा,

''और अभी तो यह भी पता नहीं चल पाया है कि एंटेना जली क्यों थी?''

कपूर ने कहा,

''सर रेडियो सिग्नल बीच-बीच में गायब हो जाता है। फिर बिजली की लाइन के प्रभाव का अध्ययन भी अभी किया जाना है।''

शर्मा ने कहा,

''ऑपरेटिंग मैन्यूअल पूरा करने के लिए मुझे तीन महीने चाहिए।''

विश्वनाथन ने धीरे-धीरे कहा,

''मुझे ये सब मालूम है। मैंने ये जानने के लिए आप सबको यहाँ नहीं बुलाया है। मैं सिर्फ इतना बताना चाहता हूँ कि एयर हेड-क्वार्टर्स ने आदेश दिया है और हमें राडार इसी महीने अंबाला भेजना होगा। ग्रुप कैप्टन अहलूवालिया हैस प्रामि्ज्ड टू दैम। अब ये हमारी कंपनी की प्रेस्टिज का सवाल है। गॉड विलिंग, सब ठीक हो जायेगा।''

मित्रा, जो जल्दी मैदान नहीं छोडता था, बोला,

``क्या बकवास है यार? हम दुनिया की सबसे आधुनिक तकनीक पर आधारित राडार बना रहे हैं, विज्ञान के सबसे आधुनिक क्षेत्र में हैं, देश के बड़े वैज्ञानिक संस्थान में काम कर रहे हैं और तकनीकी गलती ढूंढ़ने के बजाय मुहूर्त की तलाश कर रहे हैं। क्या हुआ अगर एयर एच.क्यू. ने आदेश दे दिया? उनसे कहा जा सकता है कि हम अभी तैयार नहीं हैं, हमें कुछ दिन और लगेंगे। इससे हो सकता है कि अहलूवालिया की प्रेस्टिज थोड़ी कम हो जाये, पर हम सबकी इज्ज़त तो बची रहेगी।

''ये जितनी भी समस्यायें सामने आयी हैं वे सभी तकनीकी हैं, फिर इनकी संख्या भी बहुत है। अगर गॉड विलिंग भी हुआ तो भी उन्हें सुलझाने में समय तो लगेगा।''

विश्वनाथन ने सुना-अनसुना करते हुए कहा,

''अपनी-अपनी इकाईयों को ठीक करना आप लोगों की व्यक्तिगत जिम्मेदारी है। मैं कल सुबह राडार के फैक्टरी से बाहर निकलने की तारीख आपको बता दूँगा। नाउ मूव ऑन। अगर फैक्टरी में देर तक रूकना पड़े, तो रूकिए, रात में काम करना पड़े तो करिये, आपकी यूनिट ठीक होनी चाहिए।''

और वह अपनी कुर्सी से उठ गया।

मित्रा ने सप्रे से कहा,

''इसे तो कुछ करना-धरना है नहीं। यह कुछ भी कह सकता है।''

सप्रे ने कनखियों से उसे देखा और बाहर निकल गया।

राडार डिज़ाइन विभाग में उस दिन अजीब गरमी और तनाव फैल गया था।

अगले दिन, अपने केबिन में घुसने के बाद विश्वनाथन कुछ अधिक देर तक भगवान बालाजी के फोटो के सामने खड़ा रहा। उसने कुछ अधिक श्रद्धा से भगवान विश्वकर्मा को सिर नवाया। फोटो के सामने वाले तख्ते पर दो के बजाय चार अगरबत्तियाँ लगाईं, फिर जाकर कुर्सी पर बैठ गया। कुर्सी पर बैठते ही उसने सूरजभान से कहा,

''मित्रा और सप्रे को बुलाओ।''

मित्रा और सप्रे, विश्वनाथन के बाद विभाग के सीनियर लोगों में से थे। विश्वनाथन समय-समय पर उनसे सलाह करता रहा था। उनके आते ही विश्वनाथन ने कहा,

''मैंने डेट तय कर दी है।''

''कौन सी?''

''बाईस, सुबह दस बजे।''

''लेकिन सर, आज दस तारीख तो हो ही गई है। सिर्फ दस बारह दिनों में इतनी सारी समस्यायें....''

''बाइस के बाद कोई मुहूर्त नहीं है।''

''जी?''

''यस, नो मुहूर्तम, ऑफ्टर ट्वेंटी सेकंड। अगर राडार को इस महीने जाना है तो वह बाईस को ही जा सकता है।''

''सर मुहूर्तम को छोड़िये, यहाँ से अंबाला पहुँचने में ज्यादा-से-ज्यादा दो दिन लगेंगे। अगर हम अट्ठाईस को भी निकले तो तीस तक पहुँच जायेंगे। पर इससे फैक्टरी में काम करने का एक और हफ्ता हमें मिल जायेगा। इस वक्त वह ज़्यादा ज़रूरी है।''

''मुहूर्तम् इज़ मुहूर्तम्, उसे बदला नहीं जा सकता।''

''लेकिन सर...''

''नो''

विश्वनाथन ने चर्चा समाप्त कर दी।

मित्रा ने बाहर निकलते हुए कहा,

''क्या बकवास है यार? हम दुनिया की सबसे आधुनिक तकनीक पर आधारित राडार बना रहे हैं, विज्ञान के सबसे आधुनिक क्षेत्र में हैं, देश के बड़े वैज्ञानिक संस्थान में काम कर रहे हैं और तकनीकी गलती ढूंढ़ने के बजाय मुहूर्त की तलाश कर रहे हैं। क्या हुआ अगर एयर एच.क्यू. ने आदेश दे दिया? उनसे कहा जा सकता है कि हम अभी तैयार नहीं हैं, हमें कुछ दिन और लगेंगे। इससे हो सकता है कि अहलूवालिया की प्रेस्टिज थोड़ी कम हो जाये, पर हम सबकी इज्ज़त तो बची रहेगी। राडार की जो हालत है, ऐसे में उसे जबर्दस्ती बाहर धकेलना मूर्खता है, क्राइम है''।

सप्रे ने हँसते हुए कहा,

''सबसे जरूरी है मुहूर्तम''।

बाईस की सुबह, फैक्टरी मेन गेट की अंदर वाली सड़क पर नज़ारा देखने लायक था। वैसे तो एक अजीब गहमा-गहमी पूरी फैक्टरी में फैली थी, पर मेन गेट के आसपास रौनक कुछ ज़्यादा ही थी। राडार के सभी हिस्सों को शैल्टर्स में बंद करके गाड़ियों पर लाद दिया गया था। सबसे आगे ट्रांसमीटर था, फिर एंटेना और रिसीवर तथा आखिर में एयर कडीशनर, डीजल जनरेटर और अन्य सरंजाम था। पाँच-छः गाड़ियों में दरवाजे के पास खड़ा हमारा राडार काफी प्रभावशाली लग रहा था, वैसा ही जैसा पिछली गणतंत्र दिवस की परेड में लगा था।

मित्रा अब भी गुस्से में था,

''भाड़ में गया मुहूर्तम् यार, हम लोग दिन-रात लगे हैं, काम कर रहे हैं, भरोसा है कि अगर महीना भर और मिल जाये तो इसे पूरी तरह ठीक कर ही लेंगे। लेकिन हमारी क्षमता पर विश्वास नहीं किया जा रहा, मुहूर्त पर विश्वास किया जा रहा है। पता नहीं लोग अपने महत्वपूर्ण निर्णय इस तरह कैसे कर लेते हैं? बीस साल से इंजीनियरिंग में हैं, वरिष्ठ प्रबंधक हैं, पर आदमी की बनाई चीज़ पर, सिस्टम पर, उसकी क्षमता पर भरोसा नहीं कर सकते। खुद पर भरोसा नहीं, मुहूर्त ढूँढ रहे हैं...''

सप्रे अब गंभीर हो गया,

''देखो मित्रा, हमारे यहाँ जीवन के प्रति, नौकरी के प्रति, काम के प्रति असुरक्षा इतनी अधिक है कि आम आदमी सुरक्षित महसूस करने के लिए कोई न कोई टेका ढूँढ़ना जरूरी समझता है। वह अपनी कठिनाइयों, परेशानियों को किसी अदृश्य शक्ति के ऊपर डाल देना चाहता है। धर्म, विश्वास, अंधविश्वास ये बड़े आसान टेके हैं। ज्ञान-विज्ञान पर टिकना कठिन काम है, उसमें संघर्ष करना पड़ता है, ज्यादा लड़ना पड़ता है।''

''लेकिन विश्वनाथन तो पढ़ा-लिखा है। वह क्यों अंधविश्वास के टेके लगाये...''

''पढ़ा-लिखा है, पर चेतन नहीं है।''

सप्रे ने कहा और अपने टेबल की ओर बढ़ लिया। मित्रा भी झुंझलाते हुए अपने काम में लगा।

जैसे-जैसे बाईस तारीख नजदीक आ रही थी, राडार डिज़ाइन विभाग में तनाव बढ़ता जा रहा था। सब अपनी-अपनी यूनिट की देखभाल में लगे थे और चाहते थे कि कम से कम उनकी यूनिट पर राडार को फेल करने का आरोप न लगे।

सिर्फ विश्वनाथन शांत था। उसे भरोसा था कि उसने सही मुहूर्त ढूँढ लिया है।

बाईस की सुबह, फैक्टरी मेन गेट की अंदर वाली सड़क पर नज़ारा देखने लायक था। वैसे तो एक अजीब गहमा-गहमी पूरी फैक्टरी में फैली थी, पर मेन गेट के आसपास रौनक कुछ ज़्यादा ही थी। राडार के सभी हिस्सों को शैल्टर्स में बंद करके गाड़ियों पर लाद दिया गया था। सबसे आगे ट्रांसमीटर था, फिर एंटेना और रिसीवर तथा आखिर में एयर कडीशनर, डीजल जनरेटर और अन्य सरंजाम था। पाँच-छः गाड़ियों में दरवाजे के पास खड़ा हमारा राडार काफी प्रभावशाली लग रहा था, वैसा ही जैसा पिछली गणतंत्र दिवस की परेड में लगा था। पर अबकी बार परेड नहीं होनी थी। उसे असल में काम करना था। एयर फोर्स वाले उसकी पूरी ट्रायल लिये बिना उसे थोड़े ही स्वीकार करने वाले थे।

ठीक पौने दस बजे विश्वनाथन, अहलूवालिया और फैक्टरी का जनरल मैनेजर सेठी, संबंधित कर्मचारियों के साथ आकर राडार के सामने खड़े हो गये। असेंबली लाइन की लड़कियाँ थाली में रोली, चावल, दीपक, फूल इत्यादि सजा लाईं। विश्वनाथन ने हर शेल्टर के ऊपर रोली-चावल लगाया, आरती उतारी और फूल चढ़ाये। सब बड़े कौतुक से उसे देख रहे थे। ठीक दस बजे उसने पहली गाड़ी को इशारा किया और उसे गेट के बाहर कर दिया। गाड़ी के गेट से बाहर होते ही उसने फुर्ती से पास के पत्थर पर एक नारियल फोडा और मंत्रोच्चार करने लगा।

अब तक सभी लोग बड़ी गंभीरता से विश्वनाथन को देख रहे थे। पर नारियल के फूटते ही वातावरण हल्का हो गया। मित्रा

ने उसे पाने के लिए हाथ बढ़ाया, पर विश्वनाथन ने कड़ी निगाह और हाथ के इशारे से उसे रोक दिया। नारियल तोड़कर उसने चिड़ियों और कौओं की तरफ डाल दिया। मित्रा अपना सा मुँह लिये फिर दोस्तों के बीच आकर खड़ा हो गया।

नारियल टूटते ही बाकी गाड़ियाँ भी एक-एक करके फैक्टरी गेट से बाहर निकलने लगीं। इंजीनियरों ने साथ चलने वाली बस में जगह ली।

राडार सही मुहूर्त पर अंबाला एयर फोर्स स्टेशन की ओर चल पड़ा।

एयर फोर्स स्टेशन का माहौल पूरा प्रोफेशनल था।

साफ-सुथरी चमकदार सड़कें, चौराहों पर पीले और काले रंग में लिखे रास्तों के नाम, रास्तों के आसपास करीने से लगे पेड़, कभी-कभी सरसराती गाड़ियाँ और आमतौर पर चुप्पी, पूरे माहौल को अजीब गंभीरता सी प्रदान कर रहे थे।

हॉस्टल में पहुँचते ही हमें कंट्रोल में ले लिया गया।

इंजीनियरों को कमरे अलॉट कर दिये गये, ऑफिसर्स मेस में खाने का समय बता दिया गया, राडार लगाने की जगह दे दी गई और ट्रायल्स का समय तय कर दिया गया।

माहौल में गज़ब की चुस्ती थी।

बिलकुल सुबह पायलट अपने-अपने यूनिफार्म में, हेलमेट लगाये, हवाई अड्डे की तरफ निकल जाते। जगुआर और दूसरे फाइटर प्लेन दोपहर तक आसमान पर छाये रहते। पायलट अपनी-अपनी सॉर्टी पर निकलते और लौटने पर उसी की बातें करते। हम लोगों का वहाँ पहुँचना उनके लिए बहुत महत्वपूर्ण नहीं था। हम उनके लिए बाहर के आदमी थे-सिविलियन।

ट्रायल के दिन हमारी हालत सुबह से खराब थी। सबको अपनी-अपनी कमियाँ मालूम थीं। तय था कि राडार ठीक से चल नहीं पायेगा। ट्रायल का पहला सत्र सुबह नौ बजे से बारह बजे का था। उसमें सुबह की उड़ानों को, जो निश्चित आकाश में होने वाली थीं, राडार पर प्राप्त करना था।

एयर फोर्स की ओर से एक विंग कमांडर सारा कार्यक्रम निर्देशित कर रहा था। उसने निश्चित समय पर उड़ानें प्रारंभ करा दीं। हम लोगों ने डरते-डरते ट्रांसमीटर चालू किया। आश्चर्य! उसने तत्काल पूरी शक्ति प्राप्त कर ली। सप्रे ने ऐंटेना शुरू की, और वह बिना किसी रूकावट के घूमते हुए क्षितिज को कवर करने लगी। और तो और रेडियो सिग्नल भी बिना किसी रूकावट के साफ-साफ मिलने लगे। स्क्रीन पर प्रत्येक उड़ान के कोण सही-सही प्राप्त होने लगे।

विंग कमांडर कोई एक घंटे तक अलग-अलग दृष्टिकोणों से राडार की जाँच करता रहा। राडार लगातार और सही-सही

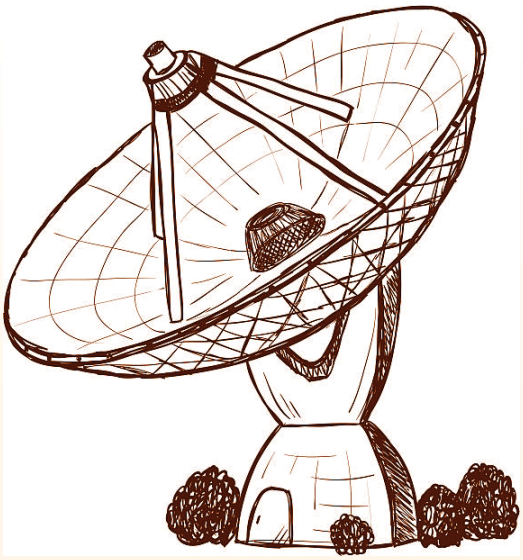

जैमिंग एक्सरसाइज राडार के लिए सबसे कठिन काम था। उसमें हमारे अपने विमान, शत्रुओं की तरह व्यवहार करने वाले थे और अपनी ओर से सिग्नल भेजकर राडार को जैम करने का प्रयत्न करने वाले थे। उसमें सभी इकाईयाँ अपनी पूरी क्षमता से काम करें तभी उड़ानों को पकड़ा जा सकता

चल रहा था। विंग कमांडर ने स्क्रीन पर से अपनी नज़रें उठाईं और हम लोगों की ओर देखकर कहा,

''आई डोंट बिलीव इट... ये तो विदेशी राडार से भी अच्छा काम कर रहा है। यंग मैन, आप सबको बधाई।'' विश्वनाथन हमारा ग्रुप लीडर था। वह फूला नहीं समा रहा था। राडार को अंबाला लाने की स्कीम का वह अपने आपको प्रवर्तक मानता था और मित्रा को अपना प्रमुख विरोधी। उसने मित्रा के पास जाकर धीरे से कहा,

''सी, आई टोल्ड यू? अगर मुहूर्त सही हो तो कोई काम गड़बड़ हो ही नहीं सकता।''

पहला सत्र पूरा ठीक-ठीक गुजर गया। हम सबने संतोष की साँस ली। हम सभी अपने-अपने यूनिट बंद कर ही रहे थे कि विश्वनाथन ने विंग कमांडर के पास जाकर कहा,

''सर राडार बढ़िया चल रहा है, आप चाहें तो कल ही जैमिंग एक्सरसाइज कर सकते हैं।''

जैमिंग एक्सरसाइज राडार के लिए सबसे कठिन काम था। उसमें हमारे अपने विमान, शत्रुओं की तरह व्यवहार करने वाले थे और अपनी ओर से सिग्नल भेजकर राडार को जैम करने का प्रयत्न करने वाले थे। उसमें सभी इकाईयाँ अपनी पूरी क्षमता से काम करें तभी उड़ानों को पकड़ा जा सकता था।

विश्वनाथन की बात सुनते ही हम लोगों की बेचैनी बढ़

गई। पर तब तक विंग कमांडर अपना मन बना चुका था,

''ठीक है, मैं कल अपनी टीम को लेकर आ जाऊँगा।''

उसने कहा और बेस स्टेशन की तरफ चला गया।

मित्रा बहुत अपसेट था। उसने कहा,

''सर जैमिंग एक्सरसाइज तो हफ्ते भर बाद होनी थी, आपने कल क्यों तय कर दी?''

विश्वनाथन ने मुस्कुराते हुए कहा,

''डोंट वरी एवरीथिंग विल बी ऑल राइट।''

दूसरे दिन एयर फोर्स की पूरी टीम उपस्थित थी। तय हुआ था कि अगर आज भी राडार ने ठीक काम किया, तो उसे आज ही स्वीकार कर लिया जायेगा।

ट्रायल समय पर शुरू हुई। ट्रांसमीटर सही-सही चालू हो गया। एंटेना ने सिग्नल भेजना और ग्रहण करना प्रारंभ कर दिया। स्क्रीन पर टारगेट चमकने लगे। विश्वनाथन एयरफोर्स की टीम के साथ खड़ा था और बीच-बीच में कहता जा रहा था,

''सी, हाऊ एक्यूरेट...''

''कितना बढ़िया रिसेप्शन है...''

''हर टारगेट साफ-साफ पकड़ में आ रहा है...''

तभी विंग कमांडर ने वॉकी टॉकी उठाई और बेस स्टेशन से कहा,

''स्टार्ट जैमिंग...''

बेस स्टेशन से उड़ानों तक आदेश प्रसारित होने में कुछ समय लगा फिर धीरे-धीरे करके टारगेट स्क्रीन से गायब होने लगे। विंग कमांडर ने प्रश्नवाचक निगाहों से विश्वनाथन की ओर देखा, विश्वनाथन अब भी आश्वस्त था। उसने कहा,

''अभी ठीक हो जायेगा सर।''

पर स्क्रीन पर धुंधलका-सा छा गया था। टारगेट कहीं नज़र नहीं आ रहे थे।

अब विश्वनाथन ने मित्रा से कहा,

''पावर बढ़ाओ और फ्रीक्वेंसी बदलने की कोशिश करो।''

मित्रा ने एक बार उसकी ओर देखा, फिर पावर बढ़ा दी। उसके बाद वह फ्रीक्वेंसी बदलने की कोशिश करने लगा।

अचानक एक ज़ोरदार खटाक् की आवाज के साथ ट्रांसमीटर बंद हो गया। विश्वनाथन कुछ कहता उसके पहले स्क्रीन पर कर्सर घूमना बंद हो गया। विश्वनाथन बाहर भागा। एंटेना रुकी पड़ी थी और सप्रे उस पर झुका कुछ करने की कोशिश कर रहा था। विश्वनाथन अंदर आये उसके पहले शेल्टर्स की बत्ती गुल हो गई, पूरा अंधेरा छा गया।

विंग कमांडर ने चिल्लाते हुए कहा,

''व्हाट द हैल, विश्वनाथन...''

पर सुनने के लिए विश्वनाथन वहाँ नहीं था। वह हर शेल्टर में जाकर आदेश देने की कोशिश कर रहा था, हालाँकि उसके आदेश से फिलहाल कुछ होना जाना नहीं था। मित्रा ने धीरे से कहा,

''सर, आप लोग बाहर आ जायें, लगता है कोई बड़ा ब्रेक डाउन हो गया है। अब राडार ठीक होने के बाद ही ट्रायल हो पायेगी।''

विंग कमांडर अपनी टीम के साथ रिसीवर शेल्टर से बाहर आया, और बिना किसी से मुखातिब हुए सीधे बेस स्टेशन की तरफ चला गया।

मित्रा चाहता था कि विश्वनाथन उसके साथ जाये और उसे तकनीकी कठिनाई समझाने की कोशिश करे। पर विश्वनाथन वहाँ नहीं था। मित्रा ने उसे ढूंढ़ने की कोशिश की। वह ट्रांसमीटर के पीछे लगभग छुपा हुआ खड़ा था और एकटक ऐंटेना की तरफ देख रहा था। उसका शरीर भले ही वहाँ हो, पर उसका दिमाग किसी और दुनिया में था।

मित्रा ने उसे देखकर कहा,

''सर..''

विश्वनाथन शायद सुन नहीं पाया। मित्रा ने फिर कहा,

''सर...''

इस बार उसने चौंक कर सिर घुमाया और मित्रा को देखकर कहा,

''ओह मित्रा तुम! लगता है मुहूर्त निकालने में मुझसे कुछ भूल हो गई।''

मित्रा ने एक बार पूरी ताक़त से घूर कर उसे देखा।

फिर मुड़ा और अपने शेल्टर में घुस गया। उसे मालूम था कि अगले दस-पंद्रह दिन उसे बहुत काम करना पड़ेगा।

❑❑❑

हिमीभूत

शुकदेव प्रसाद

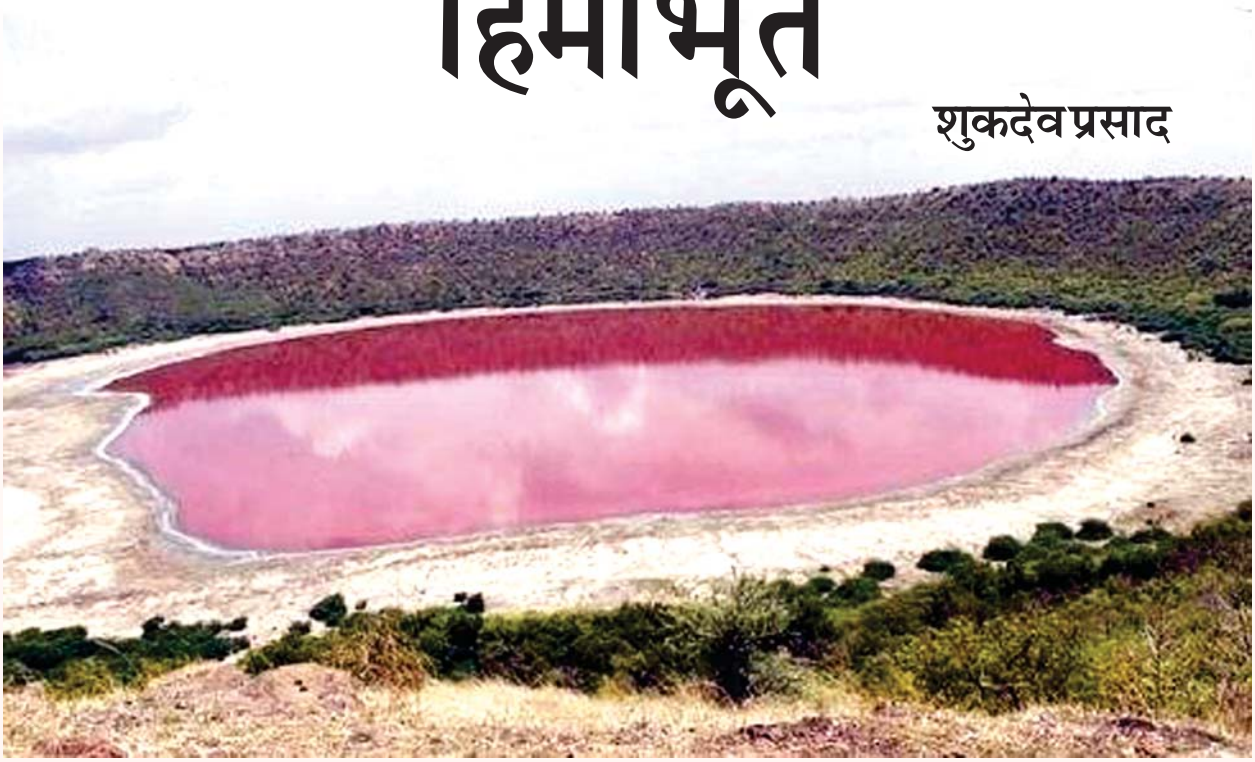

ऐसा नहीं है कि इधर, जब से मैं बाहर से लौटा हूँ तब से मेरी जान-पहचान और पास-पड़ौस वाले मेरे बारे में जो कुछ कहने लगे हैं, उससे मैं अनभिज्ञ हूँ। मेरे कानों में भी फुसफुसाहटें सुनायी पड़ जाती हैं कि मेरे जीवन में पहले वाली स्वाभाविकता नहीं रही। वह बेफिक्री, अलमस्ती गायब हो गयी है, जैसे कुछ खो गया हो... या कि आजकल मैं किसी अनूठी दुनिया में खोया रहने लगा हूँ। लोग मेरे घरेलू नौकर नंदू से भी पूछते रहते हैं कि तुम्हारे साहब के साथ ऐसा क्या हुआ जो वे बड़े चुप-चुप रहते हैं।

अपने स्वभाव में इस बदलाव से मैं भली-भांति परिचित हूँ। मैं भी महसूस करता हूँ कि मेरे जीवन की लय अब वैसी नहीं रही। लेकिन लोगों को क्या बताऊँ, समझ नहीं पाता और फिर बताने जैसी कोई बात भी नहीं है।

पिछले महीने की बात है। रोज की तरह दोपहर के भोजन के बाद थोड़ा-सा आराम किया और चार-साढ़े चार के करीब जब नींद टूटी तो सुस्ती दूर करने के लिए बाहर लॉन में बैठ गया। चाय पी ही रहा था कि हाथ में चिट्ठियों का पुलिंदा लिये नंदू आ गया और चिट्ठियां देखने लग गया। एक लिफाफे पर नज़र पड़ते ही हाथ रुक गये। कोने में प्रेषक की जगह अपने मित्र म्हात्रे का नाम देखकर ठहर गया। उत्सुकता से चिट्ठी खोली और पढ़ने लगा।

''मित्र, उम्मीद है, मजे में होंगे! एक ख़ास वजह से यह खत तुम्हें लिख रहा हूँ। बात यह है कि मेरा तबादला हो गया है। अब पहली तारीख को बिल्कुल तुम्हारे करीब आ रहा हूँ। तुम्हारे शहर से कोई पचास-साठ किलोमीटर दूर नये जिले का मुख्यालय बन रहा है, उसी का जिलाधीश मुझे बनाया जा रहा है। सो गाहे-बगाहे मुलाकातें होती रहेंगी। लेकिन असल बात यह है कि पिछले पाँच सालों से मैं तुम्हें यहाँ बुला रहा हूँ। तुम टालते जा रहे हो। अब चूंकि मेरा यहाँ से जाना तय है सो आने का कार्यक्रम बना लो और हफ्ते-दस दिन घूम फिर जाओ। साथ ही वापस हो लेंगे। यकीन मानों मित्र, इतिहास, पुरातत्व, संस्कृति की न जाने कैसी-कैसी चीजें यहां है, जो तुमने देखी नहीं होंगी। बस आ जाओं... और हाँ, आने की खबर तार से दे दो। मैं स्टेशन पर प्रतीक्षा करूँगा। बाकी खैरियत, तुम्हारा-म्हात्रे।''

चिट्ठी खत्म होते-होते मैं प्रोग्राम बना चुका था। छोटा-सा तार संदेश लिखा और नंदू को दौड़ा दिया कि जाओ तार कर आओ।

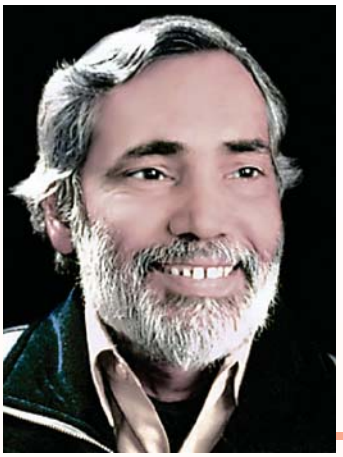

समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार हैं। आपका जन्म 24 अक्टूबर 1954 को बस्ती उत्तर प्रदेश में हुआ। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार से सम्मानित वे एक मात्र भारतीय विज्ञान लेखक हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है जिसमें आईसेक्ट द्वारा प्रकाशित विज्ञान कहानी कोश (छः खण्डों में) शामिल है।

गाड़ी भोर में कोई पाँच बजे पहुँची। छोटा-सा स्टेशन, इक्के-दुक्के यात्री। डिब्बे से उतर कर सामने देखा तो म्हात्रे बाहें फैलाये खड़ा था। बातों-बातों में स्टेशन से बाहर आ गये। सामान गाड़ी में म्हात्रे ने ही रखा और ''आओ बैठ जाओ'' कहकर खुद स्टेयरिंग पर जा बैठा। कुछ ही देर में म्हात्रे का आवास आ गया था।

''थोड़ा आराम कर लो, फिर और बातें होंगी!'' कहता हुआ म्हात्रे मुझे उस कमरे में ले गया जहाँ मुझे ठहराने का उसने इंतजाम किया था। यात्रा की थकान और पहाड़ी रास्ते के हिचकोलों से मैं वाकई बुरी तरह टूट चुका था और बिस्तर पर पड़ते ही सो गया।

जब उठा तो चाय की मेज पर म्हात्रे के अलावा एक वृद्ध महाशय भी मेरा इंतजार कर रहे थे। वे थे डॉ. अरुण धीमान, पुरातत्व और विज्ञान के कुशल अध्येता। जैसा कि म्हात्रे ने बताया- ''लो भाई, अब डॉ. साहब ही तुम्हारे गाइड होंगे...और यहाँ जो कुछ भी तुम्हारी दिलचस्पी की चीजें हैं, वे तुम्हें बताएंगे, दिखाएंगे'', और मुझे डॉ.धीमान के हवाले करके म्हात्रे दफ्तर चला गया।

उस पहाड़ की कंदराओं, गुफाओं में नाना मूर्ति-शिल्प अपनी सूनी, अविनाशी आँखों से संसार को न जाने कब से निहार रहे थे, जिन्हें देखकर मैं विस्मित हो उठा। आचार्य धीमान ने उनका इतिहास-भूगोल बताया और यह भी कि, पुरातत्व विभाग वालों की नज़र से ये शिल्प अछूते है, अन्यथा किसी संग्रहालय में होते या चोरों के हाथों किसी और दुनिया में, जा विराजमान होते, लेकिन यह कस्बा अब उपेक्षित हो चला है, न कोई विकास परियोजना है और न कोई आकर्षण का केन्द्र ही।

मेरे लिए एक अजीब-सा रहस्य उपस्थित कर दिया था धीमान ने। उनके घर भी मेरा जाना हुआ, जाने किस युग की मूर्तियाँ, ऐतिहासिक सामग्रियाँ उनके घर में मौजूद थीं। मेरे लिए एक अद्‌भुत आश्चर्य लोक सामने उपस्थित था।

किसी विश्वविद्यालय के अवकाश प्राप्त पुरातत्वतेत्ता आचार्य धीमान कब से इस कस्बे में हैं, कोई नहीं जानता। शायद वह पीढ़ी ही अब नहीं रही, जिसकी वह संतति थे। निपट अकेले वे रहते। कभी-कभार वे बाहर भी जाते। जब पुरातत्व की कोई समस्या उठ खड़ी होती तो देश की ही नहीं विदेशी संस्थाएं भी उनके परामर्श लेतीं।

इतने में एक दिन म्हात्रे ने बताया कि कल मुझे जाना है, तो मैं चौंक पड़ा। समय कैसे गुजर गया, मुझे इसका अहसास भी नहीं हुआ। मैंने म्हात्रे से कहा कि मुझे यहाँ आनंद आ रहा है। थोड़ा और ठहरूँगा। अतः तुम चलो, मैं कुछ दिनों बाद आ जाऊँगा... और म्हात्रे चला गया।

फिर मैं आचार्य धीमान के साथ ही रहने लगा। इसमें मुझे ही सुविधा थी। सुबह से शाम तक जंगल-जंगल हम घूमते। थर्मस की चाय पीते और दुनिया जहान की इतिहास, पुरात्व की बातें वे करते। इतने अरसे में मैं उनका आत्मीय हो चला था। उनकी आँखों में मेरे प्रति जो स्नेह इधर उपज आया था, वह मैंने भाप लिया था।

एक दिन शाम को धीमान मुझसे बोले-''कल सुबह जरा जल्दी निकलना है, तुम्हें एक अद्‌भुत चीज दिखाऊँगा, एक ऐसा प्रसंग बताऊँगा, जो तुम्हारे लिए अनमोल निधि होगी।''

अजीब-सी उत्सुकता, रहस्य-रोमांच की पुलक मन में थी कि मैं ठीक से सो भी नहीं पाया। बस भोर होने की प्रतीक्षा करता रहा। भोर में हम तैयार ही हो रहे थे कि डॉक्टर धीमान के आवास पर धड़धड़ाती हुई एक टैक्सी आकार रुकी। ड्राइवर ने आवाज दी - 'आचार्य जी, साहब ने गाड़ी भिजवायी है। जहाँ चलना हो, बंदा हाजिर है।' आचार्य जी के पास नये जिलाधीश ने गाड़ी भिजवायी थी। शायद म्हात्रे ने यहाँ से रवाना होने से पहले आचार्य धीमान की सेवा-टहल के लिए नव नियुक्त जिलाधीश को

``वास्तव में, यह जो कंटीली बाड़ तुम देख रहे हो, उसके उस पार हजारों कि.मी. की दूरी पर, उस समय एक बर्फ ढंकी पहाड़ी थी और यहाँ हरा-भरा जंगल था। कभी इसी जंगल के निकट सरकार ने एक परमाणु संयंत्र लगाने का निश्चय किया। तब परमाणु खतरों की बात को लेकर लोगों में इतनी चेतना नहीं थी, सो बिना किसी ना-नुकुर के परमाणु संयंत्र लग गया।''

सहेज दिया था।

आचार्य के मुख पर रहस्यमय मुस्कान उभरी, ''सफर लंबा है, झील तक चलना है।'' और हम गाड़ी में बैठ गये।

मैंने सहजता से पूछा-''क्या यहाँ झील भी है? आपने कभी जिक्र नहीं किया?''

कोई छह-सात घंटे के बाद हमारी गाड़ी जहाँ रुकी, वहाँ कंटीले तारों की बाड़ लगी थी और एक टिन की जंग खाई हुई तख्ती थी-''वर्जित क्षेत्र, आगे खतरा है।''

तो क्या यही हमारा गंतव्य स्थल है? मगर झील कहाँ है? मेरे मुँह से अनायास ही निकल गया-''आप किसी झील पर चलने के लिए कह रहे थे? हम रेगिस्तान में क्या करने आ गये? झील किधर है?''

''झील है नहीं, थी कभी।''

''क्या मतलब, मैं समझा नहीं।''

''आज से पचास साल पहले की बात है'', आचार्य ने किस्सागोई के अंदाज में बात शुरू की- 'उस समय कानकोर्डिया यूनिवर्सिटी में अभी-अभी पुरातत्व विभाग में मेरा एपाइंटमेंट हुआ था। जिस प्रोजेक्ट को मैंने हाथ में लिया था, उसमें मेरी सहायक थी- नैन्सी। प्राचीन विज्ञानों में उसकी गहरी दिलचस्पी थी। हमारी उसकी मैत्री इतनी बढ़ी की हम जीवन साथी बन गये। वहीं मैंने नैनसी से शादी कर ली...' बीच में मैंने टोक दिया- ''मगर इस झील से आपकी शादी का क्या वास्ता?''

''वास्ता है... और बहुत गहरा।'' आचार्य उत्तेजित हो उठे और क्षण भर को शांत हो गये। उनकी आँखें द्रवित हो उठी। अस्पष्ट स्वर में वे बोले- ''तुम्हें क्या मालूम मित्र कि इस झील ने मेरी नैनसी मुझसे छीन ली?''

''मगर आप और नैनसी, सॉरी मैडम नैनसी, तो कनाडा में थे।'' मैंने उन्हें फिर टोका।

''वही तो मैं बता रहा हूँ, तुम सुनो तो पूरी बात! मैं पूरी बात तुम्हें सिलसिले से बताता हूँ।'' आचार्य ने मुझे दिलासा दिया और कथा की कड़ी आगे बढ़ी- आचार्य ने मुझे दिलासा दिया और कथा की कड़ी आगे बढ़ी- ''हाँ तो हमारी शादी नैनसी से हो गयी और हमने छुट्टियाँ मनाने का निश्चय किया। उसने भारत कभी देखा नहीं था। सो उसकी दिली ख्वाहिश थी कि भारत-भ्रमण किया जए। मैंने फैकल्टी के डीन प्रोफेसर जैक्सन को जब अपनी छुट्टी की अर्जी दी तो उन्होंने खुशी-खुशी मुझे लंबी छुट्टी सैंशन कर दी और इस तरह हम भारत आ गये।''

''देश के विभिन्न स्थलों को दिखाने के बाद मैं नैनसी को अपना घर दिखाने ले आया। तभी वह हादसा हुआ था।''

''कौन सा हादसा?''

''वास्तव में, यह जो कंटीली बाड़ तुम देख रहे हो, उसके उस पार हजारों कि.मी. की दूरी पर, उस समय एक बर्फ ढंकी पहाड़ी थी और यहाँ हरा-भरा जंगल था। कभी इसी जंगल के निकट सरकार ने एक परमाणु संयंत्र लगाने का निश्चय किया। तब परमाणु खतरों की बात को लेकर लोगों में इतनी चेतना नहीं थी, सो बिना किसी ना-नुकुर के परमाणु संयंत्र लग गया।''

''जब हम यहाँ आये थे तो यहाँ संयंत्र लग चुका था और आस-पास के कस्बे परमाणु बिजली की बदौलत गुलजार हो चुके थे। लेकिन साल-डेढ़ साल बाद देखा गया कि बर्फ कुछ ज्यादा ही पिघलने लगी है और देखते ही देखते पहाड़ी के नीचे एक झील बन गयी। यह एक अद्‌भुत घटना थी!''

''झील बन गयी?''

''हाँ, झील बन गयी और पहाड़ी गायब हो गयी।'' इतना कहकर आचार्य कहीं अतीत में खो गये।

''फिर क्या हुआ?'' मैंने शृंखला टूटने नहीं दी।

''फिर तो लोगों लिए इसे पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित करने में कोई कसर न छोड़ी गयी। यहाँ रेस्त्रां, होटल, बस अड्डा सभी कुछ बन गया और लोगों को रोजी-रोटी का नया जरिया मिल गया। यह इलाका गुलज़ार हो उठा। जगह-जगह से लोग अपनी थकान मिटाने आते, तफरी करते, झील में तैराकी करते, मछलियाँ पकड़ते, मौज-मस्ती करते।''

''फिर तो बड़ा रमणीक स्थान रहा होगा? लेकिन सब कुछ नष्ट कैसे हो गया?'' मेरी जिज्ञासा बढ़ती रही थी।

''हुआ यह कि पर्यटन-स्थल पर चहल-पहल बढ़ने

आचार्य ने बात आगे बढ़ायी- ``इन्हीं आँखों से पानी में विचरण करते डिप्लोडोकस और स्टिगोसार मैंने देखे।'' बच्चों की-सी प्रसन्नता में वे पुलकित हो उठे- ``उनमें सबसे आकर्षक था- ब्रैक्योसार, जो पानी से ऊपर बीस फुट ऊँची अपनी गर्दन उठाये घूमता रहता। झील से घास-पात मुँह में भर लेता और इधर-उधर चक्कर काटता चुभलाता रहता।'' ``एक बात और बताऊँ तुम्हें, जब ये पानी में पहली बार दिखाई पड़े तो अजीब सी सुस्ती इनमें थी, धीरे-धीरे वे चुस्त चौकन्ने होते गये। लेकिन मारे दहशत के लोग भागने लगे। होटल, रेस्त्रां खाली होने लगे। बसें कम होती गयीं और मित्र, एक दिन सभी कुछ खत्म हो गया!''

लगी।'' लेकिन इसी बीच कुछेक ऐसी घटनाएँ होने लगीं कि लोग सावधान होने लगे। देखा यह गया कि होटलों में ठहरने वाले लोग बीमार पड़ने और झील में पानी पीने वाले ढोर-डंगर भी प्रभावित होने लगे। वास्तव में जो परमाणु संयंत्र लगा था, उससे निकलने वाले विकिरण का यह करिश्मा था। विकिरणशीलता का जहर पानी में घुल गया था। रेडियोधर्मी विकिरणों के कारण ही तो पहाड़ी पिघली थी और यहाँ झील बन गयी थी। धीरे-धीरे विकिरणों का शिकार यहाँ की आबोहवा भी हो गयी। विकिरण इतना बढ़ा कि जलचर भी प्रभावित हो गये।

थोड़ा रुककर आचार्य ने बताया- ''नैनसी ने परीक्षण करके ज्ञात किया कि झील की मछलियाँ विषाक्त हो चुकी हैं। विकिरण विषाक्तता (रेडियेशन पॉइजनिंग) के कारण होटलों में मछलियाँ खाने वाले बीमार पड़ने लगे, यह भावी खतरे की घंटी थी।''

''किस भावी खतरे की?''

''उसी खतरे की, जिसने सभी कुछ लील लिया, यहाँ तक कि मेरी नैनसी को भी!''

''मैडम नैनसी, क्या झील में डूब गयी थीं?''

''नहीं, बल्कि झील के पानी का परीक्षण करते-करते वह ल्यूकेमिया की शिकार हो गयी। लेकिन यह सब बाद में हुआ, उस महाविनाश के बाद!''

''कौन से महाविनाश के बाद?'' देखिए, मुझे रहस्यों के जाल में उलझाइये मत, साफ-साफ बताइये?

''इन खतरों से लोग अभी बहुत सतर्क नहीं हुए थे, तभी वह घटना घटी। एक दिन झील के पानी में कुछ अजीब-से जीव देखे गये। पानी पर तैरते हुए अजीब जीव, जो अभी तक किसी ने देखे नहीं थे। देखे मैंने भी नहीं थे। सिर्फ विज्ञान के इतिहासों में पढ़े थे, देखे मैंने भी नहीं थे। सिर्फ विज्ञान के इतिहासों में पढ़े थे, देख तो अब रहा था, जब वे अपनी दस फुट लंबी गर्दन पानी से निकालते, तो लोगों की चीख निकल पड़ती, वे घास-फूस खाते और पानी में डुबकी लगा जाते...''

बीच में रुक कर आचार्य ने पूछा- ''जानते हो, वे कौन से जीव थे?''

''क्या डायनासॉर?''

''बिल्कुल ठीक''

''लेकिन डायनासॉर तो कब के समाप्त हो चले? करोड़ों साल पहले जल, थल और नभ पर राज करने वाले ये प्राणी अब अतीत गाथा बन चुके हैं।'' मैंने अपनी मंशा जाहिर की।

''हां यह ठीक है लेकिन ज्ञानचक्षुओं के परे भी बहुत कुछ घटित होता है, जिस पर विज्ञान टिप्पणी नहीं कर सकता है।''

''सो तो है।'' मैं विस्मित-विमुग्ध उनकी ओर निहारता रहा गया।

''वास्तव में, अतिशय ठंड के कारण यह जीव हिमीभूत हो गये थे और विकिरणशीलता की गर्मी से बर्फ पिघली और गर्मी के बढ़ते जाने से इन हिमीभूत प्राणियों में जीवन का संचार हुआ।''

''क्या आपने डायनासॉर देखे थे?''

''अद्‌भुत दृश्य! अपनी इन्हीं आँखों से वे लुभावने दृश्य देखे थे, जो अब बूढ़ी हो चली हैं। तुम सौभाग्यशाली हो मित्र, क्योंकि तुम्हें यह किस्सा बताने वाला मैं जिन्दा हूँ, अब उस हादसे का कोई प्रत्यक्षदर्शी यहाँ नहीं है।''

आचार्य ने बात आगे बढ़ायी- ''इन्हीं आँखों से पानी में विचरण करते डिप्लोडोकस और स्टिगोसार मैंने देखे।'' बच्चों की-सी प्रसन्नता में वे पुलकित हो उठे- ''उनमें सबसे आकर्षक था- ब्रैक्योसार, जो पानी से ऊपर बीस फुट ऊँची अपनी गर्दन उठाये घूमता रहता। झील से घास-पात मुँह में भर लेता और इधर-उधर चक्कर काटता चुभलाता रहता।''

''एक बात और बताऊँ तुम्हें, जब ये पानी में पहली बार दिखाई पड़े तो अजीब सी सुस्ती इनमें थी, धीरे-धीरे वे चुस्त चौकन्ने होते गये। लेकिन मारे दहशत के लोग भागने लगे।

''विस्फोट तरंगों की गरमी की आग ने हजारों किलोमीटर की सघन वृक्षावली को लील लिया, पशु-पक्षी तड़प-तड़प कर मरने लगे। देखते ही देखते यह इलाका मरघट में बदल गया। उस गर्मी से वे प्राणी भी सदा के लिए चिर निद्रा में लीन हो गये। परमाणु विकिरणों ने ही उसकी नींद में खलल डालकर उनका कायाकल्प किया था। उनमें जीवन संचारित किया था और विकिरणों के विष ने उन्हें फिर से मौत की नींद सुला दिया। झील सूख-साख कर ऊबड़-खाबड़ धरती में तब्दील हो गयी और यहाँ हजारों किलोमीटर के इर्द-गिर्द सरकार ने बाड़ लगाकर सदा के इसे निषिद्ध क्षेत्र घोषित कर दिया।''

होटल, रेस्त्रां खाली होने लगे। बसें कम होती गयीं और मित्र, एक दिन सभी कुछ खत्म हो गया!''

''क्यों, ऐसा भी क्या हुआ?''

''हुआ यह कि विकिरण का जहर यहाँ की आबोहवा में घुल रहा था और पानी में भी, जिससे कि सारे जलचर प्रभावित हो रहे थे। वे अद्‌भुत प्राणी भी उनके ग्रास बनने लगे। लेकिन असली कारण यह नहीं था।''

''फिर क्या था?'' मैं बेचैन हो उठा।

''एक दिन रात में परमाणु संयंत्र में किसी तकनीकी गड़बड़ी के कारण विस्फोट हो गया। धमाका हमने भी सुना और यहाँ से मीलों दूर उठती आग की लपटें हमने देखीं। सब कुछ जलकर खाक हो गया। परमाणु बिजली घर की इमारत देखते ही देखते उड़ गयी। उसकी ईंटें मीलों दूर जाकर गिरीं। काले-लाल धुएँ का आसमान तक उठता बादल हमने अपने जीवन में पहली बार देखा था...।'' आचार्य की सांस जैसे रुकने लगी हो, मैंने साफ महसूस किया और उन्हें थोड़ी-सी चाय उड़ेलकर दी। जब वे सामान्य हुए तो कथा क्रम को आगे बढ़ाने के लिए मैंने ही पहल की- हाँ, अब बताइए, आगे क्या हुआ?

''मत पूछो, क्या हुआ। किसी तरह हम जान बचाकर तुरत-फुरत भागे। चंद सौभाग्यशलियों में हम भी थे, जो उस महाविनाश का प्रत्यक्ष दर्शन करके भाग चले और बच गये।''

''विस्फोट तरंगों की गरमी की आग ने हजारों किलोमीटर की सघन वृक्षावली को लील लिया, पशु-पक्षी तड़प-तड़प कर मरने लगे। देखते ही देखते यह इलाका मरघट में बदल गया। उस गर्मी से वे प्राणी भी सदा के लिए चिर निद्रा में लीन हो गये। परमाणु विकिरणों ने ही उसकी नींद में खलल डालकर उनका कायाकल्प किया था। उनमें जीवन संचारित किया था और विकिरणों के विष ने उन्हें फिर से मौत की नींद सुला दिया। झील सूख-साख कर ऊबड़-खाबड़ धरती में तब्दील हो गयी और यहाँ हजारों किलोमीटर के इर्द-गिर्द सरकार ने बाड़ लगाकर सदा के लिए इसे निषिद्ध क्षेत्र घोषित कर दिया।''

''और मैडम नैनसी के साथ क्या हुआ?'' बुझे मन से मैंने सवाल किया।

''मैं पहले ही तुम्हें बता चुका हूँ कि पानी में घुले जहर ने उसके शरीर को छलनी कर दिया था। उसे सेनेटोरियम में भी भर्ती करवाया था कनाडा में। लेकिन तब तक काफी देर हो चुकी थी। मेरी नैनसी मुझसे विमुख हो गयी थी... सदा के लिए...'' आचार्य गहरे विषाद में डूब गये थे निःशब्द।

मैं स्तब्ध रह गया इस भयानक, रोमांचकारी, लोमहर्षक प्रकरण को सुनकर। आचार्य ने ही मौन तोड़ा- ''फिर मैंने विश्वविद्यालय की नौकरी से इस्तीफा दे दिया और सदा के लिए यहाँ चला आया...।''

''यह गाथा मेरा अतीत बन चुकी है, लेकिन ऐसा अतीत जो मेरे वर्तमान के साथ साये की तरह चिपकी रहती है।''

भारी मन से हम कस्बे में लौटे, अब वहाँ रुकने की मेरी जरा भी इच्छा नहीं थी। मैडम नैनसी की करुण कथा मेरे मन पर बोझ-सी थी। करोड़ों साल पूर्व के धरती के स्वामियों के पुनरुद्‌भाव की रोमांचकारी दास्तान भी अब मेरे लिए बेमानी हो चुकी थी। सो, अगले ही दिन मैंने अपना सामान बांधा और आचार्य धीमान से अश्रुपूरित नेत्रों से विदा ली।

जब से लौटा हूँ, अजीब-सी अनुभूति में जी रहा हूँ। अपने जान-पहचान वाले लोगों या अपने मित्र म्हात्रे को क्या बताऊँ कि मेरे साथ क्या हुआ और मैं इतना गुमसुम क्यों हूँ?

नहीं जानता, यह अद्‌भुत आख्यान मेरी जिंदगी का अतीत बनकर कब मेरा पीछा छोड़ेगा और कब मैं अपनी उसी भावधारा में लौट पाऊँगा जो मरे मित्रों, शुभैषियों के लिए सुपरिचित मेरी जीवन शैली थी।

❑❑❑

तुम मशीन न बन जाना

डॉ. प्रदीप कुमार मुखर्जी

डॉ. सक्सेना बोले ,`राजन , यह कहो कि इंसानों से भी बढ़कर भावना दिखा रहा था। इंसान तो अब बहुत ही स्वार्थी हो चला है। मृत्यु शैय्या पर पड़े अपने पिता से वह जायदाद के कागज़ातों पर हस्ताक्षर कराना चाहता है। सचमुच इंसान की भावना बिलकुल मर गई है। वह धीरे-धीरे मशीन बनता जा रहा है। बंदरों को हमारा पूर्वज माना जाता है। हम बंदर से इंसान तो बन गए मगर इंसान न रहकर अब मशीन बनते जा रहे है।

डॉ. विकास सक्सेना ऑपरेशन थिएटर से निकलकर अपने केबिन में लौटे तो राजन को उन्होंने वहां इंतज़ार में बैठे पाया। उसे देखकर डॉ. सक्सेना का चेहरा खिल उठा। बोले, 'कैसे हो राजन ?'

जवाब में राजन बोला, 'ठीक हूं , सर। एक सरकारी अस्पताल में आजकल मेरी ड्यूटी है।'

'तो तुम अस्पताल में लग गए? जहां तक मुझे याद है तुमने फिजियोथेरेपी का कोर्स किया था।'

'हां, सर अपने सही कहा। एक फ़िज़ियोथेरेपिस्ट के रूप में में ही अस्पताल में काम कर रहा हूं। यह बताइए कि आज आपने कौनसा ऑपरेशन किया ?'

जवाब में डॉ. सक्सेना बोले, 'सुनकर चौंक जाओगे राजन। मैंने आज एक बंदर के बच्चे का ऑपरेशन किया।'

सुनकर आश्चर्य सागर में लीन हो गया राजन। डॉ. सक्सेना और जानवरों का ऑपरेशन? वह तो जानवरों के डॉक्टर नहीं, मन ही मन राजन ने सोचा।

उसे सोच में पड़े देखकर डॉ. सक्सेना बोले, 'किस सोच में पड़ गए राजन ?'

प्रत्युत्तर में राजन बोला, 'यही कि सर आप तो जानवरों के डॉक्टर नहीं। फिर यह बंदर के बच्चे का ऑपरेशन ?'

कुछ देर शांत और गंभीर रहे डॉ. सक्सेना। फिर बोले, 'राजन, इसके पीछे एक घटना का हाथ है। उसके बाद मैंने निश्चय किया कि पशुचिकित्सा विज्ञान में डिग्री लेकर अब जानवरों और पशुओं की ही सेवा करूंगा।'

सुनकर राजन को गहरा आश्चर्य हुआ। बोला, 'वह कौनसी घटना थी सर जिसने आपका हृदय परिवर्तन कर दिया?'

जवाब में डॉ. सक्सेना बोले, 'सुनो राजन। कई साल पहले मैं अपनी गाड़ी से मनाली घूमने निकला था। साथ में आशु, बॉबी और तुम्हारी भाभी भी थीं। अचानक मेरी गाड़ी के सामने एक बंदर आ गया। गाड़ी की गति बहुत तेज़ थी, इसलिए ब्रेक लगते-लगते देर हो गई। गाड़ी से टकरा कर वह बंदर बुरी तरह से घायल हो गया। मैं गाड़ी रोककर नीचे उतर आया। दवा और फर्स्ट-एड का बक्सा तो

सन 1951 के पहले माह की पहली तारीख को जन्में डॉ.पी.के. मुखर्जी ने भौतिकी में स्नात्कोत्तर और पीएस.डी. की डिग्रियाँ हासिल कीं। एल.एल.बी. और एल.एल.एम. (स्वर्ण पदक) दिल्ली विश्वविद्यालय से। देशबंधु कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में वे एसोसिएट प्रोफेसर रहे। तकरीबन चार दशकों से वे विज्ञान लेखन बाल विज्ञान लेखन और विज्ञान संचार के क्षेत्र में सक्रिय रहे हैं। उन्होंने पंद्रह सौ से अधिक लेख, आवरण कथाएँ तथा फीचर लिखे। विज्ञान रेडियो सीरियल के लिए स्क्रिप्ट लेखन आपने किया है। बाल विज्ञान कोश, रोमेश की बिल्ली, पुच्छल तारे का आश्चर्य लोक, तिल-तिल घिसती पेंसिल, रोबोट की निराली दुनिया, विज्ञान हमारे आस-पास, अंकों का जादू, टेक्नॉलॉजी, लेसर लाइट आदि आपकी चर्चित पुस्तकें हैं।

मेरे पास था। मैंने उस बंदर की मरहम-पट्टी की। लेकिन उसे बचा न सका। अपनी नाकामी पर सिर पीटते और बंदर की मौत का अफसोस मनाते हुए मैंने गाड़ी को थोड़ा आगे ले जाकर खड़ा कर दिया। इस बीच आशु , बॉबी और तुम्हारी भाभी भी गाड़ी से नीचे उतर आए थे। उनके भी चेहरों पर गम का साया था। अचानक हमारी बेटी बॉबी ने हमारा ध्यान एक दृश्य की ओर आकर्षित किया। उसे देखकर तो हमारा जी दहल गया ..., कहकर डॉ. सक्सेना रुक गए।

उन्होनें एक लंबी सांस ली और बोतल से एक घूंट पानी पिया। राजन उन्हें बड़े ध्यान से देख रहा था। डॉ. सक्सेना की हालत देखकर उसने पूछ ही लिया, ष्आखिर वह कौनसा दृश्य था सर जिसे देखकर आप सबका जी दहल गया ?

डॉ. सक्सेना कुछ देर चुप रहे। फिर बोले, राजन , हमने देखा कि कहीं से एक बंदर का बच्चा उस मरे बंदर के पास आया और उसे हिला-ढुला कर देखने लगा। फिर उसने उस बंदर के सिर को सहलाया। देखते-देखते वह बंदर उस मृत बंदर, जो असल में एक बंदरिया थी , से लिपट गया और लगा ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने। उसे पता चल गया था कि वह बंदरिया, जो उसकी मां थी, अब मर गई है।

कहकर कुछ देर रुके डॉ. सक्सेना। राजन के चेहरे पर अजब से भाव थे। वह भाव विह्वल होकर बोला, 'सर , वह बंदर का बच्चा तो बिलकुल इंसानों जैसी भावना दिखा रहा था।'

जवाब में डॉ. सक्सेना बोले, 'राजन, यह कहो कि इंसानों से भी बढ़कर भावना दिखा रहा था। इंसान तो अब बहुत ही स्वार्थी हो चला है। मृत्यु शैय्या पर पड़े अपने पिता से वह जायदाद के कागज़ातों पर हस्ताक्षर कराना चाहता है। सचमुच इंसान की भावना बिलकुल मर गई है। वह धीरे-धीरे मशीन बनता जा रहा है। बंदरों को हमारा पूर्वज माना जाता है। हम बंदर से इंसान तो बन गए मगर इंसान न रहकर अब मशीन बनते जा रहे है। हमारी भावनाएं लुप्त होती जा रही हैं।'

सुनकर राजन गंभीर हो गया। बोला, 'सर, आपने सही कहा। आदमी इंसान से इंसान बना और अब मशीन बनता जा रहा है। सचमुच , उसमें भावनाएं लुप्त होती जा रही हैं।'

जवाब में डॉ. सक्सेना बोले, 'बंदर के बच्चे की कहानी अभी ख़त्म नहीं हुई। जहां पर मेरी गाड़ी से टकराकर वह बदरिया मरी थी उसके पास ही एक गांव था। देखते-देखते गांव वाले वहां आ पहुंचे। वे उस बंदरिया के शव को उठाकर ले गए। हम देखते क्या हैं कि वह बंदरिया का बच्चा भी पीछे-पीछे जाने लगा। गांववालों ने उस बंदरिया का अंतिम संस्कार किया तो वह बंदरिया का बच्चा दूर से आग में स्वाह होते अपनी मां के मृतदेह को देख रहा था। यह दृश्य देखकर तो सबकी आंखें भर आईं।'

कहकर डॉ. सक्सेना रुके। राजन की आंखों में उन्होंने नमी देखी। वह भावविह्वल होकर कहने लगा, 'सर, मुझे तो रोना आ गया। विडंबना यह है कि हमारे पूर्वज बंदरों में अब भी भावना बची है, लेकिन मशीनी होते जा रहे हम लोग अब भावना से दूर होते जा रहे हैं। हमारी मानसिकता क्रूर और ह्रदय पत्थर जैसा कठोर होता जा रहा है।'

सुनकर डॉ. सक्सेना बोले, 'तुमने बिलकुल ठीक कहा, राजन। इसी घटना के बाद मैंने कसम खाई कि मैं भी जानवरों का ही इलाज करूंगा। मैंने वेटरिनरी साइंस यानी पशुचिकित्सा विज्ञान की डिग्री ली और तब से फिर जानवरों की ही सेवा कर रहा हूं।'

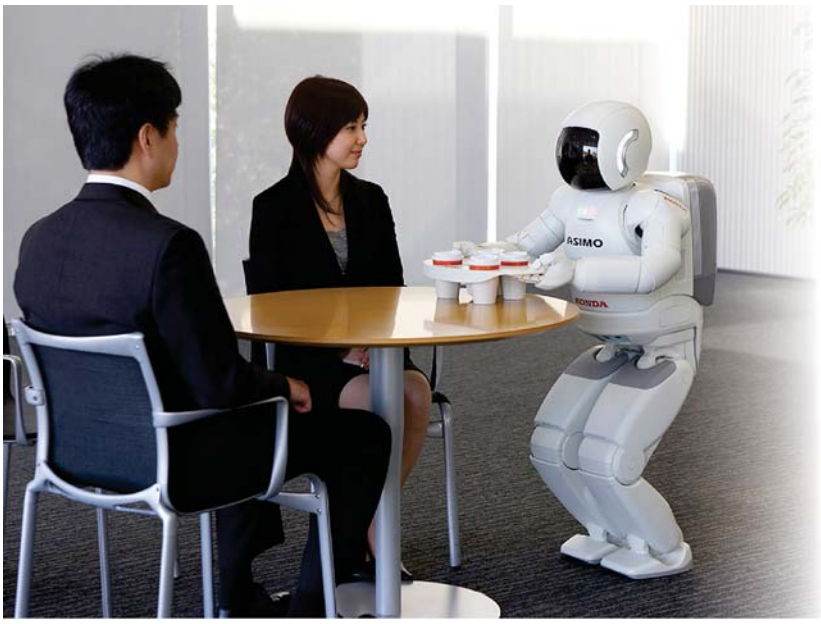

कृत्रिम बुद्धि यानी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस पर आजकल खूब अनुसंधान चल रहा है। कम्प्यूटरविद एवं रोबोटिकी विशेषज्ञ इंसानों से मिलती-जुलती बुद्धि एवं तार्किक शक्ति वाले रोबोटों की विकास की दिशा में सक्रियतापूर्वक कार्य कर रहे हैं।

प्रत्युत्तर में राजन बोले, 'सर, आपने बिलकुल सही निर्णय लिया। कोमल भावनाओं वाले जीव-जंतुओं की सेवा में जो बात है वह मशीन बन चुके कठोर इंसान की सेवा में कहां! अपने तो मेरी आंखें खोल दीं सर। आप तो हमेशा से ही मेरे प्रेरणा स्रोत रहे हैं। जब भी आपके पास आता हूं कुछ न कुछ नई सीख लेकर जाता हूं मैंने कहीं पढ़ा था सर कि आजकल वैज्ञानिक ऐसे रोबोट बनाने की कोशिश कर रहे हैं जिनमें भावनाएं हों। क्या इस काम में उन्हें सफलता मिलेगी, सर ?'

जवाब में डॉ. सक्सेना बोले, 'राजन , कृत्रिम बुद्धि यानी अर्टिफिशियल इंटेलिजेंस पर आजकल खूब अनुसंधान चल रहा है। कम्प्यूटरविद एवं रोबोटिकी विशेषज्ञ इंसानों से मिलती-जुलती बुद्धि एवं तार्किक शक्ति वाले रोबोटों की विकास की दिशा में सक्रियतापूर्वक कार्य कर रहे हैं।'

राजन ने पूछा, 'सर, इस दिशा में अनुसंधान की शुरुआत कब हुई थी ?'

डॉ. सक्सेना बोले, 'राजन, सबसे पहले लंदन में जन्मे एलन मैथियन ट्यूरिंग ने ही ऐसी सोचने वाली मशीनों की परिकल्पना की थी , जिन्हें बाद में ट्यूरिंग मशीन नाम दिया गया। यह मशीन काफी हद तक इंसानों की तार्किक शक्ति की नक़ल कर अपने कार्य को अंजाम दे सकती थी। सन 1950 में एलन ट्यूरिंग का एक लेख 'कंप्यूटिंग मशीनरी एंड इंटेलिजेंस' शीर्षक से मशहूर ब्रिटिश पत्रिका 'माइंड' में प्रकाशित हुआ। इस लेख में ट्यूरिंग ने कृत्रिम बुद्धि संबंधी अवधारणा को प्रस्तुत किया था। आजकल कृत्रिम बुद्धि के क्षेत्र में जो भी कार्य हो रहा है उसके मूल में ट्यूरिंग का यह ऐतिहासिक लेख ही है।'

राजन ने पूछा, 'सर, क्या मशीनी मानव यानी रोबोट में मानवीय संवेदनाओं का समावेश करने के प्रयास चल रहे हैं ?'

डॉ. सक्सेना बोले, 'हां राजन रोबोटों में मानवीय संवेदनाओं को भरने के प्रयास चल रहे हैं। विडंबना देखो कि जहां जीव-जंतुओं में भावनाएं हैं वहीं मानव भावनाशून्य होता जा रहा है। इसलिए ही शायद रोबोटों में कृत्रिम रूप से भावनाओं का समावेश करने के प्रयास चल रहे हैं। मानव भावनाओं को लुप्त होने से बचाने के लिए उन्हें मशीनों में भंडारित किया जा रहा है ताकि उन्हें देखकर मानव को याद तो आए कि उनमें भी कभी भावनाएं थीं। हमारे मूल्यों में हमारी भावनाएं ही तो सर्वोपरि हैं , राजन। भावनाएं खोने का मतलब है कि हम अपने मूल्यों से ही हाथ धोते जा रहे हैं। यह मानव जाति के आगे आज सबसे बड़ी चुनौती है।'

डॉ. सक्सेना की बातों को सुनकर अभिभूत हो उठे राजन ने कहा , 'आपके शिष्य होने का मुझे हमेशा से गर्व रहा है। मगर आज मैंने आपके एक बिलकुल नए रूप को पहचाना है। आप मुझे आशीर्वाद दीजिए सर कि आपके पदचिन्हों पर चल सकूं।'

डॉ. सक्सेना ने राजन के सिर पर हाथ रखा और फिर कहा , 'राजन , मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ है। मैं यही चाहता हूं कि तुम भूलकर भी मशीन न बन जाना। हो सके तो इंसान बनकर ही जीना।'

❑❑❑

कुंभ के मेले में मंगलवासी

डॉ.अरविंद मिश्र

इक्कीसवीं सदी के एक अंतरिक्ष सैलानी की डायरी से...

वह इक्कीसवीं सदी का आखिरी कुंभ था। सारे सौर मंडल में कुंभ के इस मेले की बड़ी चर्चा थी। आज भी धरती का सबसे बड़ा मेला था यह और इस बार भी मीडिया की नजरें लगी हुई थीं। अंतरिक्ष सैलानियों में भी इस बार कुंभ मेले में सैर सपाटे की ललक जगा दी गई थी। अभी मंगल की मानवी सभ्यता के बसे समय ही कितना हुआ था पर हां मंगलज-मनुजों की एक वह पीढ़ी भी जो वहीं जन्मी और पली बढ़ी थी, पृथ्वी के आकर्षण पाश में बंधी रहती थी। आखिर पृथ्वी उनकी सभ्यता की जननी जो थी। उनकी इसी संवेदना का दोहन भारत की एक नामी गिरामी पर्यटन कंपनी 'प्लैनेटर्थ' कर रही थी और इस बार तो अवसर था इस सदी के इलाहाबाद के आखिरी महाकुंभ का। भला ऐसा सुनहरा अवसर यह कंपनी अपने हाथों से कैसे जाने देती। हम कुछ सैलानियों को तो उसने फांस ही लिया था। मैं तो सब कुछ जान समझ रहा था, पर मुझे भी भारत भ्रमण की कुछ ऐसी धुन सवार थी कि 500 रेडियम (मंगल पर पाए गए शुद्ध रेडियम के समतुल्य मान की करेंसी) के इस टूर पैकेज को देने के लिए भी मैंने हामी भर ली थी।

यह पर्यटन पैकेज भी कुछ अजीब ही था। प्लैनेटर्थ कंपनी ने छोटे-छोटे अंतरिक्ष यानों को किराए पर लिया था, जिसमें मंगल से पृथ्वी तक और फिर वापसी की यात्रा अकेले ही करनी थी। एक वर्ष की लंबी यात्रा। न कोई संगी न साथी। फिर एक वर्ष लंबा वापसी का समय 2096 में धरती पर पहुँचना, फिर 2098 में वापसी पर मंगल पर भी तो समय काटे नहीं कटता। सारा काम और तामझाम तो यहां मशीनों के जिम्मे ही है। सब कुछ आटोमैटिक, इंसान करे भी तो क्या? ऊपर से इतनी समृद्धि। अपार संसाधन, लेकिन लोगों की मुट्ठी भर जनसंख्या, मात्र 20 हजार लोग। खाओ, पीओ और मौज करो। फुरसत ही फुरसत। फिर दो वर्ष का समय गंवाने की फिक्र क्यों हो? ज्यादातर लोग चंद्रभ्रमण या फिर बृहस्पति-चंद्रों के हाई-फाई टेक्नो-वर्ल्ड की सैर पर जाते थे। धरती के आध्यात्म जगत की ओर अभी इस नई सभ्यता का रुझान कुछ कमतर था। मैं यानी, सुयश मंगलम, जी हां, यहां सभी का 'सरनेम' एक ही है, यानी 'मंगलम'। मंगलम यानी मंगल का मानव। या फिर शुभ और स्वास्तिक का प्रतीक। मैंने संस्कृत व हिंदी का थोड़ा अध्ययन, बल्कि स्वाध्याय कहिए, यहीं बैठे ठाले अपनी ई-लाइब्रेरी से ही किया था। मुझे संस्कृत के साथ ही धरती की प्राचीन कई अन्य भाषाओं फारसी, अरबी आदि की भी काम चलाऊ जानकारी थी। यह जानकारी मेरे अपने

शोध कार्य 'पृथ्वी की अनेक संस्कृतियां' के अध्ययन में बड़े काम आई थीं।

मुझे धरती की ट्रिप पर अकेले ही जाना था। मुझे कुंभ मेला क्षेत्र के पूर्वी छोर के पास साइंस सिटी की परिधि से लगे 'स्पेस फ्लाइट जोन' में सीधे लैंड करना था। फिर वहीं से मेला क्षेत्र में प्रवेश पाना था और मुझे वहां पूरे एक माह तक रुकना था जिसे वहां

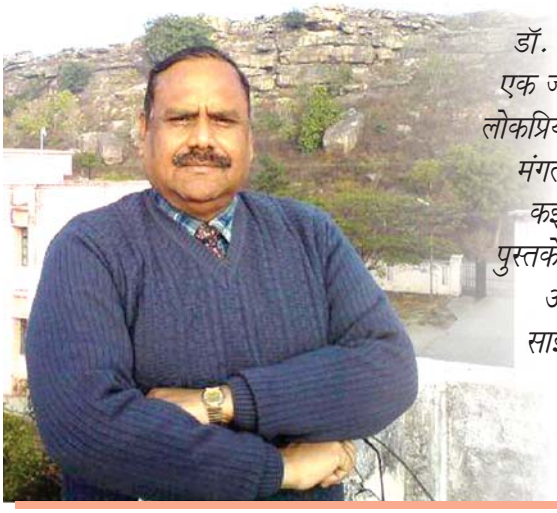

डॉ. अरविन्द मिश्र भारत में विज्ञान कथा (साइंस फिक्शन) लेखन से जुड़ा एक जाना माना नाम। इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्राणी शास्त्र में डी फिल, लोकप्रिय विज्ञान लेखक एवं कथाकार। 'एक और क्रौच वध', 'कुंभ के मेले में मंगलवासी' और 'राहुल की मंगल यात्रा' विज्ञान कथा संकलन के साथ ही कई लोकप्रिय विज्ञान विषयक और बच्चों के लिए विज्ञान गल्प पर लिखीं पुस्तकें प्रकाशित। आपकी कहानियां विश्व की कई भाषाओं में अनूदित और अनुशंसित हैं। साइंस ब्लॉगर्स असोसिएशन के मानद अध्यक्ष। इन्डियन साइंस फिक्शन राईटर्स एसोसिएशन के संस्थापक सचिव। चेंगडू, चीन में अन्तरराष्ट्रीय विज्ञान कथा सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया।

'कल्पवास' कहा जाता है। 'संगम' क्षेत्र के समीप ही मेरा बेस कैंप था, एक सुंदर सी कॉटेज में मेरे ठहरने की व्यवस्था थी। यह सब मुझे दिए गए पर्यटन साहित्य में विस्तार से वर्णित था। मेरे कॉटेज का एक नयनाभिराम 'व्यू' भी पैकेज लिटरेचर में छपा था। मैं इस यात्रा को लेकर उत्साहित और रोमांचित था।

मेरी यात्रा 1 जनवरी 2096 को आरंभ हो रही थी। कुंभ के पहले स्नान के एक-दो दिन पहले ही मुझे वहां पहुंचना जो था। आखिर यात्रा का दिन आ ही गया। मुझे एक वर्ष की 'मादक तंद्रा' जैसी स्थिति में रखने के लिए ततैयों (वैस्प) की विष ग्रंथियों से निकले रसायनों के संश्लेषित प्रतिरूप वाली संज्ञाहारी औषधि दी गई जिससे मैं समाधि सी एक ऐसी अवस्था में पहुंच गया, जो जीवन और मृत्यु के कहीं मध्य की स्थिति थी। मुझे जीवित होने की एक मादक अनुभूति भर थी। हृदय बस धड़क रहा था पर सारे अंग बिलकुल निश्चेष्ट थे। मेरी स्थिति एक मुर्दे सी थी, पर मैं जीवित था। इसका भान मुझे था। यह रसायन मुझे इंजेक्शन के जरिए केवल इसलिए दिया गया था ताकि एक वर्षीय यात्रा की बोरियत और थकान मुझे न हो और मैं यात्रा के पश्चात् जब इस समाधि से मुक्त होऊं तो अपने को तरोताजा समझूं। इस संज्ञाहारी, चमत्कारी रसायन के मूल जैवीय रूप का आयात, अभी भी धरती से ही यहां होता है, अभी भी वहां ततैयों की एक प्रजाति मिलती है, जिसे भारत के अधिकांश क्षेत्रों में 'बिलनी' के नाम से जाना जाता है, जो पुराने ढंग से घरों में आज भी कोनो-अतरे में मिट्टी के घरौंदे बनाकर उसमें पहले अंडे देती है, फिर किसी बड़े कीट को इसी संज्ञाहारी रसायन के डंक से संज्ञा-शून्य कर खुद के बनाए घरौंदे में ही रखकर घरौंदे का मुंह बंद कर अपनी अंतिम सांस लेती है। इस संज्ञाहारी रसायन के चलते ही संज्ञा शून्य कीट, जीवित होने के कारण लंबे समय तक सड़ता गलता नहीं और 'बिलनी' के अंडों से निकले नवजात भृंगों का सहज उपलब्ध 'प्रथम ग्रास' बन जाता है पर अब भारत में भी इन बिलनियों को घरौंदे बनाने के लिए खोजने पर भी 'घर' नहीं मिल रहे। अब के घर नई तकनीकी के साफ सुथरे घर जो हैं। गांवों तक में भी हाईटेक मकान हैं अब (यह सारी जानकारी मुझे 'भारतीय ज्ञान कोश' की एक ई-पुस्तक से प्राप्त हुई है।) विकास के पहिए किस तरह धरती पर जैव विविधता को तहस नहस करते आए हैं यह एक लंबी कहानी है।

यहां यात्रा के शुरू होने की बस याद भर थी। मुझे एक वर्ष तो ऐसे बीता जैसे अभी कल ही यात्रा शुरू की हो मैंने। दिसंबर की किसी ठंड भरी रात में मैं धरती पर आ उतरा था, यात्रा में कोई असुविधा नहीं हुई थी। यात्रा की शुरुआत जैसी तरोताजगी मैं महसूस कर रहा था। मुझे तारीख ठीक से याद नहीं, पर धरती पर वह दिसंबर 2096 की एक रात थी। अंतरिक्ष यान या उसे 'स्पेस कैप्सूल' कहना ज्यादा उपयुक्त था, से बाहर खुली हवा में आने पर मुझे अच्छा लगा। यहां मंगल जैसा कृत्रिम बंद वातावरण नहीं था। अभी भी खुले वातावरण में लोग भलीभांति सांस ले रहे थे। कोई खतरा नहीं था, प्रदूषण तो था पर 'लीथल लिमिट' तक नहीं जा पहुंचा था किंतु मेरे लिए पीने के पानी और खाद्य वस्तुओं के स्वतंत्र उपभोग पर मनाही थी। यह सारी सामग्री मंगल ग्रह से आपूर्त हो रही थी, जिसका एक स्थायी भंडार 'प्लैनेटर्थ' ने हमारे बेस कैंप में रख छोड़ा था।

धरती पर अवतरण के पहले ही दिन या यूं कहिए पहली रात ही मुझे बेस कैंप में पहुंचा दिया था जिसमें पूरे चौबीस घंटे मुझे रोग निरोधन के लिए कैद रहना था। फिर कुछ टीकों और दवा दारू के सेवन के पश्चात ही मेला क्षेत्र में स्वतंत्र घूमने की इजाजत मुझे थी। लेकिन यह चौबीस घंटे का कैद तो मुझे बेहद अखर गया। पूरे एक वर्ष की अंतरिक्ष यात्रा कब बीत गयी मुझे अहसास तक नहीं हुआ था पर चौबीस घंटे का आरंभिक कुंभ

प्रवास तो सचमुच अखरने वाला था। आखिर यह उबाऊ अवधि भी गुजर ही गई।

आज मुझे कुंभ मेला में घूमने का अवसर मिला। 'प्लैनेटर्थ' ने एक गाइड की व्यवस्था की थी। वैसे मुझे गाइड की कोई ज्यादा जरूरत तो नहीं थी, पर पर्यटन स्थलों पर गाइड की सेवाएं जरूर ली जानी चाहिए यह मेरी सोच है। इससे एक तो हर जिज्ञासा का कोई तुरत-फुरत उत्तर मिल ही जाता है और दूसरे पर्यटन व्यवसाय में गाइड एक अहम किरदार जो है।

मेला क्षेत्र, अपार नरमुंडों के उमड़ते सैलाब, इंद्रधनुषी रंगों का नयनाभिराम दृश्य सब कुछ बेहद रोमांचक था। मेरे लिए बिलकुल एक नया अनुभव। कहां मंगल की रंगहीन और जनहीन दुनिया कहां मानवों का यह रंग रंगीला महाकुंभ। चारों ओर से आ रही तरह-तरह की ध्वनि, जो शोर सी नहीं लगती थी, बल्कि मुझे तो कर्णप्रिय ही लग रही थी। कितने स्पीकरों से गूंजती लयात्मक धुनें, आध्यात्म प्रवचन। एक अद्भुत समां, अद्भुत नजारा। 500 रेडियम का सार्थक उपभोग था। मेरा गाइड मुझे बताता चल रहा था। 'यह देखिए किसी का पता और पहचान का यह प्राचीन तरीका आज भी प्रचलन में है, मानीराम पंडा खांची वाला झंडा, जगदीश्वर का झंडा ढोलक लगा डंडा।' क्या अनाप शनाप बोले जा रहे हो? वहां कुछ ऐसा भी था जो मेरी समझ के परे था। 'देखिए, वह उस कैंप के ऊपर एक बड़ी बास्केट लटक रही है न, उसे यहां लोकल भाषा में खांची कहते हैं, यह पहचान चिह्न है, पारंपरिक पर्यटन एजेंट, यानी पंडा मनीराम के वंशजों का, ऐसे पर्यटन एजेंट अपने यात्रियों को इसी पहचान चिह्न से अवगत कराकर सही स्थान पर पहुंचने का निर्देश देते हैं। ऐसे एक नहीं हजारों चिह्न आपको यहां आसमान में झूलते दिखेंगे, जिन्हें काफी दूर से ही देख कर यात्री अपने गंतव्य तक पहुंच जाते हैं, आपके कैंप के ऊपर भी तो एक स्पेश शटल वाला झंडा लगा है।'

'ताकि लोग मेरे कैंप से दूर रहें, मेरे मुंह से निकल पड़ा।'

'हो, हो, हो,' गाइड भी सहसा हंस पड़ा।

'मगर यह पंडा शब्द का मतलब।'

'शाब्दिक अर्थ तो मुझे नहीं मालूम पर ये हैं एक तरह से पर्यटन एजेंट ही। प्लैनेटर्थ की ही तरह पारंपरिक, प्राचीन रूप के संवाहक। या फिर इन्हें

धर्म के क्रिया कर्म का एजेंट कह लीजिए आप, जो यहां आने वाले कल्पवासियों, मेला यात्रियों की सुविधाओं का इंतजाम करते हैं और एवज में कुछ शुल्क लेते हैं, रेडियम में नहीं, रुपयों में।' मेरा गाइड कुछ न कुछ बोले जा रहा था, आंखों देखा हाल सुनाने की तर्ज पर। यही उसका काम भी था।

हम लोग चहलकदमी करते-करते आगे निकल आए थे। 'और यह रहा संगम क्षेत्र। कहते हैं पहले यहां सरस्वती, गंगा और यमुना का संगम हुआ करता था। कालांतर में सरस्वती लुप्त हो गई तो यह गंगा, यमुना और अदृश्य सरस्वती का संगम कहलाया। फिर गंगा लुप्त हो गई।' मैंने गाइड को रोका। 'मुझे मालूम है, टिहरी क्षेत्र में भयंकर भूकंप आने से गंगा का मार्ग अवरुद्ध हो गया था। फिर तो उन्हें लुप्त होना ही था, जैसे कभी सरस्वती भी भूकंप के चलते अपने उद्गम से भटक गई थी।' मैंने अपनी जानकारी की भी धाक जमानी चाही। 'हां, वर्षों तक तो गंगा सूखी बनी रही, लेकिन सरस्वती के उद्गम स्थल को रिमोट सेंसिंग से ढूंढ़कर केंद्रीय नदी महाजल परियोजना के तहत भारत सरकार ने गंगा की सूनी कोख को ही फिर से हरी भरी कर दिया है, आज दरअसल जो गंगा आप देख रहे हैं वह सरस्वती प्रसूता है। गंगा का अस्तित्व नहीं रहा।' मेरे गाइड ने अपने ज्ञान का प्रदर्शन किया।

'प्रदूषित गंगा का अस्त्वि नहीं रहा यह कहो। कितनी गंदी हो चली थी। गंगा, वर्ष 2025 के कुंभ से ही तो वे कीचड़ भरे नाले में तब्दील हो गई थी। कई कुंभ तो ऐसे ही बीते, फिर टिहरी का वह प्रलयंकारी भूकंप, गंगा लुप्त ही हो गई, जैसे एक बार पहले भी शंकर की जटाओं में गुम हो गयी थीं।'

'ओह, तो आपको इंडियन माइथोलाजी की भी अच्छी जानकारी है।'

'हां, भई, मैंने इंडियन माइथोलाजी पर

अध्ययन किया है।'

'लेकिन अब तो फिर से प्रगट हो गई है गंगा। भले ही सरस्वती सुता के रूप में ही सही, गंगा आज भी साक्षात है। आज भी संगम का वजूद है। पहले से भी निर्मल और स्वच्छ जल का प्रवाह है अब क्योंकि अब अवतरित इस गंगा के किनारे कहीं कोई उद्योग नहीं, कहीं से कोई प्रदूषित उत्प्रवाह गंगा में नहीं गिरता। आज फिर से गंगा सही अर्थों में पवित्र हो उठी है, आप भी अब यहां डुबकी लगा सकते हैं सर। प्लीज टेक ए होली डिप।'

'ओह नो, थैंक्यू मिस्टर गाइड, आप जानते हैं, मंगलवासी इस तरह स्नान नहीं करते। यहां इतना पानी कहां है जो डुबकी लगाया जा सके। धन्य है यह धरा। जहां गंगा की प्रवाहमयी धारा है, लोग डुबकियां ले रहे हैं पर मुझे स्नान की आदत नहीं है।'

आज अपनी डायरी की इन लाइनों को फिर से देखते हुए मुझे इक्कीसवीं सदी के उस आखिरी कुंभ की याद हो आई है और इस विवरण को मैं अपनी इंटरनेट की धरती साइट को समर्पित कर रहा हूं पर अतीत में, हां यह संदेश अतीत में प्रेषित है।

❑❑❑

सूत्र

प्रमोद भार्गव

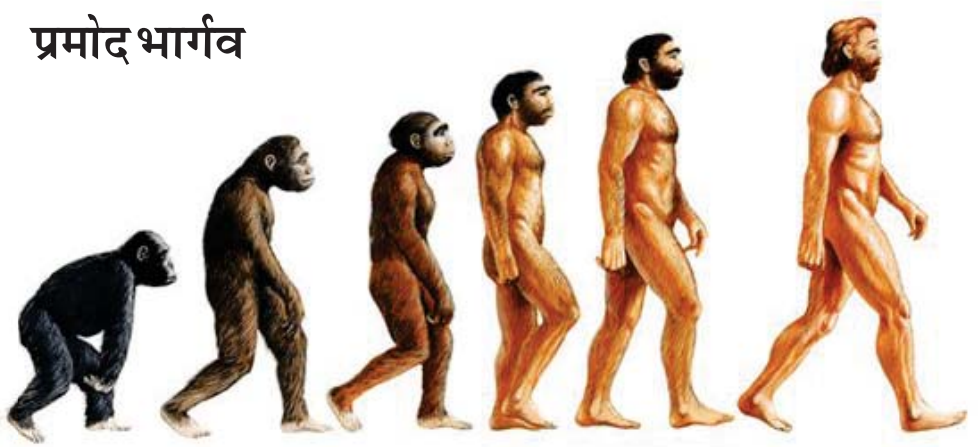

स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में सेवारत प्राध्यापक एवं वैज्ञानिक डॉ. वेंटर भारतीय वैज्ञानिक एवं प्राध्यापक डॉ. मंजुल का भाषण सुनने के बाद से चकित हैं। डॉ. मंजुल उन्हीं के साथ आनुवंशकीय अभियांत्रिकी यानी जेनेटिक इंजीनियर विषय से जुड़े हैं। आज विश्व-प्रसिद्ध जीव-विज्ञानी चार्ल्स डॉर्विन की जयंती के अवसर पर मंजुल ने 'जैव विकास और मानव जाति' विषय पर आयोजित परिचर्चा में हैरानी में डालने वाला भाषण दिया था। सृष्टिवाद के क्रम में उन्होंने अपनी हिंदू सनातन धर्म से जुड़ी ज्ञानधारा को जैविक विकास के क्रम में प्रस्तुत किया था। एकाग्रचित्त से किया उनका प्रस्तुतिकरण वेंटर को तर्क सम्मत लग रहा था, अतएव उनकी बौद्धिक तंत्रिकाएं झनझना कर कुछ नया व अनूठा आविष्कार कर उठने के लिए बेचौन होने लगी थीं। हालांकि मंजुल उनके मित्र थे और विवि में रोजाना ही उनकी मुलाकात होती रहती थी। वेंटर जैव-भौतिकी के वैज्ञानिक-प्राध्यापक थे। परस्पर मिलते-जुलते विषयों से संबद्ध होने के कारण उनकी बातचीत अकसर सार्थक परिचर्चा में बदल जाया करती थी। इस दौरान मंजुल बात को सत्यापित करने की दृष्टि से अपने धर्म-ग्रंथों से लिए चित्र-विचित्र उदाहरण दिया करते थे। हालांकि वे उन्हीं तथ्यों को चर्चा में लाते थे, जिनकी वैज्ञानिकता आधुनिक विज्ञान संबंधी अनुसंधानों से जोड़कर सिद्ध की जा सके। उनमें धार्मिक जड़ता जैसी कोई चीज कतई नजर नहीं आती थी। मंजुल ने डार्विन के जैविक विकासवाद के क्रम में दशावतारों की भौतिकवादी व्याख्या की थी। वेंटर को इस कथा में सबसे ज्यादा 'नर-सिंह अवतार' ने चौंकाया और प्रभावित किया, तभी से उनकी इंद्रियां एक ऐसे अद्भुत आविश्कार के बारे में परिकल्पना करने लग गईं थीं, जो इंसानी और मषीनी नस्ल का मिला-जुला रूप हो। गोया, जब वे सुबह सोकर उठे तो विवि के आवासीय परिसर में टहलते हुए मंजुल के द्वार पर दस्तक दे दी। मंजुल हैरान नहीं हुए, क्योंकि वे एक-दूसरे के घर वक्त वे-वक्त आया-जाया करते थे। लिहाजा औपचारिक हुए बिना वेंटर ने सोफे पर बैठते हुए प्रश्न किया, ''क्या नरसिंह जैसा कोई ऐसा स्वरूप वाकई संभव है, जो आधा मनुष्य और आधा जानवर हो ?''

-''सर, प्रकृति बड़ी विचित्र और मनुष्य की जिज्ञासा अनंत है। इसलिए इसमें कुछ भी होना असंभव नहीं है। वायुयानों से लेकर संचार क्षेत्र के आविष्कारों के सूत्र अंततः प्रकृति के तत्वों से ही उपजे हैं। ध्वनि, वायु, तंरग और ऊर्जा प्रकृति के ऐसे अद्भुत तत्व हैं, जो अदृश्य रूप में रहते हुए दृश्य में प्राण डालने का काम करते हैं।''

-''राइट ! मैं आपके कथन से सहमत हूं। फिर भी हम उन अदृष्य शक्तियों को और ज्यादा यथार्थ रूप में कैसे समझ सकते हैं, जिन्हें आम लोग अतीन्द्रीय शक्तियां समझते हुए भ्रमित रहते हैं ?''

-''यस सर ! आसान बात है, खासतौर से प्रकृति के रहस्यों के जिज्ञासु विज्ञानियों के लिए। हम प्रकृति की अंदरूनी दुनिया के जिन अवयवों को आविष्कार का हिस्सा बनाते हैं, उनका केवल आभास कर पाते हैं। जैसे गंध, ध्वनि, तरंग और गैस, किंतु इन्हें प्रत्यक्ष देख नहीं पाते हैं। यह भी इसलिए संभव हो पाता है, क्योंकि प्रकृति ने इन्हें अनुभव करने के लिए हमें संवेदन शक्ति दी है।''

-''प्रोफेसर मंजुल बिल्कुल ठीक कहा आपने। जैसे कि हम गैसों का कहां देख पाते हैं ? जबकि पूरे रसायनशास्त्र की नींव ही

प्रमोद भार्गव की लेखक व पत्रकार के साथ विज्ञान संचारक के रूप में भी देशभर में पहचान है। उन्होंने ग्रंथों में उल्लेखित मिथकों को धर्म और अध्यात्म के साथ विज्ञान-सम्मत अभिव्यक्ति भी दी। उपन्यास 'दशावतार' इन्हीं संदर्भों पर आधारित है। इस उपन्यास को व्यापक चर्चा के साथ वैज्ञानिक मान्यता भी मिल रही है। उन्होंने 'पुरातन और विज्ञान' शीर्षक से साप्ताहिक स्तंभ लिखा, जो खूब चर्चित हुआ। प्यास भर पानी, नौकरी, दशावतार, अनंग अवतार में चार्वाक (उपन्यास) शहीद बालक (बाल उपन्यास) पहचाने हुए अजनबी, शपथ-पत्र, लौटते हुए और मुक्त होती औरत (कहानी संग्रह) आम आदमी और आर्थिक विकास, (आर्थिक मामले) भाषा और भाषाई शिक्षा के बुनियादी सवाल (भाषा और शिक्षा), मीडिया का बदलता स्वरूप (पत्रकारिता) वन्य-प्रणियों की दुनिया (वन्य प्राणी एवं पर्यावरण) 1857 का लोक-संग्राम और रानी लक्ष्मीबाई (इतिहास), पानी में प्रदूषण, पर्यावरण में प्रदूषण, सहरिया आदिवासीः जीवन और संस्कृति (समाजशास्त्र) पुरातन विज्ञान (मिथकों के विज्ञान-सम्मत रहस्य) आदि पुस्तकें प्रकाशित। वन्य-जीवन पर दस लघु-पुस्तिकाएं भी प्रकाशित।

गैसों पर आरुढ़ है। उनके चित्र भी हम कहां बना पाए हैं ? बस एक धुंए की लकीर भर खींच पाते हैं।''

-''राइट सर! इसी तरह तमाम सूक्ष्म जीव और तरंगों को भी हम कहां देख पाते हैं। जैसे संगीत की लय को हम देख नहीं पाते हैं, लेकिन लय को सुनने वाले कान हमारे पास हैं। वह आवाज भी हम कहां देख पाते हैं, जो लय को प्रतिध्वनित करती है। गंध-दुर्गंध को हम कहां देख पाते हैं, परंतु इन्हें सूंघ कर अनुभव करने की क्षमता हमारे नासिका छिद्रो में है। मानवीय संवेदना.., यानी ह्यूमन सेंसेविटी, इसे हम स्पर्ष से अनुभव करते हैं। इसी प्रकार कम्प्यूटर तकनीक जो आज सर्वव्यापी है, उसके सहफ्टवेयर की इटेलीजेंसी अर्थात बुद्धि और वेब फंक्शन की सजीव कल्पना का चित्रण हम कहां कर पाते हैं ?''

-''बहुत खूब !''

-''भौतिक विज्ञान के इन आभासी तत्वों की वास्तविकता को हम रेडियो, टीवी, वायरलेस, कम्प्युटर और इंटरनेट को अस्तित्व में लाकर ही समझ पाए हैं। ये सभी अस्तित्व उन अदृष्य तरंग, ध्वनि, स्पर्श और ऊर्जा पर आधारित हैं, जिन्हें हम देख जरूर नहीं पाते हैं, लेकिन हकीकत में यही तत्व किसी भी आविष्कार के जनक हैं।''

-''फिर ये आपके नर-सिंह, क्या कोई रूपक हैं, जिन्हें अलंकारिक भाषा और रोमांचक शिल्प में प्रस्तुत किया गया है ?''

-''यस सर ! ये रूपक ही हैं। आपको शायद ध्यान हो कि शरीर आनुवंशिकी और विकासवादी जीव वैज्ञानिक जेबीएस हल्डेन ने अपनी पुस्तक 'द कॉजेज ऑफ इव्यूलेश्न' में नरसिंह-अवतार को लेकर यह स्पष्ट किया है कि मनुष्य का विकास पशुओं से हुआ है। अंतर इतना है कि डार्विन ने हमारी उत्पत्ति बंदर से सिद्धांत स्थापित की है और हमारे ऋषि-वैज्ञानिकों ने दशावतारों के परिप्रेक्ष्य में कमोबेश यही अवधारणा सिंह में निरुपित की है।''

वेंटर को अनुभव हुआ कि उनकी सोच को आकार मिल रहा है।

इस समय मंजुल की पत्नी शशिप्रभा रसोई में थीं और बच्चे उच्च अध्ययन कक्ष में थे। ठीक इसी वक्त शशिप्रभा हाथों में चाय-नाश्ता की ट्रे लिए बैठक में आईं और बोलीं, ''नमस्ते भाईसाहब! कैसे हैं?'' आज सुबह-सुबह किस आविष्कार को अवतरित करने का प्लान चल रहा है ?''

-''आपके धर्म ग्रंथों के अवतारी नर-सिंह की परिकल्पना के बारे में दिमाग खफा रहे हैं।''

-''ओह..! भगवान नृसिंह..? तो क्या कोई आधी इंसानी और आधी मशीनी नस्ल का स्वरूप जमीन पर उतारने की जुगाड़ में हैं ?''

-''राइट!'' वेंटर को एकाएक अहसास हुआ कि उन्हें शशिप्रभा के उच्चारित 'आधी इंसानी और आधी मशीनी' नस्ल

वाक्य में प्रक्षेपित नए आविष्कार का सूत्र मिल गया है।

वेंटर अति उत्साहित थे। उन्होंने वक्त जाया किए बिना नर-सिंह जैसे कथित अतिमानव की परिकल्पना को साकार रूप देने के लिए पांच वैज्ञानिकों का समूह बना लिया। इसमें डॉ. मंजुल के साथ तीन अन्य वैज्ञानिक डॉ. वारविक, डॉ जार्ज और डॉ इलियट शामिल किए गए। अतिमानव परियोजना के अध्यक्ष स्वयं वेंटर रहे। वेंटर इस मानव को ठीक वैसी ही आष्चर्यजनक षक्तियों से जोड़ने को आतुर थे, जैसी शक्तियां नर-सिंह की विस्तृत कथा सुनाते वक्त मंजुल ने जताईं थीं। हालांकि इसके बाद उन्होंने संस्कृत से अंग्रेजी में अनुदित वह नर-सिंह पुराण भी पढ़ लिया था, जिसमें हिंदुओं के भगवान विश्णु चौथे अवतार के रूप में नर-सिंह का चित्रमयी वर्णन था। इस काम में खर्च और जोखिम बहुत थे, लेकिन इस हेतु वेंटर ने प्रौद्योगिकी कंपनियों से आर्थिक मदद जुटा ली थी। दरअसल, वेंटर ने परियोजना की जो शाब्दिक रूप-रेखा रची थी, उसमें नर-सिंह जैसे अतिमानव को एक महत्वाकांक्षी मानव के रूप में प्रस्तुत किया था, जो इंसानी दिमाग और यांत्रिकी का भावी विलक्षण नमूना था। जरूरत पड़ने पर इसे स्टार वार्स और ग्रहों पर जीवनदायी तत्वों की खोज के लिए भी उपयोग में लाया जा सकता है। अर्थात इसमें अंतरिक्ष में स्थापित ग्रहों से भी सामना करने की क्षमता विकसित करने की उम्मीद जताई गई थी। लेजर किरणों से लैस इस मानव में उदर से फूटने वाली किरणों का फव्वारा प्रक्षेपास्त्र को भी आसमान में ही नश्ट करने में सक्षम थी। साथ ही ब्रेनडेड लोगों के दिमाग को समझने में भी इसके उपयोग को संभव बताया जा रहा था। लेकिन फिलहाल तो आविष्कार की यह परिकल्पना गल्प ही थी।

मंजुल जरूर सोच रहे थे, यदि वे भारत में रहते हुए नर-सिंह जैसे मानव की विज्ञान-सम्मत अनुसंधान की बात वैज्ञानिकों से करते तो उनकी खिल्ली उड़ाई जाती, उन्हें अवैज्ञानिक ठहराते हुए चरम दक्षिणपंथी कहा जाता। यह कैसी विडंबना है कि भारत के ज्यादातर विवि संकीर्ण क्लेरिकल विशेषज्ञ पर जोर देते हैं, जो नए व मौलिक आविष्कारों के कतई अनुकूल नहीं होती ?

खैर, परियोजना को पंख लगना शुरू हो गए। पांचों वैज्ञानिकों की परिकल्पना निर्विवाद रूप से एक आकार में बदलने को उद्यत थी। चूंकि इसमें दो मनुश्य अवतारों को एक रूप में ढालना था, इसलिए पैरों से लेकर धड़ तक के हिस्से को मषीनी मानव और सिर को जैविक मानव मस्तिश्क के रूप में गढ़ना था।

कार्बनिक यौगिकों से हमने यांत्रिक मानव गढ़ने की पहल शुरू कर दी है। मानव का यह हिस्सा यांत्रिक जरूर होगा, लेकिन इसकी हरकतें व क्रियाएं मनुष्य के समान ही होंगी। यह लगभग वैसा ही होगा जैसे कारखाने में बने स्त्री-पुरुष के खिलौने बैटरी की मदद से सजीवों जैसे चलते-फिरते हैं। रिमोट और कम्प्यूटर की मदद से इसे सक्रिय और नियंत्रित किया जा सकेगा।

वारविक, जार्ज और इलियट ने मशीनी मानव को आकार देने की और वेंटर व मंजुल ने मानव मस्तिष्क को गढ़ने की जिम्मेबारी संभाली। इस विचित्र काल्पनिक मानव को कैसे एकरूपता में ढाला जाए, इस साधना के साध्य हेतु पांचों वैज्ञानिक नियमित बैठकें आयोजित कर चर्चा-परिचर्चा करते। कंप्युटरों की एक पूरी श्रृंखला की मदद ली जाती। गोया, रोजाना की तरह आज फिर ये सभी वैज्ञानिक एक टेबल पर थे।

-''डॉ वारविक आप बताएं आधा यांत्रिक मानव बनाने में प्रगति कहां तक पहुंची ? वेंटर बोले थे।

-''सर, कार्बनिक यौगिकों से हमने यांत्रिक मानव गढ़ने की पहल शुरू कर दी है। मानव का यह हिस्सा यांत्रिक जरूर होगा, लेकिन इसकी हरकतें व क्रियाएं मनुष्य के समान ही होंगी। यह लगभग वैसा ही होगा जैसे कारखाने में बने स्त्री-पुरुष के खिलौने बैटरी की मदद से सजीवों जैसे चलते-फिरते हैं। रिमोट और कम्प्यूटर की मदद से इसे सक्रिय और नियंत्रित किया जा सकेगा।''

-''बहुत सुदंर!'' थोड़ा रुककर वेंटर जॉर्ज की ओर मुखातिब हुए, ''इसके भीतरी अंगों में प्राण डालने के लिए आप क्या कर रहे हैं ?''

-''सर, इसके भीतर जो कृत्रिम, दिल और फेफड़ें स्थापित किए जाएंगे, उनमें वायु व तरंगों को प्रवाहित कर हृदय में धड़कन व फेफड़ों में गुब्बारे की तरह हवा भरने व निकालने के स्वचालित प्रबंध लगभग पूरे हो गए हैं। फेफड़ों में वायु व ध्वनि तरंगों को कुछ इस तरह से प्रवाहित किया जाएगा कि फेफड़ों से जुड़ी तंत्रिका-नलिकाएं ही पैरों व हाथों को गतिशील बनाए रखते हुए मनुष्य की तरह काम करने की क्षमताएं प्रदान करेंगी।''

-''बहुत अच्छा! मसलन यह मानव पैरों से चलने, दौड़ने व छलांग लगाने में सक्षम होगा और हाथों से भार उठा सकेगा ? निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि हमारी कल्पना वाकई आकार ग्रहण करेगी ?''

-''यस सर!''

-''डॉ इलियट आपके प्रयोग किस स्थिति में हैं ?'' वेंटर की निगाहें इलियट पर टिक गईं।

-''सर, इस मानव में जितने भी जोड़ हैं, उन्हें शरीर के भीतर ही एक हइड्रोलिक, कंप्रेशर प्रणाली से जोड़ा गया है। गोया, इसकी एड़ियों, घुटनों, कमर, भुजाओं और अंगुलियों में ऐसा असर पैदा होगा कि यह जमीन पर रखी छोटी वस्तु से लेकर भारी-भरकम सामान को भी आसानी से उठा लेगा।''

–''ब्यूटीफुल! इलियट, फेंटास्टिक !''

अब बारी सिर, यानी मस्तिष्क की थी, जो सबसे जटिल है और अब तक वैज्ञानिक इसके न्यूनतम भाग को ही समझ पाए हैं। वेंटर और मंजुल ने इस मानव के मस्तिष्क को एक अलग जैविक मनुष्य के मस्तिष्क को चिप एवं डिवाइस का सिर में प्रत्यारोपण कर इसे संचालित करने के प्रयोग लगभग पूरे कर लिए थे। इस हेतु वैज्ञानिक द्वय जल्दी ही कम्प्युटर पर इस प्रयोग को आजमाने को तैयार थे। साधारण मानवीय शक्तियों को विलक्षण मानव-यांत्रिक षक्तियों में बदलने की यह कल्पना बेहद रोमांचक थी, लेकिन यह सफल होकर कितने सामुदायिक हित साध पाती है, यह आविष्कार के पूर्ण रूप में अस्तित्व में आने से पहले कहना मुश्किल था।

गोया, वारविक, जॉर्ज एवं इलियट का दल जहां परियोजना के प्रारूप के पैर एवं धड़ को नवीनतम प्रौद्योगिकी के मार्फत इंसानी ताकतों को यंत्रों में जीवंत करने के उपक्रम में लगे थे, वहीं वेंटर और मंजुल जैविक इंसानी मस्तिष्क को स्टेम सेल एवं इलेक्ट्रोनिक संचार प्रणाली से अतिमानव के मस्तिष्क में जोड़ने को सक्रिय थे। इस कल्पना को फलदायी बनाने के लिए वेंटर ने सिर के कृत्रिम स्वरूप को स्पेस एक्स कैप्स्यूल में ढाला। फिर इसे संवेदना तंत्रिकाओं के जरिए इंसानी दिमाग से जोड़ने का काम किया। यह एक ऐसी कल्पना थी, जिसमें जीवित मनुष्य की सोच को तकनीकी प्रवाह से जिस मनुष्य के निर्माण की कल्पना की जा रही है, उसमें असाधारण क्षमताएं विकसित की जा सकें। अब इस दिमागी प्रयोग के लिए वेंटर को एक ऐसे व्यक्ति की जरूरत थी, जो अपने सिर में चिप व डिवाइस का प्रत्यारोपण कराकर, प्रयोग की अनुमति दे। लिहाजा वेंटर ने मंजुल से परामर्श करते हुए कहा, ''डॉक्टर हमें अपने प्रयोग के लिए एक जीवित सिर चाहिए ? उसमें चिप प्रत्यारोपित करके ही हम मनुष्य के मस्तिष्क में चल रही हरकतों व विचारों के परिणाम अपने आविष्कार में अनुभव कर पाएंगे ? इस लक्ष्य पूर्ति के लिए क्या किया जाए ?''

–''स्वस्थ पुरुष या स्त्री तो अपना शरीर देने से रहे?''

''आप ठीक कहते हैं, मंजुल! फिर प्रयोग को अंजाम देने के लिए क्या उपाय करें ?''

–''सर हम किसी कोमा में पड़े व्यक्ति के मस्तिष्क का इस हेतु इस्तेमाल कर सकते हैं।''

–''क्या कह रहे हो डॉक्टर अचेतन व्यक्ति पर प्रयोग, यह अमानवीय हैं.!'' वेंटर का स्वर थोड़ा ऊचा था।

–''सर, मैं मानता हूं.., यह अमानवीय है, लेकिन दवाओं के जो भी परीक्षण होते हैं, उनमें से ज्यादातर ऐसे मनुष्यों पर किए जाते हैं, जो प्रयोग से अनजान रहने के साथ गरीब आदिवासी होते हैं। इनमें से कई के प्रयोग के चलते तिल-तिल

प्राण भी निकल जाते हैं।''

–''आपकी बात सही है मंजुल! लेकिन मेरी नैतिकता बाधा बन रही है।''

–''सर, अभी-अभी मेरी स्मृति में अखबारों में पढ़ी व समाचार चैनलों में देखी एक घटना का स्फुरण हुआ है। यदि हम उसे अमल में लाते हैं तो नैतिकता से जुड़े सरोकार भी बने रहेंगे और यदि हमारा प्रयोजन परिणाममूलक सिद्ध होता है तो हम अपराधियों को भी पकड़वाने में सफल हो सकते हैं ?''

–''कैसे ?''

–''सर! करीब छह माह पहले इरा नाम की युवती से कुछ दरिंदों ने बलात्कार कर, उसे मरी समझ समुद्री तट पर फेंक दिया था। सुबह जब इस लड़की को लोगों ने देखा तो इसकी सांसे चल रही थीं। तभी से इस लड़की का उपचार अपने ही संस्थान के मेडिकल कॉलेज में चल रहा है, बावजूद लड़की को अभी तक होष नहीं आया है। उसके अभिभावक उसकी शरीरिक दुर्दशा और जीवन में नाउम्मीद देख राष्ट्रपति से इच्छा-मृत्यु की गुहार लगा चुके हैं। क्यों न इजाजत लेकर इस लड़की के सिर में चिप प्रत्यारोपित कर इसके दिमाग की मनस्थिति को जानने की कोषिष करें। यदि इसके स्नायु तंतुओं में विचार सक्रिय हैं तो संभव है, यह लड़की मुंह से बोलकर अपनी जो व्यथा नहीं सुना पा रही है, वह चिप के जरिए प्रवाहित की जाने वाली इलेक्ट्रोड तरंगों से कंप्युटर स्क्रीन पर स्वरों के रूप में सुनाई दे जाए?''

–''ओह! मंजुल कमाल का आइडिया सुझाया है। आप इंडियनों में आईक्यू तो अद्भुत है, लेकिन उसे स्वतंत्र रूप से क्रियान्वित करने का साहस नहीं जुटा पाते हो।'' मंजुल ने सोचा काश भारत में सोच को ऐसा ही समर्थन मिलता तो वे यहां क्यों होते?

खैर, पांचों वैज्ञानिकों की समन्वित सोच से परियोजना आकार लेने लग गई। प्रयोगशाला के कक्ष में वह फंतासी स्वरूप ले रही थी, जिसका उल्लेख चमत्कारी महामानवों के मिथक रूपों

में मिलता है। उनके सामने जैविक विकास का वह यथार्थ सामने था, जिसके मुताबिक एक करोड़ बीस लाख साल पहले जो मनुष्य बौने रूप में जन्मा था, वह आज एक लंबा सफर तय करके तीन से चार गुना वर्तमान मनुष्य के रूप में है। संभव है, मनुष्य की लंबाई और वजन भविष्य में और बढ़ते चले जाएं ? हालांकि मानव की यह प्रकृतिजन्य उन्नति थी और वेंटर मशीनी मानव में जैविक मनुष्य के प्राण डालकर उसे संजीवनी देने के उपक्रम में लगे थे।

अंधेरे के प्रगटीकरण में ही अतिमानव के प्रयोग की परिकल्पना ने न केवल सफलता का इतिहास रच दिया था, बल्कि उन अपराधियों का भी पर्दाफाष कर दिया था, जिन्होंने छह माह पहले इरा के साथ दुष्कर्म करने के बाद उसकी हत्या करने की असफल कोशिश की थी।

इस मनुष्य की मांसपेशियों में कभी न थकने वाली खूबियों के साथ हैरतअंगेज लचीलापन था। मनुष्य की देह के भीतर जितने भी प्रमुख अंगोपांग होते हैं, वे कल-पुर्जों से निर्मित किए गए थे। उसके मजबूत सिर को प्रयोगशाला में जीवित अंगों की स्तंभ कोशिका से क्लोन पद्धति से विकसित किया गया था। इसकी आंखों में चमगादड़ की तरह अंधेरे में देखने की क्षमता डाली गई थी। कानों का विकास तो कोशिकाओं से किया था, लेकिन इन्हें पराध्वनियों, अर्थात अल्ट्रासाउंड की तरह सुनने योग्य बनाने के लिए चिपें डाली गईं थीं। इसमें बोलने की क्षमता रेडियो-प्रणाली को स्थापित करके की गई थी। इसी तरह सूंघने की क्षमता के लिए इंद्रियां विकसित की गई थीं। इसके मस्तिष्क में वास्तविक बुद्धि डालने का काम मनुष्य की कोशिका से नियोकॉर्टेक्स जैसे सूक्ष्म किंतु महत्वपूर्ण अंग को विकसित करके किया गया था। नियोकॉर्टेक्स ही मनुष्य के मस्तिष्क का वह हिस्सा है, जिसमें इंसान के इंसान होने की कुंजी छिपी है। दरअसल इसमें उत्सर्जित होने वाले द्रव्यों में सीखने, याद रखने और भूलने की क्षमता होती है।

सबकुल मिलाकर अब वह समय निकट था, जब ब्रेनडेड अर्थात मूर्च्छित अवस्था में जीवनदायी उपकरणों से जीवित इरा के मस्तिष्क का उपयोग होना था। इसमें ध्वनि तरंगों व ऊर्जा के रूप में छोड़ी जाने वाली लेजर किरणों के मार्फत इंसानी दिमाग वाले मशीनी मानव में प्राण डालकर उसे सक्रिय किया जाना था। हॉल में उपस्थित पांचों वैज्ञानिक और नीम-बेहोशी में पड़ी इरा के स्वास्थ्य की देखभाल कर रहे चिकित्सा दल के लोग दिल साधे हुए उस प्रयोग के साक्षी बनने जा रहे थे, जो अब से पहले तक महज एक परिकल्पना थी। वेंटर और मंजुल इरा की गर्दन के ऊपर दांयें कान के नीचे एक सिलिकॉन चिप को मामूली शल्य-क्रिया करके प्रत्यारोपित कर चुके थे। संकेत मिलने के बाद चिप से निकलने वाली रेडियो तरंगें एंटिना के जरिए प्रयोगषाला में मौजूद कम्प्युटर श्रृंखला से गुजरती हुईं, उस अतिमानव के दिमाग में प्रस्फुटित होंगी जो कम्प्युटर में फीड प्रोग्रामिंग के अनुसार निर्देशों का पालन करेगा। इसके साथ ही इरा के मस्तिश्क में यदि कोई विचार या वेदना उमड़-घुमड़ रहे हैं तो उन्हें संवाद के रूप में अतिमानव बोलने लग जाएगा। यह स्थिति टैलीपैथी विचार को वैज्ञानिक आधार देने जैसी है।

बहरहाल वेंटर ने बड़े इत्मीनान से माउस पर क्लिक की। इस कमांड के साथ ही दिमागी तंत्रिकाओं के जंजाल की तरह कम्प्यूटर स्क्रीन पर एक-दूसरे को काटती बहुरंगी रेखाएं प्रगट व विलोपित होने लगीं। अतिमानव का शरीर भी हरकत में आ गया। उसके गालों पर रक्तिम तनाव उत्पन्न हुआ और आंखें चमकने लगीं। कुछ क्षणों के बाद अतिमानव के होंठ फड़फड़ाए। गोल-गोल घूमे। जैसे उच्चारण को विवश हो रहे हों। एकाएक स्त्रीजन्य धातुई ध्वनि हॉल में गूंजी, ''बचाओ'' ! हॉल में मौजूद लोग स्तब्ध रह गए। सबकी निगाहें कंप्यूटर की स्क्रीनों से हटकर अतिमानव के मुख पर जा टिकीं। फिर इरा की रोने, चीखने और छटपटाने की मार्मिक पीड़ा गूंजने लगी। अतिमानव की मुट्ठियां भिंच गईं और चेहरे पर आक्रोश खिंच आया। आंखें गुस्से से लाल हो गईं। पैर कुछ इस तरह से तत्पर हुए, जैसे डग भरने की तैयारी में हों। परंतु तभी वेंटर ने मंजुल को इशारा किया और तत्क्षण कम्प्यूटर के जरिए अतिमानव के इंसानी दिमाग में उठी प्रतिशोध की भावना और शारीरिक प्रतिक्रियाओं को नियंत्रित कर लिया गया।

तभी उसके बोल फिर फूटे, ''ये दुष्ट मुझसे मिड मोर होम बिल्डिंग के फ्लैट क्रमांक 18 बटे 39 राइट टाउन में दुराचार कर रहे हैं। बचाओ..., जल्दी करो। ये मुझे जिंदा नहीं छोड़ेंगे, मार डालेंगे। बचाओ.., बचाओ,,!' इस चीख-पुकार के साथ सब-कुछ शांत हो गया। लड़की की सोच कुंद होने के साथ ही अतिमानव निष्क्रिय होने लग गया था और कम्प्युटर स्क्रीनों पर अंधेरा छाने लगा था। किंतु इस अंधेरे के प्रगटीकरण में ही अतिमानव के प्रयोग की परिकल्पना ने न केवल सफलता का इतिहास रच दिया था, बल्कि उन अपराधियों का भी पर्दाफाश कर दिया था, जिन्होंने छह माह पहले इरा के साथ दुष्कर्म करने के बाद उसकी हत्या करने की असफल कोशिश की थी।

कुछ समय बाद ही टीवी चैनलों के अनेक माइक आईडी के सामने डॉ. वेंटर और उनके सहयोगियों की टीम थी। अगले दिन के दुनियाभर के अखबारों में खबर थी, 'वैज्ञानिकों ने मानव की इंसानी नस्ल साइबोर्ग विकसित करने में बड़ी सफलता प्राप्त कर ली है।'

❑❑❑

लैक्टो बैसीलस

कुमार सुरेश

'संयुक्त पृथ्वी और चंद्रमा राष्ट्र समिति' के वैज्ञानिकों की बैठक चंद्रमा पर स्थित मुख्य नगर नानी में स्थित 'पॉजीट्रान मीटिंग हॉल' में आयोजित की गई है। पृथ्वी और चंद्रमा पर स्थित सभी देशों के प्रतिनिधि मौजूद हैं। पृथ्वी से सभी राष्ट्रों के प्रतिनिधि तेज गति के 'सेमी लेजर' विमानों में आए हैं। इन विमानों की गति लगभग बीस हजार किलोमीटर प्रति घंटा है। इस गति से ये विमान लगभग बीस घंटे में चाँद पर पहुँच जाते हैं। बैठक जिस हॉल में हो रही है वो अपनी बनावट में अनूठा है। मुख्य द्वार में प्रवेश करते ही मेहमान जिस टाइल पर खड़ा होता है वो गतिमान होकर मेहमान को ले जाकर उसकी सीट तक छोड़ आती है। हरेक मेहमान के सामने कम्प्यूटर स्क्रीन है। उसे जब जिस चीज की आवश्यकता होती है वो स्क्रीन पर उंगली से टच कर देता है और एक बेआवाज ड्रोन लेजर की रस्सी से उस चीज को मेहमान के सामने रख देता है। सदस्य अपनी बात अपनी मातृभाषा में रखता है और सभी सदस्यों को उनकी मातृभाषा में सुनाई देता है।

बैठक के अध्यक्ष अमरीकी वैज्ञानिक 'माइकल जेम्स' ने अपनी बात रखी –

''उपस्थित सम्माननीय प्रतिनिधियों, आप सभी का यहाँ इस महत्वपूर्ण वैज्ञानिक सम्मेलन में स्वागत है। बड़े-बड़े संकटों का सामना सफलतापूर्वक करते हुए मनुष्य जाति अच्छी तरह से फल-फूल रही है। हमने चुनौतियों का सामना करते हुए पृथ्वी तथा वहाँ के निवासियों को तेईसवी शताब्दी तक सुरक्षित रखा है। बहुत सी गंभीर चुनौतियों का हम सामना कर चुके हैं। इक्कीसवी शताब्दी में पृथ्वी का तापमान तेजी से बढ़ने लगा था । इस परिघटना को 'ग्लोबल वार्मिंग' नाम दिया गया था। सारे संसार में चिन्ता फैल गई थी कि पृथ्वी से जीवन धीरे-धीरे समाप्त हो जाएगा, लेकिन मनुष्य ने हार नहीं मानी। वैज्ञानिकों ने ऐसे 'थर्मल जीवाणुओं' का विकास कर लिया जो तापमान को अपने भीतर अवशोषित कर उसे अपने आहार की तरह प्रयोग कर लेते हैं। इन जीवाणुओं के कारण पृथ्वी का बढ़ता तापमान रूक गया और पृथ्वी के ऊपर से महान संकट टल गया।

पृथ्वी पर दूसरा बड़ा खतरा परमाणु युद्ध का बढ़ता खतरा था जिससे संपूर्ण पृथ्वी नष्ट होने की आशंका थी। इक्कीसवी-बाईसवी शताब्दी में कई मौके ऐसे आये कि लगा परमाणु युद्ध होने को ही है और मानवता समाप्ति की कगार पर है। इस समस्या का हल भी वैज्ञानिकों ने निकाला। बहुत समय पहले जब पृथ्वी पर विज्ञान का विकास आरंभ ही हुआ था तब डॉल्टन नाम के एक वैज्ञानिक ने बता दिया था कि प्रत्येक पदार्थ अदृश्य और अविभाज्य परमाणुओं से मिलकर बना है। एक ही पदार्थ के सभी परमाणु समरूप और समान भार के होते हैं। अलग-अलग पदार्थों के परमाणु आपस में विरूप और अलग भार के होते हैं। परमाणु हथियार इस सिद्धांत पर तैयार किये गये थे कि एक भारी तत्व के न्यूक्लिआई जब अचानक टूटते हैं या आपस में जुड़ते हैं तो जबरदस्त विस्फोट की शक्ति उत्पन्न होती है जिससे पूरी पृथ्वी नष्ट हो सकती है। परमाणु की जो ऊर्जा इतना विनाश प्रस्तुत कर सकती है उसी का उपयोग करके रक्षा का उपाय निकाला गया। पृथ्वी के हरेक पदार्थ में अणु और परमाणु होते हैं। इन सभी के भीतर अनंत ऊर्जा छुपी रहती है।

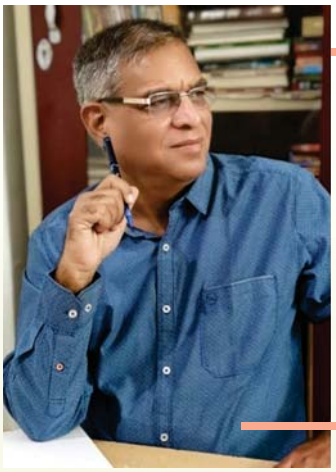

विज्ञान, विज्ञान कथा, व्यंग्य और कविता में समान रूप से लेखन। आपने बच्चों एवं प्रौढ़ शिक्षा के लिए कई पुस्तकें लिखी हैं। राज्य सहकारी सेवा से सेवानिवृत्त। दो कविता संग्रह - भाषा साँस लेती है, शब्द तुम कहो, एक उपन्यास - 'तंत्र कथा' और एक व्यंग्य संग्रह - व्यंग्य राग प्रकाशित। रजा पुरस्कार, अम्बिका प्रसाद दिव्य अलंकरण तथा मध्यप्रदेश लेखक संघ का पुष्कर सम्मान से सम्मानित। तंत्र कथा उपन्यास व्यापक रूप से चर्चित और लोकप्रिय हुई। इधर विज्ञान पत्रिकाओं में कई विज्ञान लेख लिखे हैं।

वैज्ञानिकों ने ऐसा तरीका खोज लिया था जिसके प्रयोग से जब भी कहीं परमाणु बम का विस्फोट हो तब उस विशाल ऊर्जा के ताप को महसूस करके प्रभावित इलाके के दूसरे साधारण पदार्थ जैसे मिट्टी के परमाणु भी सक्रिय होकर विपरीत ऊर्जा पैदा करें जिससे परमाणु बम से होने वाला विनाश नियंत्रित रहे। बाईसवी शताब्दी तक हर देश ने अपने इलाके की मिट्टी को इस तरह चार्ज कर लिया था कि वो परमाणु बम की ऊर्जा को महसूस करते ही विपरीत और उतनी ही शक्तिशाली ऊर्जा का निर्माण आरंभ कर देती थी। इस उपाय से परमाणु बम का प्रभाव दूसरे साधारण बमों जितना ही रह गया और पृथ्वी के नष्ट होने का खतरा टल गया।

मनुष्य जाति के समक्ष तीसरा गंभीर खतरा था, बढ़ती जा रही जनसंख्या और घटते जा रहे संसाधनों का। इसके निराकरण के लिये संयुक्त राष्ट्र समिति की पहल पर सभी देशों की सरकारों ने जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रम सफलता पूर्वक लागू किया। 'हम दो हमारा एक' नीति को सारे संसार ने स्वीकार कर लिया। मनुष्य ने बाईसवी शताब्दी तक चाँद पर भी बस्तियाँ बसाने में सफलता प्राप्त कर ली और काफी लोग वहाँ जाकर बस गए। मंगल ग्रह पर मौजूद खनिज संसाधनों का दोहन करने में भी सफलता मिल गई और उन्हें पृथ्वी पर लगातार लाकर उपयोग किया जाने लगा है। इस प्रकार जनसंख्या विस्फोट के खतरे से भी पृथ्वी को बचा लिया गया ।

पृथ्वी वासियों के समक्ष विद्यमान ऊर्जा की गंभीर समस्या का निराकरण भी काफी समय पहले ही कर लिया गया है । हम जानते हैं कि पृथ्वी में स्थित पेट्रोल के भंडार बहुत पहले समाप्त हो चुके हैं लेकिन पानी को ऑक्सीजन और हाइड्रोजन में सरलता से बदलने की तकनीक की खोज ने ईधन की समस्या पूरी तरह समाप्त कर दी है। अब सभी यान और वाहन आसानी से पानी से चलाये जा रहे हैं।

'माइकल जेम्स' कुछ देर को रूके फिर उन्होंने अपनी बात आगे बढ़ाई -

''आज की बैठक इसलिए बुलाई गई है कि हाल ही में मनुष्य के सामने एक नई गंभीर चुनौती उठ खड़ी हुई है जिसका निराकरण खोजना आवश्यक है। पृथ्वी के वातावरण में मौजूद हानिकारक जीवाणुओं पर नियंत्रण करने के लिये मनुष्य आदिकाल से ही लगातार प्रयास करता रहा है। रोग पैदा करने वाले जीवाणुओं के उपद्रव पर नई-नई एण्टीबायोटिक दवाइयों से नियंत्रण रखा गया है। भोजन को खराब करने वाले जीवाणुओं को नियंत्रित रखने की नई तकनीकें लगातार खोजी जाती रही हैं। इस तरह के बीज विकसित कर लिये गए हैं जिनके डी.एन.ए. में ही बैक्टीरिया को समाप्त करने के गुण हैं। लेकिन इस लड़ाई का कोई ओर-छोर अभी तक नजर नहीं आ रहा है। जैसे जैसे जीवाणुओं को समाप्त और नियंत्रित करने की तकनीकें विकसित होती गई हैं वैसे-वैसे जीवाणु भी अपने अंदर परिवर्तन करके नई तकनीक को निष्प्रभावी बनाने का प्रयास करते गए हैं। नई खोजी गई एण्टीबायोटिक दवाई कुछ दिन तो प्रभावी रहती हैं इसके बाद जीवाणु अपने भीतर ऐसी शक्ति विकसित कर लेते हैं कि वह दवाई निष्प्रभावी हो जाती है।

ताजा संकट जिससे आप लोग परिचित हैं डेरी उद्योग से संबंधित है। डेरी उत्पादों को खराब करने वाले जीवाणुओं के भीतर अचानक 'म्यूटेशन' हुआ है और ये जीवाणु बहुत ताकतवर हो गये हैं। ये जीवाणु जिस कच्चे दूध को तीन से चार घंटे में खराब करते थे उसे अब दस मिनिट में खराब करने लगे हैं।

सभ्यता के आरंभ से ही गाय-भैंस आदि दुधारू पशुओं का दूध मनुष्यों के भोजन का प्रमुख भाग रहा है। हमारे बच्चे इस भोजन के सहारे ही बड़े होते हैं। बीसवी शताब्दी से ही मनुष्य ने दूध और दूसरे डेरी पदार्थों को सुरक्षित रखने के तरीके खोज

लिये थे। फ्रेंच जीव विज्ञानी 'लूइस पाश्चर' ने सबसे पहले खोज की थी कि खाने पीने की वस्तुयें जीवाणुओं के कारण खराब होती हैं। इन वस्तुओं को लंबे समय तक सुरक्षित रखने के लिये उन्होंने एक तकनीक की खोज की थी जिसे बाद में उनके सम्मान में 'पाश्चुराइजेशन' नाम दिया गया। इसके अंतर्गत दूध या दूसरे खाद्य द्रव को कुछ सेकन्ड के लिये उच्च तापमान पर रखा जाता है और इसके बाद इसे कम तापमान पर ठंडा करके सुरक्षित रख लिया जाता है। इस तकनीक से कच्चा दूध आठ-दस दिन तक सुरिक्षित रहता था। इस खोज के पहले तक दूध को ज्यादा समय तक सुरक्षित रखना एक चुनौती थी। दूध उत्पादन करने वाले किसानों को अपना माल औने-पौने दामों पर व्यापारियों को बेचना पड़ता था। लुइस पाश्चर की खोज के बाद दूध को लंबे समय तक सुरक्षित रखा जाने लगा। लेकिन इस तकनीक से दूध में उपस्थित जीवाणु तो समाप्त हो जाते हैं लेकिन जीवाणुओं के स्पोर समाप्त नहीं होते हैं जो उचित परिस्थितियाँ मिलते ही जीवाणु में परिवर्तित हो जाते हैं।

इक्कीसवीं शताब्दी में साठवे दशक तक अल्ट्रा हाई तापमान तकनीक विकसित हो गयी थी जिसमें दूध को लगभग 140 डिग्री सेण्टीग्रेड पर दो सेकेंड के लिये गरम किया जाता है । इस प्रक्रिया से दूध में स्थित जीवाणुओं के स्पोर भी समाप्त हो जाते हैं । इस दूध की पैकिंग जीवाणु रहित वातावरण और पात्र में करने से ये दूध लगभग छह माह तक सुरक्षित रहने लगा था। बाईसवी शताब्दी तक तकनीक ने और विकास किया और दूध को आसानी से एक वर्ष तक सुरक्षित रखना संभव हो गया । इस तकनीक के कारण सारी पृथ्वी और चाँद पर दूध की कोई कमी नहीं रही है।

इन सभी तकनीकों का आधार यह है कि कच्चा दूध खुले वातावरण में लगभग तीन से चार घंटे तक सुरक्षित बना रहता है। इतने समय में हम दूध को सुरक्षित रखने की तकनीकों को इस्तेमाल कर लेते हैं। अभी हाल में दूध को खराब करने वाले जीवाणुओं के जीन्स में अचानक जो म्यूटेशन हुआ है उससे वे इतने शक्तिशाली हो गये हैं कि खुले वातावरण में दूध को बहुत तेजी से खराब करते हैं। कच्चा दूध खुले वातावरण में अगले दस मिनिट में ही खराब होने लगा है। हमें इतना समय भी नहीं मिल रहा है कि इसका संरक्षण कर सकें। इस घटना के कारण सारी पृथ्वी और चंद्रमा पर दूध की गंभीर कमी हो गई है। इसी समस्या का हल निकालने के लिये आज ये सम्मेलन बुलाया गया है।

बैठक में मौजूद अधिकतर वैज्ञानिक इस समस्या से परिचित थे। इस पर रिसर्च भी हो रही थी। फ्रांस के वैज्ञानिक 'पोपोइ आंद्रे' ने अभी इस विषय पर नई खोज की थी अतः उनको रिसर्च पेपर पढ़ने के लिये बुलाया गया। 'पोपोइ आंद्रे' ने अपनी बात रखी- ''हमारी टीम ने इस समस्या पर जितनी रिसर्च

की है उससे यह पता लगा है कि दूध को खराब करने वाले जीवाणुओं के डी.एन.ए. में अचानक इस तरह के परिवर्तन हो गये हैं कि वो जीवाणु पहले से दस गुना अधिक ताकतवर हो गये हैं।

बांग्लादेश के वैज्ञानिक 'अब्दुल मज़ीद' ने पूछा-''आखिर ये सब हो क्यों रहा है?''

'पोपोइ आंद्रे' ने बताया -''हम जानते हैं कि एण्टी-बायोटिक के अत्याधिक प्रयोग से जीवाणु अपने भीतर ऐसी क्षमता विकसित कर लेते हैं कि वो एण्टीबायोटिक से अप्रभावित रहते हैं। इस कारण हमे लगातार नई प्रभावी और ताकतवर एण्टीबायोटिक की खोज करना पड़ी है। ठीक इसी तरह से दूध और दूसरे खाद्य पदार्थों को खराब करने वाले जीवाणुओं के भीतर भी अपने आप ऐसी क्षमता विकसित होती जा रही है कि वो अधिक तापमान तथा केमिकल से अप्रभावित रहते हैं। हाल के वर्षों में अचानक इन जीवणुओं की प्रतिरोध क्षमता में सौ गुना तक इजाफा हो गया है। इसके कारण डेरी उद्योग को इतना समय नहीं मिल पा रहा है कि वो दूध को प्रोसेस कर सकें और वो खराब न हो।

अब रूसी वैज्ञानिक 'अलेक्जेन्डर क्रोमोजोव' की बारी आ गई थी उन्होंने कहा- ''हमारे देश में इस समस्या के हल के लिये जितनी रिसर्च अभी तक की गई हैं उनमें बहुत कम सफलता मिली है। हमारा पूरा ध्यान दुधारू पशुओं के भीतर इस तरह के एण्टीबॉडी बनाने की क्षमता विकसित करने पर है जिससे दूध में इतनी ताकत आ जाए कि वो वातावरण के जीवाणुओं से सफलता पूर्वक काफी समय तक मुकाबला कर ले। अभी तक हमारी अधिकतम सफलता दूध को आधा घंटा तक सुरक्षित रख पाने की है।

इटली के वैज्ञानिक 'निकोली कोण्टी' ने बताया कि उनके देश में इस समस्या का हल इस तरह निकाला गया है कि पशुओं का दूध केवल मशीनों से निकाला जाता है और मशीनों से लगे पाइप लाइनों से यह दूध सीधे प्लान्ट में चला जाता है और दस मिनिट के अंदर ही इस दूध को 'अल्ट्रा हाई ट्रीटमेंट' देकर इसे

सुरक्षित कर लिया जाता है।

इस उपाय ने वैज्ञानिकों का ध्यान खींचा और इस पर गंभीर विचार-विमर्श हुआ । निष्कर्ष निकला कि यह उपाय बहुत ही खर्चीला और अव्यावहारिक है। इसे बड़े-बड़े देशों मे सफलता से लागू नहीं किया जा सकता हैं।

अब भारतीय डेरी वैज्ञानिक चमनलाल साहा की बारी आई । उन्होंने अपने देश भारत में इस विषय में हुए रिसर्च से सबको अवगत कराते हुए कहा -''आप सभी जानते हैं कि मनुष्य बहुत पहले से ही अल्ट्रा वायलट किरणों का उपयोग जीवाणु नाशक की तरह करता रहा है। अक्सर जीवाणु अनुसंधान प्रयोगशालाओं में वैज्ञानिक अल्ट्रा वायलट किरणों के प्रयोग से प्रयोगशालाओं को जीवाणुमुक्त बनाया करते हैं। हमने अपने नवीन अनुसंधान से अल्ट्रा वायलेट किरणों की 'वेब लेंग्थ' में बहुत हल्का से परिवर्तन करके उन्हें इतना ताकतवर बना दिया है कि उनकी जीवाणुरोधी क्षमता बहुत बढ़ गई है। दूध देने वाले जानवरों का जिन जगहों पर दूध निकाला जाता है वहाँ बिजली के साधारण प्रकाश के साथ ये अल्ट्रा वायलट जीवाणुरोधी लैम्प भी लगाये जा रहे हैं। जब इस अल्ट्रा वायलट प्रकाश में दूध निकाला जाता है तो वातावरण के जीवाणु दूध को संक्रमित नहीं कर पाते हैं। इसी वातावरण में दूध को ठंडा करके उसे दूध के प्लान्ट तक परिवहन किया जाता है। इस तरह से भारत में दूध को खराब होने से सौ प्रतिशत बचाया जा रहा है।

सभी वैज्ञानिकों ने इस उपाय को ध्यान से सुना और उनके चेहरों से लग रहा था कि उन्हें यह उपाय अच्छा लगा है।

पोलेंड में डेरी व्यवसाय परंपरा से ही बहुत आगे है। पोलेंड के डेरी वैज्ञानिकों ने भी भी इस समस्या पर शोध किया था। वहाँ के वैज्ञानिक 'अनातोली संवास्तरकी' ने अपना पर्चा प्रस्तुत किया -''आप जानते हैं कि पोलेंड में अनेक शताब्दियों से डेरी व्यवसाय फलफूल रहा है । हमारे देश में इस उद्योग पर लगातार अनुसंधान भी होते रहे हैं। जीवाणुओं की शक्ति बढ़ने से उत्पन्न इस समस्या का हल हमने एक जादुई रसायन में खोजा है। हम जानते हैं कि पुराने समय से ही 'फार्मेलीन' नाम के रसायन का उपयोग दूध के सेम्पल को सुरक्षित रखने में किया जाता रहा है। यह रसायन इतना तेज जीवाणुरोधक है कि प्रयोगशालाओं में जीव जंतुओं के मृत शरीर भी इसी रसायन में डुबा कर सुरक्षित रखे जाते हैं। लेकिन यह रसायन मानव शरीर के लिये हानिकारक है। इस लिये इसे उन द्रव्यों में नहीं डाला जा सकता जिनका उपयोग मानव करता है। हमने फार्मालीन से मिलते-जुलते एक नये रसायन की खोज की है जो फार्मेलीन जितना ही ताकतवर है लेकिन मानव शरीर पर इसका कोई दुष्प्रभाव नहीं है ।यह रंग हीन और गंध हीन भी है। दुधारू पशु के शरीर से दूध निकालते ही इस रसायन की दो बूँदें दूध में डाल दी जाती हैं। इसके बाद इस दूध पर जीवाणुओं का प्रभाव तीन घंटे तक नहीं होता है। यह समय इतना है कि दूध को दूसरी संरक्षण विधियों से संरक्षित कर लिया जाता है।

चीन के वैज्ञानिक 'ली शुन' ने पूछा -''इस रसायन का मानव शरीर पर क्या असर होता है ? इस बारे में आपके देश में क्या क्या परीक्षण हो चुके हैं?

संवास्तरकी ने बताया-''इस रसायन की खोज हाल ही में हुई है इसलिये केवल अल्प समय के उपयोग से मानव शरीर पर होने वाले प्रभावों का परीक्षण किया जा सका है। इस रसायन के अल्प समय तक प्रयोग करने से मानव शरीर पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पाया गया है। लंबे समय तक इस रसायन का उपयोग करने से मानव शरीर पर होने वाले प्रभावों पर अनुसंधान होना बाकी है।

'निकोली कोण्टी' ने कहा -''तब तो इस रसायन का उपयोग दूध में करना अभी खतरे से खाली नहीं माना जा सकता है। जब तक मानव शरीर पर इसके दीर्घकालीन प्रभावों का अध्ययन न कर लिया जाए तब तक इसके उपयोग की अनुशंसा संयुक्त राष्ट्र परिषद को नहीं करना चाहिए।

सभी वैज्ञानिकों के प्रजेन्टेशन पूरे हो जाने के बाद विषय पर खुली चर्चा आरंभ हुई। सभी वैज्ञानिकों ने एक स्वर से माना कि वर्तमान में जो अनुसंधान हुए हैं उनमें सबसे सुरक्षित और व्यावहारिक उपाय भारतीय वैज्ञानिक चमनलाल साहा द्वारा बताया गया है। नयी खोजी गईं अल्ट्रावॉयलट किरणों के लैम्प बहुत सस्ते में बनाये जा सकते हैं। इन्हें प्रत्येक पशुशाला में आसानी से जानवरों के बाड़े में लगाया भी जा सकता है। इन किरणों का कोई गंभीर दुष्प्रभाव भी मानव शरीर पर नहीं होता है। चर्चा में यह आम सहमति बनी कि जब तक और अधिक व्यावहारिक और सस्ते उपाय की खोज न हो जाए तब तक चमनलाल साहा द्वारा खोजे उपाय का सारे विश्व में उपयोग किया जाए। सम्मेलन के अध्यक्ष 'माइकल जेम्स' ने जब इस निर्णय की घोषणा की तो सारा हाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। तभी 'पोपोइ आंद्रे' ने खड़े होकर प्रस्ताव रखा -

''नई खोजी गईं ऊर्जा किरणें अभी तक अनाम है इसलिये मेरा प्रस्ताव है कि इन किरणों का नाम इन के खोजकर्ता चमनलाल साहा के नाम पर 'साहा रेज' रखा जाए। सभी ने जोर-जोर से तालियाँ बजा कर इस प्रस्ताव का समर्थन किया। इस गंभीर विषय पर आगे और अनुसंधान करने और अगले वर्ष फिर से वैज्ञानिकों का सम्मेलन आयोजित करने के निर्णय के साथ सम्मेलन समाप्त घोषित किया गया।

❑❑❑

मुर्गीख़ाना

डॉ.रेखा कस्तवार

मानव वर्तमान और भविष्य पर से क्षण भर भी अपनी नज़रें नहीं डिगाता। सब कुछ सोचा-समझा, सुनियोजित। उसे कोई कनफ्यूजन नहीं। फण्डे एकदम क्लियर। उसकी दृष्टि विस्तार में वसुधा शामिल होनी ही चाहिए। ऐसा भी मानता है मानव। इसके कारण भी हैं।

'बस एक बार और .....।' मानव के मनुहार में आदेश था। वसुधा को लगा, उसका सपना फिर स्थगित हो जाएगा। वसुधा ने वस्तु स्थिति से अवगत कराना चाहा, अभी सम्भव नहीं, सब कुछ अभी रूटीन में नहीं आया है। कहने को यह बताया गया है कि यह वसुधा का रेस्ट पीरियड है पर वह जानती है यह आफ्टर इफ्फेक्ट्स झेलने का वक्त है। उसके मूड स्विंग होते हैं। मानव जानता है, यह स्वाभाविक है। मानव कहता है यह अगला सपना देखने का समय है। मानव वर्तमान और भविष्य पर से क्षण भर भी अपनी नज़रें नहीं डिगाता। सब कुछ सोचा-समझा, सुनियोजित। उसे कोई कनफ्यूजन नहीं। फण्डे एकदम क्लियर। उसकी दृष्टि विस्तार में वसुधा शामिल होनी ही चाहिए। ऐसा भी मानता है मानव। इसके कारण भी हैं। वसुधा ने अब तक उसका साथ दिया है। आँख बंद कर भले न किया हो, बहुत सोच-समझ कर भी नहीं किया है। मानव की बेहतरी में शायद यही उसका योगदान साबित हो, मानव की आँखों में उसके लिए प्यार और भरोसा जागे। मानव ने उसे शादी के लिए पसंद किया उसके पहले उसने प्लानिंग कर ली थी कि वह अण्डे बेचना चाहता है। मेकेनिकल इंजीनियर होते हुए भी उसने इसकी शॉर्ट टर्म ट्रेनिंग ली थी। पूरी प्रक्रिया से अवगत था, फायदा-नुकसान सबका हिसाब-किताब चाक-चौबंद।

वसुधा को मानव ने न्यूज़पेपर में फोटो देखकर पसंद किया। शहर के नामी कॉलेज की फ्रेशर्स पार्टी की खबर थी वह। क्राउन वाली 'मिस फ्रेशर' को दिपदिपाती आँखों से देखती वह लड़की यूँ ही स्मृति से ओझल करने लायक नहीं लगी। रंगीन फोटो में वसुधा को सारे कोणों से परखा हो, ऐसे देखा मानव ने। पता लगाया, वसुधा बिना माँ-बाप की इकलौती बेटी है जो मामा के घर रह कर बी. एस-सी। फर्स्ट ईयर(बायो) में पढ़ रही है। उसको यह सुभीते की बात लगी। वसुधा इस घर में ही रच-बस जाएगी, मुड़कर देखने या अतीत में भागने की गुंजाइश नहीं होगी। देखने-दिखाने में डेटिंग/वेटिंग/एंगेजमेंट में वक्त जाया करना मानव की फितरत नहीं। पहली मुलाकात में चेहरे-मोहरे से आश्वस्त होते ही दूसरी मुलाकात में मानव ने मामा के सामने शर्त रखी-साइंस- टेकनॉलॉजी का ज़माना है। मुझे वसुधा की हेल्थ रिपोर्ट ओके चाहिए। फुल फिज़िकल टेस्ट, खासतौर पर कोई जेनेटिक प्रॉब्लम.....न हो। ओके रिपोर्ट आए तो फोन कीजिएगा। शादी की तारीख तै कर लेंगे। दो मुलाकातों के बीच मामा मानव की खोजबीन कर चुके थे। उसके बारे में जान चुके थे। मामा को ऐसा लगा।वसुधा और मानव की कहानी अलग-अलग नहीं। पाँच साल पहले माँ-बाप एक साथ चल बसे, रोड एक्सीडेंट में। इंजीनियरिंग की पढ़ाई के दौरान कैंपस सिलेक्शन नहीं हुआ। दो साल पहले पोल्ट्री फार्म खोला है। बिज़नेस के शुरूआती धक्के खा रहा है। पोल्ट्री फार्म और उससे लगे छोटे-से घर के रख रखाव की जाँच पड़ताल ने मामा को आश्वस्त किया। फिर लड़का खुद हाँथ माँगने

डॉ. रेखा कस्तवार हिन्दी की प्रतिष्ठित कथाकार और लेखिका हैं। हिन्दी गद्य लेखन के क्षेत्र में उनका महत्वपूर्ण काम और मान है। आपकी स्त्रीचिंतन की चुनौतियां, किरदार जिंदा हैं , अपने होने का अर्थ जैसी पुस्तकें प्रकाशित व चर्चित हुई। आपके द्वारा रचित इधर की कहानियों में वैज्ञानिक दृष्टि का गहरा समावेश और अन्वेषण है। आईसेक्ट प्रकाशन से 'मुर्गीखाना' शीर्षक से कहानी संग्रह प्रकाशित। आपने हिन्दी साहित्य में परास्नातक और पीएच.डी. की डिग्रियां प्राप्त की। कथा भोपल, कथा मध्यप्रदेश, कथाकोश जैसे संकलनों के अतिरिक्त देश भर की पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित।

आया है। मेडिकल चेकअप की बात ने उन्हें पहले चिंतित किया फिर संशयित और अन्ततः आश्वस्त किया। परिवार में दो ही प्राणी हैं, स्वास्थ्य बड़ी नियामत है। मामा को एक चिंता अभी भी थी, वसुधा सिर्फ अठ्ठारह की है और मानव सत्ताईस-अट्ठाईस का - जैसा कि मानव ने खुद बताया। वे कुछ रूकना चाहते थे पर मुक्त भी होना चाहते थे। उनके अपने पारिवारिक दबाव थे।

..शादी के सात साल बाद अपने स्थगित सपने के साथ वसुधा वहीं खड़ी है। मानव के घर की देहरी पर। मानव का आदेश है- 'एक बार और।' वसुधा विचलित है।

वसुधा का मन जब भी उदास या विचलित होता है, सिरदर्द होता है, उसके पास मुर्गियों के पास जाने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। आस-पास कुछ खेत हैं जो अधिया-बटिया पर हैं। एक किलोमीटर बिना पेड़ों वाले पगडंडी रास्ते को पार कर वह मुख्य सड़क आती है, जहाँ से शहर के रास्ते खुलते हैं। मानव हर संडे सुबह तैयार रहने कहता है, मिलिट्री ऑर्डर की तरह। वे शहर में समय बिता कर शाम से पहले घर लौट आते हैं। मुर्गियों को खाना-पीना-खुली हवा-रोशनी-सफाई सब चाहिए। नौकरों को हिदायत देने के बावजूद मानव को अपना व्यक्तिगत दखल संतुष्ट रखता है। वसुधा के बारे में भी उसका विचार इससे अलग नहीं।

दोपहर तीन बजे से शाम छः बजे तक रोज मानव अण्डे लेकर शहर जाता है। जब वह प्रोजक्ट पर होती है, उसे भी शहर जाना होता है। शिड्यूल के हिसाब से मानव अण्डों के बिज़नेस के समय में हेरफेर बर्दाश्त कर लेता है। वह उसका चुनाव भी है। वरना बाकी समय- तीन से छः का समय वसुधा का अपना समय है। साथ के नाम पर उसके पास मुर्गियाँ हैं, वह उन्हें दड़बों से बाहर शेड में आने को उकसाती है, अपनी तरह उन्हें भी मुक्त रह लेने का अवसर देती है। मुर्गियाँ कभी बागड़ पार नहीं करतीं, नुकीले तारों वाली बाउंड्री से बाहर निकलने का रास्ता नहीं खोजतीं, और तो और कभी गेट खुला छूट भी जाये तो उस ओर ध्यान नहीं देतीं। वसुधा को भी ऐसी सुध कहाँ? वह खुद गेट लगा आती है, अकसर। मुर्गियाँ जानती हैं यह मालिक और नौकरों की छुट्टी का समय है। वसुधा और वे सहज उन्मुक्त जी लेती हैं यह वक्त। बावजूद इसके वसुधा जानती है, मानव का कोई वफादार आसपास ही होता है। मुर्गियों के भारी शरीर और पतली टाँगे देखकर दुःख होता है वसुधा को। शरीर तो वसुधा का भी लगातार ऐसा ही होता जा रहा है। मानव को ज़्यादा और जल्दी रिज़ल्ट चाहिए। वह मुर्गी से चूज़े नहीं चाहता। ज्यादा अण्डे.....कैसे भी। इसलिए ऑक्सीटोसिन के इंजेक्शन... अनफर्टिलाइज्ड अण्डे। मानव के पोल्ट्री फार्म में मुर्गे नहीं हैं। वसुधा को लगता है, क्या मुर्गियाँ उदास नहीं होती होंगी, उनकी अपनी ज़रूरतें! मुर्गों के साथ की कामना। अपने अण्डे सेने का सुख ! चूजों को दुलारने का मन! वह अपनी सारी ममता मुर्गियों पर उतारती है। मुर्गियाँ कहाँ जाएँ, कैसे जाएँ? उनका कोई और घर नहीं। वसुधा उदास और विचलित होती है, कभी कभी भयभीत भी। मानव समझाता है, तुम जानती तो हो, ये आफ्टर इफ्फेक्ट्स हैं, समय के साथ सब सबसाइड हो जाएँगे। वह कभी भी साइड इफ्फेक्ट शब्द का उपयोग नहीं करता । वसुधा भयभीत इसलिए भी होती है कि उसने मानव को पुरानी बेकाम होती मुर्गियों को शहर ले जाते और खरीदी गई नई नन्हीं मुर्गियों से उनके खाली हो गए दड़बों को आबाद करते देखा है। मुर्गियों से चूज़े बनने में वक्त बर्बाद होताहै, झंझट है, मानव मानता है। अण्डे तत्काल और अच्छे दामो में बिकते हैं। तब फिक्र क्या !

वसुधा का सपना भी माँ बनने का है। मानव सहमत नहीं। किसलिए चाहिए? टाइम किलिंग। पहले पेट में पालो-पोसो, फिर बाहर पालो-पोसो। उनके लिए जोड़ो। तुम्हें किसलिए चाहिए बच्चा? ये भी तो सोचो, उसकी किस्मत भी हमारे तुम्हारे जैसी हुई और अकेला बच गया तो--? ऐसा इतिहास दोहराने से क्या हासिल-? अच्छे से जीने के लिए पैसा चाहिए-लॉंग लाइफ वर्सेस क्वालिटी लाइफ... उसका वोट क्वॉलिटी लाइफ को जाता है, कोई नहीं पूछता किसकी क्वॉलिटी लाइफ, वसुधा की या मानव

की। पैसा और सिर्फ पैसा। कैसे कमाया जाए इसी गुंताड़े में रहता है मानव। अण्डों का बिज़नेस। .....प्रोजेक्ट पर लगा देता है वसुधा को भी। मुस्कुरा कर कहता भी है, जितना मैं छः महीने मे कमाता हूँ, तुम एक महिने में कमा लेती हो। मुझे मदद मिल जाती है। बिज़नेस के लिए एकमुश्त रकम मिलना बहुत मायने रखता है। वसुधा बताना चाहती है, मुझे और तुम्हारी मुर्गियों को एक जैसी तकलीफ होती है। वे कह नहीं पातीं और मैं भी कहाँ ?

पहली पहली बार जब मानव ने उसे प्रोजेक्ट पर लगाया था-हाँ, मानव उसे प्रोजेक्ट की तरह देखता है और इसी शब्द का इस्तेमाल भी करता है-तब उसे लगा था कि यह शादी के पहले जैसा फुल फिजिकल चेकअप है, उसे प्यार आया था मानव पर, कितना ख्याल रखता है उसका, उसकी सेहत के लिए फिक्रमंद। बाद में जब डॉक्टर ने सारा प्रोजेक्ट समझाते हुए उससे सहमति माँगी तो वसुधा के पैरों तले ज़मीन बाकी नहीं रही। मानव ने उसे दुलार से कहा था यही खाने-कमाने के दिन हैं, बस थोड़ा सा साथ दे दो। मेरा बिज़नेस एस्टेब्लिश होने में तुम्हारी ज़रूरत है। सामने वाली पार्टी से बात हो गई है, सब कुछ मैच हो रहा है। डॉक्टर ने बताया था कि "फुल हेल्थ चेक अप के बाद तीन से पॉच हफ्ते की प्रक्रिया है। एग ट्रेवलिंग सक्सेसफुल हो जाए...। वसुधा! किसी के परिवार को आबाद करना पुण्य का काम है।" डॉक्टर ने पीठ पर हाथ रखते हुए कहा था। "तुम्हारी नेचुरल साइकिल 'लुप्रान' देकर सप्रेस करेंगे--रिसीवर की साइकिल से तालमेल बिठाने। मेंसेस के तीसरे दिन से अण्डों को उत्तेजित करने हारमोंस के इंजेक्शन... बस दस बारह दिन... तुम चाहो तो घर में भी लगा सकती हो... मानव रोज शहर आता ही है, चाहो तो सेफ साइड तुम यहीं आकर लगवा लो। डॉक्टर ने ऐसे कहा जैसे मानव उनका निकट का परिचित हो। तुम समझती होगी... अण्डों को उत्तेजित करना होता है। एक या दो की जगह दस-बारह ... उससे अधिक भी ... सक्सेस रेट बढ़ाने यह ज़रूरी है। अण्डों को मेच्योर करने दस-बारह दिन बाद भ्ळ्ब (ह्यूमन कोरिओनिक गोनेडोट्रोपिन) ड्रग... फिर प्रतीक्षा... सोनोग्राफी... सब कुछ मनमाफिक होने पर सिरींज से वैजाइना के थ्रू एग कलेक्शन... तुम्हें पता भी नहीं चलेगा, ऐनेस्थीसिया... हाँ बेहोश करेंगे तुम्हें। ... और फिर रिट्रेवल... लेकिन वो तुम्हारा पार्ट नहीं है। अभी तो रिसीवर तैयार है तो सब तत्काल होगा वर्ना एग बैंक... फ्रोजन एग... " एक साँस में कह गई डॉक्टर मशीनी अंदाज़ में। डरावने यथार्थ से अचानक ऐसा भयावह सामना करने तैयार नहीं थी, वसुधा। डरते हुए साइड इफ्फेक्ट्स का पूछा तो बहुत प्रोफेशनल तरीके से डॉक्टर ने समझाया- "सब पर्सन टू पर्सन डिफर करता है। हाँ, आपकी साइकिल ब्रेक हो जाएगी चार महिने, पाँच महिने भी, कभी-कभी छः माह तक। पर लौटती है। और छोटे-छोटे साइड इफ्फेक्टस...

वसुधा का सपना भी माँ बनने का है। मानव सहमत नहीं। किसलिए चाहिए ? टाइम किलिंग। पहले पेट में पालो-पोसो, फिर बाहर पालो-पोसो। उनके लिए जोड़ो। तुम्हें किसलिए चाहिए बच्चा ? ये भी तो सोचो, उसकी किस्मत भी हमारे तुम्हारे जैसी हुई और अकेला बच गया तो... ? ऐसा इतिहास दोहराने से क्या हासिल- ?

कुछ वेट गेन! सब सबसाइट हो जाएंगे, फिक्र मत करो।" उफ मानव! जिस रास्ते से मैंने कामना की थी भविष्य जनमने की, उससे तुम अपना आज... अण्डों का व्यापार जमा रहे हो। मेरे अण्डे आज रिसीवर की कोख तक यात्रा करेंगे, किसी घर की किलकारी बनेंगे। कल के अण्डे फ्रोज़न एग में तब्दील होकर किसी अन्जाने की कोख हरियाने निस्पंद स्पंदनों में प्रतीक्षा करते जिएंगे। मानव की आँखों में मनुहार है या आदेश पढ़ नहीं पाती, कुछ कह नहीं पाती... कोई विकल्प? कहाँ तलाशें? उसका अपना कोई नहीं, मामी ने मामा के जाने के बाद ऐसा पल्ला झाड़ा कि गर्द उसके तन मन पर हमेशा के लिए छा गई।

...आज मानव का आदेश - 'अब एक बार और...' शादी के सात सालों में चौथी बार। बहुत डरते हुए वसुधा की आँखों ने फिर अपना स्थायी सवाल खड़ा किया - 'और अपना चूज़ा...?' मानव का जवाब-'वेस्टेज ऑफ टाइम एण्ड मनी।' मानव को वह कैसे समझाए जिसे तुम उपलब्धि का क्षण कहते हो, वहाँ से मेरे समय की व्यर्थता का समय शुरू होता है। हर बार मेरे शरीर पर चर्बी की परत मोटी होती जाती है, मूड चेंज होते रहते हैं, किसी बार आँखें धुँधली हुईं, कभी बाल रूखे। सिर दर्द, जी मचलाना, कुछ लक्षण हर बार, कुछ अलग-अलग बार। डॉक्टर और तुम लगभग एक सी भाषा में रिएक्शन देते हो। यह सब इस सबके(प्रोजेक्ट के) बिना भी हो सकता था, सीधा कनेक्शन नहीं... । बार-बार कहने पर रटा-रटाया जवाब- 'सबको तो नहीं होता... पर्सन टू पर्सन डिफर करता है।' मानव! तुम्हारे लिए जो ओवेरियन रिट्रेवल है (डॉक्टर की भाषा में) वह मेरे लिए टूट-फूट का सबब है। तन मन दोनों टूटते-फूटते हैं। तुम तो जानते भी

हमारे यहाँ लोग रेग्यूलरली ओवेरियन रिट्रेवल का हिस्सा बनते हैं, पैसे के लिए एग बैंक का हिस्सा भी... पर आपके केस में ...।' तीनों की चुप्पी देर तक पसरी रही। अपने नुकसान से तड़फ गई थी वसुधा... फिर मेरा बच्चा... ? `लम्बी टेस्ट प्रक्रिया है, कोख सही सलामात भी है तो तुम्हें अपने अण्डे कौन देगा ? लाखों रूपये और दस प्रतिशत से भी कम सक्सेस रेट।' ये शब्द अजनबी नहीं थे वसुधा के लिए।

नहीं मानव, इस बार आठ महिने होने पर भी वसुधा का ऋतुचक्र लौटा नहीं है। ऋतुचक्र पूरा नहीं होने पर वसुधा को दुहोगे कैसे? प्रकृति से कितना खिलवाड़ करोगे? उसे अपने सृजन के मौके दो। उसे अपने हिसाब से जीने और बनने दो। कितना लालच... इतना लालच?

तुम्हारी जिद के आगे झुकना पड़ा है, फिर भी सोचा है, वह डॉक्टर से अपने चूज़े की बात करेगी। ऋतुचक्र वापसी तक का समय है। हो सकेगा तो इस बार इंकार करेगी मानव के अण्डों के बिज़नेस का हिस्सा बनने से। वह मौका आया ही नहीं। लम्बी जाँच-पड़तालों के बाद डॉक्टर ने उदास हो कर बताया-'यू लॉस्ट योर बोथ ओवरीज़... ।' चीख गले में धुटी पर आँखों में उतर आई...। एक शब्द फूटा....'कोख ?' 'यूट्रस सही सलामत है।' 'कैसे हुआ? क्यों हुआ?'... स्थायी जवाब...'पर्सन टू पर्सन डिफर करता है। हमारे यहाँ लोग रेग्यूलरली ओवेरियन रिट्रेवल का हिस्सा बनते हैं, पैसे के लिए एग बैंक का हिस्सा भी... पर आपके केस में ...।' तीनों की चुप्पी देर तक पसरी रही। अपने नुकसान से तड़फ गई थी वसुधा... फिर मेरा बच्चा...? 'लम्बी टेस्ट प्रक्रिया है, कोख सही सलामात भी है तो तुम्हें अपने अण्डे कौन देगा? लाखों रूपये और दस प्रतिशत से भी कम सक्सेस रेट।' ये शब्द अजनबी नहीं थे वसुधा के लिए। वसुधा का सवाल दफन रहा, मेरे फ्रोज़न एग्स क्या मुझे ही खरीदने होंगे।

अपना चूज़ा... बेकाम मुर्गियाँ... उनका हश्र ... तुम्हारे घर लौटते हुए डर लग रहा है मानव... दड़बे में बंद अण्डा देती और बेकाम मुर्गियाँ.... शहर से लौटते हुए नई मुर्गियों की आमद...क्या फिर तुम्हारे पोल्ट्री फार्म के दड़बे का कोई कोना खाली होगा? वसुधा मुर्गियों समेत मानव की गिरफ्त से मुक्त होने छटपटाने लगी।

❑❑❑

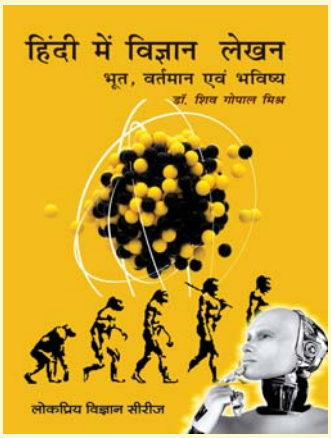

हिन्दी में विज्ञान लेखन : भूत वर्तमान एवं भविष्य

लेखक : डॉ. शिव गोपाल मिश्र
प्रकाशक : आईसेक्ट प्रकाशन
मूल्य : 195/-

13 सितम्बर 1931 में जन्में शिवगोपाल मिश्र एम.एस-सी, डी. फिल, साहित्य रत्न में शिक्षित डॉ. मिश्र विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद के प्रधानमंत्री हैं। वे शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक भी रहे। उन्होंने कई विज्ञान कोश व ग्रंथों की रचना की जिसमें हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकों सहित 5 पाठयपुस्तकें, नौ साहित्यिक पुस्तकें, महाकवि निराला पर तीन पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपको आत्माराम पुरस्कार, भारत भूषण सम्मान आदि से विभूषित किया गया है।

विज्ञान को समझने-समझाने के लिए हिन्दी विज्ञान लेखन के क्रमिक विकास का विहंगावलोकन आवश्यक है। वस्तुतः ऐसी ही सोच के कारण हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान तथा भविष्य विषयक यह पुस्तक गम्भीरता से विचार करके रोचक तरीके से लिखी गई है।

तीन सौ पच्चीस साल का आदमी

डॉ.मनीष मोहन गोरे

दूर एक नौ-दस साल की लड़की किताब जैसी कोई वस्तु लहराते हुए टीशू कल्चर के बाद रोपे गए नन्हें पौधों की क्यारियों वाले रास्ते में मुड़ रही थी। उसकी फ्रॉक हवा भर जाने से गुब्बारे जैसी फूल गयी थी और उसकी दो, पतली टांगें दिख रही थीं। मुझे सहसा ख्याल आया ब्लादिमीर नोबॉकोव की मुख्य पात्र लोलिता का।

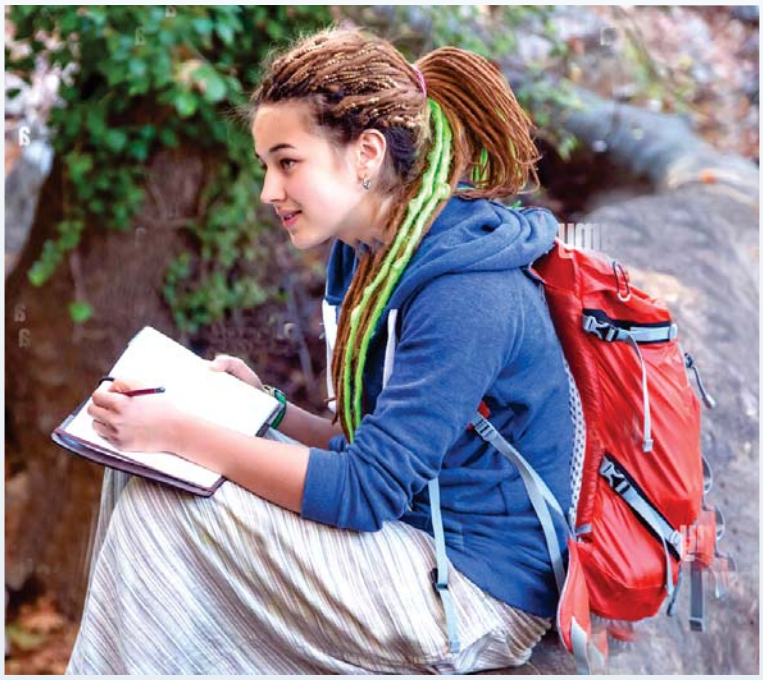

अचानक नजर कलाई पर गई-मेरी घड़ी शाम के चार बजा रही थी; मैं दोपहर के 12 बजे से लायब्रेरी में फ्रिश की 'एल्गी' (शैवाल) पढ़ रहा था। घड़ी की सुई 1, 2 और 3 को पार करते हुए कब 4 पर टिक गई, मुझे कुछ पता नहीं चला। मैं परेशानी में किताबें समेटने लगा। क्या बताऊं फ्रिश की किताब ने मुझे इस कदर अपने आगोश में ले लिया था कि मैं भूल गया कि साढ़े तीन बजे पवन को बॉटनिकल गार्डन में मिलने का मैंने वायदा किया है। मैंने अफरा-तफरी में पुस्तकालय प्रभारी को किताब थमायी और रजिस्टर पर पूरे हस्ताक्षर के बजाय नाम का केवल पहला अंग्रेजी लैटर उकेरकर मैं दरवाजे से बाहर भागा....। मैं लगभग दौड़ते हुए चल रहा था इसलिए एक जगह गिरते-गिरते बचा; तभी मेरे दोस्त शुभम ने मुझे टोका-'बड़ी जल्दी में हो, क्या बात है...?

''वो....मुझे पवन से मिलना था। दरअसल 'इकोलॉजी' की एक बढ़िया किताब मिली है उसे, वह लेकर आने वाला था साढ़े तीन बजे... उसी से मिलने बॉटनिकल गार्डन जा रहा हूं। अब देखो न चार बज गए हैं... ''चलो मैं भी देखता हूं... आओ चलें...''

हम दोनों तेज कदमों से गार्डन की ओर बढ़ने लगे...गार्डन में पहुंचकर हर संभव स्थान पर हमने उम्मीद भरी निगाहों से पवन की तलाश की... मगर अंततः मेरा अंदेशा सही निकला... वह लौट चुका था।

''जब समय पर मैं उसे नहीं मिला हूंगा तो उसने मुझे जरूर कोसा होगा...''।

''परेशान क्यों होते हो कल ले लेना, उसकी इकोलॉजी की किताब'' शुभम ने एक अच्छे दोस्त की तरह दिलासा देते हुए कहा।'' तुम नहीं जानते हो, वह किताब उसके बड़े भाई की है और वह आज ही की ट्रेन से बैंगलोर रवाना हो रहे हैं....''।

''तो क्या हुआ...वह किताब तुम्हें दुकान पर भी मिल जानी चाहिए।''

मनीष मोहन गोरे विज्ञान प्रसार दिल्ली में वैज्ञानिक के पद पर कार्यरत हैं। आपका जन्म 15 जुलाई 1981 को देवरिया उ.प्र. में हुआ। वे विज्ञान लेखन के क्षेत्र में विज्ञान कथा और लेख दोनों ही लिखते रहे हैं। आपने देशभर के वरिष्ठ विज्ञान लेखकों की साक्षात्कार-शृंखला तैयार की है। विज्ञान लेखन, विज्ञान संचार और विज्ञान जिज्ञासाओं को ध्यान में रखकर उन्होंने जिन वैज्ञानिकों से बातचीत की वह काफी चर्चा में रहे। राजभाषा विभाग द्वारा जन्तु व्यवहार नाम पुस्तक के लिए राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान पुरस्कार से सम्मानित हैं।

''यही तो समस्या है....वह किताब आउट ऑफ प्रिन्ट चल रही है और पवन के बड़े भाई के पास उसकी ओल्ड एडीशन है.... फ्रिश के बच्चे ने मुझे बेवकूफ बना दिया उसके लिखने की स्टाइल इतनी अच्छी है कि 'पन्नों से नजर हटने का नाम ही नहीं लेती..... इकोलॉजी के मेरे दो प्रश्न गए काम से।''

''इतनी फिक्र की कोई आवश्यकता नहीं है। हम दूसरी अच्छी किताब ढूंढ़।'' शुभम की आवाज हवा में लटक गई, ''वह छोटी लड़की मेरी नोट बुक लिए जा रही है..., ऐ लड़की! रुको!'' चीखते हुए शुभम बरगद के बूढ़े पेड़ की ओर भागा।

मैंने देखा, दूर एक नौ-दस साल की लड़की किताब जैसी कोई वस्तु लहराते हुए टीशू कल्चर के बाद रोपे गए नन्हें पौधों की क्यारियों वाले रास्ते में मुड़ रही थी। उसकी फ्रॉक हवा भर जाने से गुब्बारे जैसी फूल गयी थी और उसकी दो, पतली टांगें दिख रही थीं। मुझे सहसा ख्याल आया ब्लादिमीर नोबॉकोव की मुख्य पात्र लोलिता का। अगले पल 'लोलिता' का ख्याल त्यागकर मैं शुभम के पीछे दौड़ा जो लोलिता मेरा मतलब है उस नन्हीं लड़की के पीछे भागा था।

मेरे पहुंचने से पहले ही वह गिरफ्त में आ गई थी... मगर थोड़ी देर में यह साफ हो गया कि वह बिल्कुल निर्दोष थी। दरअसल शुभम ने अपनी नोटबुक एक पेड़ की चौड़ी-झुकी डाल पर रख दी जो वहीं पर थी और संशय में उस लड़की का पीछा किया था, जिसके हाथ में उसकी नोटबुक नहीं एक नीली डायरी थी।

''मैंने आपकी कोई चीज नहीं ली है। हां, यह डॉयरी मुझे उन झाड़ियों में मिली है।'' डरी हुई लड़की ने दूर जंगल जैसा लुक देने वाली घनी झाड़ियों की ओर हाथ से इशारा करते हुए कहा। उसका मासूम और निश्छल चेहरा ही उसे निर्दोष साबित कर रहा था। वह आगे कुछ कह रही थी, ''मैं इस डॉयरी का क्या करूंगी? ज्यादा से ज्यादा इसके पन्ने फाड़कर कागज के नाव और जहाज बनाउंगी। अगर आप लोगों के किसी काम यह आ जाए तो आप ले लीजिए मगर यकीन मानिए। मैंने आपकी कोई किताब नहीं चुराई।''

उसके भोले शब्दों ने हमें शर्मिन्दा कर दिया था।

''मैंने तुम्हें गलत समझा; तुम बहुत प्यारी बच्ची हो। देखो, अब हम दोनों को माफ नहीं करोगी'' शुभम ने उसे पास बुलाकर दुलारते हुए कहा। मैंने इसी दौरान उस डॉयरी के भीतर एक सरसरी नजर डाल ली थी, वह मेरे काम की लगी इसलिए मैंने वह डॉयरी रख ली।

कल से मेरी जेब में पड़ी चॉकलेट का मुझे उसी वक्त ध्यान आया और मैंने उस लड़की को वह चॉकलेट दे दिया।

हम डॉयरी लिए वापस घर जाने के लिए बढ़ने लगे।

कुछ दूर निकल आने पर मैंने सहसा पीछे मुड़कर देखा, लड़की वहीं खड़ी बड़े चाव से चॉकलेट खा रही थी और हमें देखकर हाथ हिला रही थी। जवाब में हमने भी हाथ हिलाकर उससे विदा लिया।

''तुम्हें इस डॉयरी में अलाद्दीन के चिराग का ठिकाना मिल गया क्या?'' शुभम ने कटाक्ष किया।

''हां, ऐसा ही कुछ समझ लो! अरे, तुम नहीं जानते हमें क्या मिल गया है। बड़े कमाल की बातें लिखी हैं इस डॉयरी में-मुझे तो विश्वास ही नहीं हो रहा कि ऐसा वास्तव में हुआ होगा।''

''अब बंद करो अपना दार्शनिकों का सा लेक्चर और बताओ इस डॉयरी में क्या लिखा है-जल्दी से पढ़कर बताओ। तुम्हारी रहस्यपूर्ण बातों को सुनकर मुझे भी उत्सुकता हो रही है।''

''मैं बकवास नहीं कर रहा हूं। डॉयरी में क्या है, जानकर तुम भी दांतों तले अंगुली दबा लोगे। लो फिर सुनो-

मेरा नाम विलियम फ्रैंक है। मेरा जन्म 1680 में शिकागो (अमरीकी का एक नगर) में हुआ। मैंने बड़े होकर चिकित्सा विज्ञान में शिक्षा हासिल की और चिकित्सक हो गया।

4 जुलाई 1775

आज से 110 साल और मेरे जन्म से मात्र 15 साल पहले 1665 में अंग्रेज वैज्ञानिक रॉबर्ट हुक ने विज्ञान के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक खोज की थी। उन्होंने जन्तु और वनस्पति शरीर की सूक्ष्मतम इकाई को कॉर्क के स्लाइड में खोज निकाला था-मधुमक्खी के छत्ते के कोष्ठकों जैसी इन अति लघु रचनाओं को पहली बार हुक ने सूक्ष्मदर्शी से देखा और इसे 'कोशिका' (सेल) नाम दिया। बाद में जीवन विज्ञान की व्याख्या इन्हीं सूक्ष्म कोशिकाओं के आधार पर की गई। हुक की यह खोज वैज्ञानिक जगत में ''मील का पत्थर' साबित हुई।

मेरी उम्र जब आठ वर्ष की हो गयी तो मेरा नन्हा मस्तिष्क अपने आस-पास की घटनाओं से साक्षात्कार करने लगा था। रॉबर्ट हुक के बारे में थोड़ी जानकारी मुझे उसी छोटी अवस्था में हुई। मेरे पिताजी हुक की विलक्षण बुद्धि और योग्यता के कायल थे। बचपन में एक बार वे मुझे हुक की प्रयोगशाला में ले गए.... मुझे आज भी याद है कि हुक ने मेरे बालों में हाथ फेरा था और पीठ थपथपाकर कहा था-''होनहार लगता है, बड़ा होकर कुछ अनोखा काम करेगा...।''

बचपन से लेकर युवावस्था तक के दिनों में हुक मेरे आदर्श हुआ करते थे। प्रयोगशाला में मेज पर एक हड्डी रखा देख आश्चर्य के साथ मैंने उसके बारे में हुक से पूछा था तो जवाब में उन्होंने मुझे बताया था कि यह अजगर के अवशेषी पैर की हड्डी है जो उसके शरीर के भीतर स्थित होती है। काफी समय पहले सांपों के भी पैर हुआ करते थे मगर बाद में बिल या सुरंग में रहने के कारण, उसमें दाखिल होते वक्त उनके पैर दिक्कत पैदा करने लगे इसलिए बाद में सांपों ने इन पैरों का इस्तेमाल करना छोड़ दिया। फलस्वरूप अप्रयोग के कारण उनके पैर लुप्त हो गए और पीढ़ियां गुजर जाने के बाद आज बिना पैर वाले सांप अण्डे से निकलते हैं। मगर अजगर के शरीर में पिछले पैरों की हड्डियों के अवशेष आज भी हमें यह प्रमाण देते हैं कि पुराने जमाने में सांपों के पैर हुआ करते थे।

प्रकृति की कितनी विचित्र घटना है। समय और वातावरण के साथ प्राणियों के अनावश्यक अंगों का विलोपन। अगर अजगर के पैर की हड्डी नहीं मिलती तो हम इस तथ्य से अनजान ही रह जाते कि सांपों के पैर भी होते थे।

20 मार्च 1776

आज भौतिकी के जनक सर आइजक न्यूटन की 49वीं पुण्यतिथि है। आज ही के दिन 1727 में उनकी मृत्यु हुई थी। आज समूचे विज्ञान जगत में न्यूटन को स्मरण किया जा रहा है। न्यूटन 12 वर्ष की उम्र में स्कूल में पढ़ने गए थे और वे बचपन में प्रतिभाशाली विद्यार्थी नहीं थे।

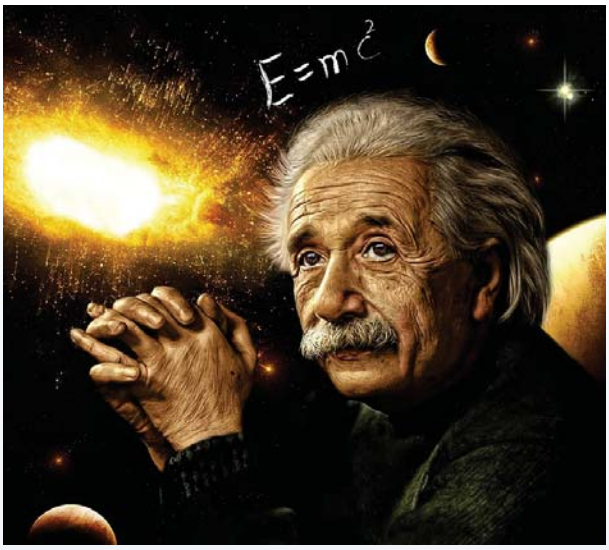

बीसवीं शताब्दी का सबसे बुद्धिमान व्यक्ति अमरीकी वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टाइन की मौत के बाद जब इनके मस्तिष्क की वैज्ञानिक जांच की गई तो पाया गया कि मानव मस्तिष्क का वह भाग जो विज्ञान और गणित सीखने में मदद करता है, आइंस्टाइन के मस्तिष्क में वह हिस्सा सामान्य से 2-3 गुना अधिक बड़ा था।

17वीं सदी के महान वैज्ञानिक न्यूटन की ख्याति मैंने काफी पढ़ी-सुनी थी मगर उनके निकट मैं 1778 में आया जब उन्हीं के नगर लन्दन में मैं आ बसा। सौभाग्य से मैं उनका व्यक्तिगत चिकित्सक बन गया। वे मुझसे बहुत खुश रहा करते थे।

न्यूटन के भुलक्कड़पन का स्वभाव तो दुनिया जानती है मगर दूसरी तरफ वह एक स्पष्टहृदयी और संवेदनशील इन्सान थे.... वे अपने प्रशंसकों से बिना राग-द्वेष के मिलते थे....बाद के दिनों में न्यूटन मेरे इतने अभिन्न हो गए थे कि उनकी मृत्यु की खबर सुनकर मैं निश्चेष्ट हो गया। न्यूटन विज्ञान जगत में आज भी स्मरणीय हैं। मेरे हृदय में उनका स्थान अति विशिष्ट है। सन् 1846 में मैं जर्मनी प्रवास पर था। हिटलर की सत्ता कायम थी। एक बार जब हिटलर गंभीर रूप से बीमार हुआ तो उनके अंगरक्षक ने मुझे हिटलर के सम्मुख पेश किया। मेरे मिलनसार स्वभाव ने हिटलर को प्रभावित किया। मेरे इलाज के बाद जब चन्द रोज में ही वह चंगा हो गया तो खुश होकर उसने अपनी एक अंगूठी निकालकर मुझे उपहार स्वरूप भेंट कर दी थी.... हिटलर की दी हुई अंगेठी आज भी मेरे दाहिने हाथ की मध्यमा में शोभायमान है।

इलाज के दौरान हिटलर से हुई उन कुछ किश्तों की मुलाकात के बाद मैंने निष्कर्ष निकाला कि वह गजब का दृढ़

निश्चयी और आत्मविश्वासी व्यक्ति था। हिटलर के आत्मविश्वास का केवल 25 फीसदी किसी सामान्य व्यक्ति को मिल जाए तो वह दुनिया का हर मुश्किल काम आसानी से कर लेगा-ऐसा मेरा मानना है।

1 जनवरी 1910

बीसवीं शताब्दी का सबसे बुद्धिमान व्यक्ति अमरीकी वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टाइन की मौत के बाद जब इनके मस्तिष्क की वैज्ञानिक जांच की गई तो पाया गया कि मानव मस्तिष्क का वह भाग जो विज्ञान और गणित सीखने में मदद करता है, आइंस्टाइन के मस्तिष्क में वह हिस्सा सामान्य से 2-3 गुना अधिक बड़ा था। प्रकाश की गति से संबंधित आइंस्टाइन के सूत्र $E=Mc^2$ और सापेक्षता सिद्धान्त से दुनिया का भला कौन व्यक्ति अनभिज्ञ होगा।

20 मार्च 1931

1920 के बाद मैं भारत के अनेक महानगरों में रहा। एक जमाने में 'विश्व गुरू' रह चुका अपनी सीमाओं में भव्य और समृद्ध सांस्कृतिक इतिहास समेटे हुए देश भारत मुझे हमेशा आकर्षित करता रहा था। 1932 में बैंगलौर स्थित रामन इन्स्टीच्यूट में मेरी मुलाकात भारत के मशहूर नोबेल विजेता भौतिकशास्त्री सर सी.वी. रामन से हुई।

सादे लिबास और उच्च विचार वाले रामन जैसे विलक्षण व्यक्तित्व से मिलकर मैं बहुत प्रभावित हुआ। मुझे आश्चर्य हुआ कि दुनिया की चमक-दमक से दूर इतना मामूली सा दिखने वाला व्यक्ति विश्व के सबसे बड़े सम्मान नोबेल से नवाजा गया है...। रामन से मेरी मुलाकात अनौपचारिक थी। उनसे आधे घण्टे की प्रथम वार्ता से मुझे अनेक सूक्ष्म बातें सीखने को मिलीं।

रामन की युवा वैज्ञानिकों को सलाह थी कि 'प्रकृति में चारों ओर खुली आंखों से देखो और फिर स्वयं को प्रयोगशाला में बंद कर लो।' प्रकृति अवलोकन से ही वैज्ञानिक अनंसधान की प्रेरणा मिलती है।

13 जून 1938

भारत में आकर जीवित किंवदंती बन चुके गांधी से न मिलूं ऐसा संभव न था। अहिंसक युद्ध के पुरोधा हड्डी के ढांचे (गांधी) के विषय में एक बार आइंस्टाइन ने कहा था कि आने वाले समय में दुनिया के लोग भारत का स्वतंत्रता इतिहास पढ़कर इस बात को सहजता से स्वीकार नहीं कर पाएंगे कि एक साधारण हड्डी के कंकाल ने बिना तलवार-बंदूक के अंग्रेजों से भारत को आजाद करवाया था।

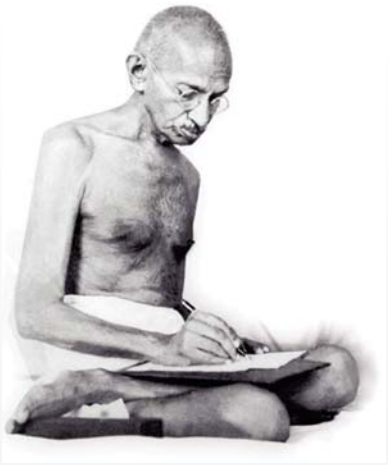

मैंने सुन रखा था कि गांधी विश्व के अकेले ऐसे इंसान हैं जिनके पास प्रतिदिन सर्वाधिक पत्र आते हैं। मुझे यह भी ज्ञात हुआ था कि गांधी जी लगभग प्रत्येक पत्र का जवाब स्वहस्तलिति में ही देने का प्रयास करते हैं।

मैंने सुन रखा था कि गांधी विश्व के अकेले ऐसे इंसान हैं जिनके पास प्रतिदिन सर्वाधिक पत्र आते हैं। मुझे यह भी ज्ञात हुआ था कि गांधी जी लगभग प्रत्येक पत्र का जवाब स्वहस्तलिति में ही देने का प्रयास करते हैं। मुझे इस बात पर यकीन नहीं था मगर जल्द ही मुझे यकीन कर लेना पड़ा जब उनसे मिलने के एक महीने बाद कलकत्ता (अब कालकाता) से भेजे मेरे पत्र का त्वरित जवाब गांधी जी ने खुद की हस्तलिपि में प्रेषित किया-मैं हैरान रह गया। पत्र की एक और विशेषता थी, उन्होंने पृष्ठ के हाशिये और कोनों का भी सार्थक उपयोग किया था...। गांधी की सहजता और सरलता में ही उनकी महानता छिपी हुई थी...।

5 दिसम्बर 1929

लगभग 11 महीने मैं भारत के कलकत्ता नगर में था। मैं यहां ममता और दया की प्रतिमूर्ति मदर टेरेसा से मिलने की अभिलाषा मन में लेकर आया था। मुकर्रर तिथि को टेरेसा मुझसे बड़े इत्मीनान और प्रेम के साथ मिलीं। उनकी वाणी से वात्सल्य और ममता की नदी बहती थी। मैंने महसूस किया। कलकत्ता में मैं जब तक रहा, मदर के साथ अनाथ रोगियों की निःस्वार्थ डॉक्टरी सेवा करता रहा। मुझे इस काम में अलौकिक आनंद मिल रहा था। वास्तव में, भूखे नंगे, बीमार, बेसहारा दीन.दुःखियों की मां थीं करूणा की मूर्ति मदर टेरेसा।

11 फरवरी 1942

1939 में शुरू हुए दूसरे विश्व युद्ध ने मुझे भीतर तक उद्वेलित कर दिया। रोज-रोज विनाश की खबर सुनकर मेरे रोंगटे खड़े हो जाते। विवश होकर मैं 1942 में जापान आ गया और वहां अलग-अलग स्थानों पर नाभिकीय प्रहार से पीड़ित लोगों की मैंने सेवा की। मैं उनकी दयनीय दशा देखकर पागल जैसा हो गया। तमाम घायल ऐसे मिले जिनके शरीर की ऊपरी त्वचा नाभिकीय विकिरण के कुप्रभाव से जल गई थी।

जापान में मैं 1945 तक रहा और अमरीका-जापान के बीच युद्ध थमने के बाद पुनः भारत लौट आया। दूसरे विश्व युद्ध के दौरान मेरा जापान प्रवास मेरे लिए एक दुःस्वप्न जैसा था। इस विनाश लीला के निकट से दर्शन हो जाने के बाद अब मेरे जीने की इच्छा क्षीण होने लगी है।

कारखानों से निकले जहरीले रसायन और घरों के कचरे नदी के शुद्ध जल को विषाक्त कर रहे हैं। दुनिया पहले और दूसरे विश्व युद्ध की विभीषिका झेल चुका है मगर आश्चर्य है कि वे ही राष्ट्र और लोग पुनः नाभिकीय अस्त्रों का अनवरत निर्माण और भण्डारण कर रहे हैं।

30 अक्टूबर 1948

आज भारत के महानायक और अभिभावक गांधी का गोलियों से छलनी शरीर देख मेरा हृदय द्रवित हो गया। सरलता और सज्जनता का इतना बुरा नतीजा देखकर मैं कांप उठा। यह भारत की बहुत बड़ी क्षति है।

5 अक्टूबर 1964

मुझे बी.बी.सी. से आज समाचार मिला कि फ्रांस के दार्शनिक-साहित्यकार ज्यां पाल सार्त्र ने नोबेल पुरस्कार (साहित्य) ठुकरा दिया। सार्त्र नोबेल सम्मान को नोटों से भरे बोरे से ज्यादा कुछ नहीं समझते। फ्रांस में मैं केवल 2 वर्ष ही रह पाया था और वहीं मैंने सार्त्र की ख्याति सुनी थी। एक बार मेरी सार्त्र से टेलीफोन लाइन पर बात हुई थी....फोन पर ही बड़े नीडर और जिंदादिल व्यक्ति लगे थे मुझे। आज का समाचार सुनकर मुझे अफसोस हो रहा है कि ऐसे अद्भुत शख्स से न मिलकर मैंने बहुत बड़ी भूल की। अब वापस एक बार फिर फ्रांस जाना हो पाए, इसकी संभावना नहीं के बराबर है, क्योंकि अब मैं ज्यादा जीवित रहना नहीं चाहता हूं। 5 अक्टूबर 1964 वाले पन्ने के बाद डॉयरी के ढेर सारे पन्ने सादे हैं।

29 अगस्त 1980

मुझे आज अनुभव हो रहा है कि औद्योगिकरण और नगरीकरण हमारे स्वास्थ्य और जीवन के लिए कितने खौफनाक साबित हुए हैं। धरती के श्रृंगार इन हरे-भरे वनों का हम तेजी से विनाश करते जा रहे हैं। वर्षा के पानी को रोकने के लिए पेड़ ही मौजूद नहीं हैं। फलस्वरूप बाढ़ आ रही है। समूचा नगर, रहने वाले लोग, मवेशी सब डूब रहे हैं। फैक्ट्रियों और मोटर वाहनों के धुंए जानलेवा प्रदूषण फैलाकर वायुमण्डल में बची-खुची प्राणवायु ऑक्सीजन की प्राकृतिक मात्रा भी कम कर रहे हैं।

कारखानों से निकले जहरीले रसायन और घरों के कचरे नदी के शुद्ध जल को विषाक्त कर रहे हैं। दुनिया पहले और दूसरे विश्व युद्ध की विभीषिका झेल चुका है मगर आश्चर्य है कि वे ही राष्ट्र और लोग पुनः नाभिकीय अस्त्रों का अनवरत निर्माण और भण्डारण कर रहे हैं। इस नाभिकीय प्रतिस्पर्धा में पूरी दुनिया अंधी हो चली है। वे शायद यह नहीं जानते कि यदि तीसरा विश्व युद्ध शुरू हो जाए तो चौथा युद्ध देखने के लिए दुनिया का एक भी व्यक्ति जीवित नहीं बचेगा। आइंस्टाइन ने एक बार बहुत ही भयानक संभावना व्यक्त की थी। उन्होंने कहा था कि चौथा विश्व युद्ध नहीं होगा...।' उनके इस कथन का निहीतार्थ यही था कि तीसरे विश्व युद्ध के बाद इस पृथ्वी पर कुछ शेष बचेगा ही नहीं तो चौथे युद्ध का सवाल ही नहीं पैदा होता।

पर्यावरण प्रदूषण और नाभिकीय प्रतिस्पर्धा के साथ.साथ तीसरा बड़ा खतरा जनसंख्या का मुंह फैलाये हमारे सामने खड़ा है। बढ़ती जनसंख्या का कहर दुनिया को कहीं का न छोड़ेगा। मैंने काफी प्रयासों के बाद ऐसा चमत्कारी रसायन ढूंढ लिया जो शरीर की कोशिकाओं में विनाशकारी क्रियाओं (जिसे 20वीं सदी के वैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक पुष्टिकरण के बाद 'कैटाबोलिज्म' नाम दिया) को एकदम शिथिल कर देता था। कैटाबोलिज्म और एनाबोलिज्म की अवधारणा तब नहीं थी परन्तु मैंने अपने अनुसंधान और वैज्ञानिक प्रयोगों के आधार पर इस तथ्य की खोज कर ली थी कि मनुष्य और दूसरे जीवों की उम्र बढ़ने के साथ-साथ उनके शरीर की कोशिकाएं बूढ़ी होती जाती हैं और एक समय के बाद वे नष्ट हो जाती हैं-मनुष्य और अन्य जीवों की तभी स्वाभाविक मृत्यु होती है। यदि केवल एनाबोलिज्म (निर्माणकारी जैवीय क्रियाएं) की प्रक्रिया कोशिकाओं में होने लगे तो कोई मनुष्य मरेगा ही नहीं यानि वह अमर हो जाएगा और मैंने इसी दिशा में 1710 के बाद काम करना शुरू किया। अन्ततः मुझे 1713 में सफलता मिल ही गई। मैंने वह रसायन बना लिया जो वर्तमान वैज्ञानिक युग की भाषा में 'कैटाबोलिज्म' की प्रक्रिया को लगभग निष्क्रिय कर देता है। दूसरे शब्दों में कहें तो मैंने ऐसे रसायन का निर्माण कर लिया था जिसके प्रभाव से शरीर की कोशिकाएं कभी बूढ़ी नहीं होंगी। इस अमरता का रहस्य मेरे सीने में कैद रहा.... मैंने इसे उजागर नहीं किया, इस भय से कि प्रकृति के विकास का चक्र कहीं बाधित न हो जाए.....

मैंने एक दिन हिम्मत बटोरकर अमरता प्रदान करने वाला

रसायन पी लिया.....मुझे महसूस हो रहा है कि मेरे शरीर के अंदर एक नई ऊर्जा का संचार हो गया है; मेरे उत्साह में असीम उछाल आ गया है। अब मेरे मन में जीने की उत्कंठा हजार गुनी हो गई है।

मेरी खोज इतनी कारगर और क्रांतिकारी होगी, इस पर मुझे संदेह था मगर अब मुझे हकीकत को किसी ऐसे मुजरिम के किए जुर्म के समान स्वीकार कर लेने में कोई परेशानी नहीं हो रही है जिसे पता होता है कि उसके सच बोलने पर उसके जुर्म को माफ कर दिया जाएगा।

अमरता के रसायन का असर जबरदस्त था। मुझसे पहले, मेरे साथ और मेरे बहुत बाद पैदा होने वाले मेरे सामने बाल सफेद कर और त्वचा पर झुर्रियां लटकाकर भगवान के प्यारे हो गए और मैं सदाबहार सिने स्टार की तरह हमेशा नौजवान बना रहा... मैंने यह दुनिया 300 साल से ज्यादा समय तक देखी और इस दौरान न मेरा तन बूढ़ा हुआ और न मेरा मन। मेरे बाल काले बने रहे और मेरा व्यक्तित्व देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि मुझ नौजवान की उम्र 300 साल की है। मैंने इन 300 साल में पूरी दुनिया की सैर कर डाली-विश्व भ्रमण मैं विवश होकर करता रहा। लोग मेरी नौजवानी पर संदेह न कर बैठें, इसी डर से मैं किसी भी एक स्थान पर 30-35 सालों से ज्यादा नहीं ठहरा। मैंने हर जगह अपने पेशे की चमक बिखरी-जोरदार मानव सेवा की और वाहवाही लूटी। एक संवेदनशील डॉक्टर के रूप में मैंने हर जगह अपनी पहचान छोड़ी। मेरे इस विश्व भ्रमण के दरम्यान मेरी नजरों के सामने अनेक ऐतिहासिक विश्व घटनाएं घटित हुईं; तमाम महत्वपूर्ण खोज व आविष्कार हुए। मैं उन सबका चश्मदीद गवाह हूं। उन अत्यन्त महत्व वाली घटनाओं से संबंधित हर जरूरी बात मैंने इस डॉयरी में लिखी है। डॉयरी लिखना मेरा पुराना शगल है। बीते पृष्ठों में उन विश्व प्रसिद्ध इतिहास पुरूषों/घटनाक्रमों का लेखा-जोखा है जिनका वास्ता मुझसे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से रहा है...। यह डॉयरी का अंतिम पृष्ठ है। ''ओफ्फ!'' कहकर मैंने लम्बी सांस छोड़ी और डॉयरी बन्द की। पूरा वृतांत सुन लेने के बाद शुभम के चेहरे पर अनेकानेक भाव गड्ड-मड्ड हो रहे थे। यह तो बड़ी रहस्यपूर्ण और विचित्र डॉयरी हमारे हाथ लग गई। एक पल के लिए तो यह सब कुछ अविश्वसनीय गप्प सा लगता है मगर दूसरे पल इसमें लिखी अनेक बातें इसकी प्रामाणिकता को भी सिद्ध करती हैं। वैसे इस डॉयरी ने तो अंत में अनेक अनसुझे सवाल छोड़ दिए। मसलन- क्या अमरत्व की औषधि वास्तव में खोजी गई थी? क्या वास्तव में विलियम फ्रैंक नामक शिकागोवासी चिकित्सक लगभग 325 सालों से जीवित है जिसने यह डॉयरी लिखी है? और यह डॉयरी इन झाड़ियों तक आखिर पहुंची कैसे?'' शुभम एक सांस में इतना कुछ कह गया।

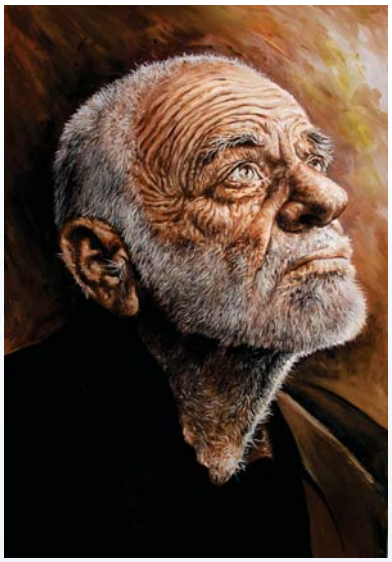

क्या अमरत्व की औषधि वास्तव में खोजी गई थी? क्या वास्तव में विलियम फ्रैंक नामक शिकागोवासी चिकित्सक लगभग 325 सालों से जीवित है जिसने यह डॉयरी लिखी है? और यह डॉयरी इन झाड़ियों तक आखिर पहुंची कैसे?''

''एक बात और ध्यान देने वाली है। इस डॉयरी में फ्रैंक की इस संसार से विरक्ति के संकेत मिल रहे हैं मगर उसकी मौत का जिक्र कहीं नहीं है।'' मैंने कहा। शुभम ने तुरन्त प्रतिप्रश्न किया- ''फ्रैंक मर कैसे सकता है? उसने तो अमरत्व का रसायन पी रखा है। पिछले 325 सालों से वह लगातार जीवित है जैसा कि उसने अपनी इस डॉयरी में लिखा है।''

मैंने शुभम को समझाते हुए कहा- ''देखो... तुम कुछ भूल रहे हो। फ्रैंक ने डॉयरी के शुरूआती पृष्ठों में साफ-साफ लिखा है कि उसके द्वारा खोजी गयी अमरत्व की औषधि खाकर व्यक्ति अपनी प्राकृतिक मौत नहीं मरेगा। इसका अर्थ यह है कि उसकी अप्राकृतिक मौत यानि कि हत्य-आत्महत्या हो सकती है और डॉयरी के अन्त में तुमने देखा कि फ्रैंक इस संसार से इतना निराश हो गया है कि अब उसके हृदय में जीने की इच्छा शेष नहीं रह गई है। मुझे आशंका है कि उसने आत्महत्या कर ली होगी। उसकी डॉयरी में लिखे घोर निराशा और हताशा के शब्द मुझे आत्महत्या के ही संकेत दे रहे हैं। तुम्हें क्या लग रहा है?

''तुम्हारी बात तार्किक है.... मुझे भी ऐसी ही बातों का संशय हो रहा है।''

शुभम ने गंभीरता के साथ जवाब दिया। मुझे अचानक ख्याल आया कि उन झाड़ियों में हमें संभवतः कोई सुराग अवश्य मिल जाना चाहिए जो हमारे संशय को यकीन में बदल दे इसलिए हमें वहां जाकर छानबीन करनी चाहिए।

मगर अंधेरा काफी हो गया था इसलिए उस शाम वहां जाने का विचार हमने त्याग दिया और अगली सुबह वापस बॉटनिकल गार्डन में आने की योजना बनाकर हम अपने घर को चले गए। रात में मैं पूरी नींद नहीं सो सका। जब नींद की गहराई में मैं डूबने लगा तभी अचानक फ्रैंक का काल्पनिक चेहरा मेरी आंखों के सामने आ जाता।

सुबह जब मेरी नींद खुली तो मैंने स्वयं को तरोताजा महसूस किया-इसके मायने यह थे कि फ्रैंक की कल्पना ने मुझे पिछली रात ज्यादा परेशान नहीं किया था और मैंने चार-पांच घंटे की एक अच्छी नींद ले ली थी। फ्रैंक को मैंने इसके लिए धन्यवाद दिया और अगले 20 मिनटों में मैं बिल्कुल तैयार हो गया। हल्का नाश्ता लेने के बाद प्रातः 7 बजे प्रातः मैं घर से निकल गया यह सोचकर कि 7 बजकर 15 मिनट तक बॉटनिकल गार्डन पहंच जाउंगा और यहीं समय भी हमने तय किया था। निर्धारित समय पर जब मैं गार्डन में दाखिल हुआ तो वहां शुभम कलाई घड़ी पर नजर गड़ाए खड़ा मिला।

फ्रैंक की आत्महत्या के साथ अमरत्व की सार्थक खोज भी दफन हो गई, वहीं दूसरी तरफ हमने सोचा कि अमरत्व की औषधि का क्या लाभ होता-अमर होकर पृथ्वी से जीवन के अंत का चलचित्र कौन देखना चाहेगा ? शायद कोई नहीं।

'मुझे लगा तुम लेट हो गए।' वह बोला, ''नहीं, लेट कैसे हो सकता था, मिशन जो इतना रोचक है, आओ देखें। उन झाड़ियों के बीच शायद हमें कुछ और हमें प्रमाण मिल जाए।'' हम दोनों तेज कदमों के साथ उन झाड़ियों की ओर बढ़ने लगे। उन झाड़ियों में बोगनवेलिया प्रजाति के अन्य सदस्य पौधों की अधिकता थी। ये पौधे अपने दृढ़ तनों पर कांटे लिए होते हैं इसलिए हमने बड़ी सावधानी के साथ उनके अंदरूनी भूमि की छानबीन की। सूखे पत्तों, खर-पतवार से अटी पड़ी जमीन की हमने काफी समय तक तफ्तीश की और अंत में निराश होकर हम लौटने का मन बना ही रहे थे कि तभी शुभम की निगाह किसी कागज पर गई। वह लगभग चीखते हुए बोला।

'वो देखो, वह कागज का टुकड़ा उसी डॉयरी का लगता है'। एक ओर जमीन पर पड़े पीले पड़ चुके उस कागज को उठाकर शुभम ने मुझे दिया।

'अरे हां, यह तो फ्रैंक की डॉयरी का ही उखड़ा हुआ एक पृष्ठ है, हस्तलेख भी वही है, देखें क्या लिखा है, इसमें?

मैं वह पृष्ठ पढ़ने लगा-

12 दिसम्बर 1996

पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या वृद्धि और नाभिकीय प्रतिस्पर्धा जैसी विकराल समस्याओं को देखते हुए मुझे विश्व विनाश की संभावना निकट भविष्य में दिख रही है इसलिए मेरे हृदय में अब और बुरे दिन देखने की इच्छा नहीं रह गई है। अमरत्व की औषधि के असर से प्राकृतिक मौत तो मुझे आनी नहीं है मगर जीवित रहकर प्रकृति की संहारलीला और नाभिकीय युद्ध की आशंकाओं के बीच हर रोज मरने से मेरा आत्महत्या कर लेना ही बेहतर है।

मैंने आज निर्णय कर लिया है कि मैं आत्महत्या कर लूंगा। इसके लिए मैं गंगा नदी की शरण में जाऊंगा। मैंने सुना है कि गंगा भारत की सबसे पवित्र नदी है और उसमें स्नान कर लेने के बाद पापी व्यक्ति के भी सारे पाप धुल जाते हैं। आत्महत्या भी एक अपराध है इसलिए मैं समझता हूं कि मेरी मृत्यु के बाद गंगा मुझे क्षमादान देंगी। अमरत्व की औषधि का अस्तित्व भी मेरे साथ समाप्त हो जाएगा। क्योंकि मैं नहीं चाहता कि अमर होकर लोग इस दुनिया को दिन-ब-दिन और बदसूरत होता हुआ देखें....। अलविदा.... विलियम फ्रैंक।

इन अन्तिम 17-18 वाक्यों के बाद बिलियम फ्रैंक के जीवन की किताब बंद हो गई। हम भारी मन और अनजाने उधेड़बुन के साथ लौटने लगे..... फ्रैंक की इस संसार से विरक्ति, उसकी घोर निराशा के बीच उसके आत्महत्या के निर्णय ने हमारे अंदर भी अबूझ और अप्रत्याशित तरंगों को जन्म दे दिया था। उसी क्षण जहां एक तरफ हमारे मन में यह विचार इस कदर तेजी से उठा कि फ्रैंक की आत्महत्या के साथ अमरत्व की सार्थक खोज भी दफन हो गई, वहीं दूसरी तरफ हमने सोचा कि अमरत्व की औषधि का क्या लाभ होता-अमर होकर पृथ्वी से जीवन के अंत का चलचित्र कौन देखना चाहेगा? शायद कोई नहीं। फ्रैंक के आत्महत्या का निर्णय उसे एक कमजोर व्यक्ति की श्रेणी में खड़ा करता है मगर उसने इतनी लम्बी आयु (325 वर्ष) में दुनिया के हर रंग देखे इसलिए उसकी जीवन से अनिच्छा स्वभाविक थी।

''हमें फ्रैंक के व्यक्तित्व और उसके सद्विचारों को दुनिया के सामने लाने का बीड़ा उठाना चाहिए। शायद इसी से नाभिकीय प्रतिस्पर्धा, प्रदूषण और बढ़ती आबादी जैसी गंभीर समस्याओं को समाप्त करने की दिशा में लोग एकजुट हो जाएं और शायद तब फ्रैंक का बलिदान सार्थक सिद्ध हो। मैं ठीक कह रहा हूं न।''

लगा कि शुभम मुझे नहीं सुन रहा है मगर ऐसा नहीं था-विचारों में डूबे शुभम ने जवाब के नाम पर केवल अपना सिर हिला दिया। मैं कुछ और कहने वाला था मगर तभी दूर उन्हीं टीशू कल्चर पौधों की क्यारियों के बीच कल वाली 'लोलिता' मेरा मतलब है वही छोटी लड़की दिखाई पड़ गई।

हवा भर जाने से आज भी उसकी फ्रॉक गुब्बारे जैसी फूल गयी थी और उसकी दुबली टांगें दिख रही थींकृ। वह छोटी लड़की खिलखिला कर हंसी जा रही थी और अपने दोनों हाथ जोर-जोर से हिला रही थी।

❑❑❑

द्रव और ठोस की प्रेम कहानी

डॉ. अनामिका 'अनु'

शादियां स्वर्ग में तय होती होती है ताकि धरती पर लोगों के जीवन को नरक किया जाए, मगर थोड़ी-सी समझदारी और समायोजन से कुछ लोग इसे नरक नहीं बनने देते।कुछ लोग लगातार तब तक बेवुकूफ़ियाँ करते रहते हैं जब तक पूरा का पूरा नरक तैयार नहीं कर लें। छोड़िए इन बातों को, आज सुनिये एक कहानी - ठोस और द्रव के दांपत्य जीवन की।

बहुत पुरानी बात है। एक बार ठोस और द्रव को आपस में मुहब्बत हो गई। ... यूं तो हम सब जानते ही हैं कि ठोस तथा द्रव अवस्था में अणुओं के बीच पर्याप्त अन्तर -आण्विक बल कार्य करता है मगर ये कोई नहीं जानता था कि एक दिन ठोस और द्रव के अणुओं के बीच गहरा और मजबूत अन्तर आण्विक आकर्षण बल स्थापित हो जाएगा। मगर होनी को कौन टाल सकता था, सो ठोस और द्रव में इश्क़ हुआ और वह भी ऐसा जबरदस्त इश्क़ कि वे साथ में जीने मरने के सपने देखने लगे। आँखों में फ्लेमिंगों, नीलकंठ, ज़र्दक और न जाने कौन-कौन सी पंक्षियों के जोड़े उड़ने लगे। कानों में कोयल और टकाचोर की आवाजें भिन्न-भिन्न तरंगदैर्ध्यों में सुनाई पड़ने लगी। ठोस जब अकेला होता तब उसे सातों रंग सुफ़ेद लगते मगर जैसे ही वह द्रव से मिलता, द्रव उसे प्रिज्म-सी लगती जिससे गुज़रकर उसका सुफ़ेद, सात रंगों में तब्दील हो जाता। इश्क़ में द्रव मदीना के जम-जम का जल हुई जा रही थी और ठोस - हिमालय के जैसा कोई संत पहाड़। सबकुछ ठीक-ठाक ही चल रहा था।

जब ठोस ने द्रव से दो वर्षों के प्रेम प्रलाप के बाद शादी करने की ठानी तो घर परिवार समाज में खूब हंगामा हुआ। चारों तरफ़ इनकी खूब शिकायत हुई। शादी के बाद हर जगह समायोजन द्रव को ही बिठाना पड़ता था। इसलिए बाद में द्रव दुःखी और उदास रहने लगी।ठोस अपनी बात पर हमेशा अडिग बना रहता था। ठोस की इच्छानुसार द्रव अपना आकार-प्रकार, इच्छा -अनिच्छा बदलती रहती थी।ठोस और द्रव के आण्विक टकराव धीरे-धीरे बढ़ने लगे। ठोस घिसने लगा। द्रव का रंग बदलता गया। ठोस और द्रव के परिजन उन्हें कोसने लगे। अगल-बगल भी वे उपहास का कारण बनते जा रहे थे। उनके बीच संवाद कम, विवाद ज्यादा होते थे। वे सुख नहीं, केवल दुःख एक-दूसरे को देने लगे। ... नये-नये में बिल्कुल ऐसा नहीं था, उस वक़्त सब ठीक और अच्छा चल रहा था। घर्षण तब शुरू हुआ जब संपर्क गहरा होता चला गया और उन्होंने साथ में एक लंबा समय बिता लिया। घर्षण का दूसरा नियम तो कहता ही है- घर्षण संपर्क तलों की प्रकृति पर निर्भर करता है। एक की प्रकृति लगातार कठोर बनी रहे तो दूसरा भी हमेशा समझौते की मुद्रा में कब तक रह सकता था। घर्षण की शुरूआत हुई और जीवन की रैखिक गति पर इसका विपरित प्रभाव पड़ना शुरू हो गया। घर्षण का पहला नियम, जीवन का सच बनता गया - घर्षण सदैव गति की विपरित दिशा में कार्य करता है।

उत्पलावता द्रव की पड़ोसन थी। वह नए विचारों की धनी महिला थी। जितना था नहीं, उससे अधिक दिखाना उसका स्वभाव था इसलिए वह हर चीज को हल्के-फुल्के ढंग से लेती और हवा में तैरती रहती थी। उसके बंगले में एक बड़ा सा स्वीमिंगपूल था। एक दिन उसने स्वीमिंगपूल के पास एक छोटी सी दावत रखी। उसने ठोस और द्रव को स्वीमिंगपूल का आनंद लेने के लिए बुलाया। स्वीमिंगपूल के चारों तरफ खाने-पीने की सुंदर व्यवस्था थी।

पहले द्रव स्वीमिंगपूल में गई और बेमन से जल में हिलोरे लेने लगी। फिर ठोस धीरे-धीरे, डरते, घबराते, शरमाते स्वीमिंग पूल में उतरा। वह तैर नहीं पा रहा था। थोड़ी देर बाद वह डूब गया तब द्रव ने उसे किसी तरह स्वीमिंगपूल से बाहर निकाला। ठोस को

अनामिका 'अनु' ने एम.एस.सी. (विश्वविद्यालय स्वर्ण पदक) पी.एचडी. (इंस्पायर अवार्ड, DST) उपाधि प्राप्त की है। उन्हें 2020 का भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार प्राप्त है। अनेक राष्ट्रीय- अंतर्राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं यथा- हंस, समकालीन भारतीय साहित्य,नया ज्ञानोदय, वागार्थ, बया, परिकथा, मंतव्य, कादम्बिनी, आउटलुक, आजकल, लमही, मधुमती, हरिगंधा, स्त्री काल, ललनटॉप, नवभारत टाइम्स, दैनिक जागरण, प्रभात ख़बर, दैनिक भास्कर, राजस्थान पत्रिका में कविता, कहानी, अनुवाद, आलेखों आदि का प्रकाशन। मराठी, बंगाली, मलयालम, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में कविताओं का अनुवाद। इंजीकरी' कविता संग्रह प्रकाशित। 'केरल के कवि और उनकी कविताएँ' का संपादन और अनुवाद।

स्वीमिंगपूल से बाहर निकलने में द्रव को बड़ी दिक्कत हुई,ठोस काफ़ी भारी था और किसी तरह की कोशिश नहीं कर रहा था। साथ ही साथ द्रव को भी तैरने में तक्लीफ़ हो रही थी।

द्रव ने घर आकर ठोस से कहा, 'तुम थोड़े निर्भीक, विचारवान और मिलनसार बनो तभी सार्वजनिक जगहों पर तुम्हें दिक्कत नहीं होगी। हर पल इतना गुरुत्व और गंभीरता धारण करने की ज़रूरत नहीं है। कभी-कभी बालसुलभ सरलता और नया सीखने की जिज्ञासा हमें हल्का महसूस कराती है और जीवन को उत्साह से भर देती है। हम सबको अपने भीतर दूसरों के लिए जगह बनाकर रखनी चाहिए।तुम थोड़े पोरस हो जाओ। यह सरलता और स्वयं का अहं भेदने से होगा, तब तुम तैर पाओगे और कभी नहीं डूबोगे। उस दिन द्रव भी अच्छे से तैर नहीं सकी थी। वह बस पानी के भीतर थोड़ा-बहुत हाथ पैर ही मार पाई थी।

ठोस ने उसे समझाया- 'तुम भी तो बहुत बोरिंग व्यवहार करती हो। थोड़ी चमक और उत्साह लाओ। खुशी पर फिसलना सीखो, शायद तब तुम भी स्वीमिंग पूल में अच्छी तरह तैर पाओ।'

ठोस की सलाह मानकर द्रव ने अपने को चमकाया, थोड़ी तैलीय हुई। द्रव की सलाह मानकर ठोस ने खुद को थोड़ा पोरस किया।

अब द्रव खेल-खेल में, मनोहार में ठोस के अंतस्थल में समा सकती थी। अब ठोस कितना भी दुःखी हो कोई घर्षण पैदा नहीं कर पाता था। वह तैलीय द्रव से इस प्रकार गले मिलता कि वह भी चिकना हो जाता था।

अगली बार उत्पलावनता ने जब उसे फिर स्वीमिंगपूल में बुलाया तो पोरस ठोस खूब तैरा, तैलीय द्रव के साथ। उत्पलावनता को यह देखकर अच्छा लगा मगर पार्टी में आए कुछ लोग आज भी उन दोनों को डूबते हुए देखना चाहते थे, उन्हें तैरते जोड़े से बड़ी ईर्ष्या हुई। वे फिर उनकी शिकायत करने लगे।

ये कहानी शिकायत से शुरू हुई और शिकायत पर ही खत्म। प्रेम के होते ही परिवार और समाज की शिकायत, विवाह के बिगड़ने पर भी शिकायत और विवाह के संभलने पर भी शिकायत। शिकायत एक कांस्टेंट या अचर की तरह बना रहा। लोग अब कहते हैं -

ठोस हलुक मिजाजी हो गया है। कोई कहता है उथला हो गया। द्रव पहले से अधिक चिकनी और चमकीली हो गई है। दोनों एक दूसरे साथ हमेशा चिपके रहते हैं। उनमें अब कोई गंभीरता नहीं बची है। मतलब साफ़ है, कुछ भी कर लो, आस-पास सबों को खुश करना नामुमकिन है। मर भी जाओ तो भी लोगों को चैन नहीं है, तब भी लोग कुछ न कुछ ज़रूर कहेंगे। ढंग से नहीं मरा। सही समय पर नहीं मरा। ऐसे कौन मरता है भला? वगैरह वगैरह। आइसक्रीम, बलून, नेटवर्क कुछ भी पकड़ा दो। किसी को नेटवर्क की रफ्तार से दिक्कत होगी, किसी को बड़े डेटा कार्ड की चाह होगी। किसी को शुगर की शिकायत, किसी को टाउंसिल की, किसी को आइसक्रीम का फ्लेवर ठीक नहीं लगेगा। किसी को बलून का रंग पसंद नहीं होगा, किसी को उसका आकार नहीं रास आएगा, कोई कहेगा बलून कौन किसको देता है, यह भी कोई उपहार हुआ? मतलब साफ़ है कि दुनिया में कोई ऐसी चीज नहीं जो सभी लोगों को खुश कर सके।

ये थी द्रव और ठोस की छोटी-सी प्रेम कहानी जो संघर्ष से शुरू हुई और समझदारी पर खत्म। एक नियत दबाव पर ठोस और द्रव दोनों रूप साथ साथ एक निश्चित ताप पर पाए जा सकते हैं। यह सच है।

❑❑❑

अलौकिक

प्रज्ञा गौतम

हिमालय की दुर्गम ऊँचाइयों को छूने का यह मेरा पहला अनुभव था। गंगोत्री पहुँचने के बाद मैं पैदल निकल पड़ा था, अनछुए और अनदेखे स्थानों की खोज में। मार्ग की प्राकृतिक सुंदरता ने मन मोह लिया था। भागीरथी के उद्गम गोमुख तक की मेरी यात्रा को मैं कैमरे में कैद करता जा रहा था। कल-कलबहती भागीरथी, गहरी, रहस्यमयी घाटियों के मौन को तोड़ता, किसी झरने का शब्द, देवदार के विशाल वृक्ष और सामने हिमाच्छदित उत्तंग शिखर! प्रकृति के इस विराट स्वरूप के आगे प्रथम बार मैंने अपने अस्तित्व की लघुता को अनुभव किया था।

मन अशांत था इसलिए मैं इस यात्रा पर निकला था। प्रकृति से मुझे गहरा लगाव था। पहाड़, झरने, घाटियाँ, घने वन और... और तारों भरा आकाश। हाँ, तारों भरा आकाश। आकाश के अनंत विस्तार और अगणित तारों ने मुझे सर्वाधिक आकर्शित किया था। यही कारण था कि धरती के चेतन सौंदर्य को भूलकर मैं वर्षों से तारों के परे झाँकने का प्रयत्न करता रहा।

मुझे अब तक याद है, मेरे बचपन की गर्मियों की वो रातें जब मेरे नाना ने ध्रुव तारे और सप्तर्षि मंडल से मेरा प्रथम परिचय करवाया था। वह सांझ का तारा, सबसे चमकीला शुक्र ग्रह और स्वच्छ आकाश में उत्तर से दक्षिण तक धूम्र रेखा सी फैली देवयानी-मंदाकिनी।

और फिर एलियंस की और सुदूर किसी ग्रह से आने वाली उड़न-तश्तरियों की कथाएं मुझे रोमांचित कर देतीं। मंगल पर बसने और परग्रहियों से मुलाकात के सपने सजोंए मैं बड़ा हुआ था।

अपने पसंदीदा विषय 'एस्ट्रोफिजिक्स' में पी.एचडी. करने के बाद मैं अमेरिका चला गया था। वहाँ मैंने SETI ज्वॉइन कर लिया। हमारी टीम बड़े आकार के और अतिसंवेदनशील रेडियो टेलीस्कोप विकसित करने में जुटी थी। हम ब्रह्माड के अंतिम छोर तक को देख सके इतना विशाल रेडियो टेलीस्कोप। चार वर्ष म्ज् में अपने कार्यकाल के दौरान कितने ही दूरस्थ तारों और उनके ग्रहों का मैंने अध्ययन किया था। ऐसी संभावना थी कि हमसे बहुत-बहुत विकसित सभ्यताएं इस ब्रह्मांड में हैं पर अभी तक हमें उनसे कोई संकेत नहीं मिल थे। मैं कुछ निराश था। ताजगी और बदलाव के लिए एक माह की छुट्टियाँ लेकर मैं भारत आ गया था। कुछ समय परिवार के साथ बिताने के बाद मैं अकेला ही हिमालय की इस यात्रा पर निकल गया था।

हाँ, तो मैं बात कर रहा था अपनी गोमुख यात्रा की। चढ़ाई करते-करते दोपहर हो गई थी। सूर्य सिर पर था। गर्मी अनुभव होने पर मैंने अपनी जैकेट उतारकर कंधे पर रख ली थी। तभी तेज हवा चलने लगी। बर्फीली-ठंडी चुभन थी हवा में। अचानक ही हवा के

प्रज्ञा गौतम ने विगत वर्षों में तेजी से विज्ञान लेखन में अपनी पहचान बनाई है। आपने विज्ञान प्रगति तथा विज्ञान कथा में नियमित लेखन किया। आपने बॉटनी में स्नातकोत्तर तक शिक्षा प्राप्त की तथा विज्ञान शिक्षक के रूप में अपना कॅरियर शुरू किया। वैज्ञानिक आधार पर लेखन करने में आपको महारत हासिल है। गहरी वैज्ञानिक दृष्टि और साहित्यिक अभिरुचि के चलते आपकी रचनाएँ मुक्ता, अहा जिंदगी, कादम्बिनी आदि में प्रकाशित हुई हैं। वर्तमान में आप कोटा, राजस्थान में निवासरत हैं।

तेज झोंके से मेरी जैकेट उड़कर नीचे पानी से भरे गड्ढे में जा गिरी। तेज हवा के साथ ही आकाश काले-काले बादलों से अट गया और मोटी-मोटी पानी की बूँदे गिरने लगीं। मौसम में अचानक हुए इस बदलाव से मैं हतप्रभ था। नीचे उतर कर गड्ढे में से मैंने अपनी जैकेट निकाली जो कि पूरी भीग चुकी थी। पानी के छीटों और हवा के थपेड़ों से बचने के लिए मैंने गीली जैकेट ही पहन ली।

वर्षा से मार्ग में बहुत फिसलन हो गई थी। संकरे और फिसलन भरे रास्ते पर मैं गीली जैकेट पहने चढ़ाई करता रहा। ऊपर पहुँचते-पहुँचते शाम गहरा चुकी थी। थकान और ठंड से मुझे बुखार आ गया। अब मुझे किसी आश्रय की तलाश थी। ऊपर होटल वगैरह नहीं थे। मुझे किसी ने बताया कि यहाँ कुछ साधु रहते हैं, उनके साथ ठहरा जा सकता है। एक छोटे कमरे के आगे मैं खड़ा हो गया। दरवाजा बंद था और अंदर से वार्तालाप की आवाजें आ रही थीं। मैंने दरवाजे पर दस्तक दी। कुछ क्षणों में दरवाजा खुल गया। साधु वेश में एक व्यक्ति था। मैंने इस आशा से अंदर प्रवेश किया कि शायद अंदर और भी व्यक्ति उपस्थित हैं क्योंकि बातों की आवाज आ रही थी। पर अंदर कोई नहीं था। कमरा लगभग खाली था। एक कोने में खाना बनाने के कुछ सामान थे और जमीन पर दो बिस्तर लगे हुए थे।

"क्या यह पागल है, जो अपने आप से ही बात कर रहा था?" मेरे मन में विचार कौंधा।

"किसे ढूँढ रहे हैं? यहाँ मैं अकेला ही रहता हूँ।" उनकी गंभीर और सधी हुई आवाज से मैं चौंक गया। उनकी आँखों में एक अद्‌भुत तेज था और होंठों पर हल्का स्मित।

मुझे भय मिश्रित आश्चर्य की अनुभूति हुई पर वहाँ रुकने के अतिरिक्त मेरे पास कोई विकल्प नहीं था।

"क्या मैं आज रात यहाँ आश्रय ले सकता हूँ?"

"अवश्य।"

मैंनें वहाँ गुनगुने पानी से दवा ली। और सूखे कपड़े पहने। मैं कुछ सामान्य हुआ तो बाबा ने मेरा परिचय पूछा।

"मैं राजस्थान से हूँ। वर्तमान में अमेरिका रहता हूँ और तारा-भौतिकी के क्षेत्र में कार्य कर रहा हूँ।"

"अमेरिका में कहाँ कार्यरत हो?"

"SETI इंस्टीट्यूट, केलिफोर्निया में। यह एक गैर-सरकारी संस्था है। हम ब्रह्मांड में जीवन की खोज में लगे हैं।"

"हाँ, मुझे जानकारी है SETI के बारे में। तो परग्रहियों से संपर्क साधने का प्रयत्न कर रहे हैं।"

मैं चौंक गया था। मुझे ऐसी अपेक्षा नहीं थी। यह व्यक्ति कोई साधारण बाबा नहीं था। उसके ज्ञान और अंग्रेजी भाषा पर पकड़ से यही लग रहा था।

"आप बहुत विद्वान मालूम होते हैं। अपना परिचय दीजिये।" बाबा केवल मुस्कुरा दिए।

"अब तक क्या उपलब्धियाँ रहीं आपकी?" उन्होंने जवाब नहीं देकर प्रति प्रश्न किया।

"पिछले चार वर्षों में हमने अत्यधिक विकसित, उच्च आवृत्ति वाले रेडियो टेलीस्कोप विकसित किए हैं जो कि सेन-फ्रांसिस्को में स्थापित हैं। इसी बीच मैंनें अनेक महासूर्यो और उनसे सम्बंधित ग्रहों का अध्ययन भी किया।"

"क्या आपका यही वास्तविक उद्देश्य था।"

"नहीं। इस अनंत ब्रह्मांड में कितनी ही सभ्यताएं हो सकती हैं। हमसे बहुत विकसित भी। लेकिन अभी तक हमें उनसे कोई संदेश प्राप्त नहीं हुए हैं। निकटतम ग्रहों पर अभी तक जीवन के कोई चिन्ह नहीं मिले हैं। सैकड़ों प्रकाश-वर्ष दूर किसी ग्रह से परग्रही पृथ्वी पर आएंगे, इसकी संभावना नगण्य सी है।" मैंने निराश स्वर में कहा।

"मैं मिल चुका हूँ परग्रहियों से।"

``मैं राजस्थान से हूँ। वर्तमान में अमेरिका रहता हूँ और तारा-भौतिकी के क्षेत्र में कार्य कर रहा हूँ।''

``अमेरिका में कहाँ कार्यरत हो ?''

``SETI इंस्टीट्यूट, केलिफोर्निया में। यह एक गैर-सरकारी संस्था है। हम ब्रह्मंड में जीवन की खोज में लगे हैं। ``हाँ, मुझे जानकारी है SETI के बारे में। तो परग्रहियों से संपर्क साधने का प्रयत्न कर रहे हैं।''

मैं चौंक गया था। मुझे ऐसी अपेक्षा नहीं थी। यह व्यक्ति कोई साधारण बाबा नहीं था। उसके ज्ञान और अंग्रेजी भाषा पर पकड़ से यही लग रहा था।

मैं दोबारा बुरी तरह चौंका था।

"आप? पर कैसे?"

बाबा पुनः रहस्यमय ढंग से मुस्कुराए।

"अभी-अभी तुमने भी स्वीकार किया है कि यह असंभव है कि परग्रही किसी उड़नतश्तरी में बैठकर पृथ्वी पर आएं। ठीक कह रहा हूँ न?"

मैंने सिर हिला दिया। मैं चुप था।

"हम उनके लिए इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं या फिर इतने विकसित नहीं हैं कि उनके द्वारा प्रसारित किसी संदेश को ग्रहण कर सकें।"

"आप उनसे किस प्रकार मिले हैं?"

"उनकी चेतना से मेरा संपर्क होता रहता है।"

"कैसे?" मेरा चेहरा पीला पड़ गया था। भय से रोंगटे खड़े होने लगे।

"तद्विष्णो परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्।" (अर्थात जो व्यापक है, अत्यंत उत्तम आनंद स्वरूप, उसको विद्वान लोग सब काल ने देखते हैं। वह सब में व्याप्त है, उसमें देश, काल एवं वास्तु का भेद नहीं, वह स्वयं प्रकाश सर्वत्र व्याप्तवान हो रहा है।)

उनके मुख से उच्चारित वेद मंत्र के एक-एक शब्द, अदृश्य सुगंध कणों की भाँति संपूर्ण परिवेश में व्याप्त हो गए। उन्होंने अपनी नजरें मेरे चेहरे पर गड़ा दीं जैसे मेरे मस्तिष्क के विचारों को पी रहे हों।

"क्या हुआ? तुम इतने विचलित क्यों हो गए?"

"नहीं, नहीं।" मैंने स्वयं को सहज बनाते हुए कहा-

"आप बता रहे थे कि आप से उनका संपर्क हुआ है। किस प्रकार? समझाइए।"

"हमारा मस्तिष्क उच्च क्षमताओं से युक्त है पर हमें उसकी क्षमताओं का ज्ञान ही नहीं है। हमारी मस्तिष्क ऊर्जा का अनेक रूपों में ह्रास होता रहता है। सरल शब्दों में कहें तो हमारा ध्यान अनेक जगह बँटा होता है। ज्यादातर नकारात्मक विचारों के

रूप में हमारी ऊर्जा का क्षय होता है। एक सरल उदाहरण देता हूँ। जब उत्तल लैंस प्रकाश को एक बिंदु पर केन्द्रित कर देता है तो कागज क्षण भर में भस्म हो जाता है। यदि मस्तिष्क की समस्त ऊर्जा को केन्द्रित किया जाए तो यह किसी अन्य मस्तिष्क से निकलने वाली ऊर्जा तरंगों से व्यक्तिकरण स्थापित कर सकती हैं।"

उन्होंने थोड़ा विराम लिया। मेरी धड़कनें बढ़ गई थीं। सम्पूर्ण शरीर में उत्तेजना की लहर दौड़ गई थी।

"वे इतने विकसित हैं कि चेतना की सूक्ष्म तरंगों के रूप में ब्रह्मांड में विचर कर सकते हैं। किसी यान द्वारा इतनी दूरियाँ तय करना संभव भी नहीं है।" उन्होंने बात पूरी की।

"आपकी बात मैं समझ गया हूँ पर आपके पास इस संपर्क का प्रमाण क्या है? विज्ञान प्रमाण माँगता है।"

"मुझे, तुम्हें या किसी और को प्रमाण देने की क्या आवश्यकता है? कालान्तर में मनुष्य अपने मस्तिष्क का इस तरह से विकास करे कि वह स्वयं उनको अनुभव कर सके।"

मेरे पास उनकी बात का कोई उत्तर नहीं था।

"हम गर्वोन्मत्त हो रहे हैं कि हम विकास के चरम पर हैं। प्रकृति से छेड़छाड़ कर के हम स्वयं को ईश्वर के समकक्ष समझ बैठे हैं पर यह विकास बहुत ही सतही है। इसे सर्वांगीण विकास नहीं कहा जा सकता। पृथ्वी का पर्यावरण, विभिन्न घातक रसायनों, विकिरणों और विभिन्न प्रकार के प्रदूषण से नष्ट हो रहा है, और एक ओर भयानक प्रदूषण जिसकी ओर मनुष्य का ध्यान कभी नहीं जाता वह है वैचारिक प्रदूषण। नकारात्मक विचारों का प्रवाह जो कि मनुष्य के मस्तिष्क की क्षमताओं को घटा रहा है।"

मैं उनकी बात से पूर्ण सहमत था।

तभी मुझे लगा जैसे मैं आकाश में एक सुनहरी दीप्ति को देख रहा हूँ। मेरी आँखें स्वाभाविक रूप से बंद हो गईं। मेरे होठों से शब्द प्रस्फुटित हुए -``क्या है, यह?'' मैंने अपनी संपूर्ण मस्तिष्क ऊर्जा को उस दीप्ति पर केन्द्रित कर दिया। मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे दूर आकाश में स्थित उस दीप्ति ने मानवाकृति का रूप ले लिया जैसे कोई छायाचित्र हो।

रात बहुत हो गई थी। उन्होंने मुझे गर्म दूध दिया। शीघ्र ही मुझे निद्रा आ गई। सुबह उठा तो ताजगी अनुभव कर रहा था। बुखार और थकान का नामो निशान भी नहीं था।

"बाबा, यदि आपको असुविधा न हो तो, मैं कुछ दिन आपके पास व्यतीत करना चाहता हूँ। यहाँ प्रकृति की गोद में। सभी प्रकार के प्रदूषणों और नकारात्मकता से दूर। ताकि मैं स्वयं का विकास कर सकूँ और परग्रहियों से संपर्क कर सकूँ।"

मैं वहीं रुक गया था। अपने घर मैंने संदेश भिजवा दिया।

मेरे पिताजी, जो कि स्वयं भी गणित एवं भौतिकी के विद्वान हैं, उनसे बचपन में सुनी हुई एक बात, इस समय मुझे स्मरण हो रही थी। "एक बिंदू ऐसा होता है जहाँ विज्ञान और अध्यात्म दोनों मिल जाते हैं।"

मनुष्य अपने प्रत्येक विकास के कदम के साथ ही स्वयं को और पृथ्वी को दो कदम विनाश की ओर ले गया है क्योंकि उसने जीवन के आध्यात्मिक पक्ष की सदा उपेक्षा की। वह भौतिक वादी, लालची और स्वार्थी होता गया।

आज मैं उस बिंदू को स्पर्श करना चाहता था जहाँ विज्ञान और अध्यात्म एकाकार हो जाते हैं। अपने स्वयं के लिए नहीं अपितु मानवता के पुनः विकास के लिए।

वह एक माह की कठोर साधना थी। मैं अपनी वैचारिक ऊर्जा को केन्द्रित करना और घनीभूत करना सीख रहा था। मैंने कुछ समय के लिए स्वयं को इतना केन्द्रित कर लिया कि मैं आस-पास के परिवेश को भी भूल गया।

अब परीक्षा की घड़ी थी। मध्यरात्रि में बाबा ने मुझे जगाया -"उठो प्रमोद।" उनकी आवाज के चुंबकीय आकर्षण में बंधा मैं बाहर आ गया था। रात्रि का निःशब्द अंधकार चारों तरफ पसरा था। शहरी-कृत्रिम प्रकाश के अभाव में आकाश तारों से जड़ा हुआ दिखाई दे रहा था। कुछ दूर तक हम साथ-साथ चले, रत्न-जड़ित आकाश के चंदोवेके नीचे।

तभी मुझे लगा जैसे मैं आकाश में एक सुनहरी दीप्ति को देख रहा हूँ। मेरी आँखें स्वाभाविक रूप से बंद हो गईं। मेरे होठों से शब्द प्रस्फुटित हुए -"क्या है, यह?" मैंने अपनी संपूर्ण मस्तिष्क ऊर्जा को उस दीप्ति पर केन्द्रित कर दिया। मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे दूर आकाश में स्थित उस दीप्ति ने मानवाकृति का रूप ले लिया जैसे कोई छायाचित्र हो। वर्चुअल इमेज!

"बोलो, क्या जानना चाहते हो?" मेरे अवचेतन मस्तिष्क में एक आवाज गूँजी थी।

"कौन हैं, आप? किस ग्रह के वासी हैं? किस महासूर्य की परिक्रमा कर रहे हैं?" कितने ही प्रश्न थे।

"तुम्हारी ही आकाश गंगा के। धरती पर चेतना के बीज हमने ही बोए हैं। तुम हमारे ही प्रतिबिंब हो और एक दिन हम में ही मिल जाओगे।"

"हमारा सूर्य अभी युवा है। सौरमंडल की आयु अभी शेष है, पर हम निरंतर पृथ्वी पर जीवन योग्य परिस्थितियों को नष्ट कर रहे हैं। जैसे पृथ्वी पर जीवन, मनुष्य के हाथों दबाए जाने वाले एक नाभिकीय आयुध के बटन पर निर्भर हैं। मानव जाति कहाँ आश्रय लेगी? हमें बचा लीजिए... बचा लीजिए... "

मेरा हृदय जैसे वेदना से चीत्कार कर रहा था। "विचलित न हो।" वह आवाज कितनी निर्विकार और स्थिर थी।

"पृथ्वी पर जीवन-चक्र का यही क्रम है। सभ्यताएं विकास के चरम पर होती हैं, फिर नष्ट हो जाती हैं और फिर नए सिरे से विकास... चिंता न करो, सभ्यता नष्ट होगी मानव जाति नहीं। पृथ्वी पर जीवन योग्य परिस्थितियाँ पुनः विकसित होंगी। मानव मस्तिष्क का नए सिरे से विकास होगा। कालान्तर में अधिक विवेकशील मनुष्य जन्म लेंगे।"

मैंने आँखें खोल दी थीं। आकाश से वह दीप्ति लुप्त हो चुकी थी। अगले दिन मैं घर के लिए रवाना हो गया। मेरे जीवन का उद्देश्य मुझे मिल चुका था। मैंने SET। को अपना त्याग-पत्र भिजवा दिया था। यह सम्पूर्ण घटना मेरे स्मृति पटल पर अंकित है। पर उस दीप्ति से साक्षात्कार वाली बात एक धुंधले स्वप्न की तरह लगती है। जैसे मैंने रात में एक स्वप्न देखा, बस।

यह घटना मैंने किसी को नहीं बताई। अब मैं भारत में रहकर मानवता के उत्थान के अपने मिशन पर था।

❑❑❑

विचित्र मुकदमा

आभास मुखर्जी

नंदा परिवार में जब से तारोब नाम का घेरलू रोबोट आया था, तब से ही परिवार के सभी सदस्यों के पौ-बारह हो गए थे। तारोब सभी के कपड़े वाशिंग मशीन में धोता, बच्चों को कहानी सुनाता, उनका मनोरंजन करता तथा उनका होम वर्क भी कराता। फर्श को वेक्यूम क्लीनर से साफ करता यहां तक कि दादा-दादी को समय पर दवा भी देता। वह बाजार से सौदा-सुल्फ भी लेकर आता। सभी तारोब से बहुत खुश थे।

असल में, तारोब नाम के पीछे भी एक रोचक बात छिपी थी। तारोब बरसात के दिनों में बाजार जाते समय अपने साथ छाता लेकर जाता। बारिश में भीगने से बचने के लिए वह अपने ऊपर छाता तान लेता। जो भी तारोब को देखता वह अनायास ही कह उठता, 'देखो, छाताधारी रोबोट चला आ रहा है।' तभी छाता से 'ता' और रोबोट से 'रोब' को जोड़कर उसका छोटा नाम तारोब पड़ गया था। नंदा परिवार का तारोब अड़ोस-पड़ोस में भी सभी की आंखों का तारा था। वह लोगों को अभिवादन करता और ज़रूरत पड़ने पर बच्चों, युवा, बूढ़ों सभी की मदद को तत्पर रहता।

एक दिन आसमान में घने बदल घिरे थे और रह-रह कर बिजली भी कड़क रही थी। घर पर कुछ मेहमान आ गए थे, लेकिन दूध ख़त्म हो गया था। अचानक मूसलाधार बारिश भी शुरू हो गई। ऐसे ख़राब मौसम में बाजार जाकर कौन दूध लाता! हालांकि हल्की बारिश में तारोब को सौदा-सुल्फ लाने के लिए भेजा जाता; तारोब तब अपना छाता तान सामान लेने निकल पड़ता। लेकिन इस मूसलाधर बारिश में नंदा परिवार के लोगों को तारोब को बाजार भेजना उचित नहीं लगा। लेकिन, तारोब एक साधारण रोबोट न होकर एक बुद्धिमान रोबोट था। वह परिवार के लोगों की चिंता को देख रहा था। परिवार के मुखिया अजीत नंदा के पास जाकर तारोब बोला, 'मुझे जाने की इजाज़त दीजिए। मैं बाजार से दूध लेकर आता हूं।' अजीत एक नामी-गिरामी वकील थे। उनसे सलाह-मशविरा करने के लिए कुछ लोग उनके पास आए थे। कुछ सोचकर अजीत ने कहा , 'इस ख़राब मौसम और मूसलाधार बारिश में मैं तुम्हें बाजार भेजना तो नहीं चाहता था। लेकिन क्या करूं, मेहमानों को चाय पिलाना भी ज़रूरी है। ऐसा करना दूध के साथ-साथ बेसन भी लेते आना। इस मौसम में गरमागरम चाय और पकौड़े पाकर मेहमान खुश हो जाएंगे।' सुनकर तारोब बोला, 'ठीक है जनाब। मैं अभी गया और अभी लौटा।'

थोड़ी देर बाद तारोब लौट आया। अजीत से सलाह-मशविरा कर मेहमान भी जाने लगे। उनमें से एक बोला, 'सर, आपसे बात करके बड़ी तसल्ली हुई। और इस मौसम में गरमागरम चाय-पकौड़ों के लिए आपका विशेष धन्यवाद।'

द एनर्जी एंड रिसोर्सेस इंस्टीट्यूट (टेरी) में संपादक के पद पर कार्यरत। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में उनकी अनेक रचनाओं का प्रकाशित। ऊर्जा, पर्यावरण, स्वास्थ्य एवं लोकप्रिय विज्ञान के अन्य विषयों पर संबंधी विषयों पर अनेक चर्चित लेख। कई सेमीनारों और सम्मेलनों में भी भागीदारी। आविष्कार, विज्ञान प्रगति, इन्वेंशन इंटेलिजेंस, इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए, स्कूल साइंस, जनसत्ता आदि पत्र-पत्रिकाओं में अनेक लेखों का प्रकाशन।

सुनकर अजीत हो-हो कर हँस पड़े। बोले, 'धन्यवाद देना है तो तारोब को दीजिए। वही इस आंधी-तूफान और बारिश के मौसम में दूध और बेसन लेकर आया था।' सब मेहमानों ने प्रशंसा भरी दृष्टि से तारोब को देखा। उनके मुंह से निकला, 'तो यह सारा कमाल तारोब का है। भई, वाह। माशाअल्लाह!'

मेहमानों के चले जाने के बाद अजीत अपनी स्टडी रूम में चले गए। कल हाईकोर्ट में एक मुकदमा था जिसके लिए उन्हें तैयारी करनी थी। मुकदमा बड़ा विचित्र था। गली के नाले में एक छोटा बच्चा गिर गया था। एक रोबोट ने उसे बाहर निकाला तो वह बच्चा मर गया। पुलिस केस बना। बच्चे की पोस्ट मॉर्टम की रिपोर्ट से पता चला कि उसकी मृत्यु बिजली का शॉक लगने से हुई थी। तहकीकात से पता चला कि नाले में कोई बिजली का नंगा तार भी नहीं था।

तहकीकात के दौरान पुलिस को यह पता चला कि स्वामीनाथन नामक व्यक्ति के घरेलू रोबोट, जो बाजार से सामान भी खरीद लाता था, ने ही बच्चे को नाले से उठाया था। बच्चे के पिता व्योमेश ने यह मुकदमा स्वामीनाथन के विरुद्ध किया था। लेकिन सवाल यह था कि रोबोट भला बच्चे की मृत्यु के लिए क्यों जिम्मेदार है? उसने तो बच्चे की जान बचाने के लिए ही उसे नाले से निकाला था। अजीत को कुछ समझ में नहीं आ रहा था। व्योमेश ने स्वामीनाथन के विरुद्ध इस मुक़दमे को लड़ने के लिए ही उन्हें तैयार किया था, लेकिन कोई भी सुराग नहीं मिल पा रहा था।

अचानक अजीत को अपने मित्र सुरजीत, जो स्कूल में उनके साथ पढ़ता था, की याद आई। सुरजीत अमेरिका की एक कंपनी में रोबोटिक वैज्ञानिक था। उन्होंने तुरंत सुरजीत को फ़ोन लगाकर उसे वीडियो कॉल पर लिया। अजीत ने सुरजीत को सारा माज़रा कह सुनाया। सुनकर सुरजीत की आंखें चमकने लगीं। बोला, 'तो यह बात है, अजीत। उस बच्चे की मौत के लिए वह रोबोट ही जिम्मेदार है। उसने जब नाले में गिरे बच्चे को बाहर खींचने के लिए उसे हाथ लगाया तो बिजली का झटका खाकर बच्चे की मौत हो गई। तभी हमारी कंपनी अपने ग्राहकों को हिदायत देती है कि रोबोट के साथ नहाना तो खतरनाक है ही, गीले हाथों से उससे हाथ मिलाना भी खतरनाक है। तुम तो जानते ही हो अजीत कि गीले हाथों से बिजली को छूना कितना खतरनाक होता है। और रोबोट के शरीर में तो बिजली दौड़ रही होती है। वैसे, हमारी कंपनी ऐसे रोबोट बनाने की कोशिश कर रही है जो पूरी तरह से निरापद हों। ऐसे रोबोटों को गीले हाथों से छूने पर भी कोई झटका नहीं लगेगा।'

अगले दिन मुक़दमे में अजीत ने अपने मित्र सुरजीत के साथ वीडियो कॉल पर हुई बातचीत के रिकॉर्ड को कोर्ट में प्रस्तुत किया। साबित हो गया कि स्वामीनाथन का रोबोट ही बच्चे की मृत्यु के लिए जिम्मेदार था। कोर्ट ने स्वामीनाथंन को बच्चे की मृत्यु की एवज में उसके पिता व्योमेश को दस लाख रूपए का हर्जाना देने का आदेश दिया। साथ-साथ यह हिदायत भी दी कि आगे से वह अपने रोबोट को घर से बाहर नहीं निकलने देंगे। जज ने यह भी कहा कि मौजूदा कानूनों के तहत चूंकि हत्यारे रोबोट को कोई सजा नहीं दी जा सकती, इसलिए कोर्ट ने रोबोट के मालिक को हर्जाना देने और उसे आगे से बाहर न निकालने का आदेश दिया है।

घर लौटकर अजीत ने इस विचित्र मुक़दमे के बारे में सोचा। जीवन के विविध क्रिया-कलापों में रोबोटों की भागीदारी बेशक बढ़ रही है, लेकिन इनके अपने खतरे भी हैं। वैसे, किसी भी चीज़ के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही पहलू होते हैं। वह तो नकारात्मक पहलू को ध्यान में रखते हुए सकारात्मक पहलू से हमें कैसे लाभ उठाना है, यही हमें सीखना है। आखिर, हर टेक्नॉलॉजी - चाहे वह रोबोटिक्स टेक्नॉलॉजी ही क्यों न हो, के इस्तेमाल में न केवल सही सावधानी ज़रूरी है बल्कि उसकी किसी चुनौती से निपटने के लिए भी हमें खुद को तैयार करना चाहिए।

❑❑❑

प्रकृति हार नहीं मानती

समीर गांगुली

घंटी बजाने के लगभग तीन मिनट बाद फाटकनुमा दरवाजा खुला। साठ वर्षीय, मोटे लैंस के चश्मेधारी, सज्जन के दर्शन देकर अपनी सफेद छंटी हुई दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए, तनिक मुस्करा कर कहा, ''आइए तरूण बाबू, आपका ही इंतजार कर रहा था।''

स्नेह से मेरा हाथ थपथपाते हुए वे सीधे प्रयोगशाला की ओर ले चले, मेरी पत्रिका के बारे में छोटे-छोटे प्रश्न पूछते हुए।

मैं हतप्रभ सा था, उनके मृदु व्यवहार से। विश्वास ही नहीं हो रहा था कि क्या यहीं है वे महान भारतीय वैज्ञानिक डॉ. रंगाचारी, जिनकी अद्भुत खोज ने हमारे साहित्यिक समाज में तहलका मचा दिया है? क्रूरता को जिन्होंने घुटने टेकने को मजबूर किया है।

वाह! अद्भुत! इसे कहते हैं प्रयोगशाला! नलियां, फ्लास्क, बीकर, टाइट्रेशन इंस्ट्रूमेंट, विलेयता ग्राफ यंत्र! इतनी बड़ी प्रयोगशाला, इतना सारा सामान।

''उधर देखो,'' डॉ. रंगचारी ने मेरे कंधे को थपथपाया।

ओह माई गॉड! शेर! मैं चिल्ला सा उठा।

''हां, सौ प्रतिशत शेर। लेकिन घबराइएगा नहीं। उसी पर मैंने प्रयोग किया है। आइए वहां बैठे।'' डॉ. रंगचारी खाली कुर्सियों की ओर बढ़ गए।

मैं भी उनके पीछे हो लिया। यह बात ध्यान में रखते हुए कि इस प्रयोगशाला में बाल पत्रिका के संपादक और एक वैज्ञानिक के अलावा एक शेर भी है और शेर सिर्फ़ मांसभक्षी होता है।

एक बोतल, जिसमें हरा, नीला सा द्रव था। मेज पर रखते हुए डॉ. रंगचारी बोले, ''तरूण बाबू, यह है मेरे प्रयोगों का परिणाम, यानी इस शेर के भीतर का क्रोध और घृणा। इसे निकाल लेने से अब हमें शेर से कोई खतरा नहीं। भूख लगने पर वह सिर्फ़ दूध और डबलरोटी खाएगा। आप उसका माथा सहलाकर आ सकते हैं। वह आंखें तक नहीं दिखाएगा।

मैंने शेर की ओर देखा। वह आंखें बंद किए किसी संत-सा चुपचाप बैठा था। उसकी गर्म सांसे हमें छूने लगी।

बड़ा अजीब सा लग रहा था, इस माहौल में। मैं एक बाल पत्रिका का संपादक हूँ। पाठक बहुत दिनों से मांग करते आए हैं कि

सन 1975 से सन 2000 तक लेखन का पहला दौर। सन 2019 से दूसरा दौर शुरू. अपने समय की सभी पत्र-पत्रिकाओं में प्रमुखता से प्रकाशन। प्रयोगधर्मी लेखक के रूप में विशेष पहचान। फैंटेसी से विशेष लगाव। मनोरंजनप्रद कहानियों पर विशेष जोर। विज्ञान कथाएं/उपन्यास भी प्रकाशित। तीन पुस्तकें प्रकाशन विभाग से प्रकाशित /नेशनल बुक ट्रस्ट से एक पुस्तक प्रकाशनाधीन। छुटपुट रूप से टीवी के लिए भी टेलीफिल्म/धारावाहिक का लेखन। अनेक रेडियो प्रोग्राम्स की अवधारणा व लेखन। मैनेजमेन्ट की कई पुस्तकों का अंग्रेजी से अनुवाद.अनेक कॉर्पोरेट फिल्मों का लेखन।

कोई रोमांचक चीज पेश की जाए। और आज सचमुच एक सच्ची कहानी की अविश्वसनीय सामग्री मुझे मिल रही थी। सोच रहा था, घर जाते ही सबसे पहले प्रेस में बैठकर डॉ. रंगचारी की इस रोचक कहानी को लिखूंगा।

'' अब एक खेल दिखाता हूँ आपको।'' डॉ. रंगाचारी ने कांच का एक जार उठा लिया। जार के अंदर एक मधुमक्खी भिनभिना रही थी।

ड्रॉपर से एक बूंद वह हरा-नीला द्रव निकालकर उन्होंने जार को तिरछा करके उसके भीतर टपका दिया। तुरंत ही मधुमक्खी टूट पड़ी उस द्रव पर। द्रव को पीते ही न जाने कैसा नशा उस पर छाने लगा कि वह जोरों से भिनभिनाने और चक्कर काटने लगी। धीरे-धीरे उसके भिनभिनाने का शोर इतना बढ़ गया कि अजनबी कोई यह सोचे कि बाहर से कोई जहाज गुजर रहा है।

शेर ने खड़े होकर एक बार मधुमक्खी की ओर देखा और फिर आंखें बंद करके बैठ गया।

''डॉ. साहब, जरा यह सब समझाइए न मुझे।'' मुझे लोभ था कि अच्छी कहानी लिख सकूं।

''तो सुनिए तरूण बाबू।'' डॉ. ने अपना सिगार सुलगा लिया, ''प्रकृति ने इस संसार में प्रत्येक प्राणी को गुणों का उचित मात्रा में वितरण किया है। उनकी ग्रहण करने की क्षमता एवं सामर्थ्य के अनुसार। चीटी के गुस्से और शेर के गुस्से में अंतर है। छुई-मुई के पौधे की घृणा मनुष्य की घृणा से लाखों गुना ज़्यादा है। मनुष्य छुई- मुई के पौधे जितनी घृणा अपने हृदय में नहीं रख सकता। शेर के दिल में चीटी जितना गुस्सा हो तो वह अजीब हरकतें करने लगेगा। तरूण बाबू, इसी विषय पर मैंने तेरह वर्ष गंभीर अध्ययन किया और कई बार जान जोखिम में डालकर इस नतीजे पहुंचा कि हम प्राणियों के भीतर से घृणा, क्रोध आदि अवगुणों को बाहर निकाल सकते हैं।''

लेकिन यह मेरी भूल थी। जल्दबाजी का नतीजा था। अगर चार-छः साल मैं अध्ययन में लगाता, तो परिणाम कुछ और ही होता। तरूण बाबू, मैं पूरी तरह सफल नहीं हुआ हूँ। मैं चाहता था, एक ऐसे संसार की रचना करना, जिसमें क्रोध का नाम भी न हो। मैंने एक ऐसी दुनिया की कल्पना की थी, जिसमें रहने वाले लोग आपस में घृणा न करें। काश! मेरा सपना पूरा हो पाता।'' डॉ. रंगाचारी के चेहरे पर अजीब सी उदासी छा गई थी। और आंखें छत पर जा टिकी थी।

''आप क्या कहते हैं डॉ. साहब! हमारा साहित्यिक समाज आपकी पूजा को प्रस्तुत है। वह तो आपने ही अभी कुछ और समय तक अपने को गुमनाम रखना चाहा है, अन्यथा आज मानवता के सबसे बड़े पुरस्कार के हकदार होते।'' मैं आवेश में बोल उठा।

''ओह नहीं, प्रकृति शायद कभी हार नहीं मानती है। मनुष्य विजेता होने का सिर्फ़ भ्रम पालता है। आप नहीं जानते, अब मेरे सामने समस्या है कि इस द्रव को नष्ट कैसे करूं? अगर मैं इसे जमीन में फेंकता हूँ, तो यह चीटियों, केंचुओं और करोड़ों दूसरे कीड़ों के उदर में जाकर उन्हें विनाशी प्रवृत्तियां दे देगा। इन कीड़ों का जीवन-चक्र इतना छोटा होता है कि इससे आने वाली पीढ़ियों तक इन अवगुणों का संक्रमण हो जाएगा और अगर आग में सुखा कर वाष्प बना डालूं तो यह बादलों के साथ फिर बरसेगा। यानी फिर से पृथ्वी पर। इस आदमखोर शेर के शरीर का इतना अधिक क्रोध और घृणा कोई दूसरा प्राणी निष्प्रभावी बना कर ग्रहण नहीं कर सकता। अब आप ही बताइए, मैं क्या करूं?

डॉ. रंगाचारी जैसे महान वैज्ञानिक को मैं सलाह दूं। इससे

बढ़ कर मेरी बुद्धिहीनता का परिचय और क्या हो सकता है। सो यह सोच कर कि डॉ. साहब स्वयं ही कोई उपाय खोल लेंगे, मैं चुप ही रहा।

''क्रोध और घृणा को हम सिर्फ़ एक प्राणी से निकालकर दूसरी प्राणी को दे सकते है, नष्ट नहीं कर सकते। यह भी देख लीजिए।'' डॉ. उठकर एक पिंजरे से काली चिड़ियां पकड़ लाए। और उसे जार के भीतर छोड़ते हुए बोले, ''अब वह द्रव काली चिड़िया पर असर डालेगा।''

सचमुच काली चिड़िया ने ज्यों ही मश्रुमक्खी को निगला, त्यों ही उसने अजीब रूप दिखाना शुरू कर दिया। जार की दीवारों पर चोंच से टक्कर मारते हुए उसने अपने को लहूलूहान कर डाला और तब हुआ, वह सर्वनाश।

जोर से चीखते हुए पंखों से जार पर उसने ऐसी टक्कर मारी कि जार हरे-नीले द्रव की बोतल को तोड़ता हुआ नीचे गिर कर टूट गया।

हरे-नीले द्रव की बोतल के टूटते ही डॉ. रंगाचारी के होश उड़ गए। कुर्सी से उछलकर वे तौलिया लेने दूसरी मेज पर लपके।

आलसी शेर ने अपने पैरों पर गिरे द्रव की बूंदों को हल्के से चाटा और तब खड़े होकर बिखरे द्रव को अपनी लंबी जीभ निकालकर समेटता शुरू किया। डॉ. साहब ने फुर्ती से द्रव के ऊपर तौलिया फेंक कर शेर को दूर हटाना चाहा, लेकिन तभी गूंज उठी, जंगल के क्रूर राजा की दिल को दहला देने वाली दहाड़।

मैं दौड़कर दरवाजे तक जा पहुंचा। वहां से देखा कि डॉ. रंगाचारी और शेर गुत्थमगुत्था है। मुझे दरवाजे के पास देखकर वे भी जान बचाने के लिए मेरी और दौड़े, लेकिन शेर भी उनके पीछे-पीछे लपका।

मैंने फौरन बाहर निकलकर बाहर से चिटकनी चढ़ा दी। अगले क्षण ही शेर ने डॉक्टर साहब को दबोच लिया। और तब सुनाई देने लगी उनकी करूण चीखें और हड्डियों के चटकने-टूटने की आवाजें।

आधे घंटे के बाद एक खिड़की के पास जाकर देखा, भीतर खून से सना डॉ. साहब का अस्थिपंजर वीभत्स अवस्था में पड़ा है और शेर पागलों जैसा प्रयोगशाला में इधर-उधर चक्कर काट रहा है। स्पष्ट था कि प्रकृति का चक्र पूरा हो गया। शेर का क्रोध और घृणा उसी को वापस मिल गया।

समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि यह सब कैसे हुआ और अगले क्षण अब क्या होने वाला है?

खैर शेर ने मुझे यह सब सोचने का मौका भी नहीं दिया। उसने कांच के जारों और मर्तबानों को तोड़ना-गिराना शुरू कर दिया। देखते ही देखते धुएं से पूरा कमरा भर उठा और फिर आग की लपटें प्रयोगशाला से विनाश का नाच नाचने लगी। शेर का करूण क्रंदन सुन कर मेरी आंखों में आंसू आ गए। बाहर निकलते हुए मैं सोचने लगा, डॉ. रंगाचारी की वे तमाम बातें, जो अभी कुछ क्षणों पूर्व उन्होंने कही थी।

प्रयोगशाला आग की लपटों में जल रही है। मेरी कार तेजी से शहर की ओर दौड़ रही है और मैं इस दुविधा में हूँ कि इस कहानी को लिखूं या न लिखूं। क्या हमारे पाठक यह सहन कर पाएंगे कि एक महान वैज्ञानिक की असामयिक मृत्यु का कारण उनकी प्रिय पत्रिका का संपादक ही है?

❑❑❑

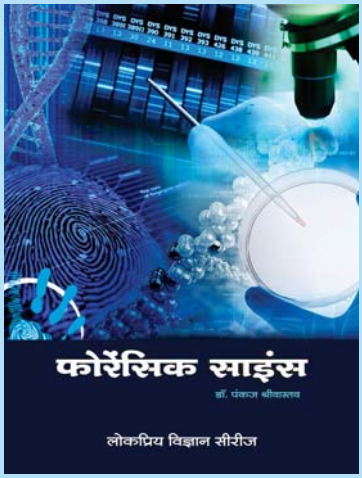

फारेंसिक साइंस

लेखक : पंकज श्रीवास्तव
प्रकाशक : आईसेक्ट प्रकाशन
मूल्य : 195/-

डॉ. पंकज श्रीवास्तव का जन्म 9 अप्रैल 1968 को गोरखपुर में हुआ। एम. एस-सी एवं पी.एच-डी, सूक्ष्म जीव विज्ञान में की और डीएनए फिंगर प्रिंटिंग यूनिट, राज्य न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला सागर में वैज्ञानिक अधिकारी एवं रासायनिक परीक्षक हुये। आपकी प्रकाशित कृतियां पर्यावरण संरक्षण में पुलिस की भूमिका, पर्यावरण शिक्षा, फोरेंसिक साइंस एवं अपराध अनवेषण और पर्यावरण शिक्षा प्रकाशित हैं इसके अतिरिक्त अंग्रेजी में आधा दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। आपके 22 शोध पत्रों भी प्रकाशित हुए हैं। पंडित गोविंद वल्लभ पंत राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित डॉ. पंकज श्रीवास्तव की प्रशिक्षण कार्यक्रमों और सेमीनार में उल्लेखनीय भागीदारी है। प्रस्तुत पुस्तक में आपराधिक मामलों के साक्ष्यों की वैज्ञानिक पड़ताल है। समाज में आए दिन अपराध होते रहते हैं जो जनता में यह जानने की उत्सुकता जगाए रहते हैं कि अपराधियों तक पहुंचने का विज्ञान कैसा होता है। जैसे-जैसे विज्ञान का विकास हुआ है, फोरेन्सिक साइंस की क्षमता बढ़ती गई है। यह पुस्तक फोरेन्सिक साइन्स को स्पष्ट करने और आमजन तक पहुँचाने का प्रयास है।

उस दुनिया के डारो अंकल

सुबोध महंती

डारो अंकल के पास जिस तरह का कम्प्यूटर था वैसा कम्प्यूटर मानव ने किसी के पास नहीं देखा था। मानव के इस बारे में पूछने पर डारो अंकल कहते थे कि इस तरह के कम्प्यूटर को क्वांटम कम्प्यूटर कहते हैं, जिसे किसी पश्चिमी देश ने विकसित किया है। मगर अभी तक बाजार में बिकने के लिए नहीं आया है। मानव ने उनको कभी खाते हुए नहीं देखा और उनके किचन में भी खाना बनाने का कोई सामान नहीं होता था। लेकिन, मानव के लिए कोल्ड ड्रिंक्स और चॉकलेट वे जरूर रखते थे। डारो अंकल की सबसे आश्चर्यजनक बात थी खाना न खाना। वे केवल पानी पीते थे, एकदम शुद्ध पानी और कभी-कभी पानी में एक गाढ़े नीले रंग के तरल पदार्थ की एक या दो बूंदें डालते थे।

मानव स्कूल से आकर हर रोज की तरह डारो अंकल से मिलने गया मगर वहां जाकर देखा कि डारो अंकल के घर के दरवाजे पर ताला लगा हुआ है। ऐसा पहली बार हुआ था कि उनके घर के दरवाजे पर ताला लटकता दिखाई दिया। जबसे वह डारो अंकल को जानता है, ऐसा कभी नहीं हुआ कि वे मानव को बिना बताये कहीं गये हों। सिर्फ इतना ही बताते थे कि कब लौटेंगे। वे कहां जाते हैं, क्या करते हैं, इसके बारे में कुछ नहीं बताते थे। जब कलकत्ता में रहते तो नेशनल लाइब्रेरी छोड़ कर कहीं नहीं जाते। लाइब्रेरी जाने का समय होता था सुबह नौ बजे से दोपहर दो बजे तक, इसके बाद घर पर ही काम करते थे, इसलिए डारो अंकल को न पाकर मानव को आश्चर्य हुआ, मगर यह भी सोचा कि शायद अचानक कोई काम आ पड़ा होगा और वे चले गये होंगे, बताने का समय ही नहीं मिला होगा, काम होते ही लौट आयेंगे।

मानव हर रोज डारो अंकल के घर जाता रहा। उसी समय, जैसे पहले भी जाता था यानी दोपहर के बाद तीन बजे। इस तरह सात दिन बीत गये मगर डारो अंकल लौट कर नहीं आये और न ही उनकी कोई खबर आयी। मानव सोच में पड़ गया और डारो अंकल के साथ हुई बातों को याद करने लगा। उसने यह निष्कर्ष निकाला कि डारो अंकल कोई साधारण आदमी नहीं थे। न कोई उनसे मिलने आता था और न ही वे किसी से मिलने जाते थे। उनके पास फोन भी नहीं था। डारो अंकल के पास जिस तरह का कम्प्यूटर था वैसा कम्प्यूटर मानव ने किसी के पास नहीं देखा था। मानव के इस बारे में पूछने पर डारो अंकल कहते थे कि इस तरह के कम्प्यूटर को क्वांटम कम्प्यूटर कहते हैं, जिसे किसी पश्चिमी देश ने विकसित किया है। मगर अभी तक बाजार में बिकने के लिए नहीं आया है। मानव ने उनको कभी खाते हुए नहीं देखा और उनके किचन में भी खाना बनाने का कोई सामान नहीं होता था। लेकिन, मानव के लिए कोल्ड ड्रिंक्स और चॉकलेट वे जरूर रखते थे। डारो अंकल की सबसे आश्चर्यजनक बात थी खाना न खाना। वे केवल पानी पीते थे, एकदम शुद्ध पानी और कभी-कभी पानी में एक गाढ़े नीले रंग के तरल पदार्थ की एक या दो बूंदें डालते थे। वे इस पदार्थ को मानव को कभी नहीं देते थे और कहते थे कि यह एक विशेष बीमारी की दवा है।

मानव को आज भी अच्छी तरह याद है कि जब वह पहली बार डारो अंकल से मिला था तो क्या बात हुई थी। डारो अंकल ने

सुबोध महंती का जन्म 1 मार्च 1954 को पुरुलिया पश्चिम बंगाल में हुआ। आपने रसायन शास्त्र में एम.एससी तथा पी.एसडी की उपाधि प्राप्त की। विज्ञान लोकप्रियकरण पर 300 से अधिक लेख एवं शोध पत्र एवं विज्ञान की कई पुस्तकों का लेखन किया। आपके द्वारा लिखित 'विज्ञान के अनन्य पथिक' शीर्षक से दो खण्डों में विदेशी एवं भारतीय वैज्ञानिकों की जीवनियों का लेखन पर्याप्त चर्चित हुआ।

अचानक आकर कहा था 'मैं डारो अंकल हूं , तुम्हारा पड़ोसी। मकान नं. १० में रहता हूं मैं तुम्हारे साथ दोस्ती करना चाहता हूं।' मानव यह सुनकर डर ही गया। उनका उच्चारण और कहने का अंदाज अजीबोगरीब था। इसलिए मानव कुछ न बोलकर वहां से भाग गया।

मानव ने जब अपनी मां को डारो अंकल के बारे में बताया तो मां ने भी डारो अंकल जैसे अंजान आदमी से दूर रहने की सलाह दी। मानव ने भी सोचा शायद यही ठीक रहेगा। मगर डारो अंकल की आवाज में ऐसा जादू था कि वह पूरे दिन डारो अंकल के बारे में सोचता रहा। दूसरे दिन भी मानव ने डारो अंकल को उसी जगह पाया। इस बार डारो अंकल ने मानव को कुछ नहीं कहा। कुछ देर इंतजार करने पर मानव ने ही डारो अंकल से कहा कि वह उनका दोस्त बनना चाहता है। डारो अंकल जैसे इसी बात का इंतजार कर रहे थे। उन्होंने तुरंत मानव का हाथ पकड़ा और अपने घर की तरफ चल दिये।

घर पहुंचते ही दरवाजा बंद करके बोल पड़े 'मानव तुम मुझसे मत घबराना मैं अंजान जरूर हूं पर मेरा कोई बुरा इरादा नहीं। है। तुमसे दोस्ती इसलिए करना चाहता हूं तुम मुझे अंग्रेजी भाषा सिखाओ।'

'आपको अंग्रेजी नहीं आती है?' मानव ने पूछा।

'नहीं, मैं दूसरे देश से आया हूं जहां की भाषा अंग्रेजी नहीं है' उन्होंने जवाब दिया।

'मगर आप किस देश से आये हैं और हिंदी कहां सीखी?' मानव ने फिर प्रश्न किया।

'जब कभी समय मिलेगा तब तुम्हें विस्तार से बताऊंगा, चलो अब अंग्रेजी सिखाना शुरू करो। मैं कुछ किताबें भी खरीद लाया हूं।' इस बातचीत के बाद मानव ने डारो अंकल को अंग्रेजी सिखाना शुरु कर दिया।

सात दिन के बाद मानव ने देखा कि डारो अंकल पूरी तरह अंग्रेजी सीख गये। यहां तक कि अंग्रेजी में तमाम बड़ी-बड़ी किताबें पढ़ने लगे। मानव यह देखकर दंग रह गया कि कैसे एक आदमी इतनी जल्दी एक नई भाषा सीख सकता है, मगर यह सोच कर चुप हो गया कि शायद डारो अंकल की बुद्धि बहुत तेज है।

डारो अंकल के साथ मानव का मिलना-जुलना बढ़ता ही गया। डारो अंकल मानव को पढ़ाई में मदद करने लगे जिसका नतीजा भी सामने आने लगा। मानव हर परीक्षा में अव्वल आने लग गया। यही कारण था कि मानव के माता-पिता ने डारो अंकल से उसके मिलने-जुलने पर पाबंदी नहीं लगाई।

मानव डारो अंकल से इतना घुल-मिल गया था कि उनके चले जाने के बाद सब कुछ खाली-खाली सा लगने लगा। डारो अंकल से दोस्ती होने के बाद मानव का अपने दोस्तों से मिलना-जुलना भी कम हो गया था।

जितने दिन बीतते गए मानव के मन में एक प्रश्न बार-बार कौंधरा रहा, 'कौन थे डारो अंकल? क्या वे पृथ्वीवासी थे या बाहरी दुनिया से आए थे?'

मानव को डारो अंकल ने अपने कम्प्यूटर में कुछ अजीबोगरीब चित्र दिखाए थे। उनमें पेड़-पौधों का रंग गहरा नीला था फलों का आकार भी कुछ अनोखा था। मानव ने जब पूछा कि क्या ये सारी तस्वीरें असली हैं, तो पहले डारो अंकल ने हां में जवाब दिया मगर जब उसने पूछा कि कहां की हैं तो डारो अंकल ने अपने जवाब को न में बदल दिया। उन्होंने कहा कि कम्प्यूटर में बनाया गया चित्र है मगर न जाने क्यों मानव को लगा कि कम्प्यूटर में दिखाया गया चित्र असली है। इसलिए उसने डारो अंकल से फिर पूछा 'अंकल क्या पेड़ की पत्तियों का रंग नीला हो सकता है?'

'क्यों नहीं हो सकता है? देखो पत्तियों का रंग हरा इसलिए होता है कि उनमें क्लोरोफिल होता है। क्लोरोफिल सूर्य की किरणों को सोख कर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया से पौधों के लिए खाना या ऊर्जा बनाता है मगर, क्लोरोफिल एक रसायन है और रसायन नीले रंग का भी हो सकता है जो सूर्य की किरणों का अवशोषण कर सकता है।'

मानव ने अपनी किताब में प्रकाश संश्लेषण के बारे में पढ़ा था। इसलिए डारो अंकल की बात समझने में मुश्किल नहीं हुई। उसे याद आया, डारो अंकल ने सोचते हुए कहा था मानव

इस बात को अभी भूल जाओ। बड़े होकर रसायन विज्ञानी बन कर इस बात पर शोध करना और देखना कि क्या नीले रंग का रसायन सूरज की किरणों को सोख सकता है या नहीं? इसके बाद मानव इस बात को सचमुच ही भूल गया था। आज डारो अंकल के चले जाने पर यह बात उसे फिर याद आ गई।

तीन महीने बीत गए, डारो अंकल का कुछ पता नहीं चला। मानव एक तरफ तो गुस्सा हो रहा था कि बिना बताये डारो अंकल कैसे चले गए कम से कम एक खत तो लिख सकते थे, दूसरी तरफ उसे बात की भी चिंता थी कि कहीं डारो अंकल किसी मुसीबत में न पड़ गये हों।

तीन महीने बाद डारो अंकल का मकान मालिक मानव के पास पहुंचा। मानव रामबाबू को जानता था। उनको उसने कई बार डारो अंकल के साथ देखा था। रामबाबू ने मानव से कहा, 'देखा मानव तीन महीने बीत गए, मि. डारो का कोई पता नहीं चला। उन्होंने यूनान का पता दिया था। मैंने उस पते पर खत भी भेजा था मगर एक महीने से अधिक हो गया, कोई उत्तर नहीं आया है। मैं और कितने दिन इंतजार करूंगा। मैं सोच रहा हूं कि ताला तोड़ डालूं और मि. डारो का सारा सामान एक कमरे में रख कर बाकी तीन कमरों को किराए पर चढ़ा दूं। इसलिए तुम्हारी मदद चाहता हूं।'

'मैं क्या मदद कर सकता हूं?' मानव ने पूछा।

'देखो मुझे पता चला है कि तुमको छोड़ कर मि. डारो को कोई नहीं जानता है। वे तुमसे ही बातें करते थे। मैं चाहता हूं कि ताला तोड़ते समय तुम मेरे साथ यहां रहो और उनके सामान की सूची बना लो।'

मानव यह सोच कर तैयार हो गया। शायद इस बात का पता चल जाए कि वे कहां से आए थे और कहां गए। ताला तोड़ने के बाद मानव ने घर के अंदर जाकर देखा सारा सामान अपनी जगह पड़ा है। मानव और रामबाबू ने सामान की सूची बनानी शुरू कर दी। मि. डारो का सामान बहुत ही कम था। एक बक्सा था जिसमें सामान बिखरा पड़ा था। टेबल, चेयर, बिस्तर, फ्रिज या आदि सभी रामबाबू के थे। टेबल का दराज खोला तो मानव को एक लिफाफा मिला जिस पर उसका नाम लिखा हुआ था। उसके अंदर डारो अंकल का लिखा हुआ खत था। इस खत की पहली दो पंक्तियां पढ़ते ही मानव चिल्ला पड़ा। रामबाबू चौंक गए और बोल पड़े, 'क्या हुआ मानव सब कुछ ठीक तो है?'

'अंकल मेरा शक सही निकला। डारो अंकल बाहरी दुनिया से आए थे और अब वे जा चुके हैं। शायद मैं अपनी शंका के बारे में उन्हें पहले बताता तो उनकी दुनिया के बारे में मुझे पता चल जाता। मुझे यह भी पता चल जाता कि वे उतनी दूर से कैसे आए थे और उनकी दुनिया में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास किस दौर में पहुंचा है।'

मानव ने डारो अंकल का पत्र रामबाबू को पढ़ कर सुनाया, 'मानव मैं किसी भी दिन तुम्हारी दुनिया छोड़ कर हमेशा के लिए चला जाऊंगा और एक बार चले जाने के बाद तुमसे नहीं मिल पाऊंगा। मैं पृथ्वी में बाहरी दुनिया से आया हूं। मेरे ग्रह के नाम में चार शब्द हैं और उन चार शब्दों के प्रथम अक्षर से डारो बनता है। तुम इसी नाम से मुझे जानते हो। मुझे कब अचानक जाना पड़ेगा पता नहीं है। इसलिए मैंने यह खत तुम्हारे साथ दोस्ती होने के बाद ही लिखा है। मैंने तुम्हें अपने बारे में इसलिए नहीं बताया कि तुम ये जानकारी छिपा नहीं पाओगे और जानकारी का पता लगने के बाद मेरा काम पूरा नहीं हो पाता। मैं अकेला नहीं हूं। मेरे साथ पचास लोग और आए हैं। वे लोग पृथ्वी के विभिन्न हिस्सों में काम कर रहे हैं। हमारा उद्देश्य है पृथ्वी के बारे में हर किस्म की जानकारी इकट्ठा करना, विशेष रूप से जीव जगत और पर्यावरण के बारे में। हमारे ग्रह का विज्ञान और प्रौद्योगिकी पृथ्वी की तुलना में बहुत विकसित है, हमारे लिए एक ग्रह से दूसरे ग्रह तक जाना मामूली बात है। तुम्हें सुनकर खुशी होगी कि पृथ्वी पर सबसे अच्छी चीज जो मुझे लगी वह है जीव जगत में विविधता। किसी भी ग्रह में मैंने इतनी विविधता नहीं देखी। भौगोलिक विविधता भी काबिले तारीफ है। मगर यह विविधता तेजी से घटती जा रही है। इसको रोकना होगा। ऐसा न कर पाने से एक दिन मानव का अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। मैं चाहता हूं कि तुम बड़े होकर इस दिशा में काम करो। मुझे दुख है कि मैं तुमसे कभी नहीं मिलूंगा और मैं यह भी नहीं बता पाऊंगा कि हम लोग पृथ्वीवासियों के साथ घुल-मिल गए हैं। अंतरिक्ष में हमारे अंतरिक्षयान इतनी दूरी पर हैं कि वे महज पांच घंटे में पृथ्वी के नजदीक आ सकते हैं और छोटे-मोटे यान पृथ्वी के विभिन्न हिस्सों में भेज सकते हैं। हम लोगों का यान न तो पृथ्वीवासी देख सकते हैं और न ही राडार से उनका पता लगा सकता है।' माना, मैं तुम्हें हमेशा याद रखूंगा। मेरी दराज में जो रुपए हैं उनमें से रामबाबू का किराया चुका देना। किराया चुकाने में देरी के लिए उनसे मेरी तरफ से माफी मांग लेना। बाकी रुपयों का तुम जो चाहो कर सकते हो। मैं जानता था तुम हमारे ग्रह के बारे में जानने के लिए बहुत उत्सुक हो। तुम इस बारे में पूछना भी चाहते थे, लेकिन पूछ नहीं पाए। इसलिए मैंने अपने ग्रह डारो के बारे में एक किताब तैयार कर दी है जिसमें काफी चित्र भी दिए गए हैं। इसे पढ़ने में तुम्हें बड़ा मजा आयेगा और मानव तुम्हें एक रहस्य की बात बताऊं? हमारे ग्रह में पेड़ों का रंग नीला है। अलविदा पृथ्वी के मेरे नन्हें दोस्त। तुम्हारा, डारो अंकल।

❑❑❑

जार्ज की कारस्तानी

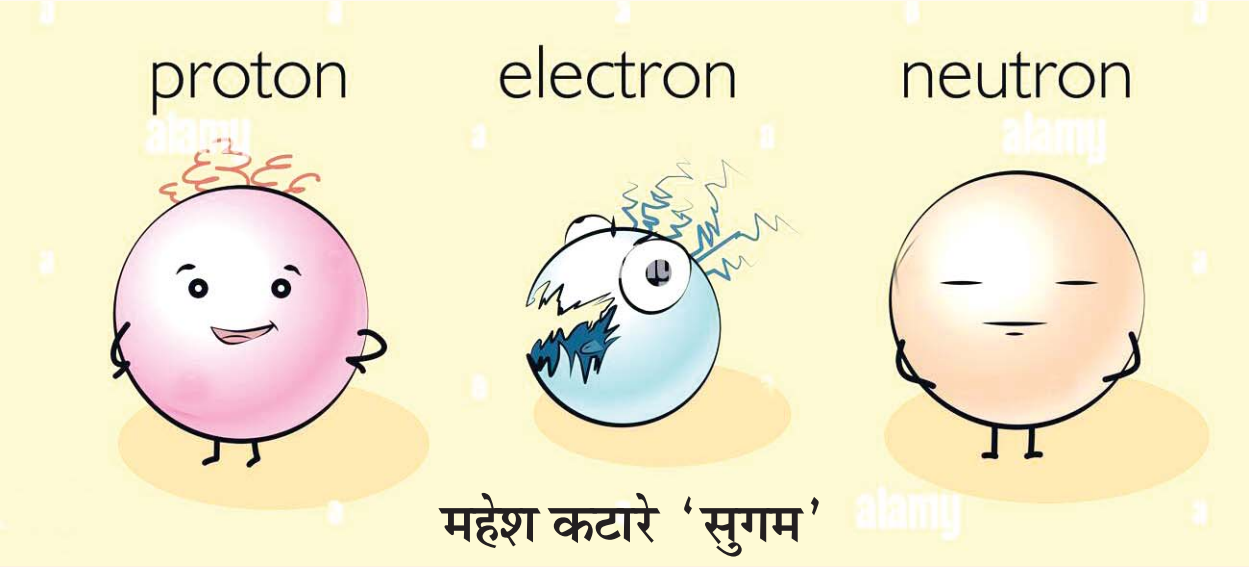

महेश कटारे 'सुगम'

जार्ज की कारस्तानी

'परमाणु भैया क्या कर रहे हो'?

'कुछ नहीं ऊर्जा बहन, जरा आराम कर रहा था' परमाणु ने अंगड़ाई लेते हुए कहा।

'वह जार्ज का बच्चा रात बारह बजे तक परेशान करता रहा। कहीं यह प्रयोग, कहीं वह'

'सो तो है भैया, अब वह कुछ अधिक ही परेशान करने लगा है। वैसे परेशानी तो अपनी किस्मत में ही लिखी हुई है। लेकिन?'

'लेकिन क्या बहन? 'परमाणु ने कुछ चौंकते हुए पूछा।

ऊर्जा अनमने भाव से बोली, 'भैया उसके इरादे नेक नहीं मालूम होते। कई दिनों से लगातार इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन को भी परेशान कर रहा है।'

'अच्छा?' परमाणु ने गुस्से में भन्नाते हुए कहा, 'लेकिन उन लोगों ने बताया नहीं ?'

तभी एक गोलाकार आवरण से आवाज आई, 'पापा इसमें मेरा दम घुट रहा है. जार्ज साहब ने कल मुझे लोहे की इस गेंद में ठूंस कर भर दिया है। अब इसमें बिल्कुल भी हिल डुल नहीं पा रहा हूं। पैरों में सिर दिए कल शाम से गुड़ी मुड़ी पड़ा हुआ हूं।'

इलेक्ट्रॉन अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था तभी न्यूट्रॉन ने भी दूसरे गोले से रोते हुए बताया। 'पापा आप तो कहते थे हम लोग बड़े और काम की चीज हैं। हमारा जन्म बहुत सफल है। भविष्य बहुत उज्जवल है। हमें लगता है यदि इसी तरह हमें कैद रखा गया तो हम मर जाएंगे।'

प्रोटॉन भी चुप न रह सका दहाड़ता हुआ बोला, पापा मेरा गुस्सा बहुत खराब है आप जानते ही हैं। यदि मैं अपनी पर आ गया तो जॉर्ज का हुलिया बिगाड़ कर रख दूंगा।'

परमाणु और ऊर्जा दोनों ने मिलकर सभी को ढाढस बंधाने लगे। 'चुप रहो बेटा। जल्दी ही कोई उपाय ढूंढना पड़ेगा, ताकि तुम्हें मुक्ति दिलाई जा सके।'

हिन्दी-बुंदेली के लोकप्रिय ग़ज़लकार। पसीने का दस्तख़त, तुम कुछ ऐसा कहो, हरदम हँसता गाता नीम, वैदेही विषाद, आवाज़ का चेहरा, दुआएँ दो दरख्तों की, सारी खींचतान में फरेब ही फरेब है, शुक्रिया, अयोध्या हय हय, आशाओं के नये महल, ख्वाब मेरे भटकते रहे, कुछ तो है, ऐसी तैसी, ला हौल बला कुब्बत, प्रतिरोधों के पर्व, गाँव के गेवड़े, बात कैसे दो टूक कका जू, कछू तौ गड़बड़ है, सुन रये हौ आदि प्रतिष्ठित कृतियाँ। देश भर के नामचीन सम्मान से सम्मानित।

तभी खांसने की आवाज सुनकर सब शांत हो गए। परमाणु समझ गया कि पिताजी (अणु) जाग चुके हैं। उसने विनम्रता से कहा, 'पिता जी प्रणाम।'

'खुश रहो बेटे' अणु ने अपने बेटे परमाणु को आशीर्वाद की मुद्रा में देखते हुए ऊर्जा के गाल पर प्यार से चपत लगाते हुए पूछा, 'कहो बिटिया, कैसी हो?'

'ठीक हूं पिताजी' ऊर्जा ने भोली मुस्कुराहट के साथ कहा।

तभी, 'दादा जी प्रणाम स्वीकार हो ।'

कुछ तीखी आवाजें दो-तीन बार गूंजी। यह आवाजें न्यूट्रॉन और प्रोटॉन की थी।

'खुश रहो मेरे बच्चो, खुश रहो, 'अणु ने अपना हाथ हिलाते हुए कहा।'

प्रोटोन से रहा नहीं गया, रोते हुए बोला, 'दादा जी खुश कैसे रहें? जार्ज साहब ने तो हम लोगों को अलग अलग कर दिया है। हमारा यहां दम घुट रहा है। हमें यहां से निकाल लो दादाजी।' अणुओ ने फुर्ती से पीछे मुड़कर बारी-बारी से गोलाकार कवचों को देखा और स्तब्ध रह गए। और फिर आंखें तरेरते हुए बुदबुदाये, 'अच्छा तो जार्ज की ये कारस्तानी है?'

'क्या पिता जी?' परमाणु ने उनकी ओर आश्चर्य से देखा, 'यह जार्ज का बच्चा हमें बेवकूफ समझ रहा है। हमारी इससे एक शर्त थी कि हम आदमी की भलाई एवं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए काम करेंगे। लेकिन यह तो...

'सो कैसे पिता जी?' ऊर्जा अपलक देखते हुए पूछा... 'तो क्या जार्ज कोई नई चाल खेलने जा रहा है?'

'हां बेटी, जॉर्ज ने बम बनाना शुरू कर दिया है। अपनी शर्त को भुलाकर मानव जीवन को समाप्त की सामग्री तैयार कर रहा है। इन बमों से आदमी और धरती पर रहने वाले जीव जंतुओं का सफाया हो सकता है। हमारी ताकत का दुरुपयोग करके सभी को भयभीत करना चाहता है। लेकिन मैं ऐसा नहीं होने दूंगा।'

अणु की आंखों में खून उतर आया। उसके बाद प्रोटॉन के कान में कुछ बताते हुए आगे बढ़ गए। प्रोटॉन ने दादाजी की योजना सभी को सुना दी।

जार्ज अपने कुछ साथियों सहित आकर बमों को उठा उठा कर दिखाने लगा। सभी खुशी से चहक रहे थे। तभी प्रोटोन से रहा नहीं गया। वह अपनी पूरी ताकत लगाकर ऊपर की ओर उछला और फ़र्श पर आ गिरा। एक धमाके के साथ आवरण के कई सौ टुकड़े हो गए। क्षण भर में इलेक्ट्रॉन न्यूट्रॉन वाले गोले भी उछल उछल कर फर्श पर जा गिरे। जार्ज और उसके सभी साथी फर्श पर बिछ गए। किवाड़ों की कुंडी तक पहुंचने का मौका किसी को भी नहीं मिला। धमाके की आवाज सुनकर बिल्डिंग में काम करने वाले सभी लोग भाग खड़े हुए। तभी अणु ने एक नजर जॉर्ज के क्षत-विक्षत शव पर डाली। और बुदबुदाया... 'जो दूसरों का अहित सोचते हैं उनका यही हाल होता है।'

इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन स्वतंत्र रूप से घूमते हुए एक दूसरे के गले मिलने लगे। और तीनों झुंड बनाए हुए पापा परमाणु की गोद में जा बैठे। अणु सभी को अपने आंचल में भर कर प्यार से पुचकारने लगा। अब ऊर्जा भी ताली पीट-पीटकर बहुत खुश हो रही थी।

❑❑❑

फूलों का राजा गुलाब

बलराम गुमास्ता

पूरा खण्डहर जैसे स्वर्ग का कोई हिस्सा हो। केतकी के फूलों से लदी झाड़ियों और सघन झुरमुटों के बीच, खिले हजारों किस्म के सुन्दर गुलाबों से एक विशेष किस्म की रोशनी फूट रही थी। लगता जैसे केतकी की झाड़ियों में हजारों बच्चे एक साथ खिलखिला कर हँस रहे हों और प्रकाश उनकी चमकती आँखों से सहज ही फूट रहा हो।

हम सभी जानते हैं कि गुलाब फूलों का राजा कहलाता है, गुलाब कब से फूलों का राजा बना यह एक रोचक कहानी है।

मैं जब यही कोई सात-आठ बरस का था, तो अक्सर मुझे एक सपना आया करता, जो वर्षों तक आता रहा। स्वप्न में मैं अक्सर देखता कि सात समुद्रों पार एक अद्‌भुत नाम का टापू है, जहाँ लोग लाख और मूँगे के बने मकानों में रहते हैं, वह मोतियों का नाश्ता और हीरों के बर्तनों में आसमान में ऊगने वाले आकाश कुसुम की पंखुड़ियों का भोजन करते हैं। वहाँ गुलाब के फूलों से बनी सड़कें हैं,

स्वर्ग के किसी हिस्से सा सुन्दर,
परियों और देवताओं का देश है, वह अद्‌भुत टापू।

सपना-सपना होता है, मैंने कभी सोचा न था कि एक दिन सचमुच में मैं ऐसे किसी अद्‌भुत टापू की सैर करूँगा।

पढ़ाई-लिखाई पूरी करके मैं अपनी नौकरी करने लगा नये दोस्त भी बने एक दिन एक दोस्त के निमंत्राण पर उसके गाँव जाने के लिए बस मैं बैठ गया।

बस, यूँ ही करीब पच्चीस-तीस किलोमीटर ही चली होगी कि अचानक रुक गई।

गाँव का रास्ता कच्ची सड़क का था, बस के रुकते ही खिड़कियों से पूरी बस में धूल भरने लगी वह भी इतनी घनी कि आसपास देखना कठिन हो गया। वैसे भी शाम हो चली थी।

अचानक बस कण्डक्टर चिल्लाया, 'बस खराब हो गई है, आगे नहीं जायेगी', अद्‌भुत टापू की सवारियाँ यहाँ उतर जायें। बाकी लोग अगली गाड़ी का इंतजार करें। पर अगली गाड़ी तो दूसरे दिन आनी थी, मैं उतर गया। अचानक अद्‌भुत टापू का नाम सुनकर मैं चौंका भी और तीस बरस पहले, लगातार सपनों में देखे जाने वाले अद्‌भुत टापू की स्मृतियों में पहुँच गया। यूँ मैं बचपन में अक्सर सोचता था कि स्वप्न में दिखने वाली जगहें भी कहीं न कहीं जरूर होती होंगी या उनसे मिलता-जुलता ऐसा ही कुछ होता जरूर होगा।

इन्हीं ख्यालों में मैं डूबा हुआ आगे बढ़ने लगा, अंधेरा बढ़ने लगा था और रात काटने की कोई व्यवस्था तो करनी थी। सामने

16 अप्रैल 1954, ग्राम-मझौली, जबलपुर, मध्य प्रदेश में जन्में बलराम गुमास्ता की नीम से पुते मलयागार, नामवर, कवि-कपूत आदि चर्चित कृतियाँ हैं। आपने बच्चों के लिए भी कविता, कहानी, नाटक आदि विधाओं में लेखन किया। देश भर के पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का प्रकाशन। बेटी के सवाल, त्रिकर्षि संस्था भोपाल द्वारा बलराम गुमास्ता की कविताओं का नाट्य मंचन। उच्च शिक्षा एवं अध्ययन हेतु अंतरराष्ट्रीय ब्रिटिश काउंसिल, टी.सी.टी. अवार्ड समेत महत्त्वपूर्ण साहित्यिक सम्मान प्राप्त। कृषि अभियांत्रिकी दर्पण, आखर संदेश तथा रंग-संवाद आदि पत्रिकाओं के संपादक मंडलों में मानद सदस्य रहे। प्रेरणा साहित्यिक पत्रिका एवं विश्वरंग साहित्यिक पत्रिका के परामर्श मंडल के सदस्य हैं।

अद्‌भुत टापू नाम का गाँव पास ही था, आश्चर्य हुआ नाम अद्‌भुत टापू पर गाँव के नाम पर यूँ ही बीस-पच्चीस घास-पूँफस की झोपड़ियाँ मात्र, न सड़क न बिजली, न नालियाँ, न पानी की कोई व्यवस्था देश की स्वतंत्रता के 70 बरस बाद भी, ऐसी बदहाली, बहुत निराश हुआ। यह झोपड़ियाँ भी ऐसी कि जैसे जंगल कि झाड़ियों को काट-काटकर बेतरतीब ढंग से यहाँ-वहाँ ढेर लगा दिये गये हो।

सियारों के झुंड बहुत नजदीक आकर लगातार हुआ-हुआ चिल्लाये जा रहे थे, ऐसा पिछड़ा इलाका कि संभवतः इस सूनी जगह वह दिन-रात का विचार किये बिना, जब मन करता होगा, इसी तरह चिल्लाते होंगे।

तो यह है अद्‌भुत टापू, इलाका इतना बीहड़ और वीरान, शाम से ही भयानक अंधकार और तरह-तरह की डरावनी आवाजें।

मेरे दुःख का ठिकाना न था, यह एक सुखद देखे गये सपने के टूटने का दुख था, सपने टूटने से ज्यादा बुरा कुछ और नहीं।

मुझे याद आया कि जब छोटी बिटिया का प्यारा खिलौना गिरकर टूट गया था तो वह रात भर हिलक-हिलक कर रोती रही थी। उसे समझ नहीं आया था कि सुन्दर खिलौना टूटने से यह मिट्‌टी के टुकड़े कहाँ से आ गये। उसे आश्चर्य हो रहा था कि इतना सुन्दर गुड्‌डा था उसका, फिर यह मिट्‌टी के टुकड़े कहाँ से आ गये? और गुड्‌डा कहाँ गया? वह लगातार प्रश्न करती जाती और सुबकती रही थी।

इतने बरस बाद बिटिया का सवाल आज मेरे सामने था फर्क यह था कि उसे आज मैं दुहरा रहा था, बुझेमन से, रात रुकने के लिए कोई जगह तलाशता हुआ मैं, झोपड़ों की तरफ बढ़ चला।

मैंने अद्‌भुत टापू के बारे में सोचना बंद कर दिया, प्रश्न लम्बे होते जाते हैं, उत्तर हर बार प्रश्नों को फिर जन्मते हैं, एक अन्तहीन बेचैनी, मेरा बुरा हाल हो रहा था।

यहाँ खेत-खलिहान कुछ नहीं थे, हाँ झोपड़ियों में भेड़-बकरियों की आहटें थीं, संभवतः यही यहाँ के लोगों का व्यवसाय होगा। आसपास न नदी, न तालाब एक और अचरज कि आखिर गांव बसने के लिए कोई तो सहारा या बहाना होता इसी उधेड़बुन में आगे बढ़ता हुआ, एक झोपड़ी के आगे पहुँचा। आवाज दी तो एक बूढ़ा निकलकर बाहर आया, वह आश्चर्य से मुझे देख रहा था, विस्मय में डूबा हुआ।

मैंने रात भर रुकने का कोई ठिकाना या जगह बताने के लिए निवेदन किया, तो बूढ़ा सोच में पड़ गया, बाँस की पतली सलाख में अरण्डी के बीच पिरोकर उसने उन्हें जलाकर रोशनी की, मेरा चेहरा देखा और आश्चर्य प्रगट करते हुए कहा, ''तुम इतनी रात यहाँ कैसे, यहाँ तो देख ही रहे हो, न तुम्हारे रुकने की कोई व्यवस्था हो सकती है न खाने की।'' मैंने कहा, ''पर कुछ तो करना होगा बाबा रात तो काटनी है।''

उसने कहा ''हाँ, एक खण्डहर जरूर यहीं पास में है। वह एक दम साफ-सुथरा है और पास ही साफ पानी की सुन्दर भव्य बावड़ी भी, धान के प्याल का बिस्तर लगा दूँगा साहब और रोशनी के लिए कुछ अरण्डी की शाखें रख लें, फिर थोड़ी देर में चाँद की रोशनी तो निकल ही आयेगी।''

''अब इन झोपड़ियों में तो रुकने की क्या कहें साहब, इनमें तो हम रेंगकर अंदर जाते हैं, किसी तरह हम दो प्राणी और दो बच्चों के साथ गुजारा कर लेते, आप तो देख ही रहे हैं।''

इतना कहकर बूढ़े ने पीछे आने का इशारा किया और खंडहर की ओर चल पड़ा, पीछे-पीछे मैं भी चलने लगा।

बिना बात किए बूढ़े का लगातार चलना मुझे ऐसा लग रहा था, जैसे मैं किसी रहस्यमयी दुनिया में पहुँच रहा हूँ और अगले ही मिनट कुछ अजीब सी घटना, घटने वाली है।

तकरीबन दो सौ मीटर ही चले होंगे कि एक डरावना सा बबूल का झाड़ मिला। आसपास और कोई इतना बड़ा झाड़ न

था, सब तरफ झाड़ियों के बीच एक अकेला झाड़ कुछ विचित्र सा लगा।

बूढ़े ने मौन तोड़ा, बोला ''साहब इस झाड़ पर दो पत्थर रखो और दो गालियाँ दो, यह चुड़ैल का झाड़ है, ऐसा न करने में यह पापी आत्मा पीछे पड़ जाती है।'' मैंने वैसा ही किया। चूंकि गाँवों में इस तरह की बातें झाड़-पेड़ों के साथ जोड़ लेते हैं, सो मुझे कोई आश्चर्य न हुआ।

हम आगे बढ़ने लगे। टूटी-फूटी दीवारों के सिलसिले और किसी पुराने किले के अवशेष पास आने लगे थे। कुछ और आगे बढ़े तो हम एक खण्डहर के पास थे, खण्डहर पार कर बावड़ी पर पहुँचे, यहाँ का दृश्य देखा तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

पूरा खण्डहर जैसे स्वर्ग का कोई हिस्सा हो। केतकी के फूलों से लदी झाड़ियों और सघन झुरमुटों के बीच, खिले हजारों किस्म के सुन्दर गुलाबों से एक विशेष किस्म की रोशनी फूट रही थी। लगता जैसे केतकी की झाड़ियों में हजारों बच्चे एक साथ खिलखिला कर हँस रहे हों और प्रकाश उनकी चमकती आँखों से सहज ही पूफट रहा हो। सब कुछ जैसे स्वप्न लोक का लुभावना वातावरण सा। विचित्रा जगह! जादुई सी, गुलाब खिलने का मौसम नहीं, फिर यह नजारा। मुझे अब भय भी हो रहा था और आनंद भी। पता नहीं कब बरबस मेरा हाथ एक सुनहले गुलाब को तोड़ने बढ़ गया।

मुझे ख्याल तब आया जब बूढ़ा एकदम चिल्लाया ''अरे साहब यह क्या करते हैं, उन्हें मत तोड़िये।'' मैंने बूढ़े को देखा, बूढ़ा समझ गया कि मैं विस्मित हूँ और यह सब क्या है! यह जानना चाहता हूँ।

बूढ़ा बोला, ''साहब आप परेशान न हों यहाँ बैठें'', मैं उसके पास बैठ गया। बूढ़े ने कान में खुसी बीड़ी निकाली जलाई और बोला सुनिए, ''आप जो देख रहे हैं मैं विस्तार से इस कहानी को सुनाता हूँ।''

''आज से कई हजार साल पहले की बात है, केमोर-और भाण्डेर पर्वत शृंखलाओं से लगा तमाम इलाका महाराजा इतरदुम्न का खुशहाल साम्राज्य था और यह अद्भुत टापू इस राज्य की राजधानी। इन्द्र की नगरी से भी सुन्दर इस राजधानी में दूध की वर्षा होती थी। सुखी लोग थे। प्रेम से रहते थे। भय का नाम न था, लोग घरों में ताले तक न लगाते थे।

राजा और रानी सोमवती को महल में सब प्रकार का आनंद था। दुख था तो एक कि उनके कोई सन्तान न थी। राज्य के उत्तराधिकारी की चिंता में राजा-रानी तो क्या पूरी प्रजा दुखी थी।

राज्य पुरोहितों की सलाह पर राजा इतरदुम्न ने गजताल नरेश की रूपवती कन्या केतकी के साथ दूसरा विवाह कर लिया। रानी केतकी के मृदुभाषी स्वभाव ने शीघ्र ही महल में उनका उच्च स्थान बना दिया। रानी केतकी के महल में बढ़ते प्रभाव से रानी सोमवती दुखी थीं, फिर उन्हें लगा कि अगर रानी केतकी ने संतान को जन्म दिया तो राजा केतकी को और ज्यादा चाहने लगेंगे। वह मन ही मन रानी केतकी से जलने लगी।

एक दिन जब यह ज्ञात हुआ कि रानी केतकी माँ बनने वाली है, राजा की प्रसन्नता की सीमा न रही। अब राजा केतकी रानी की ज्यादा परवाह करने लगे।

राजा के यहाँ पुत्र जन्म हो, इस कामना में प्रजा ईश्वर से प्रार्थनाएँ करती। और राजा नित्य सुबह-सुबह गरीबों को दान देते। सभी उस शुभ घड़ी के इन्तजार में थे जब राज्य का उत्तराधिकारी जन्मेगा।

समय जाते समय न लगा। एक रात वह शुभ घड़ी भी आ गई। रानी केतकी प्रसव भवन में थी और रानी सोमवती इंतजाम में भीतर व्यस्त। राजा व्यग्रता से राज पुरोहित के साथ दरवाजे पर टहल रहे थे। वह प्रतीक्षा में थे कि खिड़की से कब जन्म की सूचना वाला नींबू फेंका जाता है ताकि राजपुरोहित को कुण्डली बनाने का उचित निर्देश तत्काल दे सकें। इधर रानी केतकी जन्म देने की भारी पीड़ा में थी, उधर सोमवती ईर्ष्या से जली जाती थीं। बच्चे के जन्मते ही रानी सोमवती अचानक हरकत में आई उन्होंने बच्चे को गोद में उठा लिया। रानी केतकी दर्द की वजह से बेहोश पड़ी थीं। . समय का फायदा उठा रानी सोमवती ने बच्चे को अपनी प्रिय दासी को थमा दिया और पिछले दरवाजे से उसे बाहर करते हुए कुछ इशारा किया, दासी अँधेरे में बावड़ी की तरपफ भागी। इधर रानी सोमवती ने रानी केतकी के बगल में एक लम्बा पत्थर लिटा दिया और धड़ाम से दरवाजा खोल दहाड़ मारती राजा के सामने जा चीख-चीख कर रोने लगीं।

गजब हो गया स्वामी! रानी केतकी ने एक पत्थर को जन्म दिया है। यह सुनते ही राजा आसमान से गिरे। कुछ देर वे रानी सोमवती को सूनी आँखों से देखते रहे, फिर बेहोश होकर गिर पड़े।

उसके बाद, राजा अक्सर बीमार रहने लगे। समय का पफायदा उठा रानी सोमवती ने राज्य का काम अपने हाथ में ले लिया। एक दिन पत्थर पैदा कर राज्य का अपमान करने के जुर्म में रानी सोमवती ने रानी केतकी को देश निकाला दे दिया। रानी

अब तो राजा इस पौधे को पानी देते, खाद और मिट्टी चढ़ाते ऐसा उसार करते जैसे कोई माँ अपने बच्चे का करती। शाम होते वह पौधे के पास जाने को व्याकुल हो उठते। पत्तों को सहलाते जैसे नन्हीं उँगलियों में थमा देना चाहते हों अपनी उँगलियाँ और घंटों बतियाते।

केतकी ने बहुत कहा कि उनके साथ जुल्म हुआ है। मैं माँ हूँ, मैं जानती हूँ कि मैंने बच्चे को जन्म दिया था, पर बड़ी रानी ने एक न सुनी।

राजा का मन दुखी रहता। संतान के नाम पर पत्थर पैदा होने की घटना और रानी केतकी के देश निकाले की घटना उन्हें रह-रहकर सताती।

कुछ हालत सुधरी तो राजा शाम को इस बावड़ी के पास घूमने आने लगे। एक शाम उन्होंने बावड़ी के इस कोने पर एक गुलाब का नन्हा पौधा देखा। अजीब सी चमक वाला पौधा, पत्ते ऐसे जैसे किसी दुध मुंहे बच्चे के छोटे-छोटे हाथ, डगालें जैसे बाँहों में भरने बुलातीं।

अब तो राजा इस पौधे को पानी देते, खाद और मिट्टी चढ़ाते ऐसा उसार करते जैसे कोई माँ अपने बच्चे का करती। शाम होते वह पौधे के पास जाने को व्याकुल हो उठते। पत्तों को सहलाते जैसे नन्हीं उँगलियों में थमा देना चाहते हों अपनी उँगलियाँ और घंटों बतियाते। कभी-कभी तुतलाकर बोलते और पौधे को राजा-मुन्ना कहकर बुलाते।

पौधा विचित्र गति से बढ़ने लगा, राजा की प्रसन्नता का ठिकाना न था। एक दिन तो पूरा महल उन्होंने सिर पर उठा लिया। आज पौधे में एक गुलाब का फूल खिला था। राजा उस चाँद से सुन्दर पर सुनहले फूल को चूम लेना चाहते थे। सुनहरी चाँदनी की रोशनी उनके जीवन की विचित्र आनंदायक घटना थी। राजा ने हाथ बढ़ाया तो वह फूल की पहुँच से दूर थे। उन्होंने हाथी मँगाया, उस पर चढ़कर प्रयास किया फिर भी वह फूल तक न पहुँच पाए, इस घटना से वह आश्चर्य चकित थे और दुखी भी।

फूल तक न पहुँच पाने की घटना शीघ्र ही राज्य में दूर-दूर तक फैल गई। पड़ोसी राज्यों में भी इस घटना की खबर से लोगों में ऐसे फूल को छूने का कौतूहल बढ़ने लगा, और वह हजारों की संख्या में वहाँ पहुँचने लगे।

सभी प्रयत्न करते पर फूल को न छू पाते। राजा रात में ठीक से सो भी न पाते, फूल के विषय में सोचते रहते। एक दिन वह रात में फूल के ही विषय में सोचते-सोचते उसनींदे से बिस्तर पर लेटे थे कि उन्हें लगा जैसे फूल ने कहा कि मैं तो अपनी माँ की गोद में आ गिरूँगा पर किसी को छूने नहीं मिलूँगा। सुबह राजा की जब नींद खुली तो उन्हें ठीक से याद न रहा कि उन्हें ऐसे ही कुछ ऐसा लगा या उन्होंने स्वप्न देखा था।

दरबारियों को जब राजा ने रात की घटना बताई तो उन्होंने कहा कि इसमें हर्ज नहीं राज्य की और पड़ोसी राज्यों की महिलाएँ अगर बुलाई जाएँ तो यह बात स्पष्ट हो सकती है। इसमें हर्ज ही क्या है, हमारी सबकी उत्सुकता भी इस फूल के विषय में काफी बढ़ गई है। शायद ऐसा करने से ही इस फूल के रहस्य पर कोई प्रकाश पड़े।

दरबारियों के सुझाव मुताबिक मुनादी करा दी गई। राज्य और पड़ोसी राज्यों की महिलाओं का आना शुरू हुआ। वह फूल के पास आतीं आँचल फैला उसे गोद में बुलातीं और आगे बढ़ जाती।

आज पन्द्रहवाँ दिन था। राजा फूल पर टकटकी लगाये हर महिला का आना और जाना देखते। महिलाओं के पास आते ही उस पौधे में हरकत होती जैसे ठुनक कर कोई बच्चा, दो कदम इधर-उधर हो जाता हो, रूठकर पकड़ में आने से बचता हो। राजा आज निराश थे। मंत्री ने उन्हें बताया था कि महाराज अब कोई भी बाकी नहीं, सारी महिलाएँ यहाँ उपस्थित हो चुकी हैं। फिर भी राजा ने कहा हो सकता है कोई बचा हो, एक बार फिर मुनादी करा दी जाये।

जब राजा यह आदेश दे रहे थे, पास ही माण्डव राज्य का एक किसान खड़ा था। वह भी फूल के विषय में सुनकर जिज्ञासावश यहाँ आया था। उसने हाथ जोड़कर कहा, हुजूर मेरे खेत पर एक चिड़ियाँ उड़ाने वाली बुढ़िया है। पर वह बहुत कमजोर है, इसलिए उसे यहाँ लाना सम्भव न हुआ।

राजा को जैसे आशा की एक किरण दिखी। उनके आदेश से तुरन्त चिड़िया उड़ाने वाली महिला को बुलाया गया। चिड़िया उड़ाने वाली महिला फूल के नीचे आई। उनसे अपना फटा आँचल फैलाया। इसके पहले कि वह कुछ बोले, बिजली सी कौंधी, फूल के झाड़ में एक सिहरन हुई और फूल महिला की गोद में गिरा। राजा आश्चर्य से यह देख रहे थे। महिला ने फूल को गोद में चिपटा लिया और वह उसे बेतहाशा चूमने लगी।

महिला ने अचानक चीखते हुए अपना चेहरा खोला वह चिल्लाकर कह रही थी, मैं रानी केतकी हूँ यह मेरा प्यारा बच्चा है। मुझे न्याय और अपराधी को सज़ा दो।

राजा ने दौड़कर रानी केतकी को गले लगा लिया। उनके आँसू निकल रहे थे।

यहाँ यह नजारा देख पोल खुलने के डर से रानी सोमवती भागी, लोगों ने उस बबूल के पास रानी सोमवती को पत्थर मार-मार कर शांत कर दिया।

राजा ने जब एकत्र समूह की तरफ सिर उठाकर देखा तो प्रजा जय के नारे लगा रही थी। अद्‌भुत टापू के राजा गुलाब की जय, हमारे राजा गुलाब की जय। फूलों के राजा गुलाब की जय। फूलों के राजा गुलाब की जय के नारों से आसमान गूँज रहा था। बूढ़े ने कहा साहब यह गुलाब हमारा राजा है। तभी से गुलाब फूलों का राजा भी कहलाता है। हम इनकी प्राण देकर रक्षा करते हैं। हमारे वंशज अद्‌भुत टापू के सिपाही थे।''

❑❑❑

पौधे की गवाही

ज़ाकिर अली रजनीश

प्रोफेसर अमर प्रकाश प्रभाकर के बचपन के दोस्त थे। वे भी वनस्पति विज्ञन के प्रोफेसर थे। वे पिछले कई सालों से पौधों के प्रतिरक्षा तंत्र पर शोध कर रहे थे। उन्होंने पौधों के उस जीन की खोज कर ली थी, जो उनकी सुरक्षा के लिए जिम्मेदार होता है। अब वे उस जीन को इतना शक्तिशाली बना देना चाहते थे, जिससे पेड़-पौधे अपनी सुरक्षा स्वयं कर सकें।

प्रोफेसर प्रभाकर की गिनती समय के पाबंद लोगों में की जाती है। वे रामाधीन सिंह पी.जी. कॉलेज में वनस्पति विज्ञान के लेक्चरर हैं और एक गंभीर शिक्षक के रूप में जाने जाते हैं। हालांकि आज उनके कॉलेज में छुट्टी थी, फिर भी वे जल्दी-जल्दी तैयारी में लगे हुए थे। उन्हें किसी ज़रूरी मीटिंग की वजह से सुबह नौ बजे विश्वविद्यालय पहुँचना था।

प्रभाकर आजकल पेड़ों से सम्बंधित एक महत्वपूर्ण शोध में व्यस्त हैं। अपने कार्य में डूबे रहने के कारण वे कल रात में भी काफी देर से सोए थे। रात में देर से सोने के कारण आज सुबह उनकी आँख देर से खुली थी। इसीलिए वे जल्दी-जल्दी अपने काम निपटा रहे थे, जिससे समय से विश्वविद्यालय पहुँच सकें।

तभी अचानक फोन की घंटी बज उठी।

प्रभाकर ने सोचा कि शायद घर के अन्य लोग फोन उठा लें। इसलिए उन्होंने फोन की तरफ ध्यान नहीं दिया और अपनी तैयारियों में लगे रहे। लेकिन जब काफी देर तक घर का कोई भी सदस्य फोन के पास नहीं फटका, तो वे असहज हो उठे। उन्होंने आगे बढ़कर फोन का रिसीवर उठाया और बड़े अनमने मन से बोले, ''कौन ?''

उधर से काँपती हुई आवाज आई, ''अंकल, मैं रवि...।''

आवाज़ के कंपन को सुनकर सहसा प्रभाकर का मन आशंकाओं से घिर उठा। वे जल्दी से बोले, ''हां बेटा, बोलो...?''

1 जनवरी 1975 को लखनऊ में जन्में डॉ.जाकिर अली रजनीश विज्ञान संचार विधाओं में वर्ष 1990 से सतत लेखन कर रहे हैं। आपने एमए हिन्दी एवं पी.एचडी की डिग्रियाँ प्राप्त की हैं। आपने बच्चों के लिए लेखन के साथ कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता में भी लेखन किया है। आपके वैज्ञानिक उपन्यास, विज्ञान कथा संग्रह, पटकथा लेखन पुस्तक, वैज्ञानिकों की जीवनी, बाल उपन्यास, बाल कहानी संग्रह, बाल विज्ञान कथा संग्रह, नव साक्षरों के लिए पुस्तकें तथा विविध विधाओं में दर्जनों पुस्तकें प्रकाशित हैं।

''अंकल, आप प्लीज़ जल्दी से यहाँ आ जाइए।'' कहते हुए रवि फफक उठा।

प्रभाकर को लगा कि अवश्य ही कोई बहुत बड़ा अनर्थ हो गया है। लेकिन फिर भी उन्होंने अपने मन को ढाढ़स बंधाया और धीरे से पूछा, ''क्या हुआ बेटा? तुम ऐसे रो क्यों रहे हो?''

''अंकल, ...पापा की डेथ हो गयी है किसी ने उनका...।'' रवि प्रकाश की आगे की बात उसके मुँह में ही रह गयी। उसका गला रूँध गया और वह ज़ोर-ज़ोर से सुबकने लगा।

प्रोफेसर प्रभाकर पर एकदम से जैसे वज्रपात हो गया। वे सिर्फ इतना ही बोल पाये, ''क्या? कैसे?'' एक क्षण के लिए वे एकमद सन्नाटे में आ गये। उन्हें समझ में ही नहीं कि वे क्या कहें।

लेकिन अगले ही क्षण प्रभाकर को अपनी जिम्मेदारियों का एहसास हुआ। अगर मैं ही हिम्मत हार गया, तो फिर मैं रवि को कैसे हौसला बंधा सकूँगा?

उन्होंने दो-चार लम्बी-लम्बी सांसें लीं और फिर अपने आपको समेटते हुए बोले, ''तुम हिम्मत से काम लो बेटा, मैं अभी आता हूँ।'' कहते हुए उन्होंने रिसीवर को क्रेडिल पर रखा और जल्दी-जल्दी तैयार होकर प्रोफेसर अमर प्रकाश के घर की ओर चल दिये।

प्रभाकर जब प्रोफेसर अमर प्रकाश के घर पहुँचे, तो वहाँ काफी भीड़ लगी हुयी थी। पुलिस की गाड़ी भी वहाँ पहले से मौजूद थी। उन्होंने जल्दी से अपनी स्कूटी खड़ी की और तेजी से घर के अंदर की ओर भागे।

अमर प्रकाश के स्टडी रूम के बीचोंबीच उनकी डेड बॉडी रखी हुई थी। पास में ही एक इंस्पेक्टर, दो सिपाही तथा फोटोग्राफर मौजूद थे और उन सबके पास ही बैठा था गुमसुम सा रवि। प्रभाकर का देखते ही वह दौड़ कर उनके पास आया और लिपट कर रोने लगा। प्रभाकर ने उसे अपनी बाहों में भींच लिया और दिलासा देने लगे।

प्रोफेसर अमर प्रकाश प्रभाकर के बचपन के दोस्त थे। वे भी वनस्पति विज्ञान के प्रोफेसर थे। वे पिछले कई सालों से पौधों के प्रतिरक्षा तंत्र पर शोध कर रहे थे। उन्होंने पौधों के उस जीन की खोज कर ली थी, जो उनकी सुरक्षा के लिए जिम्मेदार होता है। अब वे उस जीन को इतना शक्तिशाली बना देना चाहते थे, जिससे पेड़-पौधे अपनी सुरक्षा स्वयं कर सकें।

लेकिन शायद प्रकृति को यह मंजूर नहीं था। तभी तो इससे पहले कि प्रोफेसर अमर प्रकाश पेड़-पौधों की सुरक्षा के लिए जिम्मेदार उनके जीन को मजबूती दे पाते, उनके जीवन की डोर ही टूट गयी। किसी बेरहम क़ातिल ने अपने छोटे से स्वार्थ के लिए उनकी इहलीला समाप्त कर दी...।

प्रोफेसर अमर की हत्या चाकू से की गयी थी। और सबसे बड़ी बात यह थी कि अलमारी से प्रोफेसर अमर की शोध संबंधी फाइल भी गायब थी। इसका मतलब यह था कि हत्या के पीछे चोरी की ही घटना जिम्मेदार थी। चोर उस फाइल को चुराने आया होगा। लेकिन शायद तभी प्रोफेसर अमर प्रकाश वहाँ आ गये हों और चोर ने पहचान लिए जाने के कारण उनकी हत्या कर दी हो?

प्रभाकर के पहुँच जाने से पुलिस को भी काफी सहयोग मिला। क्योंकि रवि प्रकाश पढ़ाई के सिलसिले में अक्सर बाहर ही रहता था। उसे अपने पिताजी द्वारा किये जा रहे शोध के बारे में कुछ भी मालूम नहीं था। यह तो संयोग ही था कि वह बस एक दिन पहले घर आया था। वर्ना उसके पिताजी घर पर अकेले ही रहा करते थे।

प्रोफेसर प्रभाकर के सहयोग से पुलिस ने लाश का पंचनामा कराया और फिर उसे पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया। पोस्टमार्टम हाउस में भी प्रभाकर आगे-आगे लगे रहे, तब कहीं

जाकर दोपहर तक वह निपट सका। और उसके बाद अंतिम क्रिया-कर्म। सारे काम निपटाते-निपटाते रात हो गयी।

प्रभाकर श्मसान से सीधे अपने घर चले गये। रात में तो उनसे खाना भी नहीं खाया गया। फिर भला नींद कहां से आती? बिस्तर पर पड़े-पड़े वे यही सब सोचते रहे। अगर प्रोफेसर अमर की शोध सम्बंधी फाइल किसी गलत आदमी के हाथ लग गयी, तो बड़ा अनर्थ हो जाएगा। इस अनर्थ को रोकने के लिए कातिल का पकड़ा जाना बहुत ज़रूरी है। पर पता नहीं पुलिस उसे पकड़ भी पाती है या...?

अचानक प्रभाकर की नजर सामने की अलमारी में रखे पॉलीग्राफ यंत्र पर जा पड़ी। पॉलीग्राफ यानी कि अमरीकी वैज्ञानिक बैक्सटर की एक महत्वपूर्ण खोज, जिसके सहारे पौधे की भावनाएँ पढ़ी जा सकती हैं। बैक्सटर ने अपने प्रयोगों के द्वारा यह सिद्ध करके दिखाया था। और उसका तो यहाँ तक मानना था कि पौधे मनुष्य के मन की भावनाओं को पढ़ने में सक्षम होते हैं और वे उसके द्वारा बोले जाने वाले झूठ को भी पकड़ लेते हैं।

प्रभाकर पिछले एक सप्ताह से इसी पॉलीग्राफ यंत्र से खेल रहे थे। उन्होंने बैक्सटर की कही हुई तमाम बातों को सही पाया था और अब वह इस यंत्र में कुछ सुधार करके उसे सरल रूप प्रदान करना चाहते थे।

लेकिन अभी, अभी तो उन्हें प्रोफेसर अमर के हत्यारे और उनके बेटे को देखना था। सहसा उनके मस्तिष्क में वह दृश्य कौंध उठा, जो उन्होंने अमर के घर पर देखा था।

प्रोफेसर अमर के स्टडी रूम में कमरे के बीचों-बीच पड़ी हुई उनकी लाश। पास में बैठा उनका लड़का रवि, दरवाजे के आस-पास किताबों की अलमारियाँ, अलमारी के बगल में रखी बड़ी सी मेज़, मेज़ पर बिखरी किताबें व पत्रिकाएँ, मेज़ के सामने दीवार में बने एक स्टैण्ड में रखी काँच की बोतल और बोतल में लगा हुआ मनी-प्लांट का पौधा।

इसी कमरे में चोर ने प्रोफेसर अमर की शोध सम्बंधी फाइल चुराई और फिर बड़ी बेरहमी के साथ चाकू से उनकी हत्या कर दी। यानी कि यह सारी घटना मनीप्लांट के पौधे के सामने... यानी कि मनीप्लान्ट का वह पौधा हत्या का चश्मदीद गवाह...?

प्रोफेसर प्रभाकर एकदम से उछल पड़े- ''इसका मतलब है कि मनीप्लांट का वह पौधा इस केस में एक-एक बड़ी भूमिका निभा सकता है?''

प्रभाकर ने घड़ी की ओर देखा। उस समय रात के साढ़े बारह बज रहे थे। ''अब तो सुबह ही कुछ हो सकता है।'' उन्होंने अपने आप से कहा और फिर करवट बदल ली।

अगले दिन प्रभाकर सवेरे ही अमर के घर जा पहुँचे। उन्होंने रवि को बुलाकर पॉलीग्राफ यंत्र और उसके साथ किये जा रहे अपने प्रयोगों के बारे में बताया। प्रभाकर की बातें सुनकर रवि उत्साहित हुआ। उसे एक उम्मीद बँधी। शायद इसके सहारे पिताजी का हत्यारा पकड़ा जा सके।

तभी किसी काम से प्रोफेसर अमर का नौकर किशोरी वहाँ आया। कमरे में उसके क़दम रखते ही जैसे तूफान आ गया। किशोरी को देखकर पॉलीग्राफ से जुड़े गैल्वेनोमीटर में हलचल हुई और ग्राफ की सुई ऊर्ध्वाधर दिशा में एक वक्र रेखा खींचने लगी। मतलब स्पष्ट था कि किशोरी को देखकर मनीप्लांट का पौधा बुरी तरह से घबरा गया था और उसकी घबराहट को पकड़ने में पॉलीग्राफ ने एक क्षण की भी देर नहीं लगाई थी।

प्रोफेसर प्रभाकर ने एक क्षण भी व्यर्थ गंवाना उचित नहीं समझा। उन्होंने फटाफट पॉलीग्राफ यंत्र को रखा और उसे मनीप्लांट के पौधे से जोड़ने लगे।

तभी किसी काम से प्रोफेसर अमर का नौकर किशोरी वहाँ आया। कमरे में उसके क़दम रखते ही जैसे तूफान आ गया। किशोरी को देखकर पॉलीग्राफ से जुड़े गैल्वेनोमीटर में हलचल हुई और ग्राफ की सुई ऊर्ध्वाधर दिशा में एक वक्र रेखा खींचने लगी।

मतलब स्पष्ट था कि किशोरी को देखकर मनीप्लांट का पौधा बुरी तरह से घबरा गया था और उसकी घबराहट को पकड़ने में पॉलीग्राफ ने एक क्षण की भी देर नहीं लगाई थी।

पॉलीग्राफ की प्रतिक्रिया को देखकर प्रभाकर का दिमाग़ एकदम से घूम गया। उन्होंने बिना कुछ सोचे-विचारे लपक कर किशोरी का कालर पकड़ लिया और उसे पॉलीग्राफ के पास घसीटते हुए बोले, ''तुमने अमर का खून क्यों किया?''

प्रभाकर के इस व्यवहार के बारे में किशोरी ने सपने में भी नहीं सोचा था। वह एकदम से घबरा उठा, ''मैं-मैं? मैं क्यों उनका खून करूँगा?...मैं तो उस समय बाज़ार गया था।''

रवि ने पॉलीग्राफ की ओर देखा। वह अपने ग्राफ की मदद से चीख-चीख कर कह रहा था कि यह व्यक्ति सफेद झूठ बोल रहा है। यह देखकर रवि का खून खौल उठा। उसने उठकर किशोरी की गर्दन दबोच ली, ''मैं तुझे ज़िन्दा नहीं छोडूंगा किशोरी। बता, पापा ने तेरा क्या बिगाड़ा था?'' किशोरी का चेहरा भय से सफेद पड़ गया। उसकी समझ में नहीं आया कि वह क्या करे, क्या न करे। उसकी घिग्घी बंध गयीं और मुँह से कोई आवाज़ नहीं निकली।

प्रोफेसर प्रभाकर रवि की उग्रता देखकर डर गये कि कहीं यह लड़का उत्तेजना में कुछ उल्टा-सीधा न कर बैठे। उन्होंने किशोरी पर मनोवैज्ञानिक दबाव बनाने की कोशिश की, ''देखो किशोरी, वैसे भी तुम अब बच नहीं सकते। क्योंकि इस यंत्र और पौधे ने तुम्हारी पोल-पट्टी खोलकर रख दी है। इसलिए अब तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम हमें सब कुछ सच-सच बता दो।''

किशोरी ने हैरान होकर पॉलीग्राफ व मनीप्लांट की ओर देखा। शायद वह यह समझने की कोशिश कर रहा था कि भला एक पेड़ कैसे किसी व्यक्ति की चुगली कर सकता है। लेकिन तब तक रवि का धैर्य जवाब दे चुका था। वह किशोरी पर दनादन लात-घूँसे बरसाने लगा।

मार के आगे तो भूत भाग जाते हैं, फिर भला किशोरी कब तक टिकता? उसने कुछ ही देर में अपने हथियार डाल दिये और रूआसा होकर बोला, 'हाँ, मेरे ही हाथों मालिक का खून हुआ। लेकिन मैंने ऐसा जान बूझकर नहीं किया। जब मैं फाइल लेकर जा रहा था, तो मालिक ने मुझे देख लिया। उन्होंने मुझे रोकना चाहा और पुलिस में रिपोर्ट करने की धमकी दी। यह सुनकर मैं डर गया और मैंने अपने बचाव के

लिए...।''

''नमकहराम इन्सान, तुझे ऐसा करते हुए शर्म नहीं आई?'' कहते हुए रवि दोबारा उसे मारने के लिए लपका। लेकिन इस बार प्रभाकर ने उसे रोक लिया।

किशोरी इस समय बेहद डरा हुआ था। उसके चेहर पर हवाईयाँ उड़ रही थीं और माथे पर पसीने की बूँदे चुहचुहा आई थीं। लेकिन बावजूद इसके अभी तक उसने शोध संबंधी फाइल को चुराने की वजह नहीं बताई थी।

किशोरी ने हैरान होकर पॉलीग्राफ व मनीप्लांट की ओर देखा। शायद वह यह समझने की कोशिश कर रहा था कि भला एक पेड़ कैसे किसी व्यक्ति की चुगली कर सकता है। लेकिन तब तक रवि का धैर्य जवाब दे चुका था।

प्रभाकर के लिए चोरी की वजह बहुत ज्यादा अहमियत रखती थी। क्योंकि अगर वह शोध किसी गलत व्यक्ति के हाथों में पड़ जाए, तो उसके दुरूपयोग की बहुत अधिक संभावनाएं थीं। उन्होंने किशोरी का कहलर पकड़ कर उसे झकझोरते हुए पूछा, ''तुमने ऐसा क्यों किया किशोरी? उस फाइल से तुम्हारा क्या लेना-देना?''

रवि के लिए भी ऐसे समय में स्वयं को नियंत्रित रखना दूभर हो रहा था। उसने दांत पीसते हुए उसे घूरा, 'जल्दी बताओ, वर्ना मैं मार-मार कर तुम्हारा भर्ता बना दूंगा।'

बचने का कोई रास्ता ने देखकर किशोरी ने सारा सच उगल दिया, 'मैंने जोजफ के कहने पर उस फाइल को चुराया था। उसने मेरे बेटे का अपहरण कर लिया था और अगर मैं ऐसा न करता, तो वह मेरे बेटे को मार डालता।'

तभी इंस्पेक्टर भी वहाँ आ गया। उसने कमरे में घुसते समय किशोरी की बातें सुन ली थीं। वह किशोरी के हाथों में हथकड़ी लगाते हुए बोला, 'जोजफ तो अन्तर्राष्ट्रीय स्मग्लर है। लेकिन अब वह बचकर कहाँ जाएगा? ...तू चल मेरे साथ, ताकि उसे भी भागने से पहले सरकारी ससुराल पहुंचाया जा सके।'' कहते हुए इंस्पेक्टर दरवाजे की ओर मुड़ा।

लेकिन दरवाजे के पास पहुँचकर इंस्पेक्टर के क़दम रुक गये। वह मुड़कर बोला, ''प्रोफेसर साहब, लेकिन मुझे एक बात समझ में नहीं आई। आप लोगों को कैसे पता चला कि इस नौकर ने ही अमर साहब का मर्डर किया था?''

''मनीप्लांट की गवाही से।'' प्रभाकर ने जवाब दिया।

''मनीप्लांट की गवाही?'' इंस्पेक्टर चौंका।

''हां इंस्पेक्टर, पॉलीग्राफ यंत्र की सहायता से हम किसी भी पौधे के मन की बात जान सकते हैं।''

''ओह, ...अच्छा?'' कहते हुए इंस्पेक्टर ने अजीब सा मुँह बनाया। उसे वास्तव में कुछ भी समझ में नहीं आया था। वह बोला, ''खैर छोडिए, वैसे भी मुझे आम खाने से मतलब होना चाहिए, पेड़ गिनने से नहीं।'' कहते हुए इंस्पेक्टर मुस्कराया और किशोरी को लेकर बाहर निकल गया। मनीप्लांट के प्रति रवि का मन श्रद्धा से भर आया। उसने कृज्ञतापूर्वक उसकी ओर देखा। मनीप्लांट प्रसन्न हो उठा। और ऐसे में पॉलीग्राफ भला क्यों शान्त बैठता? वह मनीप्लांट की प्रसन्नता को अपने ग्राफ पर अंकित करने लगा।

❑❑❑

घटना, कहानी और विज्ञान

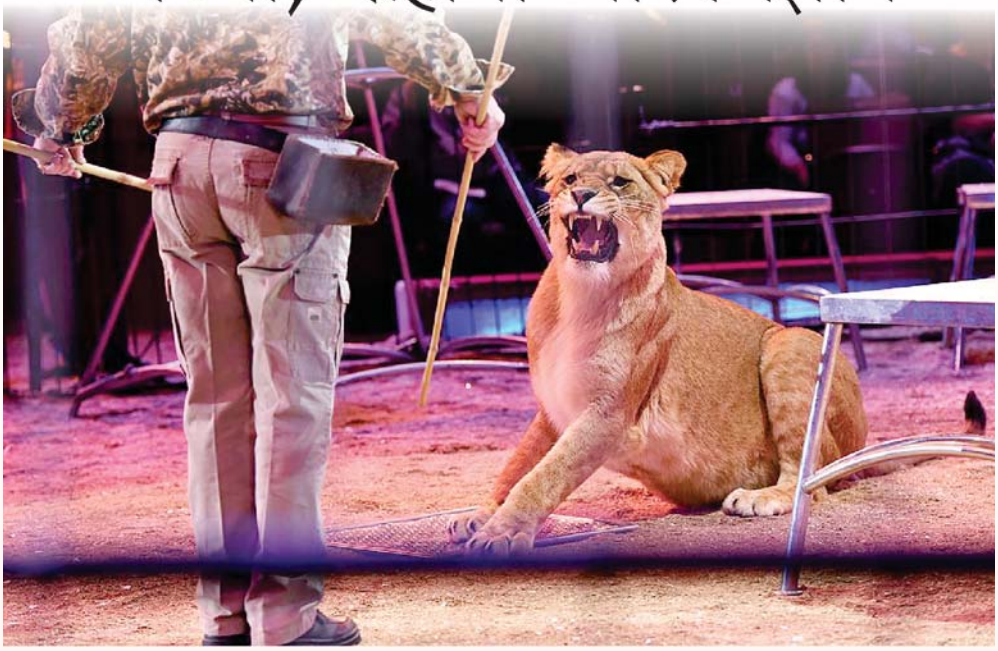

शुचि मिश्रा

बच्चो, मैं आपको एक विज्ञान कथा सुनाती हूँ। अब, आपके मन में यह बात आएगी कि विज्ञान कथा क्या है? तो, मैं बता देती हूं कि विज्ञान-कथा वह कहानी होती है जिसमें विज्ञान भी होता है और कथा भी। इस विषय में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं जिसके बारे में आप बड़े होकर पढ़ेंगे। तो, शुरू करते हैं विज्ञान कथा -

बहुत पुरानी बात है। एक सर्कस में रूद्र नाम का रिंग मास्टर था। वह युवा था और अपने शेर के साथ तरह-तरह के करतब दिखाता था। वह शेर की पीठ पर बैठ जाता। वह शेर को चाबुक दिखाकर स्टूल पर बैठा देता। वह शेर से जलते हुए रिंग से फलांग करवाता। और अंत में वह शेर के खुले हुए जबड़े में अपने सिर रख देता। शेर अपने जबड़े से उसकी गर्दन बचाते हुए उसका सर निकाल देता और उसे दुलार करता। यह रुद्र का आखरी करतब होता। दर्शक ताली बजाते, प्रसन्न होते, रुद्र की तारीफ करते।

बच्चो, यहां तक तो कहानी हुई इसमें विज्ञान कहां है? तो, मैं बता दूं कि सर्कस के सारे करतब विज्ञान के नियम 'भार और गति' से संचालित होते हैं। इसमें जादू जैसी कोई बात नहीं होती। लड़के-लड़कियों का रस्सी पर चलना। एक नियत गति में दोनों हाथों से तीन-चार गेंदों को सर्कल में उछालना। हवा में गुलाटी मारते हुए एक झूले से दूसरे झूले पर जाना। यह सब कुछ विज्ञान ही है।

तो, कहानी कुछ ऐसे आगे बढ़ती है कि उसी सर्कस में एक बहुत सुंदर लड़की थी। वह रस्सियों पर चलती थी। उसका नाम हंसा था। सर्कस के दूसरे लड़के उस पर मुग्ध थे। देवा जो उसके बचपन का साथी था, वह उस पर मोहित था और हंसा से शादी करना चाहता था, जबकि हंसा मन ही मन रूद्र को चाहती थी। रुद्र का शेर के साथ करतब करना, सभी की तरह उसे भी अच्छा लगता था। रुद्र की बड़ी-बड़ी आंखें उसे भाती थी। रुद्र के घुंघराले बाल, चौड़ी छाती और मजबूत बाजू देखते ही बनते।

हंसा रुद्र से बात करने की मौके तलाशती और कोई भी अवसर बन पड़ता तो उससे मिलती। जब भी रूद्र अपना खेल सर्कस में प्रस्तुत करता, वह उसे गुलाब भेंट करती।

इस बात की भनक जब देवा को लगी तो उसे गुस्सा आया। उसने अपना आपा खो दिया और वह रूद्र से लड़ बैठा। रूद्र ने उसे समझाने की कोशिश की लेकिन देवा का गुस्सा शांत ना हुआ।

पिछले दशक में जिन विज्ञान लेखिकाओं ने तेज़ी से अपनी पहचान बनाई हैं उनमें शुचि मिश्रा का नाम ज़रूरी तौर पर शुमार होता है। उनके कुछ विज्ञान लेख और कविताएँ देश की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं जिनमें साक्षात्कार, आकंठ, युग तेवर, अट्टहास, बहुमत आदि शामिल हैं। आपने स्टीफन हॉकिंग, जे.सी.बोस, सत्येन्द्र नाथ बोस, और आइंस्टीन पर लेखकीय कार्य किया है। शुचि मिश्रा ने विश्वव्यापी कार्यक्रम 'विश्वरंग' सहित अनेक कार्यक्रम में सक्रिय भागीदारी की। विज्ञान कार्यशालाओं में शिरकत। आपको 'पृथ्वी झुकी है' कविता पर सिंगापुर का चर्चित 'कविताई' पुरस्कार प्राप्त है।

रात को जब सर्कस का खेल खत्म हुआ, देवा अपने टेंट में चला गया। वह जाने क्या-क्या सोचता रहा। सोचते-सोचते उसका सिर भारी हो गया और दर्द करने लगा।

रात भर दर्द से परेशान जब सुबह हुई तो देवा बहुत उदास था। उसने सर्कस के मालिक से इजाजत ली और वैद्य जी के पास चला गया।

वैद्य जी देवा को बचपन से ही जानते थे बल्कि वह उनके बेटे जैसा ही था ।

देवा जब वैद्य जी के पास पहुँचा तो वे आराम कर रहे थे। देखते ही बोले, ''अरे देवा, इतने दिन हो गए; तुमने तो हमें भुला ही दिया?''

''नहीं, भुलाया नहीं, सर्कस दूर शहर गया था। अभी ही सारी टोली लौटी है।''

थोड़ी देर बैठने के बाद देवा ने अपने सिर में दर्द की बात वैद्य जी को बताई। तब वैध जी ने नसवार जैसा कोई पाउडर उसे दिया। उस पाउडर की गंध आते ही देवा को छींक आ गई और उसे आराम पहुंचा।

वैद्य जी ने उस पाउडर की कागज की पुड़िया देवा को कुछ हिदायत देते हुए दे दी। देवा लौट आया।

सर्कस में लौटते ही उसने हंसा को को इंतजार करते पाया। हंसा उससे नाराज़ थी। वह चाहती थी कि देवा रूद्र से माफी मांगे।

दूसरे दिन रूद्र जब अपने शेर के साथ करतब दिखाने पहुंचा तो देवा दौड़ते हुए आया। उसके हाथ में एक खिला हुआ गुलाब था। तब तक रुद्र मंच पर आ चुका था। देवा ने उसे टेरते हुए कहा, ''रूद्र कल की बात के लिए मुझे माफ कर देना!''

रूद्र उसे देख कर मुस्कुराया। देवा ने 'बेस्ट ऑफ लक' कहते हुए रूद्र की ओर गुलाब उछाल दिया। गुलाब रूद्र के सिर पर गिरा और बिखर गया। एक-दो पंखुड़ियां उसके घुंघराले बालों में अटक कर रह गई।

रुद्र और शेर का खेल शुरू हुआ। वह 'स्टेप बाइ स्टेप' अपने अंतिम आइटम पर पहुंचा। शेर ने जबड़ा खोला और रूद्र ने अपना सिर शेर के मुंह में डाल दिया। लोगों ने ताली बजाई।

लेकिन, अचानक उनकी चीख निकल गई। यह क्या? शेर ने अपना मुंह बंद कर लिया!! रुद्र की गर्दन शेर के जबड़े में थी।

बच्चो, आप फिर कहेंगे कि यह तो एक घटना है। कहानी नहीं!

तो, इसमें कहानी यह है कि शेर रुद्र के बचपन के दोस्त था। जब रूद्र ने अपना सिर शेर के मुंह में दिया तब उसे अचानक छींक आ गई... रुद्र की मृत्यु हो गई! यह छींक देवा द्वारा गुलाब में डाले गए उस पाउडर से आई थी जो वैद्य जी ने उसे दिया था... और विज्ञान कहता है कि श्वसन क्रिया में कोई भी अनपेक्षित केमिकल सांस में आए तो छींक आ जाती है।

अब आपके लिए एक सवाल हे कि उस कैमिकल का नाम बताएँ जिसे सूँधने से छींक आती है।

कहानी कहती है कि उस दिन के बाद से शेर उदास रहने लगा। वह अपने पिंजरे से फिर बाहर नहीं निकला।... उसने खाना पीना छोड़ दिया और कुछ महीने बाद अपने प्राण त्याग दिए।

हंसा आज भी रूद्र को याद करती है।

❑❑❑

बात आगे की

काव्या कटारे

मैंने कलाई पर बंधी घड़ी को देखते हुए कहा, 'घड़ी...!'

मैंने बोलना प्रारंभ किया ही था कि तभी घड़ी ने लगभग डाँटते हुए कहा, 'मेरा नाम घड़ी नहीं है। मेरा नाम 897213**** है'

मैंने कहा, 'ठीक है, ठीक है ! न जाने कितनी बार बता चुकी है यह बकवास नाम।' मैंने मुँह बनाया।

'407 बार मैं आपको यह नाम बता चुकी हूँ और आपकी जानकारी के लिए बता दूँ मेरा नाम बकवास नहीं है'

उसकी बात सुन मैं चकित रह गई... 'देखो तो कैसे पटर-पटर जवाब दे रही है।' मैंने मन ही मन बुदबुदाया...।

अगर इसके सामने बोलती तो फिर से कोई जवाब पकड़ा देती। मेरे माथे पर गुस्से की लकीरें बढ़ती जा रही थी। इसे कम करने के लिए मैं खिड़की के पास खड़ी हो गई। वैसे तो मैं खिड़की के पास जाने से डरती थी, क्योंकि यह इतनी बड़ी है कि कोई भी वाहन आसानी से अंदर आ जाए। देखो तो मैं भी कैसी बातें कर रही हूँ। यह खिड़की इसलिए ही तो बनाई गई है कि मेरा कैप्सूल आसानी से अंदर आ जाए। हाँ ! तो मैं कहां थी। हाँ, यह खिड़की इतनी बड़ी है कि डर लगता है कहीं गिर ना जाऊं। किंतु आज इस शहर का यह मनमोहक दृश्य देख मन खुश हो गया। बड़ी-बड़ी इमारतें, उड़ते हुए वाहन, बड़ा सा बादल जिस पर समाचार दिखाई दे रहे थे , z4 की तेज़ रफ्तार।

1 मिनट !!!

बड़ा-सा बादल जिस पर समाचार दिखाई दे रहे थे!

समाचार !

लो ! मैं तो भूल ही गई थी कि आज मेरा इंटरव्यू है। अरे यार ! अब क्या करूं? मैं तो तैयार भी नहीं हूं।

'ड्रेस चेंज' मैंने अपनी पोशाक को आदेश दिया। देखते ही देखते मेरी पोशाक ने अपना रूप ही बदल दिया।

...'22 मेरे बालों को मेरी ड्रेस की तरह हरा कर दो।'

मैंने अपनी चहेती रोबोट को बुलाया।

...'अभी करती हूं।' यह कह कर उसने मेरे बालों की मसाज की और मेरे बाल पूरी तरह हरे हो गए।

... 'बढ़िया आप मेरे बालों को पूरी तरह से सीधा कर दो।'

उसने मेरे आदेश का पालन किया। और पलक झपकते ही मैं तैयार भी हो गई।

'मुझे तुम्हारा काम और नाम दोनों ही पसंद है।'

यह शब्द 22 के लिए मेरे दिल से निकले थे।

'धन्यवाद'। वह बोली।

'यह सही नहीं है आप मेरे नाम को बकवास और 22 के नाम को अच्छा बोलती हो। जाईए अब मैं आपके लिए काम नहीं करूंगी।' यह कह कर घड़ी ने अपनी आंखें बंद कर ली। उसकी स्क्रीन भी काली हो गई। मैंने उसे मनाने का प्रयत्न किया.,...।' घड़ी.,

काव्या कटारे 14 साल दसवीं में अध्ययनरत। प्लूटो, म.प्र.शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित राष्ट्रीय बाल रंग, ग़ज़ल गलियारा सीरीज का संग्रह 'आंखों में धूप के सपने'। हंस में 'चीख', कथादेश में 'प्रेरणा', कथाबिम्ब में 'काली लड़की', हरिगंधा में 'गोद', अविलोम में 'जो आया था', आंच में 'कौन लिखेगा' कहानियाँ प्रकाशित। पुरस्कार... कथाबिंब का कमलेश्वर स्मृति कथा पुरस्कार। कथा संग्रह : काली लड़की , बाल कविता संग्रह : धमाचौकड़ी।

घड़ी.., घड़ी सुनो न।'

पर वह कुछ न बोली। लेकिन मैंने भी कुछ कच्ची गोलियाँ नहीं खेली।

...'897 21**** तुम मेरी सबसे प्यारी रोबोट हो' यह सुनते ही उसने अपनी आँखें खोली और मुस्कुराते हुए बोली...' आप बहुत अच्छी हो। शुक्रिया'।

उसकी आवाज सुनते ही मेरे मुँह पर एक बड़ी सी मुस्कान आ गई। आती भी क्यों न? आखिर वह मेरी सबसे नटखट रोबोट जो है।

चलो, मैं तो तैयार हो गई पर यह फला फला कब आएगा? कितनी देर करवा दी इसने।

मैं यह सोच ही रही थी कि तभी एक लाल रंग का कैप्सूल मेरे कमरे में आ गया।मैं उसे तुरंत पहचान गई। उसका दरवाजा खुला।

...'आज बड़ी जल्दी आ गए तुम फला फला?' मैंने कैप्सूल के अंदर बैठे फला फला पर व्यंग किया।

...'आप गलत है, मैं पूरे 15 मिनट 46 सेकेंड लेट हूं। और मेरा नाम 712468978**** है।' फलाँ फलाँ ने कहा।

उसकी बात सुन मैंने चिढ़ते हुए कहा...। 'इतना लंबा नाम बोलने बैठूंगी तो आधी शताब्दी गुजर जाएगी।'

'ही ही ही'। मेरी बात सुन घड़ी भी हँस पड़ी। और मैं कैप्सूल में बैठ गई।

तभी कैप्सूल भी उड़ने लगा 'अच्छा यह बताओ, इंटरव्यू कब शुरू होगा?' मैंने चिंतित होकर पूछा।

...'जब आप वहाँ पहुँच जाएंगे।' फला फला फट से बोला।

'ही ही ही' उसकी बात सुन घड़ी फिर से हंस पड़ी।

...'अरे उल्लू के पट्ठे, मेरा मतलब इंटरव्यू की टाइमिंग क्या है?' मैंने पूछा।

'इंटरव्यू की टाइमिंग है फाइव ओ क्लॉक' फला फला बोला।

... 'अच्छा और अभी की टाइमिंग क्या है?' मैंने प्रश्न किया।

...'अभी किसी इंटरव्यू का नाम है क्या?' उसने उल्टा प्रश्न मुझे ही पकड़ा दिया।

...'मेरा मतलब, अभी समय क्या हो रहा है?' मैंने अपने प्रश्न को व्यवस्थित किया।

'अभी 4:00 बजकर 59 मिनट हो रहे हैं' फला फला बोला।

'अच्छा... क्या ? 4:59 तब तो केवल 1 मिनट ही बचा है। फला फला जल्दी उड़ाओ कैप्सूल।' मैंने हड़बड़ी में कहा।

'नहीं अब मैं कैप्सूल नहीं उड़ाऊंगा।' वह बोला।

उसकी बात सुनकर मैं डर गई यह भी तो कहीं नाराज नहीं हो गया ?

'पर क्यों?' मैंने हिचकिचाते हुए पूछा।

'क्योंकि हम क्लाउड स्टूडियो पहुंच चुके हैं'

उसने कैप्सूल बादल पर उतारा उसकी बात सुन मैंने राहत की सांस ली।

'दरवाजा खोलो' मेरे एक आदेश पर दरवाजा खुल गया। मैं फौरन उसमें से उतरी तो खुद को बदल पर खड़ा पाया। मैं इतनी खुश थी कि शब्दों में बयां नहीं कर सकती।

'आपके पहले इंटरव्यू के लिए आपको शुभकामनाएं'। फला फला बेहद प्यार से बोला।

'धन्यवाद, 7124689 7**** ' मैंने भी उसे प्यार से कहा।

'नहीं, आप मुझे फला फला ही बोलिए। आपके मुंह से अच्छा लगता है।' वह बोला।

'अरे ! मेरा बच्चा, तुम भी चलो।' मैंने आग्रह किया।

'नहीं- नहीं, आप जाइए। मैं कैप्सूल में ही बैठकर आपका इंटरव्यू देख लूंगा।' उस ने विनम्रता पूर्वक कहा।

'वैसे आज बड़े प्यार से बात कर रहे हो। यह बात मुझे हज़म नहीं हुई।' मैंने मस्तीखोर बनते हुए कहा।

'नहीं नहीं, यह तो हमारे संस्कार हैं।' उस ने गर्व से कहा।

'अच्छा और यह संस्कार आए कहां से?' मैंने उत्तर में अपना नाम पाने की उम्मीद की।

'EQ सिम से।' वह बोला।

'अच्छा और यह EQ सिम वाले संस्कार कब आए?' मैंने

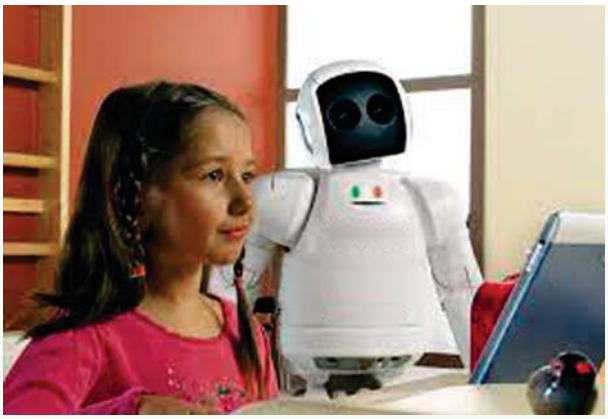

अपने सवालों के पिटारे में से एक और सवाल निकाल, फला फला के सामने रख दिया।

'आज 4:30 पर।'

उसकी बात सुन मेरी हंसी छूट गई।

'h1 आप अपनी इंटरव्यू के लिए लेट हो रही है।' फला फला बोला।

'अरे ! हां, चलो अब मैं जाती हूं। बाय।'

यह कहकर मैं पीछे मुड़ी। वहां पर मुझे बादलों से बनी एक इमारत दिखी। उसे देख एक पल के लिए तो मैं अपने बचपन में ही खो गई थी। अचानक मेरी आंखों के सामने वह नजारा आ बैठा जब एक छोटी सी लड़की अपने पापा से बादलों का घर लाने की जिद कर रही थी...।

'पापा आ गए ! पापा आ गए !' यह कहकर वह अपने पापा के गले लग गई।

'अरे ! बिटिया।'

उसके पापा ने भी उसे कसकर गले से लगा लिया।

'पापा, आप मेरे लिए बादलों का घर लाए हो न।'

उसकी आंखों में एक अलग ही चमक दिख रही थी।

'नहीं बेटा, कोई बादलों का घर कैसे ला सकता है? वे तो बस आसमान में होते हैं।'

उसके पापा बोले। पर तब उस नादान को इन वैज्ञानिक बातों से कोई मतलब ना था। उसे तो बस अपनी कल्पना की उड़ान दिख रही थी। उस समय उसके पास उसके पापा थे पर बादलों का घर नहीं। लेकिन आज जब वह बादल पर खड़ी है तो उसके पास उसके पापा नहीं है।

'आपको देरी हो रही है।' घड़ी ने मुझे बचपन की यादों में डूबने से बचाया।

'चलो चलते हैं।' यह कहकर मैं आहिस्ता-आहिस्ता उस इमारत की ओर बढ़ने लगी।

लेकिन जब उसके अंदर पहुंची तो आश्चर्य से भर उठी। यह क्या! मैंने अपनी जिंदगी में करोड़ों रोबोट देखे थे पर इतने सारे रोबोटों को एक साथ सामूहिक रूप से कार्य करते हुए पहली बार देखा। मुझे देख सारे रोबोट एक साथ बोले, 'H1 अराइवड !' यह सुनते ही एक बड़ी सी प्लेट आई और मुझसे उसके ऊपर चढ़ने का आग्रह किया। मैं उसके ऊपर चढ़ गई और पलक झपकते ही मैंने खुद को उस इमारत के सबसे ऊपर वाले माले पर पाया।

'आइए H1, आपका स्वागत है। मैं हूँ आपका ऐंकर ... ।' यह कहकर एक रोबोट ने मेरी ओर अपना हाथ बढ़ा दिया। मैंने उससे हाथ मिलाया और उसने मुझे एक बादल से बने सोफे पर बिठा दिया। वह भी मेरे पास बैठ गया। हमारे सामने अलग-अलग तरह की गोलियां रखी थीं। कुछ विटामिंस की, तो कुछ मिनरल्स की। खैर इन गोलियों से तो मैं भली-भांति परिचित थी। अपने रोज के आहार से भला कौन परिचित नहीं होगा।

937 ने मुझे बताया कि उस कमरे की हर दीवार कैमरे का काम करती है और यह इंटरव्यू सबको लाइव दिखाया जाएगा। यह मेरा पहला क्लाउडी इंटरव्यू था इसलिए मैं थोड़ा घबरा रही थी। पर 937 इतने अच्छे से बात कर रहा था कि उससे बातचीत करना मेरे लिए बेहद सहज हो गया।

937 बोला , ...'चलिए अब हम लाइव चलते हैं।'

मैंने हामी भरी।

'नमस्कार ! मेरे प्यारे साथियो, क्लाउडस में आपका स्वागत है। मैं हूं आपका प्यारा 937। और आज हमारे साथ हैं इस सदी की सबसे बुजुर्ग महिला।'

उसने अपने इंटरव्यू की शुरुआत ही ऐसे की, कि मैं भी उत्साह से भर गई।

'नमस्कार !' मैंने अभिवादन किया।

'तो सबसे पहले h1 आपको अपनी जिंदगी के 1000 साल पूरे करने पर बहुत-बहुत शुभकामनाएं।'

अब मुझे धीरे-धीरे समझ में आ रहा था कि 937 में ऐसी क्या बात है जो इसे अन्य रोबोटों से अलग कर एक बेहतर ऐंकर बनाती है।

'आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।' मैंने उसका शुक्रिया अदा किया।

'तो मैम आपको यहां क्लाउड्स में आकर कैसा लग रहा है?'

उसने यहां से अपने शेर रूपी प्रश्नों को मेरे पीछे दौड़ा दिया।

'मुझे यहां पर आकर बहुत अच्छा लग रहा है। यह मेरा पहला इंटरव्यू है। और यह सुनहरा अवसर प्रदान करने के लिए मैं क्लाउड और 937 जी की आभारी हूं।'

अब मैंने भी सोच लिया इसके शेरों का शिकार तो करना ही पड़ेगा।

'अरे ! शुक्रिया तो हमें आपका करना चाहिए जो आप हमारे बीच यहां अपना कीमती समय निकालकर आई।'

मैं समझ गई ये बातें तो खूब बनाना जानता है।

'नहीं -नहीं , ऐसी बात नहीं है। अगर हमने अपना समय अपने बच्चों के साथ साझा नहीं किया तो वह समय ही व्यर्थ है।'

पर मैं भी लेखक हूं। शब्दों से खेलना आता है मुझको।

तभी वह बोल उठा...' देखिए तो, मैं भी कैसा बुद्धू हूँ। कैसे भूल गया कि एक लेखक से बात कर रहा हूं। इनसे तो बातों में जीतना असंभव है।' वह मुझको मसका लगाते हुए बोला।

'पर इस बार मैं आपसे सहमत नहीं हूं क्योंकि शब्दों को संजोना एक कला है न कि कोई प्रतियोगिता। जिसमें हार या जीत हो। वैसे आप भी बातें काफी अच्छी बना लेते हैं।'

मैंने भी उसकी कला की तारीफ की। क्योंकि वह काबिले तारीफ थी।

...'आपका बहुत-बहुत शुक्रिया। अब चलिए हम अपने कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हैं। सब अपने-अपने दिलों और सिमों को थामकर बैठिए। क्योंकि अब वह घड़ी आने वाली है जिसका आपको इंतजार था। अब हम आपके प्रश्न हमारी अतिथि h1 के सामने परोसने जा रहे हैं।'

उसकी बात सुन पहले तो मुझे थोड़ी घबराहट हुई। पर तभी याद आया कि मुझे अपने अनुभव ही तो साझा करने हैं। जैसे मैंने अपने पोते पोतियों के सवालों की लहरों को शांत करवाया था। वैसे ही आज अपने कुछ अन्य पोते पोतियों की जिज्ञासा की शांति के लिए प्रयत्न करना होगा।

'तो शुरू करें '937 मुझसे आज्ञा लेने के लिए आग्रह करने लगा।

...'अवश्य'। मैंने भी हां में सर हिला दिया।

...'तो पहला सवाल 11817 की ओर से h1 के लिए...'

...'आपने पिछली बारिश कब देखी थी?'

937 के मुंह से यह वाक्य सुन मैं अपने अतीत में लौट आई। याद करते हुए बोली... 'मैंने आखिरी बरसात लगभग 400 साल पहले देखी थी। उसके बाद मैंने फिर कभी बारिश नहीं देखी।

...'h1 हमारी युवा पीढ़ी तो बारिश शब्द ही पहली बार सुन रही होगी।उसके बारे में कुछ बतायेगा। '937 ने आग्रह किया।

... 'क्यों नहीं ? बारिश से तो मेरी बहुत गहरी दोस्ती थी। मेरी ज्यादातर यादों में काले बादल छाए ही रहते थे। पहले बारिश जब होती थी तो आसमान काला पड़ जाता था। बादलों में से छोटी-छोटी बूंदे धरती की प्यास बुझाने आसमान से धरती तक का सफर तय किया करती थी। जब जब बारिश होती थी तो मोर जंगल में पंख फैलाकर नाचा करते थे। अब तो मोर विलुप्त हो चुके हैं। पर उनके जैसा सुंदर पक्षी मैंने तो आज तक नहीं देखा। आप में से कुछ लोग तो जंगल शब्द भी पहली बार सुन रहे होंगे। तो उन्हें बता दूं जंगल पेड़ों का समूह हुआ करते थे। जंगलों में बहुत हरियाली हुआ करती थी। कई जानवर उस में रहा करते थे। जैसे - गिलहरी, शेर, लोमड़ी, हाथी, चीता, हिरण, आदि-आदि। जानती हूं आप इन सब के बारे में भी जानना चाहते हैं पर अगर पहले की दुनिया और अभी की दुनिया में अंतर करने बैठूँ तो कई शताब्दियाँ पलक झपकते ही गुज़र जाएंगी। तो मैं कहां थी? हाँ, जब बारिश हुआ करती थी तो नदियां, नाले, ताल, पोखरा, सभी मुस्काने लगते थे। कई बार तो बारिश इतनी तेज होती थी कि कई नदियां अपनी सीमा पार कर शहर में दाखिल हो जाती थी, जिसे हम बाड़ कहते थे। घर-मकान सब डूब जाया करते थे और तो और कई लोगों की मृत्यु भी हो जाया करती थी। बाहर की बात क्या बताऊं, मेरा घर जिस मोहल्ले में था वह भी पानी से लबालब भर जाता था। कई बार तो पानी हमारे घर में भी आ जाया करता था। घर के सारे सामान को लेकर हम सब ऊपर वाले माले पर चले जाते ताकि पानी भरने के कारण सामान खराब ना हो।'

'h1 ये सामान क्या होता है?'

'सामान ! आ... मैं कैसे समझाऊं ? सामान कोई भी ऐसी चीज होती थी जिसे हम अपने काम के लिए बनाया करते थे। सामान बहुत सारे प्रकार के होते थे। जैसे- पलंग, सोफा, कुर्सी, टेबल आदि। यह ज्यादातर लकड़ी या फिर किसी धातु के बने होते थे। पहले ऐसा नहीं होता था न कि हम जैसे सोच ले हवा तत्काल ही अपने आप को उसी रूप में ढाल ले, अपने आप ही कोई अनोखा रंग ग्रहण कर ले और हम अपनी सुविधा अनुसार उसे इसतेमाल कर सकें।'

मैंने थोड़ी सी छलक आज की भी दिखाई।

'अच्छा ! आज तो मेरी मेमोरी में बहुत सारा नया-नया

डाटा भर रहा है।' 937 हँसने लगा।

'हां ! तो मैं कहां थी? तब हर घर में रसोई हुआ करती थी क्योंकि तब ये गोलियां नहीं हुआ करती थी पेट की भूख मिटाने के लिए, रोटियां हुआ करती थी, जिसे हम सब्जी के साथ खाया करते थे। उसमें भी विटामिन और मिनरल्स हुआ करते थे। तो जब नीचे पूरे में पानी भर जाता था तो मां को खाना बनाने में बहुत दिक्कत होती थी क्योंकि पानी के साथ-साथ सांप, बिच्छू, नामक जहरीले जानवरों के आगमन का भी खतरा होता था। पापा जगह-जगह शिकायतें दर्ज करवाते थे। किंतु उससे कोई असर नहीं होता था। अंत में सूरत ही उस पानी को सुखा पाता था और यह केवल एक बार की नहीं बल्कि हर मानसून की कहानी थी।'

मैंने 937 के सामने अब पहले के समय की एक झलक प्रस्तुत की।

'अरे वाह! सुनकर ही मजा आ गया। काश ! हम भी उस हसीन पल को जी पाते पर ग्लोबल वार्मिंग के कारण बारिश की एक बूंद भी नसीब न हुई।' 937 उदास हो गया।

'तुम उस समय नहीं थे न इसलिये ऐसा कह रहो हो। वरना उस नाले के पानी की महक से तुम्हारा सारा पलास्टिक पिघल जाता। वैसे कुछ भी कहो वो समय याद बहुत आता है।' मैं मन में कहने लगी।

'खैर छोड़िए, आप हमें बारिश के बारे में और बताएंगी ?' 937 ने पूछा। शायद उसे भी बारिश में दिलचस्पी थी।

'एक किस्सा है जो मैं आप सभी के साथ साझा करना चाहती हूं। यह बात तब की है जब मैं विद्यालय जाया करती थी। अक्सर बारिश मुझे स्कूल जाने की अनुमति नहीं देती थी। एक तो यही कारण है कि मेरे घर के आसपास पानी अपना डेरा डाल लिया करता था। पर एक और कारण था, जब-जब पानी ज्यादा नहीं भरा होता था ,तब-तब बारिश इतनी तेज होती थी कि बाइक आगे ही नहीं बढ़ पाती थी...'

937 मुझे परेशान नजरों से देखने लगा।

'मैं तो भूल ही गई। पहले गाड़ी हवा में नहीं होती थी, जमीन पर चलती थी। जैसे आज z4 पलक झपकते ही हमें एक जगह से दूसरी जगह ले जाती है, तब बाइक ले जाती थी पर वह इतनी तेज नहीं हुआ करती थी। हाँ! तो मैं कहां थी? एक बार तो मैं स्कूल नहीं फँस गई थी...'

कि तभी 937 बोला, 'यह स्कूल क्या है ?'

'यह एक बिल्डिंग हुआ करती थी जहाँ सभी बच्चे एक साथ पढ़ने जाया करते थे। हाँ! तो मैं कहाँ थी? जैसे ही दोपहर को हमारी छुट्टी हुई ,हम सभी दौड़कर स्कूल गेट की ओर बढ़ गए। पर जैसे ही हम बिल्डिंग से बाहर निकले तो पता चला बारिश हो रही थी। उस समय हमारा एक मैदान था जहाँ हम खेला करते थे। वह तो पूरा पानी से भर गया था। उसमें कूद-कूद कर हमने इतने मजे किए थे कि पूछो मत। आज भी वह दिन याद कर समय में पीछे जाने का मन करता है।' मैंने उन अनुभवों को याद कर कहा।

'वैसे वैज्ञानिक पानी की कमी को पूरा करने के लिए एक टेबलेट बना रहे हैं जिससे पानी की कमी हमारी शरीर में पूरी होगी। आपका इसके बारे में क्या कहना है?' 937 ने पूछा।

'अगर हमारे वैज्ञानिक सफल होते हैं तो यह हमारे लिए बहुत अच्छी बात होगी क्योंकि अगर ऐसा हुआ तो कई लोग जो पानी के लिए तड़प रहे हैं उन्हें एक नया जीवनदान मिलेगा और मेरी शुभकामनाएं तथा आशीर्वाद वैज्ञानिकों के साथ हमेशा रहेगा।'

'अच्छा h1, वैज्ञानिक टाइम मशीन की मदद से समय में पीछे जाकर लोगों को आज की स्थितियों से रूबरू करवाने के लिए भी कई प्रयत्न कर रहे हैं। तो आप इस बारे में क्या सोचती हैं ?' 937 ने एक बार फिर प्रश्न किया।

'यह एक उपयोगी विचार है। लोगों को ग्लोबल वॉर्मिंग के नुकसान समझाएं जाए तो हो सकता है वह इसे रोकने के लिए प्रयत्न करें और ऐसा भी हो सकता है कि हमारी आज की स्थितियां ही बदल जाए। पर मेरी उन वैज्ञानिकों से यह दरख्वास्त है कि जब वे समय में पीछे जाए तो लोगों से यह जरूर कहें कि, हमारा आज उनकी आज पर निर्भर है।'

'यह बात तो सच है... अरे ! h1, हम सबसे जरूरी बात तो पूछना भूल ही गए। आपकी इतनी लंबी उम्र का राज क्या है ?' 937 ने पूछा।

मैंने हँसते हुए उत्तर दिया, 'मेरी लंबी उम्र का राज बड़ा ही सहज है। उम्र बढ़ाने के लिए जितने भी एक्सपेरिमेंट किए गए हैं वे सब मेरे ऊपर हुए हैं इसलिए...'

कि तभी एक आवाज आई ,'4270 937 अराइवड!'

और 937 बोला, 'चलिए समय की कमी की वजह से हमें अपनी इस छोटी-सी रोचक चर्चा को विराम देना होगा। तो h1 आप यहाँ आई और अपने कीमती समय में से 6 मिनट 35 सेकंड हमें दिए उसके लिए बहुत-बहुत शुक्रिया। उम्मीद करते हैं आपसे हमारी मुलाकात यूं ही आगे भी होती रहेगी। नमस्कार !'

'मुझे इतना सुनहरा अवसर प्रदान करने के लिए एक बार पुनः शुक्रिया।' यह कहकर मैं उसी प्लेट पर खड़ी हो गई जिस से ऊपर आई थी और नीचे जाने का आदेश दिया।

❑❑❑

www.cvrump.ac.in | Follow us On :
DR. C.V. RAMAN UNIVERSITY
Madhya Pradesh, Khandwa
AN AISECT GROUP UNIVERSITY
Recognized by : UGC Approved by : M.P. Govt.
BE THE CHANGE
ACCELERATING
With changing times.
Unlimited access to eLearning materials with
Learning Management System (LMS)
10,000+ Student registered
500+ Faculties Conducting Online Classes
4500+ Classes Conducted
Reach the heights of success
NEP Aligned Curriculum
National Education Policy (NEP) aligned
Skill Courses
Comm & Personality Dev
Industry Ready
Programmes Offered
Arts | Paramedical | Science | Agriculture | Commerce
Management | Computer Science & Information Technology
Education | Bachelor of Vocational (B.Voc)
Master Vocational Studies (M.Voc)
Integrated future-ready courses in association with
AISECT Future Skills ACADEMY
coursera
Red Hat
Micro Focus Software University
Prominent Features
Best Infrastructure
Scholarship On Merit Basis
Features Like Online teaching, LCD Projectors and E-Learning
Effective placement and training support
Optional Skills Course
International academic research and cultural partnership
Quality Education & Meaningful research
Our Top Recruiters
Infotech
Hexaware
AIICB
IBM
ICICI
ORACLE
ASTHA
airtel
L&T Infotech
Satyam
BSNL
HCL
ADMISSION OPEN 7000456427, 9907037693, 07320-247700/01
For enquiries & other information, contact us at:
University Campus: Village Balkhadsura, Post - Chhaigaon Makhan, Khandwa,
Madhya Pradesh, 450771 Email: admission@cvrump.ac.in

Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/20-22
R.N.I. No. 51966/1989, ISSN 2455-2399
ELECTRONIKI AAPKE LIYE : OCTOBER- NOVEMBER 2022

आईसेक्ट पब्लिकेशन

फेडरेशन ऑफ इंडियन पब्लिशर्स, नई दिल्ली द्वारा एक्सीलेंस इन बुक प्रोडक्शन के 6 पुरस्कारों से सम्मानित प्रकाशन

ज्ञान-विज्ञान, कौशल विकास तथा
कला-साहित्य पर हिंदी, अंग्रेजी एवं
अन्य भाषाओं में पुस्तकों और पत्रिकाओं का राष्ट्रीय प्रकाशन

स्व-प्रकाशन योजना

हिंदी भाषा, साहित्य एवं विज्ञान की विभिन्न विधाओं में पुस्तकों के प्रकाशन में आने वाली कठिनाइयों को देखते हुए आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल ने लेखकों के लिए स्व-प्रकाशन योजना एक अनूठे उपक्रम के रूप में शुरू की है।

जिन रचनाकारों को अपनी मौलिक, अनूदित, संपादित रचनाओं का पुस्तक रूप में प्रकाशन करवाना है, पांडुलिपि की सॉफ्ट कॉपी के साथ आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल से संपर्क करें।

आईसेक्ट पब्लिकेशन से पुस्तक प्रकाशन के लाभ ही लाभ

- प्रकाशित पुस्तक आईसेक्ट पब्लिकेशन की पुस्तक सूची में शामिल की जायेगी।
- पुस्तक, बिक्री के लिये सुप्रसिद्ध स्टॉलों एवं मेलों आदि में उपलब्ध रहेगी।
- प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा सुप्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराने का प्रयत्न किया जायेगा।
- प्रकाशित पुस्तक, शहरों व कस्बों में स्थापित वनमाली सृजनपीठ के सृजन केन्द्रों में पठन-पाठन और चर्चा के लिए भिजवाई जायेगी।
- पुस्तक के लोकार्पण और साहित्यिक मंच पर संवाद-चर्चा आदि की व्यवस्था की जा सकेगी।
- पुस्तक चयनित ई-पोर्टल (अमेज़न, आईसेक्ट ऑनलॉइन आदि) पर भी बिक्री के लिये प्रदर्शित की जायेगी।

विशेष : शोध पर आधारित पुस्तकों के प्रकाशन में अग्रणी संस्थान
(विश्वविद्यालयों के फैकल्टी एवं छात्रों के लिये विशेष स्कीम)

सुरुचिपूर्ण फोर कलर प्रिंटिंग ● आकर्षक गेटअप ● नयनाभिराम पेपर बैक में

कुल बिक्री के आधार पर वर्ष में एक बार नियमानुसार रॉयल्टी भी

पांडुलिपि किसी भी विधा में स्वीकार

आप स्वयं पधारें या संपर्क करें

- प्रकाशन अधिकारी, आईसेक्ट पब्लिकेशन : मो.+91-8818883165
- अध्यक्ष, वनमाली सृजनपीठ : मो.+91-9425014166
  22/ ई-7, अरेरा कॉलोनी, भोपाल-16 फोन- 0755-2423806
- E-mail : mahip@aisect.org, aisectpublications@aisect.org